नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य आनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर-गुरुभ्यो नमः

भाग

4

सवृत्तिक-आगम-सूत्राणि

आगम - ४०

"आवश्यक" निर्युक्तिः एवं वृत्तिः [२]

मूल संशोधक :- पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यश्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराजसाहेब

अभिनव-संकलनकर्ता :- आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

पूज्य शासनप्रभावक आचार्य श्री हर्षसागरसूरिजी म० की प्रेरणा से

श्री परम आनंद श्वेताम्बर मूर्तिपूजक जैन संघ, पालडी, अमदावाद

ईस प्रोजेक्ट के संपूर्ण-अनुदान-दाता

सच्चारित्र चूडामणि स्वर्गस्थ पूज्यपाद
गच्छाधिपति आचार्यदेव श्री देवेन्द्रसागर
सूरीश्वरजी महाराज साहेब

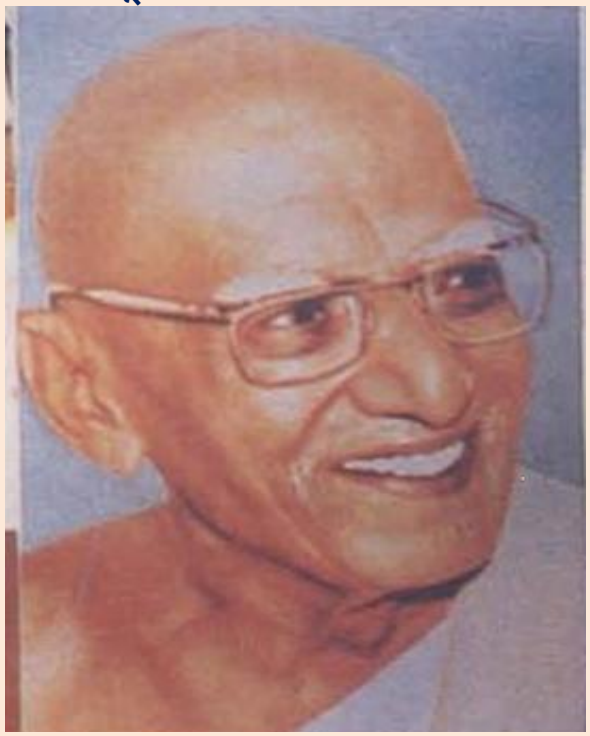

श्री परम आनंद श्वेताम्बर मूर्तिपूजक जैन संघ

वीतराग सोसायटी, प्रभूदास ठक्कर कोलेज रोड, पालडी, अमदावाद

करीब पचास साल पहेले <u>परम पूज्य स्वर्गस्थ गच्छाधिपति आचार्य देव श्रीमद् देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब</u> द्वारा संस्थापित इस संघमें श्री शीतलनाथ भगवंत का जिनालय भी है, जिन के प्रतिष्ठाचार्य भी पूज्य देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी म० ही है |

इस संघमें पूज्य साधू-भगवंत एवं साध्वी-महाराज के लिए उपाश्रय भी है, जहां हर-साल चातुर्मास करवा के श्रावक-श्राविकाओ को धर्म-आराधन से लाभान्वित करवाया जाता है | इस संघमें आयंबिलभवन, उबाला हुआ पानी, ज्ञान-भण्डार एवं पाठशाला की भी बहोत अच्छी सुविधा प्रदान हो रही है | ऐसे सम्यग्-मार्गी संघ की सद्भावना और प्रभावक आचार्य पूज्य श्री हर्षसागरसूरिजी म० की प्रेरणा से इस शास्त्र के लिए अनुदान प्राप्त हुआ है |

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

सवृत्तिक-आगम-सूत्राणि-2

मूल संशोधक

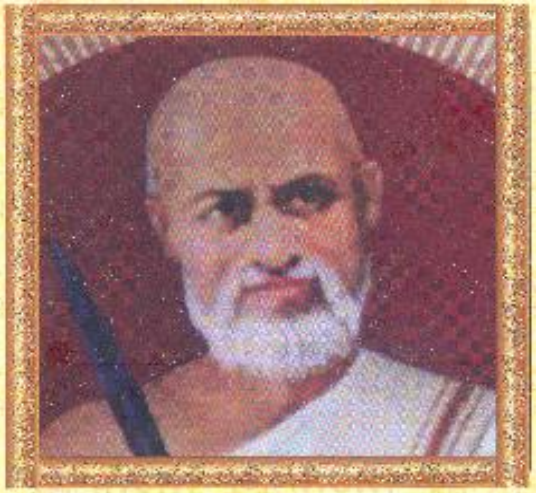

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य
श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज

अभिनव-संकलनकर्ता

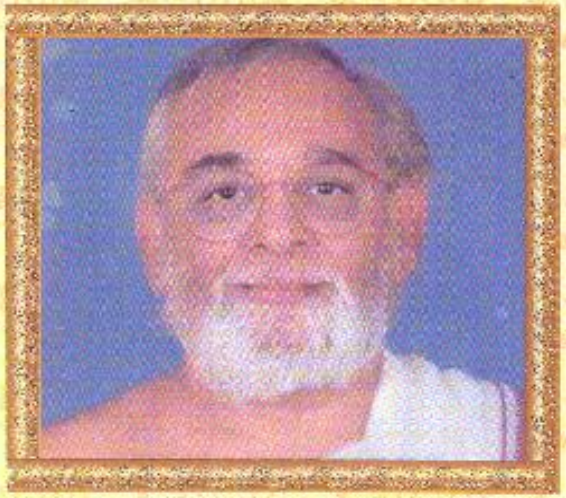

आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी
[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

प्रत-प्राप्ति और पेज-सेटिंग कर्ता : www.jainelibrary.org के चेरमन श्री प्रवीणभाई शाह, अमेरिका
मुद्रक : नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस अमदाबाद Mo 9825598855 / 9825306275

आगम

वाचना शताब्दी वर्ष

सवृत्तिक
भाग-4

[४०/२] श्री आवश्यक [मूल]सूत्रम्

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरुभ्यो नमः

"आवश्यक" निर्युक्तिः एवं वृत्तिः

निर्युक्तिः १३७ से ५४२

[भद्रबाहुसूरि सूत्रिता निर्युक्तिः एवं मलयगिरिसूरि रचिता वृत्तिः]

[आद्य संपादकः - पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰]

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

पुनः संकलनकर्ता→ **मुनि दीपरत्नसागर** (M.Com., M.Ed., Ph.D.)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५

सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि-२-श्रेणी भाग-4

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्तिः

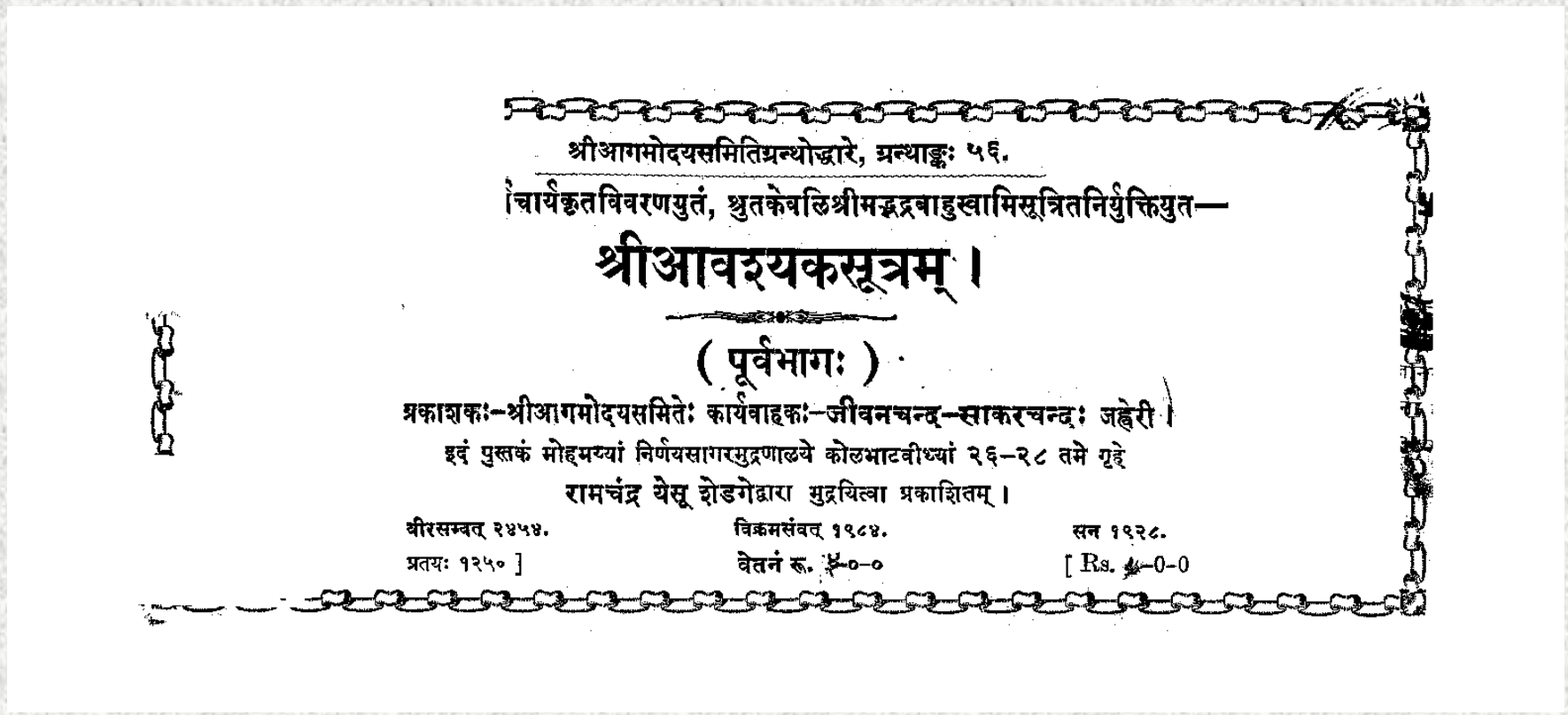

श्रीआगमोदयसमितिग्रन्थोद्धारे, ग्रन्थाङ्कः ५६.

चार्यकृतविवरणयुतं, श्रुतकेवलिश्रीमद्भद्रबाहुस्वामिसूत्रितनिर्युक्तियुत—

श्रीआवश्यकसूत्रम् ।

(पूर्वभागः)

प्रकाशकः–श्रीआगमोदयसमितेः कार्यवाहकः–जीवनचन्द्र–साकरचन्द्रः जव्हेरी ।

इदं पुस्तकं मोहमय्यां निर्णयसागरमुद्रणालये कोलभाटवीथ्यां २६–२८ तमे गृहे

रामचंद्र येसू शेडगेद्वारा मुद्रयित्वा प्रकाशितम् ।

वीरसम्वत् २४५४.	विक्रमसंवत् १९८४.	सन १९२८.
प्रतयः १२५०]	वेतनं रू. ४–०–०	[Rs. 4–0–0

सामाचारी-संरक्षक, ज्ञानधनी, आगम-संशोधक, तीव्र-मेधावी, समाधिमृत्यु-प्राप्त, बहुमुखीप्रतिभाधारक

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

◆ जिन्होने शुद्ध-श्रद्धा, सम्यक्-श्रुत आराधना, यथाख्यातचारित्र के प्रति गति और अंत समय देह-ममत्व के त्याग के द्वारा कायोत्सर्ग नामक अभ्यंतर-तप कि मिशाल कायम कि है ऐसे बहुश्रुत आचार्य श्री सागरानंदसूरीश्वरजी महाराज का परिचय कराना मेरे लिए नामुमकिन है, फ़िर भी गुरुभक्ति बुद्धि से श्रद्धांजली स्वरुप एक मामुली सी झलक पैस करने का यह प्रयास मात्र है |

◆ चारित्र-ग्रहण के बाद अल्प कालमे जो अपने गुरुदेव की छत्रछाया से दूर हो गये, तो भी गुरुदेव के स्वर्ग-गमन को सिर्फ़ कर्मो का प्रभाव मानकर अपने संयम के लक्ष्य प्रति स्थिर रहते हुए अकेले ज्ञान-मार्ग कि साधना के पथ पर चले | पढाई के लिए ही कितने महिनो तक रोज एकासणा तप के साथ बारह किल्लोमिटर पैदल विहार भी किया | लेकिन अपने मंझिल पे डटे रहे, और परिणाम स्वरुप संस्कृत एवं प्राकृत भाषा का, प्राचीन लिपिओ का, व्याकरण-न्याय-साहित्य आदि का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया | जैन आगमशास्त्रो के समुद्र को भी पार कर गए|

◆ एक अकेला आदमी भी क्या नहीं कर शकता? इस प्रश्न का उत्तर हमें इस महापुरुष के जीवन और कवन से मिल गया, जब वे चल पड़े देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण के स्थापित पथ पर. बिना किसी सहाय लिए हुए सिर्फ अकेले ही "जैन-आगम-शास्त्रो" को दीर्घजीवी बनाने के लिए अनेक हस्तप्रतो से शुद्ध-पाठ तैयार किये | दो वैकल्पिक आगम, कल्पसूत्र और निर्युक्तिओ को जोड़कर ४५ आगम-शास्त्रो को संशोधित कर के संपादित किया | फिर पालीताणामें आगम मंदिर बनवाकर आरस-पत्थर के ऊपर ये सभी आगम-साहित्य को कंडारा, सूरतमें ताम्रपत्र पर भी अंकित करवाए और "आगम मंजूषा" नाम से मुद्रण भी करवा के बड़ी बड़ी पेटीमें रखवा के गाँव गाँव भेज दिए | वर्तमानकालमे सर्व प्रथमबार ऐसा कार्य हुआ |

◆ सिर्फ मूल आगम के कार्य से ही उन के कदम रुके नही थे, उन्होंने आगमो की वृत्ति, चूर्णि, निर्युक्ति, अव चूरी, संस्कृत-छाया आदि का भी संशोधन-सम्पादन किया | उपयोगी विषयो के लिए उन्होंने एक लाख श्लोक प्रमाण संस्कृत-प्राकृत नए ग्रंथो की रचना भी की | कितने ही ग्रंथो की प्रस्तावना भी लिखी | ये सम्यक्-श्रुत मुद्रित करवाने के लिए आगमोदय समिति, देवचंद लालभाई इत्यादि विभिन्न संस्था की स्थापना भी की |

◆ ज्ञानमार्ग के अलावा सम्मेतशिखर, अंतरीक्षजी, केशरियाजी आदि तीर्थरक्षा कर के सम्यक-दर्शन-आराधना का परिचय भी दिया | राजाओं को प्रतिबोध कर के और वाचनाओ द्वारा अपनी प्रवचन-प्रभावकता भी उजागर करवाई | बालदिक्षा, देवद्रव्य-संरक्षण, तिथि-प्रश्न इत्यादि विषयोमे सत्य-पक्षमें अंत तक दृढ़ रहे | जैनशासन के लिए जब जरुरत पड़ी तब अदालती कारवाईओ का सामना भी बड़ी निडरता से किया था |

◆ सागरानंदजी के नाम से मशहूर हो चुके पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजीने अपने परिवार स्वरुप ७०० साधू-साध्वीजी भी शासन को भेट किये |

...ये थे हमारे गुरुदेव "सागरजी"... ***.....मुनि दीपरत्नसागर...***

संयमैकलक्षी, उपधान-तप-प्रेरक, चारित्र-मार्ग-रागी, प्रवचन-पटु, सुपरिवार-युक्त

पूज्य गच्छाधिपतिआचार्यदेव श्री देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

*** परमपूज्य आचार्यश्री आनंदसागरसूरीश्वरजी के पाट-परंपरामे हुए तिसरे गच्छाधिपति थे पूज्य आचार्य श्री देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी, जो एक पून्यवान् आत्मा थे, दीक्षा ग्रहण के बाद अल्पकालमे ही एक शिष्य के गुरु बन गये | फ़िर क्या ! शिष्यो कि संख्या बढती चली, बढ़ते हुए पुन्य के साथ-साथ वे आखिर 'गच्छाधिपति' पद पे आरूढ़ हो गए | इस महात्मा का पुन्य सिर्फ शिष्यों तक सिमित नही था, वे जहा कहीं भी 'उपधान-तप' की प्रेरणा करते थे, तुरंत ही वहां 'उपधान' हो जाते थे | प्रवचनपटुता एवं पर्षदापुन्य के कारण उन के उपदेश-प्राप्त बहोत आत्माओने संयम-मार्ग का स्वीकार किया | खुद भी संयमैकलक्षी होने के कारण चारित्रमार्ग के रागी तो थे ही, साथसाथ ज्ञानमार्ग का स्पर्श भी उन का निरंतर रहेता था | आप कभी भी दुपहर को चले जाइए, वे खुद अकेले या शिष्य-परिवार के साथ कोई भी ग्रन्थ के अध्ययन-अध्यापनमें रत दिखाई देंगे |

*** ये तो हमने उनके जीवन के दो-तीन पहेलु दिखाए | एक और भी अनुसरणीय बात उन के जीवनमें देखने को मिली थी- 'आराधना-प्रेम'. कैसी भी शारीरिक स्थिति हो, मगर उन्होंने दोनों शाश्वती ओलीजी, [पोष}दशमी, शुक्ल पंचमी, त्रिकाल देववंदन, पर्व या पर्वतिथि के देववंदन आदि आराधना कभी नहीं छोड़ी | आखरी सालोमें जब उन को एहसास हो गया की अब 'अंतिम-आराधना' का अवसर नजदीक है, तब उन के मुहमें एक ही रटण बारबार चालु हो गया- "*अरिहंतनुं शरण, सिद्धनुं शरण, साधुनुं शरण, केवली भगवंते भाखेला धर्मनुं शरण* " इसी चार शरणो के रटण के साथ ही वे समाधि-मृत्यु-रूप सम्यक् निद्रा को प्राप्त हुए थे | ऐसे महान् सूरिवर को भावबरी वंदना |

*** मुनि दीपरत्नसागर...

अनुदान दाता संस्था:- "श्री परम-आनंद श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ"

वीतराग सोसायटी, प्रभूदास ठककर कोलेज रोड, पालडी, अमदावाद

करीब ५० साल पहेले <u>परम पूज्य स्व. गच्छाधिपति आचार्यदेव श्रीमद् देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी महाराजसाहेब</u> द्वारा संस्थापित इस संघमें श्री शीतलनाथ भगवंत का जिनालय भी है, जिन के प्रतिष्ठाचार्य भी पूज्य देवेंद्रसागरसूरीजी म०सा० ही है | इस संघमें पूज्य साधू भगवंत एवं साध्वीजीओ का उपाश्रय भी है जहा हर-साल चातुर्मास करवाके श्रावक-श्राविकाओ को धर्म-आराधन से लाभान्वित करवाया जाता है | इस संघमें आयंबिलभवन, उबाला हुआ पानी, ज्ञान-भण्डार एवं पाठशाला की भी बहोत अच्छी सुविधा प्रदान हो रही है | ऐसे सम्यग्-मार्गी संघ की सद्भावना और प्रभावक आचार्य पूज्य श्री हर्षसागरसूरिजी म० की प्रेरणा से इस शास्त्र के लिए अनुदान प्राप्त हुआ है |

**** मुनि दीपरत्नसागर...*

'सागर-समुदाय-एकता-संरक्षक, तीर्थ-उद्धार-कार्य-प्रवृत्त, गुणानुरागी'

इस "सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि" श्रेणि भाग १ से ८ के संपूर्ण अनुदान के प्रेरणादाता

पूज्य शासनप्रभावक आचार्य श्री हर्षसागरसूरिजी महाराज साहेब

पूज्यपाद स्व॰ गच्छाधिपति देवेन्द्रसागर-सूरीश्वरजी के विनयी शिष्य एवं दो गच्छाधिपतिओ के मुख्य सहायक के रुपमे 'सागर समुदाय' के सुचारु संचालक पूज्य हर्षसागरसूरिजी, जिन की प्रेरणा से ये " सवृत्तिक-आगम-सुत्राणि-2" के मुद्रण के लिए संपूर्ण द्रव्यराशि प्राप्त हुई , उनका अत्यल्प परिचय यहां करेंगे | समुदाय-एकता के लिए सदैव प्रयत्नशील रहते हुए ये महात्मा *समुदाय के साधु-साध्वीजी* की आवश्यकताओकी पूर्ती के लिए भी प्रवृत्त रहेते है, प्राचीन-अर्वाचीन तीर्थो के जीर्णोद्धार एवं विकाश के लिए भी उत्साहित रहेते है, ज्ञान-क्षेत्र अछूता न रहे इसीलिए अनुमोदना, अनुदान एवं समय मिलने पर शास्त्र-वांचनमें भी रूचि रखते है | समुदाय के जरूरतमंद साध्वीजी भगवंतो के आवास का विषय हो या साध्वीजी के विहारमें मजदूर का वेतन चुकाना हो, ऐसे छोटे-छोटे कार्यो के प्रति भी उन का लक्ष्य रहेता है | दर्शन-शुद्धि के लिए जब उन्होंने समग्र भारतवर्ष के १०० साल तक के पुराने जिनालयो में १८ अभिषेक की प्रेरणा की, उस वक्त लगभग सभी अभिषेक-सामग्री की द्रव्य-शुद्धि का ख़याल रखते हुए अपनी मेधावी बुद्धि का परिचय दिया था, साथमे अनुकंपा भाव से पुजारी या विधि करानेवाले को यत्किंचित् बहुमान प्रगट करते हुए कुछ धन-राशि प्रदान करवाई |

ऐसे बहुगुण-संपन्न महात्मा पूज्य आचार्यश्री हर्षसागर-सूरिजी को हम भावभरी वंदना करते हुए इस श्रुतकार्य का प्रारंभ करने जा रहे है |

**** मुनि दीपरत्नसागर*

[कात्रेज]पूना, शंखेश्वर, कपडवंज, प्रभासपाटण आदि स्थानोमे आगममंदिर के प्रेरक, कर्मग्रंथ अभ्यासु, निस्पृह महात्मा

पूज्यपाद गच्छाधिपति आचार्य श्री दौलतसागर-सूरीश्वरजी महाराज साहेब

(एवं) अजातशत्रु, स्वाध्याय-रसिक, प्रशांतमूर्ती और अपने गुरु के प्रीतिपात्र

परम पूज्य आचार्य श्री नंदीवर्धनसागर-सूरिजी महाराज साहेब

इस पवित्र श्रुत-कार्यमे दोनो सूरिवरो का स्मरण करते हुए कोटि कोटि वंदना के साथ

.....मुनि दीपरत्नसागर

[आवश्यक- निर्युक्ति: एवं वृत्ति:] इस प्रकाशन की विकास-गाथा

श्री भद्रभाहुस्वामिजी की निर्युक्ति पर मलयगिरिसूरिजी रचिता वृत्ति की प्रत सबसे पहले "श्री आवश्यकसूत्र" के नामसे सन १९२८ (विक्रम संवत १९८४) में आगमोदय समिति द्वारा प्रकाशित हुई , इस के संपादक-महोदय थे पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी (सागरानंदसूरिजी) महाराज साहेब | पूज्यपाद श्री हरिभद्रसूरिजीने भी आवश्यक-सूत्र पर एक विशाल वृत्ति की रचना कि है , जो हमारी "आगम सुत्ताणि सटीकं" एवं "सवृत्तिक आगम सूत्राणि" मे मुद्रित हुइ है |

✣ हमारा ये प्रयास क्यों? ✣ आगम की सेवा करने के हमें तो बहोत अवसर मिले, ४५-आगम सटीक भी हमने ३० भागोमे १२५०० से ज्यादा पृष्ठोमें प्रकाशित करवाए है, किन्तु लोगो की पूज्य श्री सागरानंदसूरीश्वरजी के प्रति श्रद्धा तथा प्रत स्वरुप प्राचीन प्रथा का आदर देखकर हमने इसी प्रत को स्केन करवाई , उसके बाद एक स्पेशियल फोरमेट बनवाया , जिसमे बीचमे पूज्यश्री संपादित प्रत ज्यों की त्यों रख दी , ऊपर शीर्षस्थानमे आगम का नाम , फिर अध्ययन-निर्युक्ति-भाष्य-मूलसूत्र- आदि के नंबर लिख दिए , ताँकि पढ़नेवाले को प्रत्येक पेज पर कौनसा अध्ययन, निर्युक्ति, भाष्य, सूत्र-आदि चल रहे है उसका सरलता से ज्ञान हो शके, बायीं तरफ आगम का क्रम दिया है, उसके साथ इसी प्रत का सूत्रक्रम और 'दीप अनुक्रम' देने की हमारी पद्धत्ति है मगर यहां तो मुख्य-तौर पे निर्युक्ति और भाष्य पर हि मलयगिरिजी रचिता वृत्ति है क्यों की ये वृत्ति सिर्फ़ १- अध्ययन तक ही प्राप्त हो रही है इसिलिए बायी तरफ़ सूत्रांक और दीप-अनुक्रमवाले विभाग कि कोइ उपयोगिता नहि रही|

यहां मूल संपादक कि बनायी हुइ एक अनुक्रमणिका भी पायी गई है , जो की तिनो [चारो] विभागो की एक साथ हि है , जिसमे निर्युक्ति, भाष्य आदि के क्रम , (प्रत के) पृष्ठांक सहित लिख दिये है , जिससे अभ्यासक व्यक्ति अपने चहिते निर्युक्ति एवं भाष्य तक आसानी से पहुँच शकता है | अनेक पृष्ठ के नीचे विशिष्ठ फूटनोट भी लिखी है , जिसमे उस पृष्ठ पर चल रहे ख़ास विषयवस्तु की , मूल प्रतमें रही हुई कोई-कोई मुद्रण-भूल की या क्रमांकन सम्बन्धी जानकारी प्राप्त होती है |

✣ शासनप्रभावक पूज्य आचार्यश्री हर्षसागरसूरिजी म० की प्रेरणासे और श्री परम आनंद श्वेताम्बर मूर्तिपूजक जैन संघ, पालडी, अमदावाद की संपूर्ण द्रव्य सहाय से ये "सवृत्तिक-आगम-सूत्राणि_2" भाग-४ का मुद्रण हुआ है, हम उन के प्रति हमारा आभार व्यक्त करते है |

.... मुनि दीपरत्नसागर.

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

आवश्यकस्य मलयगिरीयाया वृत्तेर्भागत्रयस्य विषयानुक्रमः ।

विषयः	पत्राङ्कः
प्रयोजनाद्युपन्याससाफल्यम्–(वचनप्रामाण्यम्) ...	१
मङ्गलचर्चा, नामादिलक्षणानि, द्रव्यमङ्गले नयचर्चा, मङ्गलोपयोगे मङ्गलता, नामादीनां भिन्नता, नामाद्येकान्तनिरासः ।	२
द्रव्यार्थिकपर्यायार्थिकविचारः । (मल्लवादिसिद्धसेनमते) ।	१२
नन्दिनिक्षेपाः ।	१२
ज्ञानपञ्चकस्वरूपं (गा. १) प्रत्यक्षपरोक्षविभागः, आत्मनो ज्ञातृत्वं, इन्द्रियाणां करणत्वेऽपि व्यवधायकता, केवले शेषज्ञानाभावसिद्धिः ।	१३
ज्ञानपञ्चकपार्थक्यसिद्धिः ।	१७
ज्ञानपञ्चकक्रमसिद्धिः, एकेन्द्रिये श्रुतसिद्धिः, लक्षणादिभेदैर्मतिश्रुतयोर्भेदः ।	२०
अवग्रहादयो मतिभेदाः (गा. २) । (संशयादीहाया भेदः)	२२
अवग्रहादीनां स्वरूपम् । (गा. ३) व्यञ्जनावग्रहे ज्ञानं, चक्षुर्मनसोरप्राप्यकारिता ।	२३
अवग्रहादीनां कालमानम् । (गा. ४) ।	२४
शब्दादीनां प्राप्ताप्राप्तबद्धस्पृष्टत्वादि (गा. ५) । (शब्दस्याप्राप्यकारितानिरासः)	२७
शब्दस्याकाशगुणत्वमपास्तम् ।	२८

२

अत्र मूल संपादकेन रचित निर्युक्ति-आदि-अनुक्रम: दर्शित:, उक्त पत्रांक: मुद्रित प्रतानुसार ज्ञातव्य:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

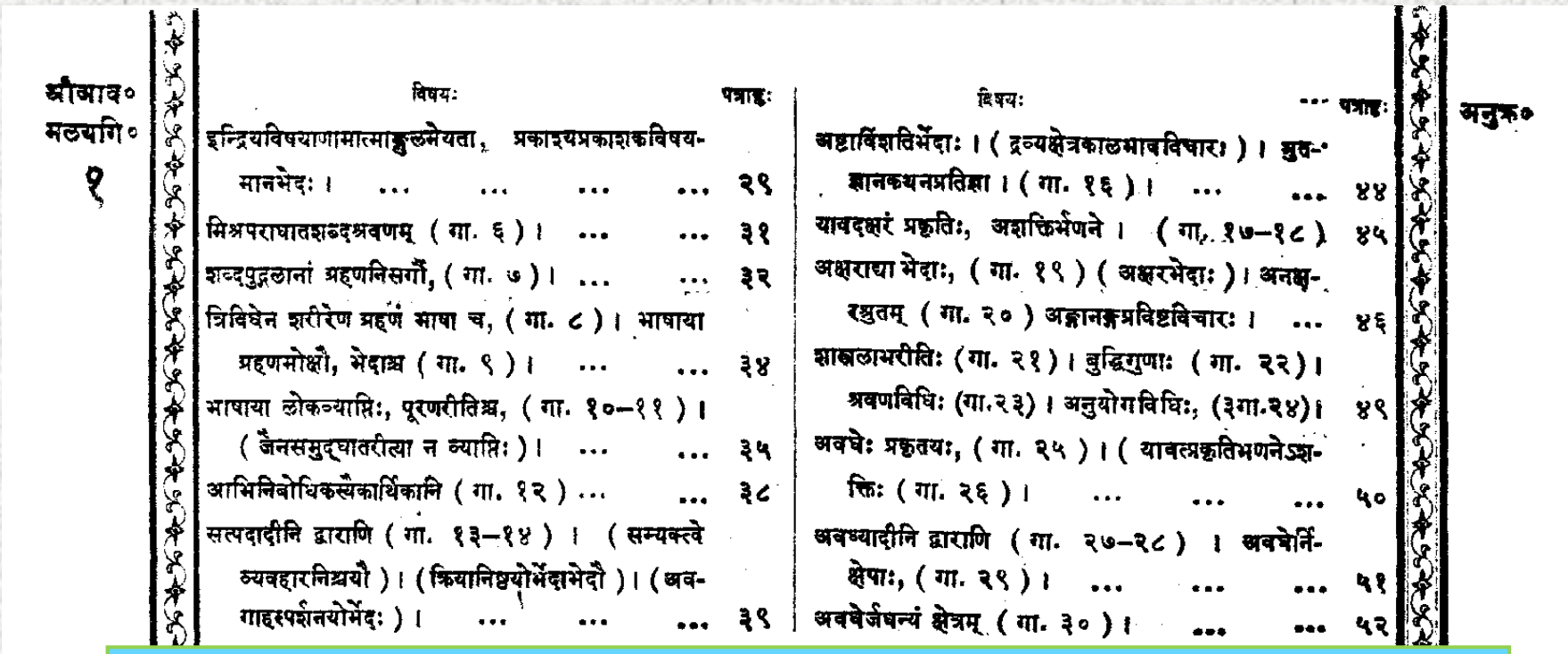

श्रीआव० मलयगि० १

विषयः	पत्राङ्कः
इन्द्रियविषयाणामात्माङ्गुलमेयता, प्रकाश्यप्रकाशकविषयमानभेदः ।	२९
मिश्रपराघातशब्दश्रवणम् (गा. ६) ।	३१
शब्दपुद्गलानां ग्रहणनिसर्गौ, (गा. ७) ।	३२
त्रिविधेन शरीरेण ग्रहणं भाषा च, (गा. ८) । भाषाया ग्रहणमोक्षौ, भेदाश्च (गा. ९) ।	३४
भाषाया लोकव्याप्तिः, पूरणरीतिश्च, (गा. १०–११) । (जैनसमुद्घातरीत्या न व्याप्तिः) ।	३५
आभिनिबोधिकस्यैकार्थिकानि (गा. १२)	३८
सत्पदादीनि द्वाराणि (गा. १३–१४) । (सम्यक्त्वे व्यवहारनिश्चयौ) । (क्रियानिष्ठयोर्भेदाभेदौ) । (अवगाहस्पर्शनयोर्भेदः) ।	३९

विषयः	पत्राङ्कः
अष्टाविंशतिर्भेदाः । (द्रव्यक्षेत्रकालभावविचारः) । श्रुतज्ञानकथनप्रतिज्ञा । (गा. १६) ।	४४
यावदक्षरं प्रकृतिः, अशक्तिर्भणने । (गा. १७–१८)	४५
अक्षराद्या भेदाः, (गा. १९) (अक्षरभेदाः) । अनक्षरश्रुतम् (गा. २०) अङ्गानङ्गप्रविष्टविचारः । ...	४६
शास्त्रलाभरीतिः (गा. २१) । बुद्धिगुणाः (गा. २२) । श्रवणविधिः (गा.२३) । अनुयोगविधिः, (३गा.२४) ।	४९
अवधेः प्रकृतयः, (गा. २५) । (यावत्प्रकृतिभणनेऽशक्तिः (गा. २६) ।	५०
अवध्यादीनि द्वाराणि (गा. २७–२८) । अवधेर्निक्षेपाः, (गा. २९) ।	५१
अवधेर्जघन्यं क्षेत्रम् (गा. ३०) ।	५२

अनुक्र०

अत्र मूल संपादकेन रचित निर्युक्ति-आदि-अनुक्रम: दर्शित:, उक्त पत्रांक: मुद्रित प्रतानुसार ज्ञातव्य:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

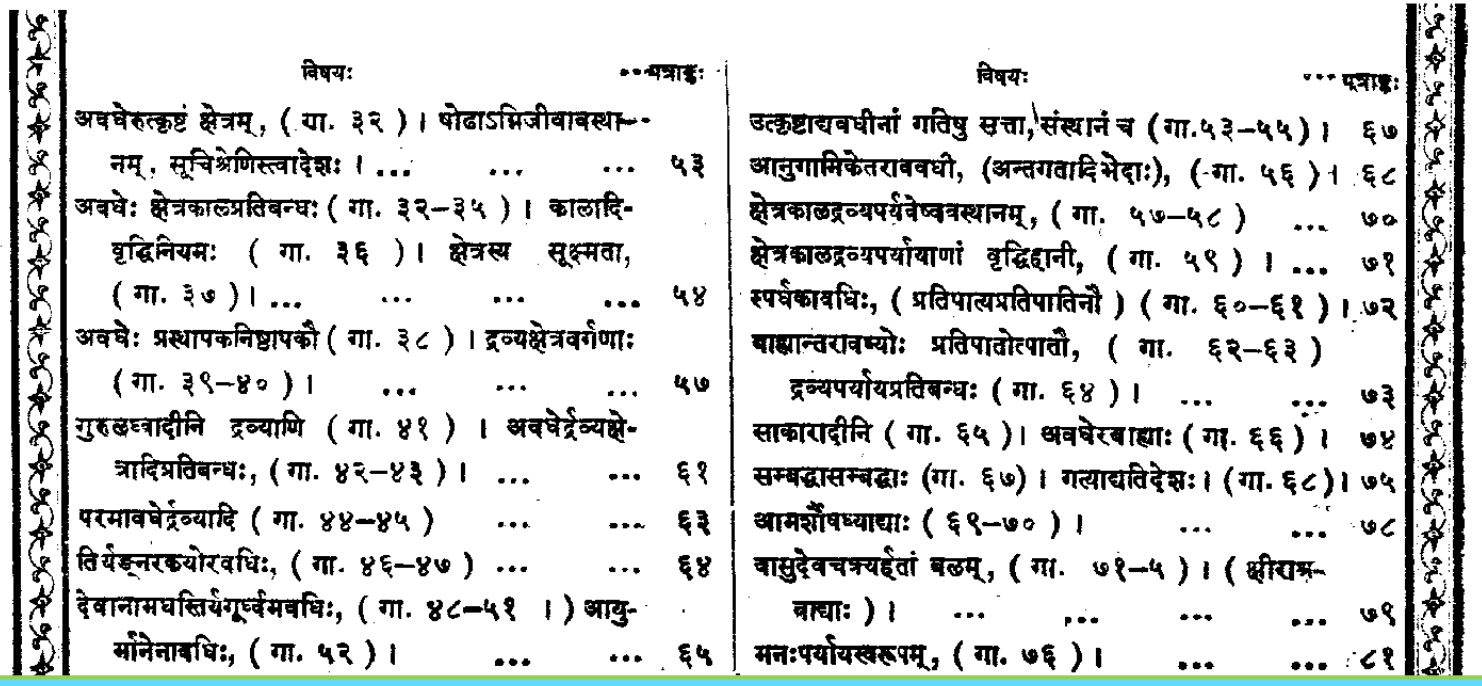

विषयः	पत्राङ्कः
अवधेरुत्कृष्टं क्षेत्रम्, (गा. ३२) । षोढाऽग्निजीवावस्था-नम्, सूचिश्रेणिस्त्वादेशः ।	५३
अवधेः क्षेत्रकालप्रतिबन्धः (गा. ३२–३५) । कालादि-वृद्धिनियमः (गा. ३६) । क्षेत्रस्य सूक्ष्मता, (गा. ३७) ।	५४
अवधेः प्रस्थापकनिष्ठापकौ (गा. ३८) । द्रव्यक्षेत्रवर्गणाः (गा. ३९–४०) ।	५७
गुरुलघ्वादीनि द्रव्याणि (गा. ४१) । अवधेर्द्रव्यक्षेत्रादिप्रतिबन्धः, (गा. ४२–४३) ।	६१
परमावधेर्द्रव्यादि (गा. ४४–४५)	६३
तिर्यङ्नरकयोरवधिः, (गा. ४६–४७)	६४
देवानामधस्तिर्यगूर्ध्वमवधिः, (गा. ४८–५१ ।) आयुर्मानेनावधिः, (गा. ५२) ।	६५

विषयः	पत्राङ्कः
उत्कृष्टाद्यवधीनां गतिषु सत्ता, संस्थानं च (गा.५३–५५) ।	६७
आनुगामिकेतराववधी, (अन्तगतादिभेदाः), (-गा. ५६) ।	६८
क्षेत्रकालद्रव्यपर्यवेष्ववस्थानम्, (गा. ५७–५८) ...	७०
क्षेत्रकालद्रव्यपर्यायाणां वृद्धिहानी, (गा. ५९) । ...	७१
स्पर्धकावधिः, (प्रतिपात्यप्रतिपातिनौ) (गा. ६०–६१) ।	७२
बाह्यान्तरावधोः प्रतिपातोत्पातौ, (गा. ६२–६३) द्रव्यपर्यायप्रतिबन्धः (गा. ६४) ।	७३
साकारादीनि (गा. ६५) । अवधेरबाह्याः (गा. ६६) ।	७४
सम्बद्धासम्बद्धाः (गा. ६७) । गत्याद्यतिदेशः । (गा. ६८) ।	७५
आमर्शौषध्याद्याः (६९–७०) ।	७८
वासुदेवचक्र्यर्हतां बलम्, (गा. ७१–५) । (क्षीराश्रवाद्याः) ।	७९
मनःपर्यायस्वरूपम्, (गा. ७६) ।	८१

अत्र मूल संपादकेन रचित निर्युक्ति-आदि-अनुक्रम: दर्शित:, उक्त पत्रांक: मुद्रित प्रतानुसार ज्ञातव्य:

Jain Educ ... elibrary.org

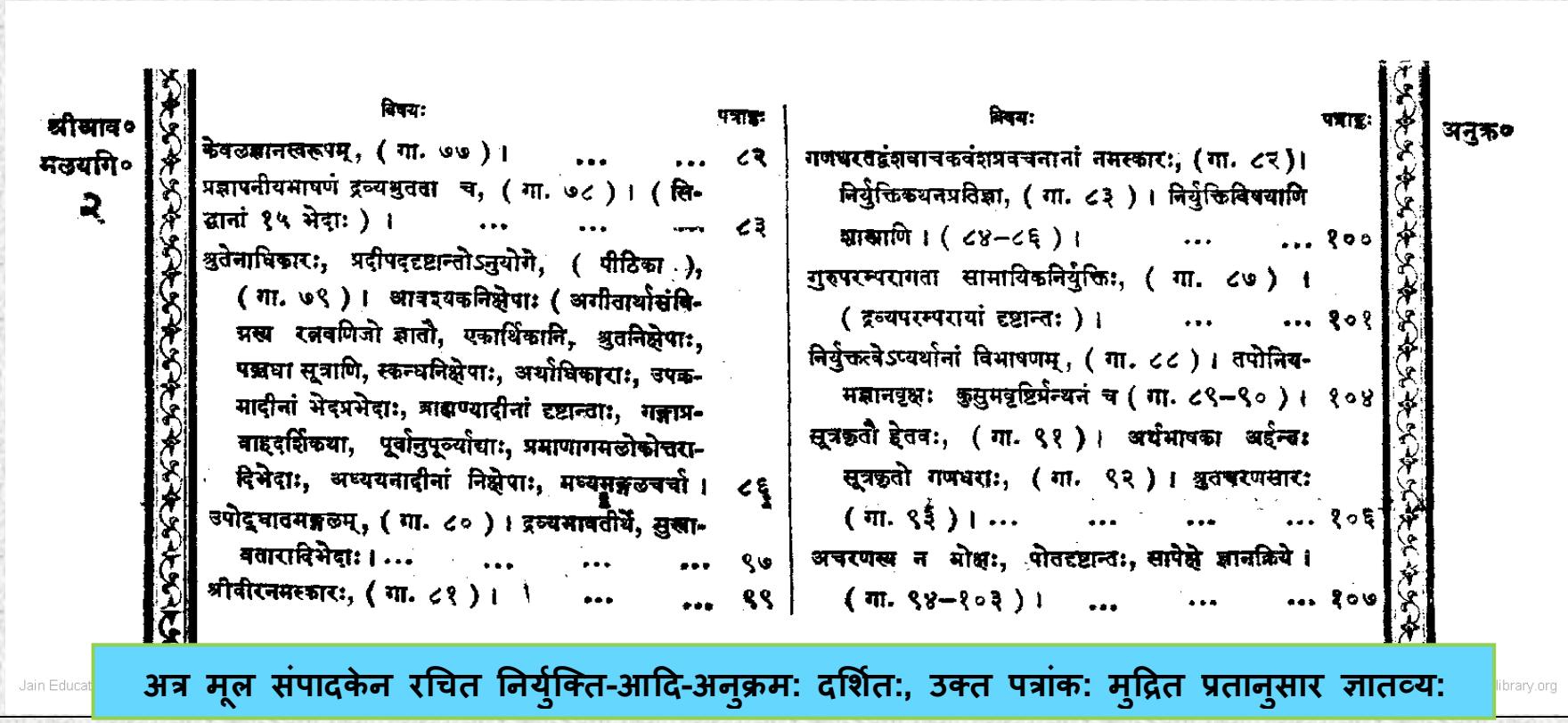

श्रीआव० मलयगि० २

विषयः	पत्राङ्कः
केवलज्ञानस्वरूपम्, (गा. ७७) ।	८२
प्रज्ञापनीयभाषणं द्रव्यश्रुतवा च, (गा. ७८) । (लिङ्गानां १५ भेदाः) ।	८३
श्रुतेनाधिकारः, प्रदीपदृष्टान्तोऽनुयोगे, (पीठिका), (गा. ७९) । आवश्यकनिक्षेपाः (अगीतार्थसंविग्नस्य रत्नवणिजो ज्ञातौ, एकार्थिकानि, श्रुतनिक्षेपाः, पञ्चधा सूत्राणि, स्कन्धनिक्षेपाः, अर्थाधिकाराः, उपक्रमादीनां भेदप्रभेदाः, ब्राह्मण्यादीनां दृष्टान्ताः, गङ्गाप्रवाहदर्शिकथा, पूर्वानुपूर्व्याद्याः, प्रमाणागमलोकोत्तरादिभेदाः, अध्ययनादीनां निक्षेपाः, मध्यमङ्गलचर्चा ।	८६
उपोद्घातमङ्गलम्, (गा. ८०) । द्रव्यभावतीर्थे, सुखावतारादिभेदाः ।	९७
श्रीवीरनमस्कारः, (गा. ८१) ।	९९
गणधरतद्वंशवाचकवंशप्रवचनानां नमस्कारः, (गा. ८२) । निर्युक्तिकथनप्रतिज्ञा, (गा. ८३) । निर्युक्तिविषयाणि द्वाराणि । (८४–८६) ।	१००
गुरुपरम्परागता सामायिकनिर्युक्तिः, (गा. ८७) । (द्रव्यपरम्परायां दृष्टान्तः) ।	१०१
निर्युक्तत्वेऽप्यर्थानां विभाषणम्, (गा. ८८) । तपोनियमज्ञानवृक्षः कुसुमवृष्टिर्ग्रन्थनं च (गा. ८९–९०) ।	१०४
सूत्रकृतौ हेतवः, (गा. ९१) । अर्थभाषका अर्हन्तः सूत्रकृतो गणधराः, (गा. ९२) । श्रुतचरणसारः (गा. ९३) ।	१०६
अचरणस्य न मोक्षः, पोतदृष्टान्तः, सापेक्षे ज्ञानक्रिये । (गा. ९४–१०३) ।	१०७

अनुक्र०

अत्र मूल संपादकेन रचित निर्युक्ति-आदि-अनुक्रम: दर्शित:, उक्त पत्रांक: मुद्रित प्रतानुसार ज्ञातव्य:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

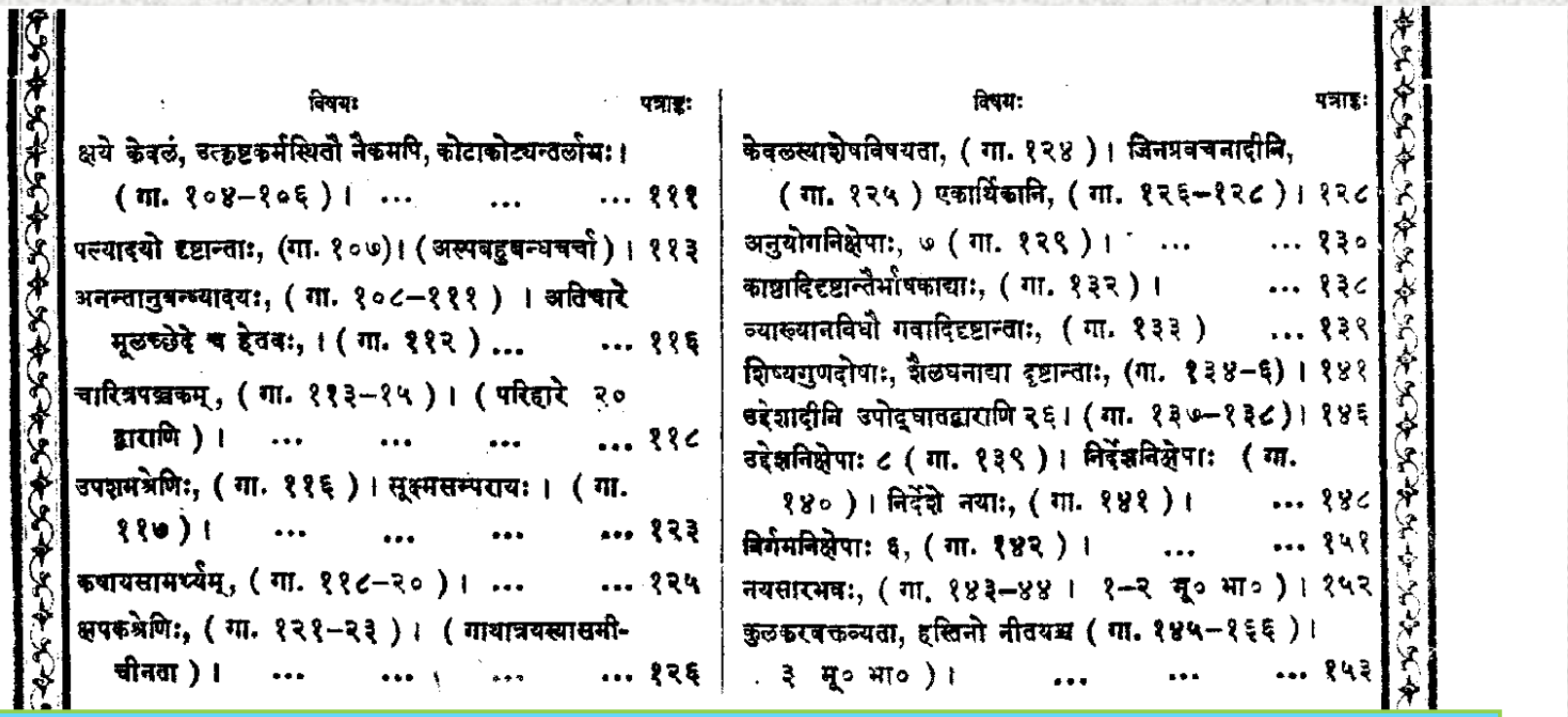

विषयः	पत्राङ्कः
क्षये केवलं, उत्कृष्टकर्मस्थितौ नैकमपि, कोटाकोट्यन्तर्लाभः। (गा. १०४–१०६)।	१११
पल्यादयो दृष्टान्ताः, (गा. १०७)। (अल्पबहुबन्धवर्चा)।	११३
अनन्तानुबन्ध्यादयः, (गा. १०८–१११)। अतिचारे मूलच्छेदे च हेतवः, । (गा. ११२)	११६
चारित्रपञ्चकम्, (गा. ११३–१५)। (परिहारे २० द्वाराणि)।	११८
उपशमश्रेणिः, (गा. ११६)। सूक्ष्मसम्परायः। (गा. ११७)।	१२३
कषायसामर्थ्यम्, (गा. ११८–२०)।	१२५
क्षपकश्रेणिः, (गा. १२१–२३)। (गाथात्रयस्यासमीचीनता)।	१२६

विषयः	पत्राङ्कः
केवलस्याशेषविषयता, (गा. १२४)। जिनप्रवचनादीनि, (गा. १२५) एकार्थिकानि, (गा. १२६–१२८)।	१२८
अनुयोगनिक्षेपाः, ७ (गा. १२९)।	१३०
काष्ठादिदृष्टान्तैर्भाषकाद्याः, (गा. १३२)। ...	१३८
व्याख्यानविधौ गवादिदृष्टान्ताः, (गा. १३३) ...	१३९
शिष्यगुणदोषाः, शैलघनाद्या दृष्टान्ताः, (गा. १३४–६)।	१४१
उद्देशादीनि उपोद्घातद्वाराणि २६। (गा. १३७–१३८)।	१४६
उद्देशनिक्षेपाः ८ (गा. १३९)। निर्देशनिक्षेपाः (गा. १४०)। निर्देशे नयाः, (गा. १४१)। ...	१४८
निर्गमनिक्षेपाः ६, (गा. १४२)।	१५१
नयसारभवः, (गा. १४३–४४। १–२ मू० भा०)।	१५२
कुलकरवक्तव्यता, हस्तिनो नीतयश्च (गा. १४५–१५६)। ३ मू० भा०)।	१५३

अत्र मूल संपादकेन रचित निर्युक्ति-आदि-अनुक्रम: दर्शित:, उक्त पत्रांक: मुद्रित प्रतानुसार ज्ञातव्य:

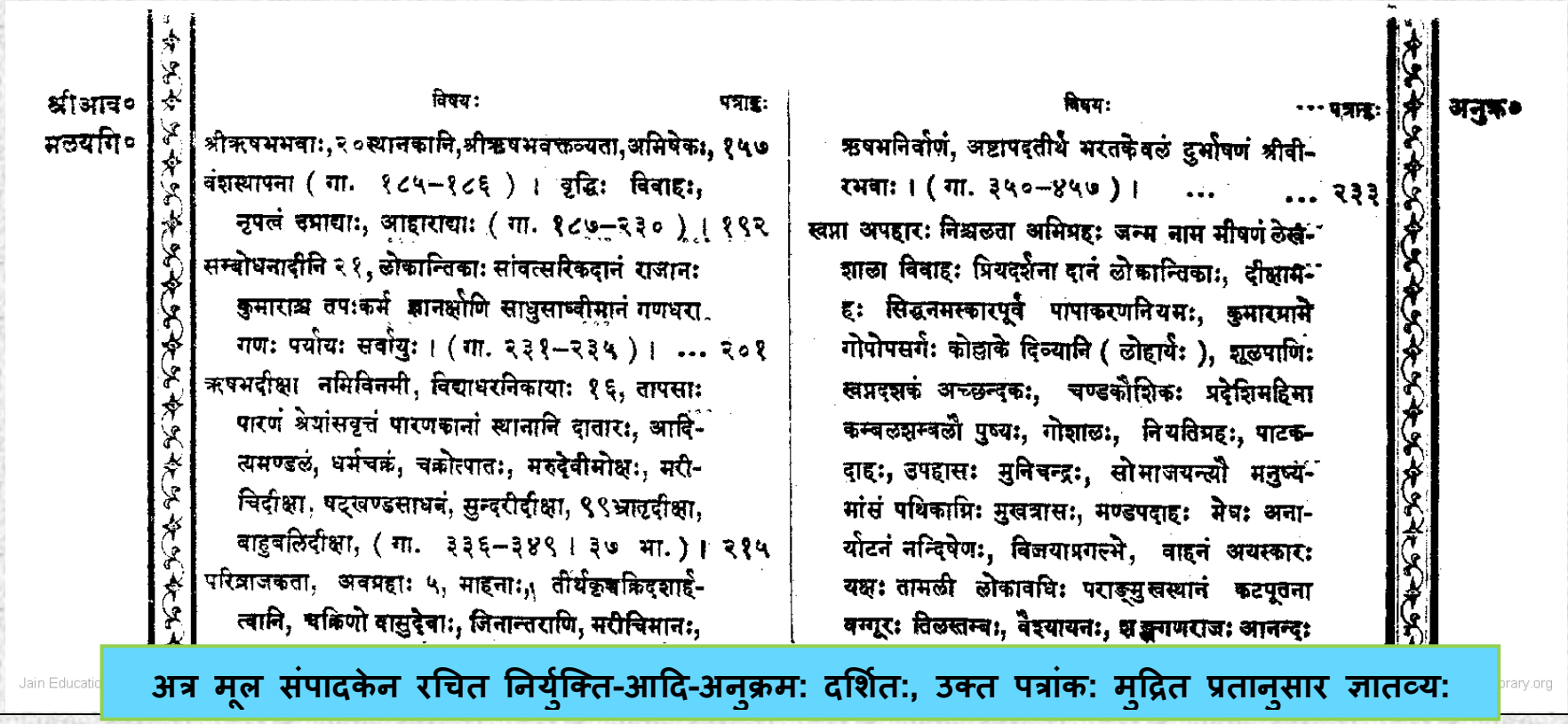

श्रीआव० मलयगि०

विषय: पत्राङ्क:

श्रीऋषभभवाः, २० स्थानकानि, श्रीऋषभवक्तव्यता, अभिषेकः, १५७
वंशस्थापना (गा. १८५–१८६) । वृद्धिः विवाहः,
नृपत्वं वर्णाद्याः, आहाराद्याः (गा. १८७–२३०) । १९२
सम्बोधनादीनि २१, लोकान्तिकाः सांवत्सरिकदानं राजानः
कुमाराश्च तपःकर्म ज्ञानक्षोणि साधुसाध्वीप्रमाणं गणधरा
गणः पर्यायः सर्वायुः । (गा. २३१–२३५) । ... २०१
ऋषभदीक्षा नमिविनमी, विद्याधरनिकायाः १६, तापसाः
पारणं श्रेयांसवृत्तं पारणकानां स्थानानि दातारः, आदि-
त्यमण्डलं, धर्मचक्रं, चक्रोत्पातः, मरुदेवीमोक्षः, मरी-
चिदीक्षा, षट्खण्डसाधनं, सुन्दरीदीक्षा, ९९भ्रातृदीक्षा,
बाहुबलिदीक्षा, (गा. ३३६–३४९ । ३७ भा.) । २१५
परिव्राजकता, अवग्रहाः ५, माहनाः, तीर्थकृच्चक्रिदशार्ह-
त्वानि, चक्रिणो वासुदेवाः, जिनान्तराणि, मरीचिभवः,

विषय: ... पत्राङ्क: अनुक्र०

ऋषभनिर्वाणं, अष्टापदतीर्थं भरतकेवलं दुर्भाषणं श्रीवी-
रभवाः । (गा. ३५०–४५७) । २३३
स्वप्ना अपहारः निश्चलता अभिग्रहः जन्म नाम भीषणं लेख-
शाला विवाहः प्रियदर्शना दानं लोकान्तिकाः, दीक्षाग्र-
हः सिद्धनमस्कारपूर्वं पापाकरणनियमः, कुमारग्रामे
गोपोपसर्गः कोल्लाके दिव्यानि (लोहार्यः), शूलपाणिः
स्वप्नदृशकं अच्छन्दकः, चण्डकौशिकः प्रदेशिमहिमा
कम्बलशम्बलौ पुष्यः, गोशालः, नियतिग्रहः, पाटक-
दाहः, उपहासः मुनिचन्द्रः, सोमाजयन्त्यौ मनुष्य-
मांसं पथिकाग्निः मुखत्रासः, मण्डपदाहः मेघः अना-
र्यांटनं नन्दिषेणः, विजयाप्रगल्भे, वाहनं अयस्कारः
यक्षः तामली लोकावधिः पराङ्मुखस्थानं कटपूतना
वग्गूरः तिलस्तम्बः, वैश्यायनः, शक्रागमराजः आनन्दः

अत्र मूल संपादकेन रचित निर्युक्ति-आदि-अनुक्रम: दर्शित:, उक्त पत्रांक: मुद्रित प्रतानुसार ज्ञातव्य:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

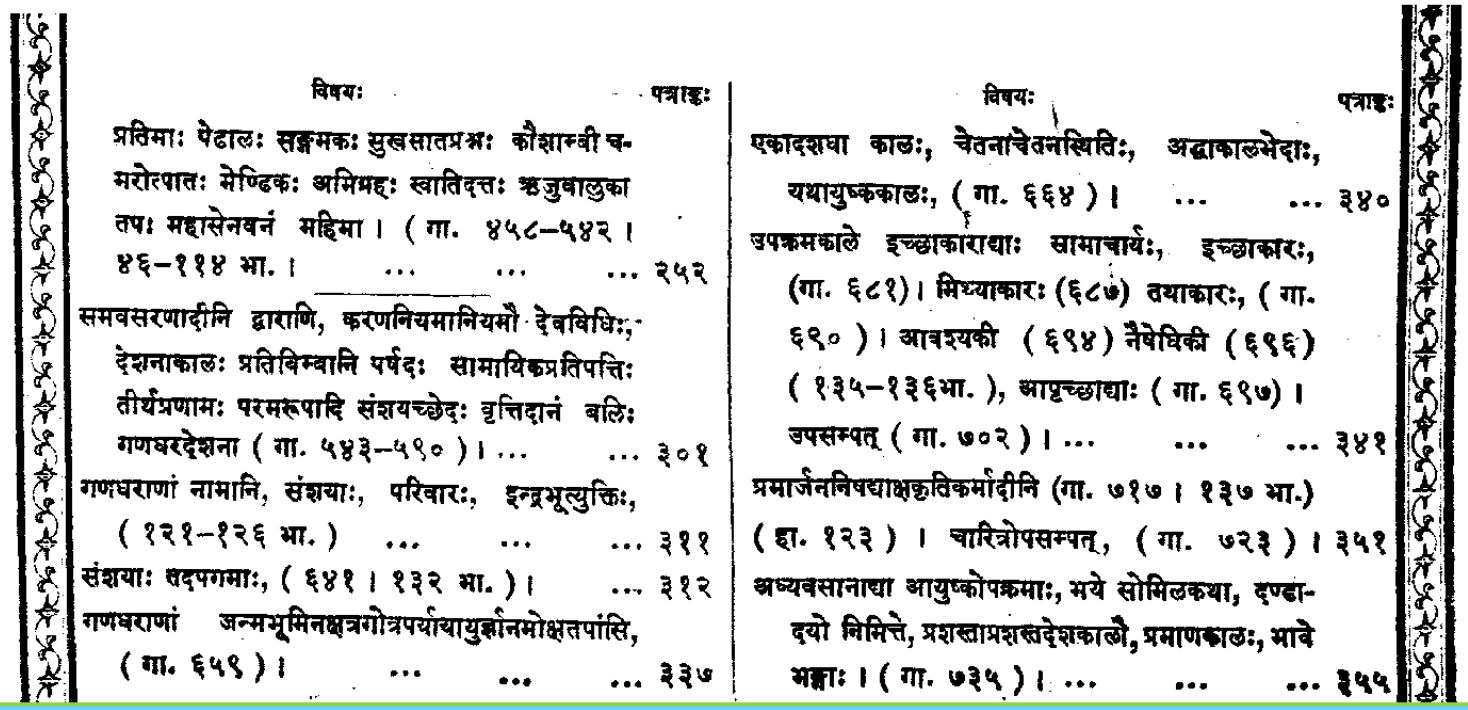

विषयः पत्राङ्कः

प्रतिमाः पेढालः सङ्गमकः सुखसातप्रश्नः कौशाम्बी च-
मरोत्पातः मेण्ढिकः अभिग्रहः स्वातिदत्तः ऋजुवालुका
तपः महासेनवनं महिमा । (गा. ४५८–५४२ ।
४६–११४ भा. । २५२

समवसरणादीनि द्वाराणि, करणनियमानियमौ देवविधिः,
देशनाकालः प्रतिविम्बानि पर्षदः सामायिकप्रतिपत्तिः
तीर्थप्रणामः परमरूपादि संशयच्छेदः वृत्तिदानं बलिः
गणधरदेशना (गा. ५४३–५९०) । ३०१

गणधराणां नामानि, संशयाः, परिवारः, इन्द्रभूत्युक्तिः,
(१२१–१२६ भा.) ३११

संशयाः तदपगमाः, (६४१ । १३२ भा.) । ... ३१२

गणधराणां जन्मभूमिनक्षत्रगोत्रपर्यायायुर्ज्ञानमोक्षतपांसि,
(गा. ६५९) । ३३७

विषयः पत्राङ्कः

एकादशधा कालः, चेतनाचेतनस्थितिः, अद्धाकालभेदाः,
यथायुष्ककालः, (गा. ६६४) । ३४०

उपक्रमकाले इच्छाकाराद्याः सामाचार्यः, इच्छाकारः,
(गा. ६८१) । मिथ्याकारः (६८७) तथाकारः, (गा.
६९०) । आवश्यकी (६९४) नैषेधिकी (६९६)
(१३५–१३६भा.), आपृच्छाद्याः (गा. ६९७) ।
उपसम्पत् (गा. ७०२) । ३४१

प्रमार्जननिषद्याक्षकृतिकर्मादीनि (गा. ७१७ । १३७ भा.)
(हा. १२३) । चारित्रोपसम्पत्, (गा. ७२३) । ३५१

अध्यवसानाद्या आयुष्कोपक्रमाः, भये सोमिलकथा, दण्डा-
दयो निमित्ते, प्रशस्ताप्रशस्तदेशकालौ, प्रमाणकालः, भावे
भङ्गाः । (गा. ७३५) । ३५५

अत्र मूल संपादकेन रचित निर्युक्ति-आदि-अनुक्रम: दर्शित:, उक्त पत्रांक: मुद्रित प्रतानुसार ज्ञातव्य:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

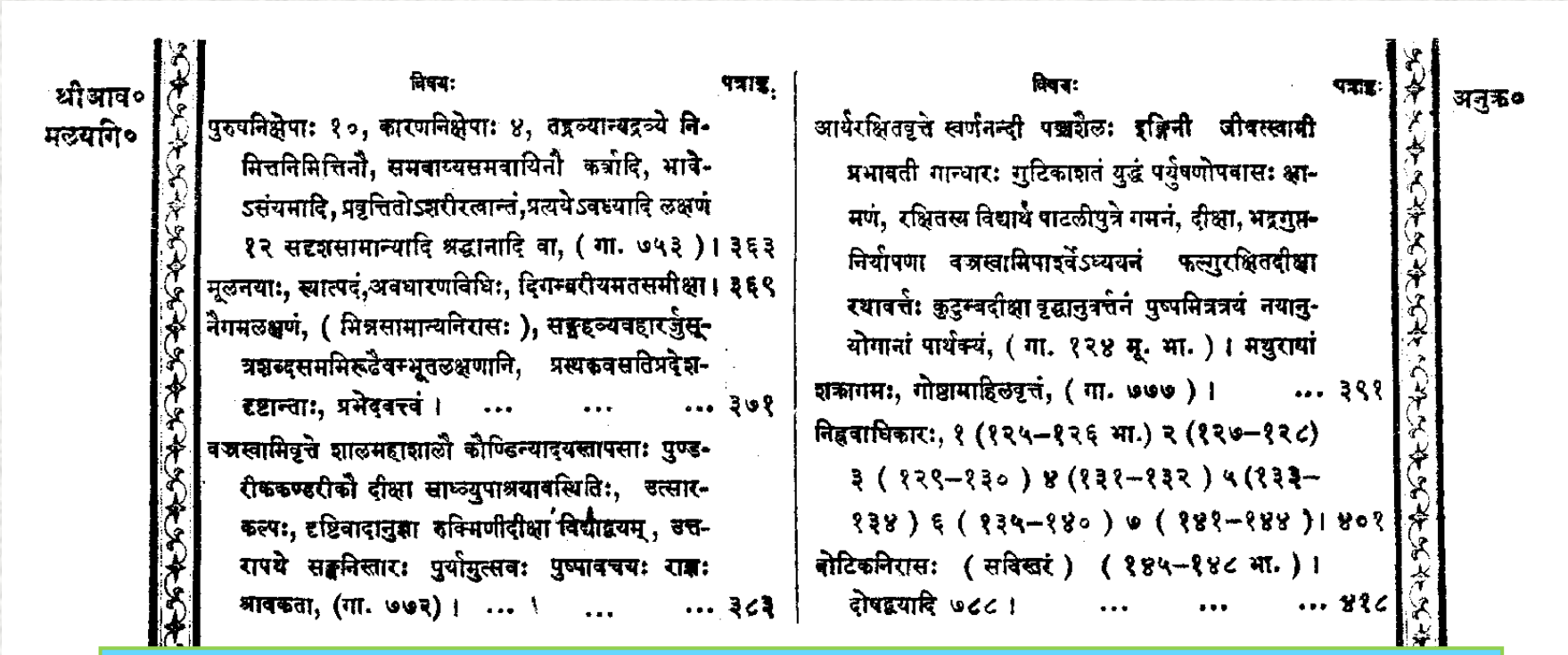

श्रीआव० मलयगि०

विषयः पत्राङ्कः

पुरुषनिक्षेपाः १०, कारणनिक्षेपाः ४, तद्द्रव्यान्यद्रव्ये नि-
मित्तनिमित्तिनौ, समवाय्यसमवायिनौ कर्त्रादि, भावे-
ऽसंयमादि, प्रवृत्तितोऽशरीरत्वान्तं,प्रत्ययेऽवध्यादि लक्षणं
१२ सदृशसामान्यादि श्रद्धानादि वा, (गा. ७५३)। ३६३
मूलनयाः, स्यात्पदं,अवधारणविधिः, दिगम्बरीयमतसमीक्षा। ३६९
नैगमलक्षणं, (भिन्नसामान्यनिरासः), सङ्ग्रहव्यवहारर्जुसू-
त्रशब्दसमभिरूढैवम्भूतलक्षणानि, प्रस्थकवसतिप्रदेश-
दृष्टान्ताः, प्रभेदवत्त्वं । ३७१
वज्रस्वामिवृत्ते शालमहाशालौ कौण्डिन्यादयस्तापसाः पुण्ड-
रीककण्डरीकौ दीक्षा साध्व्युपाश्रयावस्थितिः, उत्सार-
कल्पः, दृष्टिवादानुज्ञा रुक्मिणीदीक्षा विधाद्वयम्, उत्त-
रापथे सङ्घनिस्तारः पुर्यामुत्सवः पुष्पावचयः राज्ञः
श्रावकता, (गा. ७७२) । ३८३
आर्यरक्षितवृत्ते स्वर्णनन्दी पञ्चशैलः इक्षिनी जीवस्वामी
प्रभावती गान्धारः गुटिकाशतं युद्धं पर्युषणोपवासः क्षा-
मणं, रक्षितस्य विद्यार्थं पाटलीपुत्रे गमनं, दीक्षा, भद्रगुप्त-
निर्यापणा वज्रस्वामिपार्श्वेऽध्ययनं फल्गुरक्षितदीक्षा
रथावर्त्तः कुटुम्बदीक्षा वृद्धानुवर्त्तनं पुष्पमित्रत्रयं नयानु-
योगानां पार्थक्यं, (गा. १२४ मू. भा.) । मथुरायां
शक्रागमः, गोष्ठामाहिलवृत्तं, (गा. ७७७) । ... ३९१
निह्नवाधिकारः, १ (१२५–१२६ भा.) २ (१२७–१२८)
३ (१२९–१३०) ४ (१३१–१३२) ५ (१३३–
१३४) ६ (१३५–१४०) ७ (१४१–१४४)। ४०१
बोटिकनिरासः (सविस्तरं) (१४५–१४८ भा.) ।
दोषद्वयादि ७८८ । ४१८

विषयः पत्राङ्कः

अनुक्र०

अत्र मूल संपादकेन रचित निर्युक्ति-आदि-अनुक्रम: दर्शित:, उक्त पत्रांक: मुद्रित प्रतानुसार ज्ञातव्य:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

विषयः	पत्राङ्कः
अनुमते तपःसंयमादि, सामायिकस्यात्मादि लक्षणं, (गा. १४९–१५५)।	४२८
व्रतानां द्रव्येष्ववतारः, द्रव्यपर्यायापेक्षया सामायिकं। ...	४३१
सामायिकस्य भेदाः सम्यक्त्ववादीनां भेदाः (१५० भा.) गा. ७९५।	४३३
सन्निहितात्मादेः सामायिकम्, (गा. ८०३)। ...	४३५
सामायिकप्राप्तिहेतुक्षेत्रदिक्कालगत्यादीनि द्वाराणि अलङ्कारादिद्वारान्तानि, दिग्निक्षेपः, (गा. ८२९)। ...	४३६
द्रव्यपर्यायव्यापितावचारः, (गा. ८३०)। ...	४५१
मनुजत्वादीनां दौर्लभ्ये चोल्लकादयो दृष्टान्ताः, (गा.८४०)।	४५१
आलस्याद्या धर्मविघ्नहेतवः, यानावरणादिरूपकम्, (गा. ८४३)।	४५५

विषयः	पत्राङ्कः
दृष्टानुभवादौ सम्यक्त्वं, (आनन्दादिश्रावकचरित्राणि) (गा. ८४४)।	४५६
वल्कलचीरिवृत्तम्।	४५७
अनुकम्पाद्या हेतवः, तद्दृष्टान्ताश्च वैद्यादयः, अभ्युत्थानादयः, (गा. ८४९)।	४६०
कालमानं, प्रतिपद्यमानादयः, अन्तरं, अविरहविरहौ आकर्षाः स्पर्शना भागः पर्यायाः, दमदन्ताद्या दृष्टान्ताः (गा. ८७९)।	४६९
इत्युपोद्घातनिर्युक्तिः।	
सूत्रस्य दोषा गुणाः, सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्तिनयानां सममनुगमः, (गा. ८८६)।	४८२
ङत्पत्त्यादिफलान्तं नमस्कारे, समुत्थानवाचनालब्धितः स्वामी निक्षेपास्तेषु नयाः किमादिषद्द्वया सत्पदादि-	

अत्र मूल संपादकेन रचित निर्युक्ति-आदि-अनुक्रम: दर्शित:, उक्त पत्रांक: मुद्रित प्रतानुसार ज्ञातव्य:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

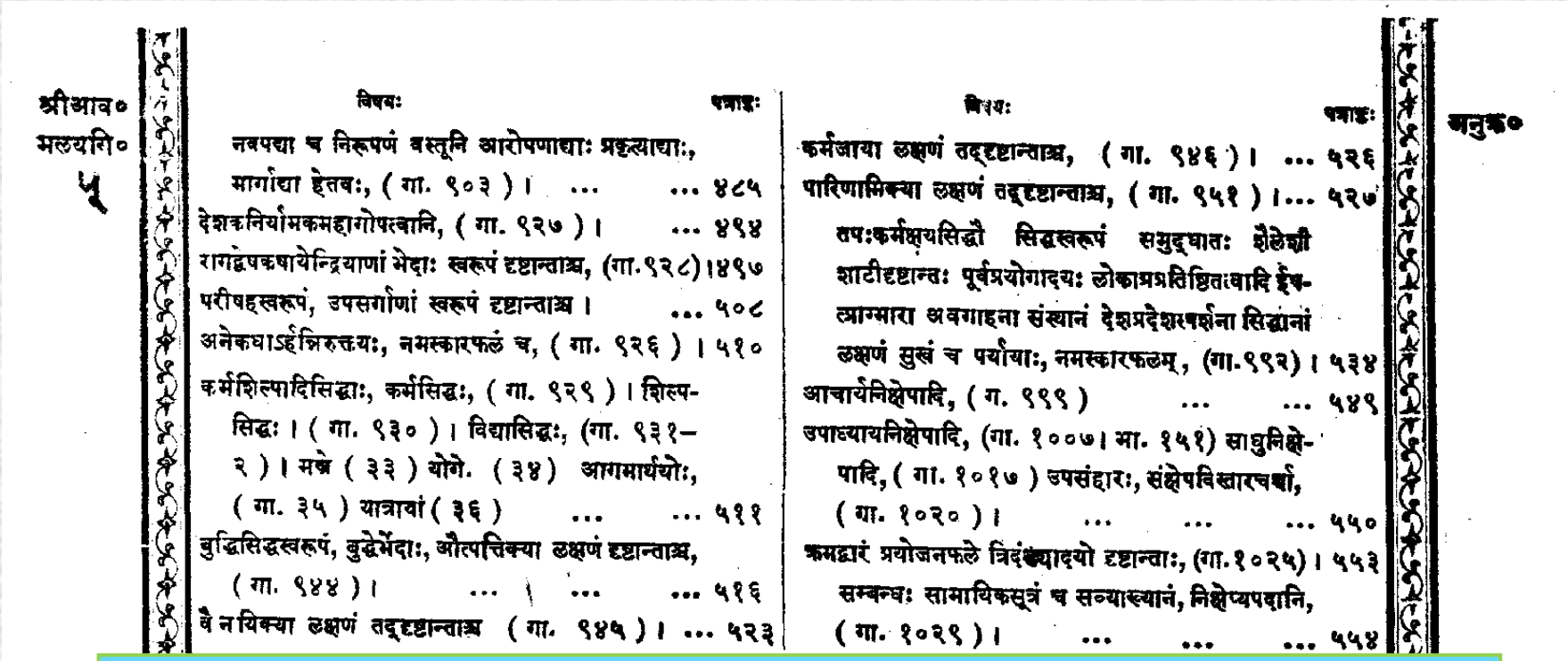

श्रीआव० मलयगि० ५

विषयः	पत्राङ्कः
नवपद्या च निरूपणं वस्तूनि आरोपणाद्याः प्रकृत्याद्याः, मार्गाद्या हेतवः, (गा. ९०३) । ...	४८५
देशकनिर्यामकमहागोपत्वानि, (गा. ९२७) । ...	४९४
रागद्वेषकषायेन्द्रियाणां भेदाः स्वरूपं दृष्टान्ताश्च, (गा.९२८)।	४९७
परीषहस्वरूपं, उपसर्गाणां स्वरूपं दृष्टान्ताश्च । ...	५०८
अनेकधाऽर्हन्निरुक्तयः, नमस्कारफलं च, (गा. ९२६) ।	५१०
कर्मशिल्पादिसिद्धाः, कर्मसिद्धः, (गा. ९२९) । शिल्पसिद्धः । (गा. ९३०) । विद्यासिद्धः, (गा. ९३१–२) । मन्त्रे (३३) योगे. (३४) आगमार्थयोः, (गा. ३५) यात्रायां (३६)	५११
बुद्धिसिद्धस्वरूपं, बुद्धेर्भेदाः, औत्पत्तिक्या लक्षणं दृष्टान्ताश्च, (गा. ९४४) ।	५१६
वैनयिक्या लक्षणं तद्दृष्टान्ताश्च (गा. ९४५) । ...	५२३

विषयः	पत्राङ्कः
कर्मजाया लक्षणं तद्दृष्टान्ताश्च, (गा. ९४६) । ...	५२६
पारिणामिक्या लक्षणं तद्दृष्टान्ताश्च, (गा. ९५१) । ...	५२७
तपःकर्मक्षयसिद्धौ सिद्धस्वरूपं समुद्घातः शैलेशी शाटीदृष्टान्तः पूर्वप्रयोगादयः लोकाग्रप्रतिष्ठितत्वादि ईषत्प्राग्भारा अवगाहना संस्थानं देशप्रदेशस्पर्शना सिद्धानां लक्षणं सुखं च पर्यायाः, नमस्कारफलम्, (गा.९९२) ।	५३४
आचार्यनिक्षेपादि, (ग. ९९९)	५४९
उपाध्यायनिक्षेपादि, (गा. १००७। भा. १५१) साधुनिक्षेपादि, (गा. १०१७) उपसंहारः, संक्षेपविस्तारचर्चा, (गा. १०२०) ।	५५०
क्रमद्वारं प्रयोजनफले त्रिदंड्यादयो दृष्टान्ताः, (गा.१०२५) ।	५५३
सम्बन्धः सामायिकसूत्रं च सव्याख्यानं, निक्षेप्यपदानि, (गा. १०२९) ।	५५४

अनुक्र०

Jain Educatio ... orary.org

अत्र मूल संपादकेन रचित निर्युक्ति-आदि-अनुक्रम: दर्शित:, उक्त पत्रांक: मुद्रित प्रतानुसार ज्ञातव्य:

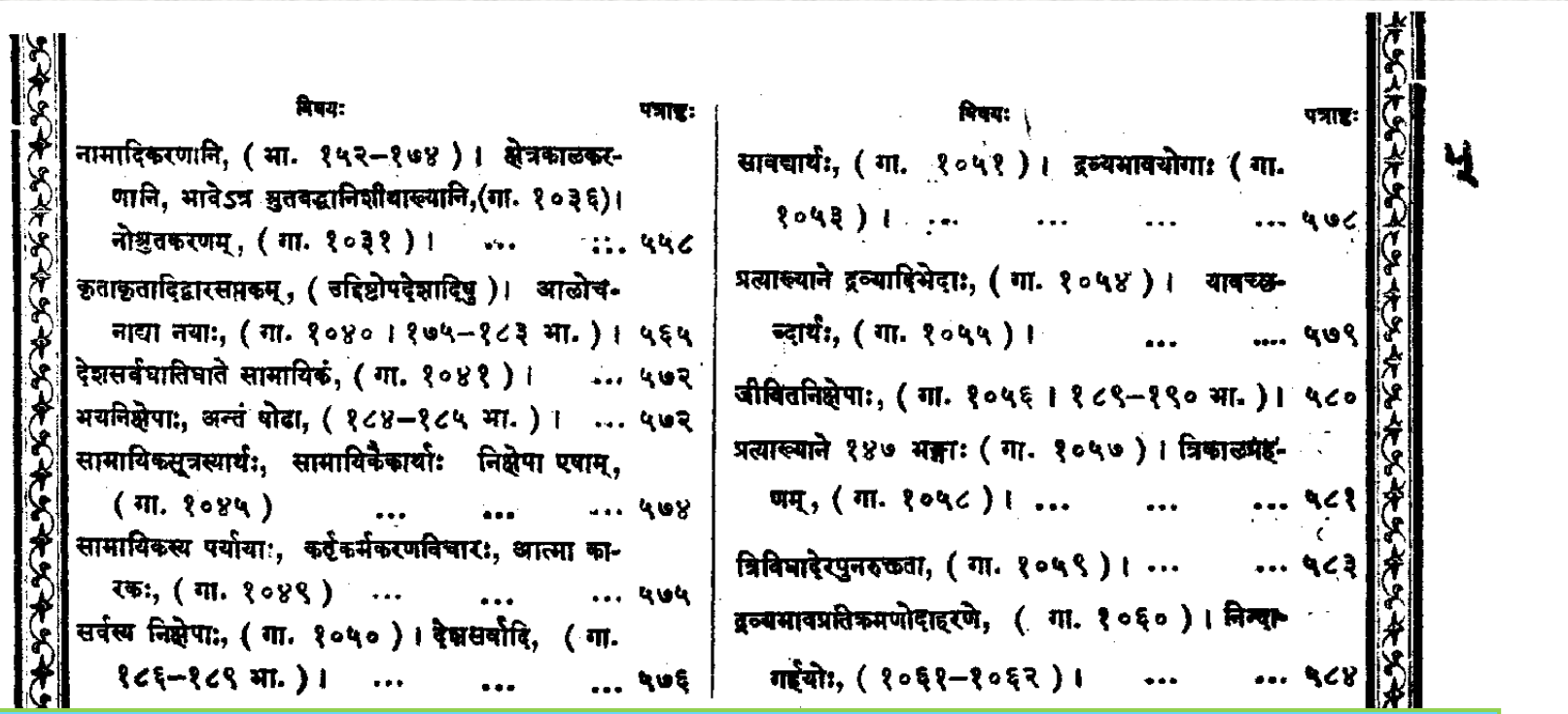

विषयः पत्राङ्कः

नामादिकरणानि, (भा. १५२–१७४) । क्षेत्रकालकरणानि, भावेऽत्र श्रुतवद्वानिशीथाख्यानि,(गा. १०३६)। नोश्रुतकरणम्, (गा. १०३१) । ५५८

कृताकृतादिद्वारसप्तकम्, (उद्दिष्टोपदेशादिषु)। आलोचनाद्या नयाः, (गा. १०४० । १७५–१८३ भा.) । ५६५

देशसर्वघातिघाते सामायिकं, (गा. १०४१) । ... ५७२

भयनिक्षेपाः, अन्तं षोढा, (१८४–१८५ भा.) । ... ५७२

सामायिकसूत्रस्यार्थः, सामायिकैकार्थाः निक्षेपा एषाम्, (गा. १०४५) ५७४

सामायिकस्य पर्यायाः, कर्तृकर्मकरणविचारः, आत्मा कारकः, (गा. १०४९) ५७५

सर्वस्य निक्षेपाः, (गा. १०५०) । देशसर्वादि, (गा. १८६–१८९ भा.) । ५७६

विषयः पत्राङ्कः

सावद्यार्थः, (गा. १०५१) । द्रव्यभावयोगाः (गा. १०५३) । ५७८

प्रत्याख्याने द्रव्यादिभेदाः, (गा. १०५४) । यावच्छब्दार्थः, (गा. १०५५) । ५७९

जीवितनिक्षेपाः, (गा. १०५६ । १८९–१९० भा.) । ५८०

प्रत्याख्याने १४७ भङ्गाः (गा. १०५७) । त्रिकालग्रहणम्, (गा. १०५८) । ५८१

त्रिविधादेरपुनरुक्तता, (गा. १०५९) । ५८३

द्रव्यभावप्रतिक्रमणोदाहरणे, (गा. १०६०) । निन्दागर्हयोः, (१०६१–१०६२) । ५८४

अत्र मूल संपादकेन रचित निर्युक्ति-आदि-अनुक्रम: दर्शित:, उक्त पत्रांक: मुद्रित प्रतानुसार ज्ञातव्य:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

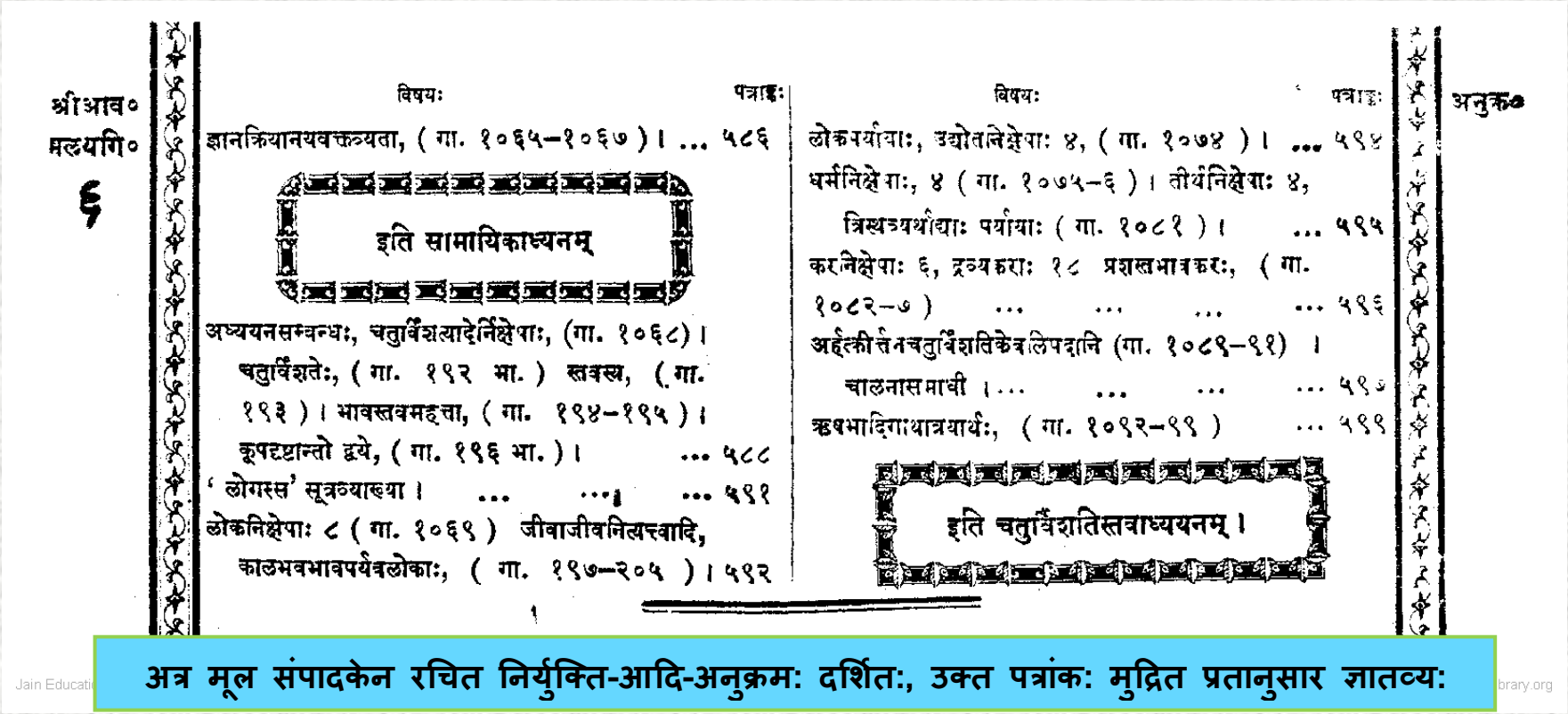

श्रीआव० मलयगि० ६

विषयः पत्राङ्कः

ज्ञानक्रियानयवक्तव्यता, (गा. १०६५–१०६७)। ... ५८६

इति सामायिकाध्ययनम्

अध्ययनसम्बन्धः, चतुर्विंशत्यादेर्निक्षेपाः, (गा. १०६८)।
चतुर्विंशतेः, (गा. १९२ भा.) स्तवस्य, (गा. १९३)। भावस्तवमहत्ता, (गा. १९४–१९५)।
कूपदृष्टान्तो द्वये, (गा. १९६ भा.)। ... ५८८
'लोगस्स' सूत्रव्याख्या। ५९१
लोकनिक्षेपाः ८ (गा. १०६९) जीवाजीवनित्यत्वादि,
कालभवभावपर्यवलोकाः, (गा. १९७–२०५)। ५९२

लोकपर्यायाः, उद्योतनिक्षेपाः ४, (गा. १०७४)। ... ५९४
धर्मनिक्षेपाः, ४ (गा. १०७५–६)। तीर्थनिक्षेपाः ४,
त्रिस्थत्र्यर्थाद्याः पर्यायाः (गा. १०८१)। ... ५९५
करनिक्षेपाः ६, द्रव्यकराः १८ प्रशस्तभावकरः, (गा. १०८२–७) ५९६
अर्हत्कीर्तनचतुर्विंशतिकेवलिपदानि (गा. १०८९–९१)।
चालनासमाधी ।... ... ... ५९७
ऋषभादिगाथात्रयार्थः, (गा. १०९२–९९) ... ५९९

इति चतुर्विंशतिस्तवाध्ययनम्।

अनुक्र०

अत्र मूल संपादकेन रचित निर्युक्ति-आदि-अनुक्रम: दर्शित:, उक्त पत्रांक: मुद्रित प्रतानुसार ज्ञातव्य:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

भद्रबाहस्वामी रचिता निर्युक्ति युक्त श्रीमद् आवश्यकसूत्र (मलयगिरिजी कृत) विवरणम् भाग-२

उद्देसे १ निद्देसे २ य निग्गमे ३ खेत्त ४ काल ५ पुरिसे ६ य ।
कारण ७ पच्चय ८ लक्खण ९ नए १० समोयारणा ११ णुमए १२ ॥ १३७ ॥

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥१४६॥

किं १३ कइविहं १४ कस्स १५ कहिं १६ केसु १७ कहं १८ केचिरं हवइ कालं १९ ।
कइ २० संतर २१ मविरहियं २२ भवा २३ गरिस २४ फासण २५ निरुत्ती २६ ॥ १३८ ॥

उद्देशो वक्तव्यः, एवं सर्वत्र क्रिया योजनीया, उद्देशनमुद्देशः, सामान्याभिधानमित्यर्थः, यथाऽध्ययनमिति, तथा निर्देशनं निर्देशः, विशेषाभिधानमिति भावो, यथा सामायिकमिति, तथा निर्गमनं निर्गमो वक्तव्यो, यथा कुतोऽस्य सामायिकाध्ययनस्य निर्गमनमिति, तथा क्षेत्रं वक्तव्यं, कस्मिन् क्षेत्रे इदं प्रादुरभूत्, कालो वक्तव्यो, यथा कस्मिन् काले इति, तथा पुरुषो वक्तव्यो, यथा कुतः पुरुषादिदं प्रवृत्तमिति, तथा कारणं वक्तव्यं—किं कारणं गौतमादयः शृण्वन्ति ?, तथा प्रत्याययतीति प्रत्ययः, अन्तर्भूतण्यर्थादलप्रत्ययः, प्रत्ययो वक्तव्यो, यथा केन प्रत्ययेन भगवतेदमुपदिष्टं ?, को वा गणधराणां श्रवणे प्रत्ययः ? इति, तथा लक्षणं वक्तव्यं श्रद्धानादि, तथा नया—नैगमादयो वक्तव्याः, तथा तेषामेव नयानां समवतरणं वक्तव्यं, यथा क्व नयाः समवतरन्तीति, तथा च वक्ष्यति—'मूढनइयं सुयं कालियं तु न नया समोयरंति इहं' इत्यादि, तथाऽनुमतमिति कस्य व्यवहारादेः किमनुमतं सामायिकमिति वक्तव्यं, तथा च 'तवसंजमो अणुमतो' इत्यादि, तथा किं सामायिकमिति वक्तव्यं, वक्ष्यति च–'जीवो गुणपडिवन्नो' इत्यादि च, तथा कतिविधं सामायिकं इति वाच्यं, तथा चात्र वक्ष्यति–'सामाइयं च तिविहं सम्मत्त सुयं तहा चरित्तं चे'त्यादि, तथा कस्य सामायिकमिति वक्तव्यं, तथा च वक्ष्यति—'जस्स सामाणितो अप्पा, संजमे नियमे तवे' इत्यादि, तथा क्व क्षेत्रादौ सामायिकमित्यभिधेयं, तथा च वक्ष्यति–'खित्तदिसकालगइभवि' इत्यादि, तथा केषु सामायिकमिति वाच्यं, तत्र सर्वत्र द्रव्येषु, वक्ष्यति-

उद्देशादीनि २६ द्वाराणि गा. १३७–८

॥१४६॥

हरिभद्रसूरिजी वृत्ते: संपादने अत्र निर्युक्ति गाथा १२४-१२६ अतिरिक्त दृश्यते अथवा मलयगिरिजी रचिता वृत्ते: संपादने अत्र त्रया: गाथा: न दृश्यते| [इसिलिए यहां से आगे-आगे हरिभद्रसूरि-वृत्ति से मलयगिरि-वृत्तिमे निर्युक्ति के तीन क्रमांक कम दिखाई देते है]

*** अत्र आरभ्य मलयगिरिजी-वृते: एवं हरिभद्रसूरिजी-वृते: निर्युक्ति-क्रमांक्ने समानता न प्रवर्तते | *** [मलयगिरिजी रचिता वृत्ति के संपादनमे यहां निर्युक्ति का क्रम १३७ से आरंभ होता है जब की हरिभद्रसूरिजी रचिता वृत्ति के सम्पादनमे निर्युक्ति का क्रम १४० लिखा गया है|]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

'सव्वगयं सम्मत्तं सुए चरित्ते य पज्जवा सवे' इत्यादिना, तथा कथं–केन प्रकारेण सामायिकमवाप्यते इति वाच्यं, तत्र वक्ष्यति–'माणुस्सखेत्तजाई' इत्यादि, तथा कियच्चिरं कालं यावद् भवति सामायिकमिति वक्तव्यं, तत्र वक्ष्यति–'सम्मत्तस्स सुयस्स य छावट्ठी सागरोवमाइ ठिई' इत्यादि, तथा कतीति कियन्तः प्रतिपद्यमानकाः कियन्तो वा पूर्वप्रतिपन्ना इति वक्तव्यं, तथा च वक्ष्यति—'सम्मत्तदेसविरया पलियस्स असंखभागमित्ता उ' इत्यादि, 'संतर'न्ति सहान्तरेण वर्त्तते इति सान्तरं वक्तव्यं, किमुक्तं भवति ?–किं सामायिकं सान्तरं निरन्तरं वा ?, यदि सान्तरं ततः किंप्रमाणमन्तरमिति वक्तव्यं, वक्ष्यति च–'कालमणंतं च सुए, अद्धापरियट्टतो य देसूणो' इत्यादि, 'अविरहित'मिति अविरहितं कियन्तं कालं प्रतिपद्यन्ते इति वक्तव्यं, तत्र वक्ष्यति—'सुयसम्मअगारीणं आवलियासंखभागमेत्ता उ' इत्यादि, तथा भवा इति कियतो भवान् यावत् खल्ववाप्यते सामायिकमिति प्रतिपाद्यं, तत्र वक्ष्यति—'सम्मत्तदेसविरया, पलियस्सासंखभागमेत्ताओ। अट्ठभवा उ चरित्ते' इत्यादि, आकर्षणमाकर्षः, ग्रहणमिति भावः, तत्र कियन्त आकर्षा एकस्मिन् भवे ?, कियन्तो वाऽनेकभवेष्विति वक्तव्यं, तत्र वक्ष्यति—'तिण्ह सहसपुहुत्तं सयप्पुहुत्तं च होइ विरईए। एगभवे आगरिसा' इत्यादि, तथा स्पर्शना वक्तव्या, यथा कियत् क्षेत्रं सामायिकवन्तः स्पृशन्तीति, तत्र वक्ष्यति–'सम्मत्तचरणसहिया सवं लोगं फुसे निरवसेसं' इत्यादि, तथा निश्चिता उक्तिर्निरुक्तिः वक्तव्या, सा च–'सम्मद्दिट्ठी अमोहो सोही सब्भावदंसणा बोही' इत्यादिना वक्ष्यते, एषद्वारगाथाद्वयसमासार्थः ॥ अवयवार्थं तु प्रतिद्वारं प्रपञ्चेन निर्युक्तिकृदेव वक्ष्यति, अत्र कश्चिदाह—ननु प्रथममध्ययनं सामायिकं तस्यानुयोगद्वारचतुष्टयमिति प्रतिपादयता उद्देशनिर्देशादुक्तावेव, तथा ओघनि

Jain Education Internat For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः

॥१४७॥

प्पन्ननिक्षेपेऽध्ययनमिति निक्षिप्तं, नामनिष्पन्ननिक्षेपे सामायिकमिति, तत एवमपि तावभिहितावेव, किमर्थमनयोः पुनरभिधानमिति ?, उच्यते, एतद्द्वारद्वयोक्तयोरेव प्रागनागतग्रहणं कृतं द्रष्टव्यं, तद्ग्रहणमन्तरेण द्वारचतुष्टयाद्युपन्यासस्यैवासम्भवाद्, विषयाभावात्, अथवा प्रागभिधानमात्रमुक्तमिह त्वर्थानुगमद्वाराधिकारे विधानतो लक्षणतश्च व्याख्या क्रियते इत्यदोषः। आह–यद्येवं निर्गमो न वक्तव्यः, तस्यानुगमद्वार एव प्रतिपादितत्वात्, तथाहि—आत्मागम इति प्रागभिहितं, ततस्तीर्थकरगणधरेभ्यो निर्गतमित्यवगतमेव, सत्यमेतत्, केवलमिह तीर्थकरगणधराणामेव निर्गमोऽभिधीयते, यथा कोऽसौ तीर्थकरः ? के वा गणधरा ? इति, तत्र वक्ष्यते—भगवान् वर्द्धमानस्वामी तीर्थकरो, गौतमादयो गणधराः, यथा चैतेभ्यो विनिर्गतं तथा क्षेत्रकालपुरुषकारणप्रत्ययविशिष्टं वक्ष्यते इति फलवान् निर्गमादिद्वारकलापोपन्यासः। आह—यद्येवं लक्षणं न वक्तव्यं, यत उपक्रमद्वार एव नामद्वारे क्षायोपशमिके भावेऽवतारितं, प्रमाणद्वारे च जीवगुणप्रमाणे आगमे इति, सत्यमेतत्, केवलं तत्र निर्देशमात्रं कृतमिह तु प्रपञ्चेन व्याख्यानमित्यदोषः, अथवा तत्र श्रुतसामायिकस्यैव लक्षणमुक्तम्, इह चतुर्णामपि सामायिकानां लक्षणाभिधानमिति महान् विशेषः। अथ नयाः प्रमाणद्वार एवाभिहिताः स्वस्थाने च मूलद्वारे वक्ष्यमाणास्ततः किमिहोच्यन्ते ?, उच्यते, इह प्रमाणद्वारोक्ता एव व्याख्यायन्ते, यदिवा प्रमाणद्वाराधिकारात् तत्र प्रमाणभावमात्रमभिहितमिह तु स्वरूपावधारणमवतारो वा चिन्त्यते इत्यदोषः, एते च सर्वे एव सामायिकसमुदायार्थमात्रविषयाः, न सूत्रविनियोगिनः, मूलद्वारोपन्यस्तास्तु नयास्तत्र व्याख्यानोपयोगिन एवेति मूलद्वारवक्ष्यमाणेभ्यो भेदः। ननु प्रमाणद्वारे जीवगुणः सामायिकं ज्ञानं चेति प्रतिपादितं ततः 'किं सामायिक'-

उद्देशादिषु पुनरुक्तनिरासः

॥१४७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मित्याशङ्क्याया अनुपपत्तिः, सत्यमेतत्, केवलं जीवगुणत्वे ज्ञानत्वे च सत्यपि किं तज्जीव एव आहोस्विज्जीवादन्यदिति यः संशयस्तदपनोदार्थं इहोपन्यास इत्यदोषः। आह–नामद्वारे क्षायोपशमिकं सामायिकमुक्तं, ततस्तदावरणक्षयोपशमादवाप्यते इति गम्यत एवं, ततः किमर्थं 'कथं लभ्यते' इति द्वारमुपन्यस्तम् ?, उच्यते, स एव क्षयोपशमः कथमवाप्यते इति क्षयोपशमगतशेषाङ्गलाभचिन्तनाददोषः, एवं यत् यदुपक्रमनिक्षेपद्वारद्वयाभिहितमपि पुनरभिधत्ते तत्तदनुगमद्वारावसरात् प्रपञ्चव्याख्यार्थमिति परिभावनीयम्। अपरस्त्वाह–ननूपक्रमः प्रायः शास्त्रसमुत्थापनार्थ उक्त उपोद्घातोऽप्येष शास्त्रसमुद्घातप्रयोजन एवेति कोऽनयोर्भेदः ?, उच्यते, उपक्रमो ह्युद्देशमात्रनियतव्यापार उपोद्घातस्तु प्रायेण तदुद्दिष्टवस्तुप्रबोधनफलः, अर्थानुगमत्वात् इत्यलं विस्तरेण, प्रकृतं प्रस्तुमः ॥ तत्रोद्देशद्वारावयवार्थप्रतिपादनार्थमाह—

नामं ठवणा दविए खित्ते काले समासउद्देसे। उद्देसुद्देसम्मि य भावम्मि य होइ अट्ठमओ ॥ १३९ ॥

यस्य जीवादेरुद्देश इति नाम क्रियते स नाम्ना उद्देशो नामोद्देशो, यदिवा नामनामवतोरभेदोपचारात् नाम चासौ उद्देशश्च नामोद्देशः, अथवा नाम्ना उद्दिश्यते–अभिधीयते इति नामोद्देशः, यदिवा नाम्न उद्देशः–अभिधानं नामोद्देशः, तथा उद्देशः स्थाप्यमानः स्थापनोद्देशः, स्थापनाया वा उद्देशः–अभिधानं स्थापनोद्देशः, 'दविए' इति द्रव्यविषय उद्देशः द्रव्योद्देशः, स च द्विधा–आगमतो नोआगमतश्च, तत्र आगमतो ज्ञाताऽनुपयुक्तः, नोआगमतो ज्ञशरीरभव्यशरीरतद्व्यतिरिक्तभेदात् त्रिधा, तत्र ज्ञशरीरभव्यशरीरे प्रतीते, तद्व्यतिरिक्तस्त्रिविधस्तद्यथा—द्रव्यस्य द्रव्येण द्रव्ये वा उद्देशो द्रव्योद्देशः, तत्र द्रव्यस्योद्देशो यथा द्रव्यमिदमिति, द्रव्येण हेतुभूतेनोद्देशो यथा द्रव्यपतिरयमिति, तथा द्रव्ये उद्देशो यथा वर्त्तते राजा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः

॥१४८॥

सम्मतिं सिंहासने, चूते कोकिलो वने मयूर इत्यादि, एवं क्षेत्रस्थ क्षेत्रेण क्षेत्रे वा उद्देशः क्षेत्रोद्देशो वक्तव्यः, तत्र क्षेत्रस्योद्देशो यथा इदं क्षेत्रमिति, क्षेत्रेणोद्देशो यथा क्षेत्री क्षेत्रपतिः, क्षेत्रे उद्देशो यथा क्षेत्रे जातं क्षेत्रजमित्यादि, तथा कालस्य कालेन काले वा उद्देशः कालोद्देशः, तत्र कालस्योद्देशो यथा अयं काल इति, कालेनोद्देशो यथा इदं कालातिक्रान्तम्, अथवा इदं कालप्राप्तमिति, काले उद्देशो यथा काले जातं काले आगतमित्यादि, समासः—सङ्क्षेपः तद्विषय उद्देशः समासोद्देशः, स च त्रिविधः—अङ्गश्रुतस्कन्धाध्ययनभेदात्, तद्यथा—अङ्गसमासोद्देशः श्रुतस्कन्धसमासोद्देशः अध्ययनसमासोद्देशश्च, तत्राङ्गसमासोद्देशो द्विधा—अङ्गसमासस्योद्देशो अङ्गसमासेन वोद्देशः, तत्राङ्गसमासस्योद्देशो यथा इदमङ्गमिति, अङ्गसमासेनोद्देशो यथा तदध्येता तदर्थज्ञो वा अङ्गीति, एवं श्रुतस्कन्धाध्ययनसमासोद्देशावपि वक्तव्यौ, तत्र श्रुतस्कन्धस्योद्देशो यथा अयं श्रुतस्कन्ध इति, श्रुतस्कन्धेन समासोद्देशो यथा अयं तदध्ययनात् तदर्थवेदनाच्च श्रुतस्कन्धीति, एवमध्ययनसमासोद्देशोऽप्युदाहर्त्तव्यः, तथा उद्देशः—अध्ययनविशेषः तस्योद्देश उद्देशोद्देशः, यथा अयमुद्देश इति, उद्देशेन वा उद्देश उद्देशोद्देशः, यथा उद्देशाध्ययनादुद्देशार्थपरिज्ञानाद्वाऽयमुद्देशवानिति, तथा भावे—भावविषयश्च भवत्युद्देशोऽष्टमकः, एषोऽपि द्विधा—भावस्योद्देशो यथा अयं भाव इति, भावेनोद्देशो यथा भावीत्यादि ॥ अथोद्देशव्याख्यानेन निर्देशमप्यतिदिशन्नाह—

एमेव य निद्देसो अट्ठविहो सोऽवि होइ नायव्वो । अविसेसियमुद्देसो विसेसिओ होइ निद्देसो ॥ १४० ॥

यथा अष्टविध उद्देश उक्तः एवमेव—तथा निर्देशोऽपि स द्वारगाथासूचितोऽष्टविधो भवति ज्ञातव्यः, सर्वथा साम्यप्रतिषेधार्थमाह—किन्तु अविशेषितः सामान्यनामस्थापनादिविषय उद्देशो, विशेषितः नामस्थापनादिगोचरस्तु भवति निर्देश

उद्देशे भेदाः (८) निर्देशेऽपि गा. १३९ ४०

॥१४८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इति विशेषः, तत्र नामनिर्देशो यस्य निर्देश इति नाम क्रियते, नाम्नो वा निर्देशो यथाऽयं जिनभद्र इत्याद्यभिधान-विशेषभणनं, निर्देशः स्थाप्यमानः स्थापनानिर्देशः, स्थापनाया विशेषाभिधानं वा स्थापनानिर्देशो, यथेयं कामदेवस्य स्थापनेति, यत्तु सामान्येन देवताया इयं स्थापनेत्यभिधानं स स्थापनोद्देश इति, द्रव्यस्यापि त्रिविधस्य सचित्तादेर्यद्वि-शिष्टमभिधानं स द्रव्यनिर्देशः, तत्र सचित्तद्रव्यविशेषस्य निर्देशो यथा गौरित्यादि, अचित्तद्रव्यविशेषस्य यथा अयं दण्ड इत्यादि, मिश्रद्रव्यविशेषस्य यथाऽयं रथोऽश्वयुक्त इत्यादि, तेन सचित्तादिद्रव्यविशेषेण निर्देशो यथा गोमानित्यादि, क्षेत्रस्य निर्देशो यथा इदं भरतक्षेत्रम्, अयं मगधाजनपद इत्यादि, क्षेत्रेण निर्देशो यथाऽयं भारतः मागधः सौराष्ट्रक इत्यादि, कालस्य निर्देशो यथा अयं हेमन्तोऽयं वसन्त इत्यादि, कालेन निर्देशो यथाऽयं शारदः सांवत्सरिकः प्रावृषेण्य इत्यादि, समासनिर्देशोऽङ्गश्रुतस्कन्धाध्ययनविषयभेदात् त्रिधा, तत्राङ्गरूपसमासस्य निर्देशोऽयमाचारः इदं सूत्रकृताङ्गमित्यादि, अङ्गसमासेन निर्देशो यथा तदध्ययनात् तदर्थवेदनाद्वा अयमाचारवाना-चारधर इत्यादि, श्रुतस्कन्धसमासस्य निर्देशो यथाऽयमावश्यकश्रुतस्कन्धः, श्रुतस्कन्धसमासेन निर्देशो यथाऽयमाव-श्यकसूत्रार्थधर इति, अध्ययनसमासस्य निर्देशो यथा–इदं सामायिकाध्यनमाचाराङ्गे प्रथममध्ययनं शस्त्रपरिज्ञा इत्यादि, अध्ययनसमासेन निर्देशो यथाऽयं सामायिकसूत्रार्थधर इत्यादि, उद्देशस्य निर्देशो यथा भगवत्यां पुद्गलोद्देशक इत्यादि, उद्देशेन निर्देशो यथाऽयं प्रथमोद्देशकसूत्रार्थधरो द्वितीयोद्देशकसूत्रार्थधर इति, भावस्य निर्देशो–भावव्यक्त्यभिधानं, यथाऽयमौदयिको भाव इति, भावेन निर्देशो यथाऽयमौदयिकभाववान् क्रोधी मानीत्यादि, इह तु समासोद्देशनिर्दे-

Jain Education Intern For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शाभ्यामयमधिकारः, तथाहि–अध्ययनमिति समासोद्देशः, सामायिकमिति समासनिर्देश इति ॥ इदं च सामायिकं नपुंसकं, सावद्ययोगविरमणस्य नपुंसकतया रूढत्वात्, अस्य च निर्देष्टा–उच्चारयितेति भावः त्रिविधस्तद्यथा–स्त्री पुमान् नपुंसकं च, तत्र को नयो नैगमादिः कं निर्देशमिच्छतीति प्रतिपिपादयिषुराह—

दुविहंपि नेगमनओ निद्दिट्ठं संगहो य ववहारो । निद्देसयमुज्जुसुओ उभयसरिच्छं च सद्दस्स ॥ १४१ ॥

द्विविधमपि—निर्देश्यवशान्निर्देशकवशाच्च द्विप्रकारमपि नैगमनयो निर्देशमिच्छति, नैगमो ह्यनेकगमो लोकसंव्यवहारप्रवणश्च, लोके च निर्देश्यवशान्निर्देशकवशाच्च निर्देशप्रवृत्तिरुपलब्धा, तत्र निर्देश्यवशाद्यथा—वासवदत्ता प्रियदर्शना इत्यादि, निर्देशकवशाद्यथा– मनुना प्रोक्तो मनुः अक्षपादप्रोक्तोऽक्षपाद इत्यादि, लोकोत्तरेऽपि निर्देश्यवशाद् यथा षड्जीवनिका, तत्र हि षट् जीवनिकाया निर्देश्याः, एवमाचारक्रियाभिधानादाचारः तरङ्गवतीवक्तव्यताभिधानात्तरङ्गवतीत्यादि, निर्देशकवशाज्जिनवचनं कापिलीयं नन्दसहितेत्येवमादि, एवं सावद्ययोगविरमणरूपं सामायिकं रूढितो नपुंसकमिति निर्देश्यवशान्नैगमो नपुंसकनिर्देशमेवास्य मन्यते, यथा सामायिकं नपुंसकमिति, तथा सामायिकनिर्देष्टुः स्त्रीपुन्नपुंसकलिङ्गत्वात् तत्परिणामानन्यत्वाच्च सामायिकस्यार्थरूपस्य त्रिलिङ्गताऽप्येतन्मतेनाविरुद्धा, यथा सामायिकं स्त्री सामायिकं पुरुषः सामायिकं नपुंसकमिति, उक्तं च–"तह निद्दिट्ठवसाओ नपुंसकं नेगमस्स सामइयं । थीपुंनपुंसगं वा तं चिय निद्देसगवसातो ॥१॥" (वि. १५०९) अन्यच्च–एष नैगमनय एवमभिधत्ते–यदि स्त्री स्त्रियमभिधत्ते तदा निर्देश्यस्य निर्देशकस्य च स्त्रीत्वान्निर्देशः स्त्रीलिङ्ग एव, अथ स्त्री पुरुषं निर्दिशति तदा यथाविवक्षितं निर्देशः, तथाहि–देवदत्तेन घटशब्दे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र 'नय' विचार प्रदर्शयते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

उच्चारिते निर्देशस्याभिधेयानन्यत्वविवक्षायामयं घट इति व्यपदेशः प्रवर्त्तते, निर्देशकानन्यत्वविवक्षायामयं देवदत्त इति, तथा च देवदत्ते कथञ्चित्पथः परिभ्रष्टे इतस्ततो निभाल्यमाने तच्छब्दं श्रुत्वा लोको वदति–अथं देवदत्त इति, अभिधेयानन्यत्वविवक्षायां पुरुषनिर्देशः, निर्देशकानन्यत्वविवक्षायां स्त्रीनिर्देशः, अथ स्त्री नपुंसकं निर्दिशति तदाऽत्रापि यथाविवक्षितं निर्देश इति नपुंसकनिर्देशः स्त्रीनिर्देशो वा, एवं पुरुषे नपुंसके च निर्देष्टरि भावनीयम्, आह च चूर्णिकृत्—"इत्थी इत्थिं निद्दिसइ इत्थिनिद्देसो, इत्थी पुरिसं निद्दिसइ इत्थिनिद्देसो य पुरिसनिद्देसो य, इत्थी नपुंसगं निद्दिसइ इत्थिनिद्देसो अ नपुंसगनिद्देसो अ, एवमेव पुरिसनपुंसगाणंपि संजोगो" इति, एवमिहापि निर्देष्टुः त्रिलिङ्गस्यापि सम्भवादनन्यत्वविवक्षायां त्रिलिङ्गताऽपि सामायिकस्य प्रतिपत्तव्येति, आह—द्विविधमपि नैगमनय इत्येतावत्युक्ते निर्देश्यवशान्निर्देशकवशाच्च द्विविधं निर्देशमिच्छतीति कुतोऽवसीयते ?, उच्यते, वक्ष्यति—'निद्दिट्ठं संगहो य ववहारो' इति, ततोऽर्थादत्रावसीयते निर्देश्यवशान्निर्देशकवशाच्च निर्देशस्य द्वैविध्यमिति, 'निद्दिट्ठं संगहो य ववहारो' इति निर्दिष्टं वस्त्वङ्गीकृत्य सङ्ग्रहो व्यवहारश्च, षशब्दस्य व्यवहितः सम्बन्धः, निर्देशमिच्छतीति वाक्यशेषः, इयमत्र भावना–इह वचनमर्थप्रकाशकमेवोपजायते, यथा प्रदीपः, ततो यथा प्रदीपः प्रकाश्यं प्रकाशयन्नेवात्मरूपं प्रतिपद्यमानः प्रकाश्यादात्मलाभं लभते इति व्यपदिश्यते, तथा वचनमप्यर्थं प्रतिपादयदेवात्मरूपं प्रतिपद्यमानमर्थादात्मलाभं लभते इति व्यवहियते, अर्थश्च सावद्ययोगविरमणरूपो नपुंसकतया प्रसिद्ध इति सामायिकस्य नपुंसकलिङ्गतामेव सङ्ग्रहव्यवहारावभ्युपगच्छतः, उक्तं च—"अत्थाओचिय वयणं लहइ सरूवं जहा पदीवोव। तो संगहववहारा भणंति निद्दिट्ठवसगं तं॥ १॥"(वि. १५११)चूर्णिकारोऽप्याह–

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

उपोद्घात-निर्युक्तिः

॥ १५० ॥

"संगहववहारनयवत्तव्वया इत्थी इत्थिं निद्दिसइ इत्थिनिद्देसो, इत्थीं पुरिसं निद्दिसइ पुरिसनिद्देसो, इत्थीं नपुंसगं निद्दिसइ नपुंसगनिद्देसो, एवं पुरिसनपुंसगाणंपि भाणियव्वं," अथवा सामायिकं नाम सावद्ययोगविरमणरूपं, तच्च सामायिकवतां सत्त्वानां स्त्रीलिङ्गानां पुँल्लिङ्गानां नपुंसकलिङ्गानां च परिणामानन्यदिति तस्य स्त्र्यादिरूपतेति वाच्यवशेन त्रिलिङ्गताऽपि सामायिकस्य सङ्ग्रहव्यवहारनयमतेन द्रष्टव्या, तथा 'निद्देसगमुज्जुसुतो' इति, निर्देशको–वक्ता तमङ्गीकृत्य सामायिकनिर्देशमृजुसूत्रो मन्यते, तथाहि–स एवमभिधत्ते-वचनं वक्तुरधीनं, तद्भावभावित्वात्, ततो यदेव वक्तुर्लिङ्गं तदेव वचनस्यापीति, यदा पुरुषो निर्देष्टा तदा सामायिकस्य पुँल्लिङ्गता यदा स्त्री तदा स्त्रीलिङ्गता, एवं नपुंसकेऽपि द्रष्टव्यम्, उक्तं च–"उज्जुसुतो निद्देसगवसेण सामाइयं विणिद्दिसइ । वयणं वत्तुरहीणं'मित्यादि, 'उभयसरिच्छं च सद्दस्स॥१॥"(वि. १५१५) इति, उभयमिह निर्देश्यं निर्देशकं च वस्त्वभिधीयते, 'सदृश'मिति समानलिङ्गम्, उभयं च तत्सदृशं च उभयसदृशं तदङ्गीकृत्य शब्दस्य निर्देशप्रवृत्तिरिति वाक्यशेषः, किमुक्तं भवति ?–निर्देश्यं निर्देशकं च वस्तु परस्परं समानलिङ्गमेवाङ्गीकृत्य शब्दनयो निर्देशमभिमन्यते, नान्यथेति, इयमत्र भावना–उपयुक्तो हि निर्देश्यादभिन्न एव भवति, तदुपयोगानन्यत्वात्, यथा अग्न्युपयोगादनन्यो माणवकोऽग्निः, ततो यदा पुमान् पुमांसमभिधत्ते तदा पुंनिर्देश एव, एवं स्त्रियाः स्त्रियं प्रतिपादयन्त्याः स्त्रीनिर्देश एव, नपुंसकस्य नपुंसकमभिदधानस्य नपुंसकनिर्देश एव, यदा तु पुमान् स्त्रियमभिधत्ते तदा स तदुपयोगानन्यत्वात् स्त्रीरूप एवेति निर्देश्यनिर्देशकयोः समानलिङ्गतैव, एवं सर्वत्र संयोज्यम्, असमानलिङ्गनिर्देशस्त्ववस्त्वेव, यथा पुमान् नपुंसकं स्त्रियं चाहेति, कुत इति चेत्, उच्यते, इह

निर्देश्ये नयाः

॥ १५० ॥

Jain Education Internat For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुंसो नपुंसकं स्त्रियं वा प्रतिपादयतो नपुंसकोपयोगः स्त्र्युपयोगो वा ततो भिन्नो वा स्यादभिन्नो वा ?, यदि भिन्नस्तर्हि तस्यासाविति सम्बन्धानुपपत्तिः, तदनुपपत्तौ चोपयोगशून्यत्वात्पाषाणस्येव तस्य वचनप्रवृत्त्यसम्भवः, तथा च प्रत्यक्षविरोधः, अथाभिन्नः स तर्हि तदात्मक एव, तथाहि—यद्यस्माद्भिन्नं तत्तन्मयमेव, यथा जीवश्चेतनामयः, पुमानपि च नपुंसकमभिदधानो नपुंसकोपयोगानन्यः, स्त्रियमभिदधानः स्त्र्युपयोगानन्य इति तन्मयः, ततः समानलिङ्गस्यैव निर्देशो न विसदृशलिङ्गस्य, उक्तं च—"सद्दो समाणलिंगं निद्देसं भणति विसरिसमवत्थुं। उवउत्तो निद्दिट्ठा निद्देसातो जतोऽनन्नो ॥१॥" (वि. १५२३) एवमिहापि सामायिकस्यार्थरूपस्य रूढितो नपुंसकत्वात् स्त्रियाः पुरुषस्य नपुंसकस्य वा सामायिकं प्रतिपादयतस्तदुपयोगानन्यत्वान्नपुंसकरूपतैवेति सामायिकमिति नपुंसकनिर्देश एवेति गाथासङ्क्षेपार्थो, व्यासार्थस्तु भाष्यादवसातव्यः, सर्वनयमतान्यपि चामूनि पृथक् पृथग्विपरीतविषयत्वान्न प्रमाणं, समुदितानि तु समस्तान्तर्बाह्यनिमित्तसामग्रीसापेक्षत्वात्प्रमाणमित्यलं विस्तरेण, मन्दावबोधमात्रफलत्वात् प्रस्तुतप्रयासस्य ॥ सम्प्रति निर्गमद्वारप्रतिपादनार्थमाह—

नामं ठवणा दविए खेत्ते काले तहेव भावे य। एसो उ निग्गमस्सा निक्खेवो छव्विहो होइ ॥ १४२ ॥

नामस्थापने सुप्रतीते, द्रव्यनिर्गमोऽपि द्विधा—आगमतो नोआगमतश्च, तत्रागमतः पूर्ववत्, नोआगमतस्त्रिविधो—ज्ञशरीरभव्यशरीरतद्व्यतिरिक्तभेदात्, तत्र ज्ञशरीरभव्यशरीरे प्राग्वत्, तद्व्यतिरिक्तोऽनेकधा, तद्यथा—द्रव्याद् द्रव्यस्य वा विनिर्गमो द्रव्यविनिर्गमः, तत्र द्रव्यात् सचित्तादचित्तान्मिश्राद्वा, द्रव्यस्य च ततः सचित्तादेः प्रत्येकं सचित्तस्याचित्तस्य मिश्रस्य वा, तत्र सचित्तात्सचित्तस्य यथा पृथिव्या अङ्कुरस्य, सचित्तान्मिश्रस्य यथा भूमेः पतङ्गस्य, सचित्तादचित्तस्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र 'निर्गम' द्वार प्रदर्शयते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥१५१॥

यथा भूमेर्वाष्पस्य, तथा मिश्रात् सचित्तस्य यथा देहात्कृमेः, देहस्य मिश्रता तद्गतकेशनखाद्यवयवानामचित्तत्वात् क्षेत्रस्य तु सचित्तत्वात्, मिश्रान्मिश्रस्य यथा स्त्रीदेहाद् गर्भस्य, मिश्रादचित्तस्य यथा देहाद्विष्ठायाः, उक्तं च—"पभवो सचित्तातो भूमेरंकुरपयंगवप्फाई । किमिगब्भसोणियाई मीसातो थीसरीरातो ॥ १ ॥" (वि.१५३५) अचित्तात्सचित्तस्य यथा काष्ठात्कृमिकस्य, अचित्तान्मिश्रस्य यथा काष्ठाद् घुणकस्य, तस्य मिश्रता पक्षाद्यवयवानामचित्तत्वाद्, अचित्तादचित्तस्य यथा काष्ठात् घुणचूर्णस्य, अथवाऽत्र चतुर्भङ्गिका, तद्यथा—द्रव्यात् द्रव्यस्य द्रव्याणां वा द्रव्येभ्यो वा द्रव्यस्य द्रव्याणामिति, तत्र द्रव्यात् द्रव्यस्य यथा एकस्माद्रूपकात् कलान्तरप्रयुक्तादेकस्य रूपकस्य विनिर्गमः, आह च चूर्णिकृत्—"दवतो दवस्स जहा रूवातो पउत्तातो रूवतो चेव जातो" इति, द्रव्यात् द्रव्याणां वा यथा एकस्मादेव रूपकात् कलान्तरप्रयुक्तात् प्रभूतकालातिक्रमेण प्रभूतानां रूपकाणां सम्भवः, द्रव्येभ्यो द्रव्यस्य यथा प्रभूतेभ्यो रूपकेभ्यः कलान्तरप्रयुक्तेभ्यः स्वल्पदिनमध्ये एकस्य रूपकस्य सम्भवः, द्रव्येभ्यो द्रव्याणां यथा प्रभूतेभ्यो रूपकेभ्यः कलान्तरप्रयुक्तेभ्यः प्रभूतकालातिक्रमेण प्रभूतानां रूपकाणां सम्भवः, तथा क्षेत्रात् क्षेत्रस्य वा निर्गमः क्षेत्रनिर्गमः, तत्र क्षेत्राद्विनिर्गमो यथा अधोलोकक्षेत्राद्विनिर्गत्य जीवस्तिर्यग्लोके समागत इत्यादि, क्षेत्रस्य विनिर्गमो यथा राजकुलाल्लब्धमुकं क्षेत्रमिति, कालात्कालस्य वा निर्गमः कालनिर्गमः, तत्र कालान्निर्गमो यथा दुर्भिक्षान्निस्तरणं, यदिवा बालकालाद्विनिर्गतो देवदत्त इति, कालस्य विनिर्गमो यथा वसन्तस्य सम्प्रति निर्गम इति, निर्गमो नाम उत्पादः, अथवा कालो द्रव्यधर्मो वर्त्तनारूपत्वात्तस्य निर्गमो द्रव्यात् । तथा भावाद्भावस्य वा निर्गमो भावनिर्गमः, तत्र भावाद्विनिर्गमो यथा पुद्गलस्य वर्णादिविशेषात् जीवस्य वा क्रोधादिपरिणामा-

निर्गम-स्वरूपं गा. १४२

॥१५१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

द्विनिर्गम इति, भावस्य निर्गमो यथा पुद्गलाद्वर्णादिविशेषस्य, जीवात्क्रोधादिपरिणामस्योत्पत्तिरिति, एष एव तुशब्द एवकारार्थः निर्गमस्य निक्षेपः षड्विधो भवतीति ॥ एवं शिष्यमतिप्रकाशार्थं प्रसङ्गतोऽनेकधा निर्गम उक्तोऽत्र तु प्रशस्तभावनिर्गममात्रेणाप्रशस्तभावापगममात्रेण चाधिकारः, यदिवा शेषैरपि द्रव्यादिभिस्तदङ्गत्वादधिकारः, तत्र द्रव्यं भगवान् वर्द्धमानस्वामी क्षेत्रं महासेनवनं कालः प्रमाणकालो भावश्च पुरुषो वर्द्धमानस्वामिरूपः, एतानि सामायिकरूपप्रशस्तभावनिर्गमाङ्गानि, उक्तं च—"वीरो दव्वं खेत्तं महसेणवणं पमाणकालो य। भावो य भावपुरिसो समासतो निग्गमं-गाइं ॥ १ ॥ सामइयं वीरातो महसेणवणे पमाणकाले य। भावपुरिसा हि भावे विणिग्गमो वक्खमाणोऽयं ॥ २ ॥" (वि.१५४५-६) अत्र वक्ष्यमाणो भावः—सामायिकलक्षणः। एतच्च सर्वं भगवन्महावीरलक्षणद्रव्याधीनमतस्तस्यैव प्रथमतो मिथ्यात्वादिभ्यो निर्गममभिधित्सुराह— (ग्रन्थाग्रं ६०००)

पंथं किर देसित्ता साहूणं अडवि विप्पणट्ठाणं। सम्मत्तपढमलंभो बोद्धव्वो वद्धमाणस्स ॥ १४३ ॥

पन्थानं 'किले'त्यासवादे देशयित्वा—कथयित्वा साधुभ्यः, सूत्रे षष्ठी प्राकृतत्वात्, 'अडवि'त्ति प्राकृतत्वादेवात्र सप्तम्या लोपः, अटव्यां पथो विप्रनष्टेभ्यः—परिभ्रष्टेभ्यः, पुनस्तेभ्य एव देशनां श्रुत्वा सम्यक्त्वं प्राप्तः, एवं सम्यक्त्वप्रथमलाभो बोद्धव्यो वर्द्धमानस्येति गाथाक्षरार्थः ॥ भावार्थः कथानकादवसेयः, तच्चेदम्—अवरविदेहे एगम्मि गामे बलाहितो, सो य रायाएसेण सगडाणि गहाय दारुनिमित्तं महाडविं पविट्ठो, इतो य साहुणो मग्गं पवन्ना सत्थेण समं वच्चंति, सत्थे आवासिए भिक्खं पविट्ठा, सत्थो गतो, ते मग्गतो पहाविया, अयाणंता भुल्ला, मूढदिसा पंथं अयाणंता तेण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अत्र श्री वीर परमात्मानः सम्यक्त्व प्राप्तिरुप प्रथम-भव वर्णयते

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥१५२॥

अडविपंथेण मज्झण्हदिवसकाले तण्हाए छुहाए य पारद्धा तं देसं गया जत्थ सो सगडसंनिवेसो, सो य बलाहिओ ते पासित्ता महंतं संवेगमावन्नो भणइ—अहो इमे साहुणो अदेसिया तवस्सिणो अडविमणुपविट्ठा, तेसिं सो परमभत्तीए विउलं असणपाणं दाऊण आह—एह भगवं! जेण पंथे समवतारेमि, पुरतो संपत्थितो, ताहे तेऽवि साहुणो तस्सेव मग्गेण अणुगच्छन्ति, ततो गुरू तस्स धम्मं कहेउमारद्धो, सो तस्सुवगतो, ततो पंथं समोयारित्ता नियत्तो, ते पत्ता सदेसं, सो पुण अविरयसम्मद्दिट्ठी कालं काऊण सोहम्मे कप्पे पलितोवमट्ठिइतो देवो जातो॥ एतदेवोपदर्शयन् गाथाद्वयमन्तर्भाष्यकृदाह—

अवरविदेहे गामस्स चिंतगो रायदारुवणगमणं। साहू भिक्खनिमित्तं सत्था हीणे तहिं पासे॥ मू. भाष्यं १॥
दाणऽन्न पंथ नयणं, अणुकंप गुरूण कहण सम्मत्तं। सोहम्मे उववन्नो पलियाउ सुरो महिड्ढीतो॥ मू. भा. २॥

अपरविदेहे ग्रामस्य चिन्तको 'रायदारुवणगमण'मिति अत्र निमित्तशब्दलोपो द्रष्टव्यो राजदारुनिमित्तं तस्य वनगमनं, सुसाधून् भिक्षानिमित्तं सार्थाद्भ्रष्टान् तत्र दृष्टवान्, ततोऽनुकम्पया—परमभक्त्या दानं अन्नपानस्य, नयनं—प्रापणं पथि, तदनन्तरं गुरोः कथनं, ततः सम्यक्त्वप्राप्तिः, तत्प्रभावान्मृत्वाऽसौ सौधर्मदेवलोके उत्पन्नः पल्योपमायुः सुरो महर्द्धिक इति॥

लद्धूण य सम्मत्तं अणुकंपाएँ सो सुविहियाणं। भासुरवरबोंदिधरो देवो वेमाणितो जातो॥ १४४॥

स ग्रामचिन्तकः सुविहितानामनुकम्पया—परमभक्त्या तेभ्यः सम्यक्त्वं लब्ध्वा च भास्वरां—दीप्तिमतीं वरां—प्रधानां बोन्दीं—तनुं धारयतीति भास्वरवरबोन्दिधरः देवो वैमानिको जात इति निर्युक्तिगाथार्थः॥

श्रीवीरस्य सम्यक्त्वं देवत्वं च गा. १४३-१४४ भा. १-२

॥१५२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चइऊण देवलोगा इह चेव य भारहंमि वासंमि । इक्खागकुले जातो उसभसुयसुतो मरीइत्ति ॥ १४५ ॥

ततो देवलोकात् स्वायुःक्षये च्युत्वा इहैव भारतवर्षे इक्ष्वाकुकुले जातः-उत्पन्न ऋषभसुतसुतो मरीचिः, ऋषभपौत्र इत्यर्थः ॥ यतश्चैवमतः—

इक्खागुकुले जातो इक्खागुकुलस्स होइ उप्पत्ती। कुलगरवंसे तीए भरहस्स सुओ मरीइत्ति ॥ १४६ ॥

इक्ष्वाकूणां कुलं इक्ष्वाकुकुलं तस्मिन् जातः-उत्पन्नो भरतस्य सुतो, मरीचिरिति योगः, तत्र सामान्येन ऋषभपौत्रत्वाभिधाने सतीदं विशेषाभिधानमदुष्टमेव, सामान्याभिधाने सति सर्वत्रापि विशेषाभिधानस्य दर्शनात्, स च इक्ष्वाकुकुले जातः कुलकरा वक्ष्यमाणलक्षणास्तेषां वंशः-प्रवाहस्तस्मिन्नतिक्रान्ते, यतश्चैवमत ईक्ष्वाकुकुलस्य भवति उत्पत्तिः, वाच्येति शेषः, तत्र कुलकरवंशेऽतीते इत्युक्तमतः प्रथमं कुलकराणामेवोत्पत्तिं प्रतिपिपादयिषुर्यस्मिन् काले क्षेत्रे च तत्प्रभवस्तदुपदर्शनार्थमिदमाह—

ओसप्पिणी इमीसे तइयाऍ समाऍ पच्छिमे भागे । पलितोवमट्ठभागे सेसंमि य कुलगरुप्पत्ती ॥१४७॥

अद्धभरहमज्झिल्लुतिभागे गंगासिंधुमज्झंमि । एत्थ बहुमज्झदेसे उप्पन्ना कुलगरा सत्त ॥ १४८ ॥

अस्यामवसर्पिण्यां वर्त्तमानायां या तृतीया समा-सुषमदुष्षमाभिधाना तस्या यः पश्चिमो भागः तस्मिन्, कियन्मात्रे इत्याह—पल्योपमाष्टभागप्रमाणे शेषे तिष्ठति सति कुलकरोत्पत्तिः, अभूदिति वाक्यशेषः, कुत्रेत्यत आह—अर्द्धभरतमध्यत्रिभागे, किंविशिष्टे इत्याह—गङ्गासिन्धुमध्येऽत्र, एतस्मिन्नर्द्धभरतमध्यमत्रिभागे बहुमध्यदेशे, न तु पर्यन्तेषु,

Jain Education Intern... For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

उत्पन्नाः कुलकराः सप्त, इहार्द्धभरतं विद्याधरालयवैताढ्यपर्वतादारतः परिग्राह्यं, न तु परतो, व्याख्यानात् ॥ सम्प्रति कुलकरवक्तव्यतामिधायिकां द्वारगाथां प्रतिपादयति—

पुव्वभव १ जम्म २ नामं ३ पमाण ४ संघयणमेव ५ संठाणं ६।
वन्ने ७ त्थिया ८ ऽऽउ ९ भागा १० भवणोवातो ११ य नीई १२ य ॥ १४९ ॥

कुलकराणां पूर्वभवा वक्तव्याः, ततो जन्म, तदनन्तरं नामानि, ततः प्रमाणानि, तदनन्तरं संहननं वक्तव्यम्, एवशब्दः पूरणार्थः, तथा संस्थानं, ततो वर्णाः प्रतिपादयितव्याः, तदनन्तरं स्त्रियः, ततः आयुर्वक्तव्यं, ततो भागा वाच्याः—कस्मिन् वयोभागे कुलकराः संवृत्ता इति, भवनेषूपपातो वक्तव्यः, भवनग्रहणं भवनपतिनिकायेषु तेषामुपपातो नान्यत्रेति प्रदर्शनार्थं, तथा नीतिश्च या यस्य हकारादिलक्षणा सा तस्य वक्तव्येति गाथाक्षरार्थः ॥ अवयवार्थं तु प्रतिद्वारं भाष्यकारः स्वयमेव वक्ष्यति, तत्र प्रथमद्वारावयवार्थाभिधित्सयेदमाह—

अवरविदेहे दो वणियवयंसा माइ उज्जुगे चेव। कालगया इह भरहे हत्थी मणुओ य आयाया ॥ १५० ॥
दट्ठुं सिणेहकरणं गयमारुहणं च नामनिप्फत्ती। परिहाणि गेहि कलहो सामत्थणं विन्नवणहत्ति ॥ १५१ ॥

अपरविदेहे द्वौ वणिग्वयस्यावभूतां, तद्यथा—एको मायी अपरश्च ऋजुः, तौ च कालगताविह भरते आयातौ, मायी हस्ती इतरो मनुष्य इति, ततो दृष्ट्वा परस्परं स्नेहकरणं, ततो गजारोहणं, तदनन्तरं नामनिर्वृत्तिः, गच्छता च कालेन कल्पद्रुमाणां परिहानिः, ततः प्रभूता प्रभूततरा गृद्धिस्तदनन्तरं कलहस्ततः 'सामत्थणं'ति देशीवचनमेतत्पर्यालोचनमित्यर्थः,

॥१५३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र 'कुलकर' वक्तव्यता दर्शयते

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्तिः

ततो विज्ञापना, तदनन्तरं 'हा' इति हाकारलक्षणाया नीतेः प्रवृत्तिः, भावार्थः कथानकादवसेयः, तच्चेदम्—अवरविदेहे दो मित्ता वणिया, तत्थेगो माई, इयरो उज्जुगो, ते पुण एगओ चेव ववहरंति, तत्थ जो माई सो तं उज्जुगं अइसंधेइ, इयरो सव्वमगूढंतो सम्मं ववहरइ, दोवि पुण दाणरुई, ततो सो उज्जुगो कालं काऊण इहेव दाहिणड्ढे मिहुणगो जातो, वंको पुण तंमि चेव पएसे हत्थिरयणं, सो य सेतो वण्णेणं चउदंतो य, जाहे ते दोऽवि पडुप्पण्णसरीरगा जाया ताहे ते हिंडिउमारद्धा, तेण य हत्थिणा हिंडंतेण सो मिहुणगो दिट्ठो, दट्ठूण य से परमा पीई उप्पन्ना, तं च से अभिओग-निवत्तियं कम्मं उदिन्नं, ततो तेण मिहुणगं खंधे विलइयं, ततो सवेण लोगेण तं मिहुणगं तहारूवं दट्ठूण अम्हेहिंतो अब्भहिओ मणूसो एसो इमं च से विमलं वाहणंति से विमलवाहणत्ति नामं कयं, तेसिं च जाईसरणं जायं, ताहे कालदोसेण इमे सत्त कप्परुक्खा परिहायंति,—'मत्तंगया य भिंगा चित्तंगा चेव तहय चित्तरसा । गेहागार अणि-गणा सत्तमया कप्परुक्खत्ति ॥ १ ॥' तेसु परिहायंतेसु कसाया उप्पण्णा, अयं मम मा इत्थ कोइ अल्लियउ इति भणिउं पवत्ता, जो ममीकयमल्लियइ तेण इयरो कसाइज्जइ, ततो परोप्परमसंखडं, ताहे चिंतंति—कंचि अहिवइं ठवेमो, जो ववत्थाए ठवेइ, ताहे तेहिं सो विमलवाहणो एस अम्हेहिंतो अहितो इति अहिवई ठवितो, ताहे तेण तेसिं रुक्खा विरिक्का, भणिया य—जो तुब्भं एयं मेरं अइक्कमइ तं मम कहेज्जह जेणाहं से दंडं वत्तेमि, सोऽवि कहं जाणइ ?, भण्णइ—सो जाइस्सरो तं वणियत्तं सरेइ तेण जाणइ, ताहे तेसिं जो कोऽवि अवरज्झइ सो तस्स कहिज्जइ, ताहे सो तेसिं दंडं वत्तेइ, को पुण दंडो ?, हक्कारो, हा तुमे दुट्ठु कयंति, ताहे सो जाणइ—अहं सव्वस्सहरणो कतो, वरं हतो होंतो सीसं वा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥१५४॥

मे वरं छिन्नं होन्तं, न य एरिसं विडंबणं पाविन्तोत्ति, एवं बहुकालं हक्कारदंडो अणुवत्तितो, तस्स य चंदजसा भज्जा, तीए समं भोगे भुञ्जंतस्स अवरं मिहुणं जायं, तस्सवि कालंतरेण अवरं, एवं ते एगवंसंमि सत्त कुलगरा उप्पन्ना, पूर्व-भवाः खल्वमीषां प्रथमानुयोगतोऽवसेयाः, जन्म पुनरिहैव सर्वेषां द्रष्टव्यम् ॥ व्याख्यातं पूर्वभवजन्मरूपं द्वारद्वयं, सम्प्रति कुलकरनामप्रतिपादनार्थमाह—

पढमेत्थ विमलवाहण चक्खुम जसमं चउत्थमभिचंदे । तत्तो य पसेणइए मरुदेवे चेव नाभी य ॥ १५२ ॥

प्रथमोऽत्र विमलवाहनो द्वितीयश्चक्षुष्मान् तृतीयो यशस्वी चतुर्थोऽभिचन्द्रः पञ्चमः प्रसेनजित् षष्ठो मरुदेवः सप्तमो नाभिरिति ॥ गतं नामद्वारम्, अधुना प्रमाणद्वारावयवार्थमभिधित्सुराह—

नव धणुसयाइं पढमो अट्ठ य सत्तद्धसत्तमाइं च । छच्चेव अद्धछट्ठा, पंचसया पण्णवीसाओ ॥ १५३ ॥

प्रथमो विमलवाहन उच्चैस्त्वेन नव धनुःशतानि द्वितीयश्चक्षुष्मान् अष्टौ ८०० तृतीयो यशस्वी सप्त ७०० चतुर्थोऽ-भिचन्द्रोऽर्द्धसप्तमानि धनुःशतानि ६५० पञ्चमः प्रसेनजित् षट् ६०० षष्ठो मरुदेवोऽर्द्धषष्ठानि धनुःशतानि ५५० सप्तमो नाभिः पञ्चविंशत्यधिकानि पञ्चधनुःशतानि ५२५ ॥ गतं प्रमाणद्वारम्, अधुना संहननसंस्थानप्रतिपादनार्थमाह—

वज्जरिसभसंघयणा समचउरंसा य होंति संठाणे । वण्णंपि य वोच्छामि पत्तेयं जस्स जो आसी ॥ १५४ ॥

सर्व एव विमलवाहनादयो वज्रर्षभसंहननाः संस्थाने च चिन्त्यमाने समचतुरस्राश्च भवन्ति, वर्णद्वारसम्बन्धाभिधा-नार्थमाह—'वण्णंपी'त्यादि, वर्णमपि च वक्ष्ये प्रत्येकं च यस्य य आसीत् इति ॥ प्रतिज्ञातमेव निर्वाहयति—

कुलकरा-धिकारः गा. १५२-१५४

॥१५४॥

Jain Education Internat
For Private & Personal Use Only
www.jainelibrary.org

चक्खुम जसमं च पसेणई य एए पियंगुवण्णाभा । अभिचंदो ससिगोरो निम्मलकणगप्पभा सेसा ॥ १५५ ॥

चक्षुष्मान् यशस्वी प्रसेनजित्, एते द्वितीयतृतीयपञ्चमाः 'प्रियङ्गुवर्णाभाः' प्रियङ्गुवर्ण इवाभा–छाया येषां ते तथा–प्रियङ्गुश्यामाः, अभिचन्द्रश्चतुर्थः कुलकरः शशिवद् गौरः, निर्मलकनकवत् प्रभा–छाया येषां ते तथा शेषा–विमलवाहन-मरुदेवनाभयः ॥ गतं वर्णद्वारं, स्त्रीद्वारप्रतिपादनार्थमाह—

चंदजस चंदकंता सुरूव पडिरूव चक्खुकंता य । सिरिकंता मरुदेवी कुलगरपत्तीण नामाइं ॥ १५६ ॥

विमलवाहनस्य पत्नी चन्द्रयशाश्चक्षुष्मतश्च चन्द्रकान्ता, यशस्विनः सुरूपा, अभिचन्द्रस्य प्रतिरूपा, प्रसेनजितश्चक्षुः-कान्ता मरुदेवस्य श्रीकान्ता, नाभेर्मरुदेवी, इमानि यथाक्रमं कुलकरपत्नीनां नामानि ॥ एताश्च संहननादिभिः कुलकर-तुल्या एव द्रष्टव्याः, यत आह—

संघयणं संठाणं उच्चत्तं चेव कुलगरेहिं समं । वण्णेण एगवण्णा सव्वाओ पियंगुवण्णाओ ॥ १५७ ॥

संहननं संस्थानमुच्चैस्त्वं चैव कुलकरैरात्मीयैरात्मीयैः समं–अनुरूपमासामधिकृतस्त्रीणां, नवरं प्रमाणेन ईषन्न्यूना इति सम्प्रदायः, तथा वर्णेन सर्वा अप्येकवर्णाः प्रियङ्गुवर्णा इति ॥ गतं स्त्रीद्वारम्, इदानीमायुर्द्वारमाह—

पलितोवमदसभागो पढमस्साउं ततो असंखेज्जा । ते याणुपुव्विहीणा पुव्वा नाभिस्स संखिज्जा ॥ १५८ ॥

प्रथमस्य–विमलवाहनस्यायुः पल्योपमदशभागः, तदनन्तरमन्येषां चक्षुष्मदादीनामसङ्ख्येयानि पूर्वाणीति सम्बध्यते, तान्यपि चानुपूर्व्या–क्रमेण हीनानि, नाभेस्तु सङ्ख्येयानि पूर्वाण्यायुष्कमिति, अन्ये तु व्याचक्षते–प्रथमस्य पल्योपमदश-

Jain Education Internat... For Private & Personal Use Only ...jainelibrary.org

भाग एवायुः, ततो द्वितीयस्यासङ्ख्येयाः, पल्योपमासङ्ख्येयभागा इति वाक्यशेषः, एवं चानुपूर्व्या हीनं शेषाणामायुष्कं द्रष्टव्यं, तावद्यावत्सङ्ख्येयानि पूर्वाणि नाभेरायुष्कमित्यविरुद्धेयं व्याख्या, अपरे व्याचक्षते–प्रथमस्यायुः पल्योपमदशभागः ततोऽसङ्ख्येया इति–शेषाणां समुदितानां पल्योपमासङ्ख्येयभागाः, किमुक्तं भवति ?–द्वितीयस्य पल्योपमासङ्ख्येयभाग आयुः शेषाणां तत एवासङ्ख्येयभागोऽसङ्ख्येयभागः पात्यते तावद्यावन्नाभेरसङ्ख्येयानि पूर्वाणि, तदेतदपव्याख्यानं, कथमिति चेत्, उच्यते, इह पल्योपमाष्टभागे अशेषकुलकराणामुत्पत्तिः, 'पलितोवमट्ठभागे सेसंमि य कुलगरुप्पत्ती' इति वचनात्, तत्र पल्योपमं किलासत्कल्पनया चत्वारिंशद्भागं परिकल्प्यते, तस्याष्टमो भागः पञ्च चत्वारिंशद्भागाः, तत्रापि प्रथमस्य विमलवाहनस्यायुः पल्योपमदशभागः, ततश्चत्वारश्चत्वारिंशद्भागास्तदायुषि गताः, शेष एकः पल्योपमस्य चत्वारिंशत्तमः सङ्ख्येयो भागोऽवतिष्ठते, स च चक्षुष्मदादिगतैः पञ्चभिरसङ्ख्येयभागैर्न पूर्यते इत्यपव्याख्या, अथ अत एव नाभेरसङ्ख्येयानि पूर्वाण्यायुष्कमुक्तमिति, इदमयुक्तं तूक्तं, यतो मरुदेव्याः सङ्ख्येयानि वर्षाण्यायुः, असङ्ख्येयवर्षायुषां केवलज्ञानाभावात्, ततो नाभेः सङ्ख्येयवर्षायुष्कत्वमेव, कुलकराणां कुलकरपत्नीनां च समानायुष्कत्वात्॥ तथा चाह—

जं चेव आउयं कुलगराण तं चेव होइ तासिंपि । जं पढमगस्स आउं तावइयं होइ हत्थिस्स ॥ १५९ ॥

यदेवायुष्कं कुलकराणां प्रागुक्तं तदेव भवति तासामपि–कुलगराङ्गनानां, सङ्घासाम्याच्च तदेवेत्यभिधीयते, यावता प्रत्येकं भिन्नमेव प्राणिनामायुः। तथा यत्प्रथमस्य कुलकरस्य–विमलवाहनाख्यस्यायुस्तावदेव भवति हस्तिनः, एवं शेषकुलकरहस्तिनामपि कुलकरतुल्यं द्रष्टव्यम्॥ सम्प्रति भागद्वारं वक्तव्यं, यथा कः कस्य सर्वायुष्के कुलकरकाल इति, तत्रेदमाह–

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जं जस्स आउयं खलु तं दसभागे समं विभइऊणं । मज्झिल्लट्ठतिभागे कुलगरकालं वियाणाहि ॥ १६० ॥

यद्यस्य कुलकरस्यायुस्तत् खलु दशभागान् समं विभज्य मध्यमेऽष्टभागात्मके त्रिभागे कुलकरकालं विजानीहि ॥ अमुमेवार्थं प्रकटयन्नाह—

पढमो य कुमारत्ते भागो चरिमो य वुड्ढभावम्मि । ते पयणुपेज्जदोसा सव्वे देवेसु उववन्ना ॥ १६१ ॥

तेषां दशानां भागानां मध्ये प्रथमो भागः कुमारत्वे भवति, चरमो वृद्धभावे, शेषा मध्यमा अष्टौ भागाः कुलकरकाल इति । गतं भागद्वारम् , उपपातद्वारमुच्यते–ते प्रतनुप्रेमद्वेषाः, प्रेम–रागो द्वेषः प्रसिद्धः । सर्वे विमलवाहनादयो देवेषूपपन्नाः ॥ तत्र न ज्ञायते केषु देवेषूपपन्ना इत्यत आह—

दो चेव सुवण्णेसुं उयहिकुमारेसु होंति दो चेव । दो दीवकुमारेसुं एगो नागेसु उववण्णो ॥ १६२ ॥

द्वौ आद्यौ विमलवाहनचक्षुष्मदभिधानौ सुपर्णेषु देवेषूत्पन्नौ, द्वावेव च यशस्वि–अभिचन्द्राख्यावुदधिकुमारेषु भवतः, द्वौ प्रसेनजिन्मरुदेवाख्यौ द्वीपकुमारेषु, एको नाभिनामा सप्तमकुलकरो नागेषूपपन्नः ॥ सम्प्रति कुलकरस्त्रीणां हस्तिनां चोपपातमभिधित्सुराह—

हत्थी छच्चित्थीतो नागकुमारेसु होंति उववन्ना । एगा सिद्धिं पत्ता मरुदेवी नाभिणो पत्ती ॥ १६३ ॥

हस्तिनः सप्तापि षट् च स्त्रियः चन्द्रयशःप्रभृतयो नागकुमारेषूपपन्नाः, अन्ये तु प्रतिपादयन्ति–एक एव हस्ती

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥ १५६ ॥

षट् च स्त्रियो नागेषूपपन्नाः, शेषाणामिहानभिधानमेवेति, एका सप्तमी मरुदेवी नाभेः पत्नी सिद्धिं प्राप्ताः ॥ उक्तमुपपात-द्वारम्, अधुना नीतिद्वारप्रतिपादनार्थमाह—

हक्कारे मक्कारे धिक्कारे चेव दंडनीतीओ। वोच्छं तासि विसेसं जहक्कमं आनुपुव्वीए ॥ १६४ ॥

हकारो मकारो धिक्कारश्चेति कुलकराणां दण्डनीतयः, ततो वक्ष्ये 'तासां' दण्डनीतीनां विशेषं यथाक्रमं, या यस्य तां तस्य वक्ष्य इति भावः, तामपि तथा वक्ष्ये आनुपूर्व्या—परिपाट्या, विमलवाहनादारभ्य क्रमेणेति यावत्॥ प्रतिज्ञातमेव करोति—

पढमबिइयाण पढमा तइयचउत्थाण अहिणवा बिइया। पंचम छट्ठस्स य सत्तमस्स तइया अहिणवाओ ॥१६५॥

प्रथमद्वितीययोः सूत्रे द्वित्वेऽपि बहुवचनं प्राकृतत्वात् कुलकरयोः प्रथमा हक्कारलक्षणा दण्डनीतिः, तृतीयचतु-र्थयोः—यशस्व्यभिचन्द्राख्ययोः कुलकरयोरभिनवा द्वितीया—मक्कारलक्षणा दण्डनीतिः, किमुक्तं भवति ?—स्वल्पापराधे प्रथमया दण्डः क्रियते, महापराधे द्वितीययेति, तथा पञ्चमषष्ठयोः सप्तमस्य च तृतीया—धिक्काराख्या अभिनवा, एषा उत्कृष्टा द्वितीया मध्यमा प्रथमा जघन्या ॥ एताश्च तिस्रोऽपि लघुमध्यमोत्कृष्टापराधेषु यथाक्रमं प्रवर्त्तिता इति ॥

सेसाउ दंडनीती माणवगनिहीउ होइ भरहस्स। उसभस्स गिहावासे असक्कतो आसि आहारो ॥ १६६ ॥

शेषा तु—चारकच्छविच्छेदलक्षणा दण्डनीतिर्भरतस्य माणवकनिधेः सकाशाद्भवति, इयमत्र भावना—कोपाविष्कर-रणे नरे इतः स्थानान्मा यासीरित्येवं यत्परिभाषणं यश्च मण्डलिबन्धो यथा नोऽस्मात्प्रदेशाद् गन्तव्यमित्येवंरूपे द्वे दण्ड-नीती भगवता ऋषभस्वामिना प्रवर्त्तिते चारकच्छविच्छेदाख्ये च द्वे दण्डनीती भरतेन माणवकनिधेरिति, इदं च नीत्यु-

कुलकरा-धिकारः गा. १६१-१६६

॥ १५६ ॥

Jain Education Internat For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

त्पादाभिधानमन्यास्वप्यतीतासु एष्यासु चावसर्पिणीषु अयमेव न्याय इति ख्यापनार्थं, तस्य च भरतस्य पिता ऋषभनाथः तस्य च ऋषभनाथस्य गृहवासे आहार आसीद् असंस्कृतः–स्वभावसम्पन्नः, भगवतो हि ऋषभस्वामिनो यावद् गृहवासस्तावद्देवेन्द्रादेशाद्देवा देवकुरूत्तरकुरुक्षेत्रयोः स्वादूनि फलानि क्षीरोदसमुद्राच्च उदकमुपनीतवन्त इति ॥ अथ भरतचक्रवर्त्तिकाले कियत्यो दण्डनीतयः प्रावर्त्तिष्यन्तेत्यत आह—

परिहासणा उ पढमा, मंडलिबंधो उ होइ बीया उ। चारगछविछेयाई भरहस्स चउव्विहा नीती ॥ मू.भा.३

भरतस्य साम्राज्यानुभवनकाले चतुर्विधा दण्डनीतिरभूत्, तद्यथा–प्रथमा स्वल्पापराधविषया परिभाषणा–प्रागुक्तस्वरूपा भगवता आदिनाथेन प्रवर्त्तिता आसीत्, द्वितीया मण्डलिबन्धो–मण्डलिबन्धाख्या आदिनाथेनैव प्रवर्त्तिता, साऽपि किञ्चिन्महापराधविषया, तृतीया चारकलक्षणा भरतेन माणवकनिधिं परिभाव्य प्रवर्त्तिता, सा गुरुतरापराधविषया, चतुर्थी छविच्छेदादिका, आदिशब्दाच्छिरःकर्त्तनादिपरिग्रहः, सा महापराधविषया भरतेनैव माणवकनिधेः प्रवर्त्तितेति अन्ये तु चतस्रोऽप्येता दण्डनीतयो भरतेनैवोत्पादिता इति व्याचक्षते ॥ अथ कोऽसौ भरतः ?, उच्यते–ऋषभनाथपुत्रः, अथ ऋषभनाथ एव कोऽसाविति तद्वक्तव्यतामाह, अथवा प्रतिपादितः कुलकरवंशः, इदानीं प्राक्सूचित इक्ष्वाकुवंशः प्रतिपाद्यते, स च ऋषभनाथप्रभव इति तद्वक्तव्यतामाह—

नाभी विणीयभूमी मरुदेवी उत्तरा असाढा य। राया य वयरनाभो विमाण सवट्ठसिद्धातो ॥ १६७ ॥

इयं निर्युक्तिगाथा प्रभूतार्थप्रतिपादिका, अस्यां च प्रतिपदं क्रियाध्याहारः कार्यः, स चेत्थं—नाभिरिति—नाभिनाम

आ.सू. २७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र 'ऋषभदेव' अधिकार एवं तस्य पूर्वभवा: वर्णयन्ते

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥१५७॥

सप्तमः कुलकरो बभूव, 'विणीयभूमी' इति तस्य विनीताभूमी प्राय आसीत्, मरुदेवी च तस्य भार्या, राजा च प्राग्भवे वैरनाभः सन् प्रव्रज्यां गृहीत्वा तीर्थकरनामगोत्रं कर्म्म बद्ध्वा मृत्वा सर्वार्थसिद्धिमवाप्य ततश्च्युत्वा तस्या मरुदेव्याः कुक्षौ तस्यां विनीतभूमौ ऋषभनाथः सञ्जातः, तस्य गर्भावतारसमये उत्तराषाढा नक्षत्रमासीत् ॥ सम्प्रति यथा भगवता सम्यक्त्वमवाप्तं, यावतो वा भवानवाप्तसम्यक्त्वः संसारं पर्यटितवान्, यथा च तेन तीर्थकरनामगोत्रं कर्म्म बद्धं, तदेतत्सर्वमभिधित्सुः प्रथमतो भवद्वारगाथामाह—

धण मिहुण सुर महब्बल ललियंग य वइरजंघ मिहुणे य। सोहम्म विज्ज अच्चुय चक्की सव्वट्ठ उसभे य॥ (अव्या. द्वा.)

प्रथमभवे धनसार्थवाह आसीत्, द्वितीयभवे उत्तरकुरुषु मिथुनकः तृतीयभवे सौधर्म्मदेवलोके सुरः चतुर्थभवे गन्धिलावतीविजये—गन्धारविषये गन्धसमृद्धे महाबलो राजा पञ्चमे भवे ईशानदेवलोके ललिताङ्गनामा देवः षष्ठभवे महाविदेहे वज्रजङ्घः सप्तमभवे भूयोऽप्युत्तरकुरुषु मिथुनकः अष्टमभवे सौधर्म्मदेवलोके देवः नवमभवे विदेहेषु वैद्यः दशमभवे अच्युतदेवलोके देवः एकादशभवे वज्रनाभश्चक्रवर्त्ती द्वादशभवे सर्वार्थसिद्धिमहाविमाने देवः त्रयोदशभवे ऋषभनामा आदितीर्थकर इति ॥ एतानेव भवान् क्रमेण विवरीषुराह—

धणसत्थवाह घोसण जइगमणं अडवि वासठाणं च। बहु वोलीणे वासे चिंता घयदाणमासि तया॥१६८॥

प्रथमभवे धननामा सार्थवाह आसीत्, स च वसन्तपुरं प्रति प्रस्थितो घोषणां कृतवान्, तेन सह यतीनां गमनमभूत्, अटव्यां च वर्षासु स्थानं, ततो बहुव्युत्क्रान्ते वर्षाकाले धनस्य चिन्ताऽभवत्, ततो घृतदानमासीत् तदेति गाथाक्षरार्थः ॥

नीतयः श्रीऋषभ-पूर्वभवाः गा. १६७-१६८

॥१५७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** एषा भवद्वार-गाथा हरिभद्रसूरिवृत्तेः न दृश्यते

प्रत सूत्रांक [-] दीप अनुक्रम [-]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्तिः

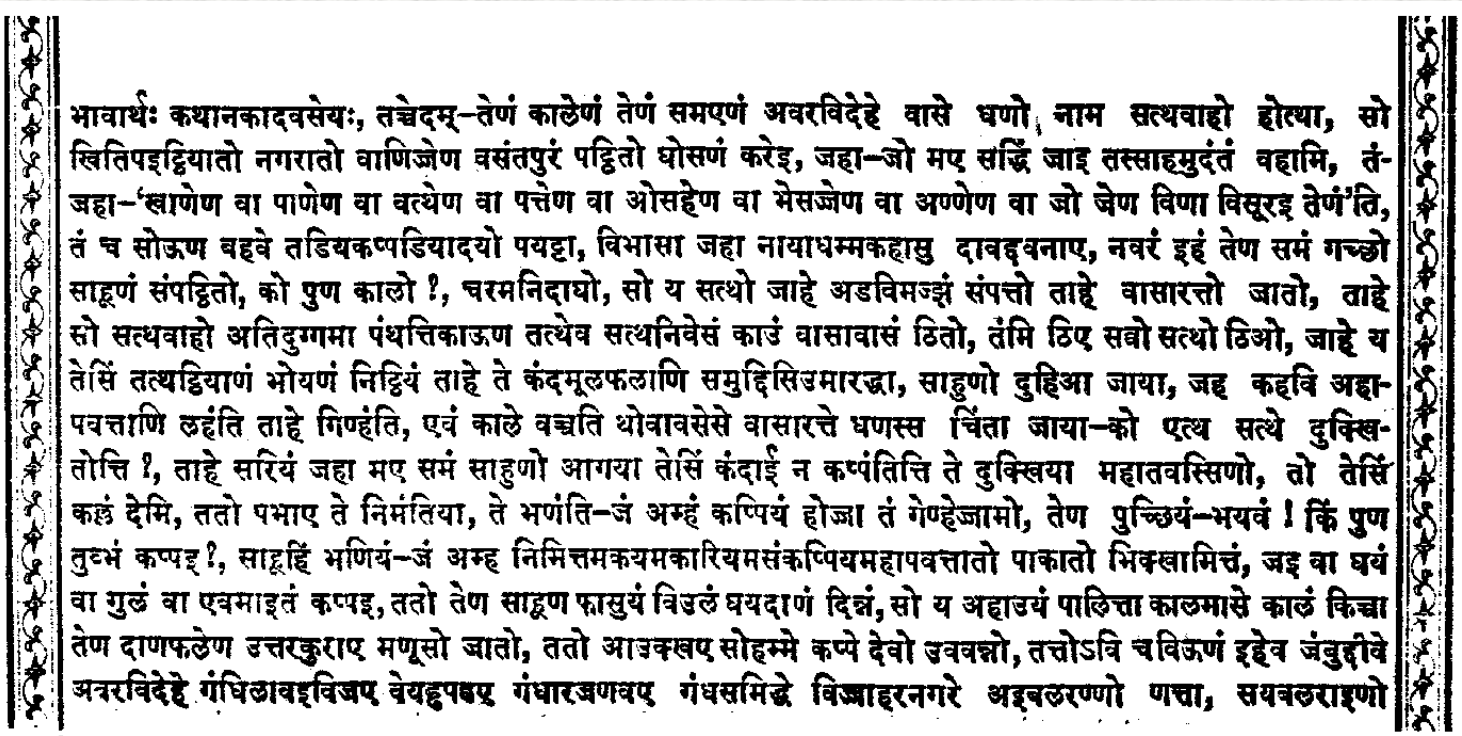

भावार्थः कथानकादवसेयः, तच्चेदम्–तेणं कालेणं तेणं समएणं अवरविदेहे वासे धणो नाम सत्थवाहो होत्था, सो खितिपइट्ठियातो नगरातो वाणिज्जेण वसंतपुरं पट्ठितो घोसणं करेइ, जहा–जो मए सद्धिं जाइ तस्साहमुदंतं वहामि, तं-जहा–'खाणेण वा पाणेण वा वत्थेण वा पत्तेण वा ओसहेण वा भेसज्जेण वा अण्णेण वा जो जेण विणा विसूरइ तेणं'ति, तं च सोऊण बहवे तडियकप्पडियादयो पयट्टा, विभासा जहा नायाधम्मकहासु दावद्दवनाए, नवरं इहं तेण समं गच्छो साहूणं संपट्ठितो, को पुण कालो ?, चरमनिदाघो, सो य सत्थो जाहे अडविमज्झं संपत्तो ताहे वासारत्तो जातो, ताहे सो सत्थवाहो अतिदुग्गमा पंथत्तिकाऊण तत्थेव सत्थनिवेसं काउं वासावासं ठितो, तंमि ठिए सव्वो सत्थो ठिओ, जाहे य तेसिं तत्थट्ठियाणं भोयणं निट्ठियं ताहे ते कंदमूलफलाणि समुद्दिसिउमारद्धा, साहुणो दुहिआ जाया, जह कहवि अहा-पवत्ताणि लहंति ताहे गिण्हंति, एवं काले वच्चति थोवावसेसे वासारत्ते धणस्स चिंता जाया–को एत्थ सत्थे दुक्खि-तोत्ति ?, ताहे सरियं जहा मए समं साहुणो आगया तेसिं कंदाई न कप्पंतित्ति ते दुक्खिया महातवस्सिणो, तो तेसिं कलं देमि, ततो पभाए ते निमंतिया, ते भणंति–जं अम्हं कप्पियं होज्जा तं गेण्हेज्जामो, तेण पुच्छियं–भयवं ! किं पुण तुब्भं कप्पइ ?, साहूहिं भणियं–जं अम्ह निमित्तमकयमकारियमसंकप्पियमहापवत्तातो पाकातो भिक्खामित्तं, जइ वा घयं वा गुलं वा एवमाइतं कप्पइ, ततो तेण साहूण फासुयं विउलं घयदाणं दिन्नं, सो य अहाउयं पालित्ता कालमासे कालं किच्चा तेण दाणफलेण उत्तरकुराए मणूसो जातो, ततो आउक्खए सोहम्मे कप्पे देवो उववन्नो, तत्तोऽवि चविऊणं इहेव जंबुद्दीवे अवरविदेहे गंधिलावइविजए वेयड्ढपव्वए गंधारजणवए गंधसमिद्धे विज्जाहरनगरे अइबलरण्णो पुत्ता, सयबलराइणो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥१५८॥

पुत्तो महाबलो नाम राया जातो, तस्स दुवे मंती, तंजहा–संभिन्नसोतो सयंबुद्धो य, संभिन्नसोयो नत्थियवादी सयंबुद्धो य सड्ढो, तत्थ सयंबुद्धेण अमच्चेण सावगेण पियवयंसगेण नाडगपेक्खाअक्खित्तमाणसं संभिन्नसोयं वाए पराजिणिऊण संवोहितो मासावसेसाऊ बावीसदिवसे भत्तपच्चक्खाणं काउं मरिऊण ईसाणे कप्पे सिरिप्पभविमाणे ललियंगतो नाम देवो जातो, ततो आउक्खए चइऊण इहेव जंबुद्दीवे दीवे पुक्खलाइविजए लोहग्गलनगरसामी वइरजंघो नाम राया जातो, तत्थ सभारियातो पच्छिमे वए पव्वयामित्ति चिंतयंतो पुत्तेण रज्जकंखिणा वासघरे जोगधूवप्पयोगेण मारितो, मरिऊण उत्तर-कुराए सभारियो मिहुणगो जातो, ततो सोहम्मे कप्पे देवो उववन्नो, ततो आउक्खए चइऊण महाविदेहवासे खितिपइ-ट्ठिते नगरे विज्जपुत्तो आयातो, जद्दिवसं तु जातो तद्दिवसमेगाहजाया से इमे चत्तारि वयंसया अणुरत्ता अविरत्ता तंजहा—रायपुत्तो सेट्ठिपुत्तो अमच्चपुत्तो सत्थवाहपुत्तोत्ति, ते सह संवड्ढिता सह पंसुकीलिया, धणसत्थवाहजीवोऽवि महाविज्जो जातो, ते वयंसया अन्नया कयाइ तस्स विज्जस्स घरे एगतो सहिया संनिसन्ना अच्छंति, तत्थ साहू महप्पा किमिकुट्ठेण गहितो भिक्खानिमित्तमइगतो, तेहिं सप्पणयं सहासं सो विज्जो भण्णइ–तुब्भेहिं नाम सवो लोगो खाइयवो, न तुब्भेहिं तवस्सिस्स वा अणाहस्स वा किरिया कायवा, सो भणइ–करेमि, किं पुण मम ओसहाणि काइंवि नत्थि, ते भणंति–अम्हे मोलं देमो, किं ओसहं?, जाइज्जउ, सो भणइ–कंबलरयणं गोसीसचंदणं, तइयं पुण जं सयसहस्सपाग-तेल्लं तं ममवि अत्थि, ताहे मग्गिउं पवत्ता, आगमियं च णेहिं जहा अमुगस्स वाणियगस्स अत्थि दोऽवि एयाणि, ते गया तस्स सगासं दो लक्खाणि घेत्तुं, ततो वाणियगो ससंभंतो भणति–किं देमि?, ते भणंति–कंबलरयणं गोसीसचंदणं

साधुचि-कित्सया स्वामिनम्

॥१५८॥

Jain Education Internat For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

च, तेण भण्णइ–किं एएहिं कज्जं?, ते भणंति–साहुस्स किरिया कायवा, तेण भण्णइ–एवं तो अलाहि मम मोल्लेणं, इहरहा चेव गेण्हह, करेह साहुणो किरियं, ममवि धम्मो होउत्ति, सो वाणियतो चिंतेइ–जइ ताव एएसिं बालाणं एरिसा सद्धा धम्मस्स उवरि तो किं मम मंदपुण्णस्स इहलोगपडिबद्धस्स नत्थित्ति संवेगमावन्नो तहारूवाणं थेराणं अंतिए पवइतो सिद्धो य। अमुमेवार्थमुपसंहरन् गाथाचतुष्टयेनाह—

★ उत्तरकुरु सोहम्मे महाविदेहे महब्बलो राया। ईसाणे ललियंगो महाविदेहे वइरजंघो ॥ पु. १ ॥
उत्तरकुरु सोहम्मे विदेह तेगिच्छियस्स तत्थ सुत्तो। रायसुयसेट्ठिमचासत्थाहसुया वयंसा से ॥१६९॥
वेज्जसुयस्स य गेहे किमिकुट्ठोवहुयं जइं दट्ठुं। बेंति य ते विज्जसुयं करेहि एयस्स तेगिच्छं ॥ १७० ॥
तेल्लं तेगिच्छिसुतो कंबलगं चंदणं च वाणियतो। दाउं अभिनिक्खंतो तेणेव भवेण अंतगडो ॥ १७१ ॥

धनभवक्षयानन्तरं उत्तरकुरुषु मिथुनको जातः, ततोऽपि मृत्वा सौधर्म्मदेवलोके देवः, तत आयुःक्षये च्युत्वा महाविदेहे महाबलो राजाऽभवत्, ततोऽपि मृत्वा ईशाने देवलोके ललिताङ्गो नाम देवस्ततोऽपि च्युत्वा महाविदेहे वज्रजङ्घः, ततोऽप्युद्धृत्योत्तरकुरुषु मिथुनको जातस्तत आयुःक्षये सौधर्मदेवलोके देवस्ततः च्युत्वा विदेहे चिकित्सकस्य सुतो जातः, तत्र 'से' तस्य राजसुतश्रेष्ठ्यमात्यसार्थवाहसुता वयस्या अभवन्, तस्य च वैद्यसुतस्य गेहे कृमिकुष्ठोपद्रुतं यतिं दृष्ट्वा ते वैद्यसुतं वदन्ति–यथा कुरु अस्य चिकित्सामिति, तत्र तैलं चिकित्सकसुतोऽदात्, कम्बलकं चन्दनं च वणिग्दत्त्वा अभिनिष्क्रान्तो–दीक्षां प्रतिपन्नवान्, तेनैव च भवेन अन्तकृत्–सिद्धो जातः ॥ कथानकशेषमुच्यते–ते विज्ञसुतप्प-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

★ एषा प्रक्षेपा गाथा वर्तते

भिइणो सवे घेत्तूण ताणि ओसहाणि गया साहुणो पासं जत्थ सो उज्जाणे पडिमं ठितो, पासंति पडिमागयं साहुं, दट्ठूणं पडिमाठियं ते वंदिऊण अणुण्णवंति–अणुजाणाह भयवं ! अम्हे तुम्हं धम्मविग्घं काउं उवट्ठिया, ताहे तेहेण सो साहू पढमं अब्भिंगितो, तं चेव तेलं रोमकूवेहिं सवं अइगयं, तंमि य अइगए किमिया सवे संखुद्धा, तेहिं चलंतेहिं तस्स साहुणो अतीव उज्जला विउला वेयणा पाउब्भूया, ताहे ते निग्गए दट्ठूण कंबलरयणेण सो साहू पाउतो, तं सीयलं तेलं च उण्हवीरियं, ते किमिया तत्थ लग्गा, ताहे पुव्वाणियगोकडेवरे पप्फोडियं, ते सवे पडिया, ततो सो साहू चंदणेण लित्तो, जातो समासत्थो, एवं तिन्नि वारे अब्भंगिऊण सो साहू तेहिं नीरोगो कतो, तंजहा—पढमं मक्खिज्जइ, ततो पाउणिज्जइ, पच्छा गोसीसचंदणेण लिंपइ, पुणो मक्खिज्जइ, एवमेयाए परिवाडीए पढममब्भंगे तयागता किमिया निग्गया बिइअब्भंगे मंसगया तईयअब्भंगे अट्ठिगया, ततो संरोहणीए ओसहीए कणगवन्नो जातो, ततो खमावेऊण ते पडिगया, पच्छा ते सहा जाया, पच्छा समणा, ततो अहाउयं पालइत्ता सामण्णं तंमूलागं पंचवि जणा अच्चुए कप्पे देवा उववन्ना । ततो देवलोगातो आउक्खए चइऊण इहेव जंबुदीवे दीवे पुव्वविदेहे पुक्खलावइविजए पुंडरिगिणीए नयरीए वइरसेणरन्नो धारिणीए देवीए उदरे पढमो वइरनाभो नाम पुत्तो जातो, जो पुव्वभवे विज्जो आसि, अवसेसा कमेण बाहुसुबाहुपीढमहापीढा, रायसुतो बाहू सेट्ठिसुतो सुबाहू अमच्चसुतो पीढो सत्थवाहसुतो महापीढो, वयरसेणो पवइतो तित्थयरो जातो, इयरे संवड्ढिया पंचलक्खणे भोगे भुंजंति, जद्दिवसं वइरसेणस्स केवलनाणमुप्पन्नं तंमि दिवसे वयरनाभस्स चक्करयणं समुप्पन्नं, वयरनाभो चक्कवट्टी जातो, इयरे चत्तारि मंडलिया रायाणो, एवं सो वयरनाभो

Jain Education Intern For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

साहुवेयावच्चप्पभावेण रज्जे चक्कवट्टिभोगे भुंजइ, वयरनाभचक्कवट्टिस्स चउरासीइ पुव्वसयसहस्साइं सव्वाउं, तत्थ तीसं पुव्वसयसहस्साइं कुमारवासो सोलस पुव्वसयसहस्साइं मंडलिओ चउवीसं पुव्वसयसहस्साइं चक्कवट्टी चउद्दस पुव्वसयसहस्साइं सामन्नपरियाओ इति, एवं चक्कवट्टिभोए भुंजंतो विहरइ, इतो य तित्थयरवयरसेणस्स समोसरणं, सो पिउपायमूलं चउहिंवि सहोयरेहिं समं पवइतो, तत्थ वइरनाभेण चोद्दस पुव्वा अहिज्जिया, सेसावि चउरो एक्कारसंगविऊ जाया, तत्थ बाहू तेसिं वन्नेसिं च साहूणं वेयावच्चं करेइ, जो सुबाहू सो साहुणो विस्सामेइ, एवं ते करेंते भयवं वयरनाभो अणुवूहइ—अहो सुलद्धं जम्मं सहलीकयं जीवियं जं साहूण वेयावच्चं कीरइ, परिस्संते वा साहुणो विस्सामेइ, एवं पसंसिज्जंतेसु तेसु तेसिं पच्छिमाणं दोण्हवि पीढमहापीढाणं अप्पत्तियं भवइ, अम्हे सज्झायंता न पसंसिज्जामो, जो करेइ सो पसंसिज्जइ सच्चो लोगववहारोत्ति, एवं ताभ्यां गुरुषु मात्सर्यमुद्वहद्भ्यां तथाविधतीव्रामर्षवशान्मिथ्यात्वमुपगम्य स्त्रीत्वमुपचितं, स्वल्पोऽपि दोषोऽनालोचितप्रतिक्रान्तो महानर्थफलो भवति, महानप्यपराधः आलोचितप्रतिक्रान्तोऽकिञ्चित्करो गुणाय वा प्रभवति, तथा चात्र विषदृष्टान्तः, तथाहि–स्वल्पमपि विषं मन्त्रादिना अप्रतिहतशक्तिकं प्राणोपरमाय प्रभवति, प्रभूतमपि मन्त्रादिना प्रतिहतशक्तिकं निर्दोषं कुष्ठाद्यपगमनादिगुणाय वा जायते, एवमिहापीति, वयरनाभेण विसुद्धपरिणामेणं वीसहिं ठाणेहिं तित्थयरनामगोत्तं कम्मं बद्धं ॥ अमुमेवार्थमुपसंहरन् गाथाचतुष्टयमाह—

साहुं तिगिच्छऊणं सामन्नं देवलोगगमणं च । पुंडरिगिणिए य चुया ततो सुया वयरसेणस्स ॥ १७२ ॥
पढमोऽत्थ वयरनाहो बाहु सुबाहू य पीढ महपीढे । तेसिं पिया तित्थयरो निक्खंता तेऽवि तत्थेव ॥ १७३ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥१६०॥

पढमो चउदसपुव्वी सेसा एक्कारसंगवी चउरो। बीयो वेयावच्चं किइकम्मं तइयओ कासी ॥ १७४ ॥
भोगफलं बाहुबलं पसंसणा जेट्ठ इयर अचियत्तं। पढमो तित्थयरत्तं वीसहिं ठाणेहिं कासीय ॥ १७५ ॥

साधुं चिकित्सित्वा श्रामण्यं परिपाल्य पञ्चानामपि देवलोकगमनम्, अच्युतकल्पे गमनमिति भावः, ततः च्युताः पुण्डरीकिण्यां नगर्यां वज्रसेनस्य सुता अभवन्, तत्र प्रथमो वैद्यसुतजीवोऽत्र वज्रनाभोऽभूत्, शेषास्तु राजश्रेष्ठ्य-मात्यसार्थवाहसुताः क्रमेण बाहुसुबाहुपीठमहापीठा बभूवुः, तेषां च पिता वज्रसेननामा तीर्थङ्करो जातः, तेऽपि वज्रना-भादयः पञ्चापि तत्रैव तीर्थकरस्य पितुः समीपे निष्क्रान्ताः, तत्र प्रथमो वज्रनाभनामा चतुर्दशपूर्वी जातः, शेषाश्च-त्वारोऽप्येकादशाङ्गविदः, तेषां पञ्चानां मध्ये द्वितीयो बाहुनामा वैयावृत्त्यं-भक्तपानादिनोपष्टम्भलक्षणं भोगफलं चक्रवर्त्तिभोगफलमकार्षीत्, तृतीयः सुबाहुनामा कृतिकर्म्म-साधुविश्रामणारूपं बहुफलं बाहुबलमकार्षीत्, ततस्तयो-र्बाहुसुबाह्वोर्ज्येष्ठयोर्वज्रनाभेन प्रशंसनम्, इतरयोः-कनिष्ठयोः पीठमहापीठयोरचियत्तं-गुरुषु प्रशंसां कुर्वत्सु मात्सर्यं, तत्र प्रथमो वज्रनाभनामा तीर्थकरत्वं विंशत्या स्थानैरकार्षीत् ॥ कानि पुनस्तानि विंशतिस्थानानीति तत्प्रतिपादकं गाथात्रयमाह—

अरहंतसिद्धपवयणगुरुथेरबहुस्सुएतवस्सीसुं। वच्छल्लया य एसिं अभिक्खनाणोवयोगे य ॥ १७६ ॥
दंसणविणए आवस्सए य सीलव्वए निरइयारो। खणलवतवच्चियाए वेयावच्चे समाही य ॥ १७७ ॥
अप्पुव्वनाणगहणे सुयभत्ती पवयणे पहावणया। एएहिं कारणेहिं तित्थयरत्तं लहइ जीवो ॥ १७८ ॥

भवाःगा-१७२-५ पीठादेः स्त्रीत्वं

॥१६०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** भगवन्त 'ऋषभ'स्य पूर्वभवे तीर्थंकरनामकर्म उपार्जनं एवं विंशतिस्थानक्स्य वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

अत्र प्रथमगाथया अष्टौ कारणान्युक्तानि द्वितीयगाथया नव तृतीयगाथया त्रीणि, तत्र प्रथमगाथाव्याख्या–अशोकाद्यष्टमहाप्रातिहार्यादिरूपां पूजामर्हन्तीत्यर्हन्तः–तीर्थकराः १ अपगतसकलकर्माशाः परमसुखिन एकान्तकृतकृत्याः सिद्धाः २ प्रवचनं—द्वादशाङ्गं तदुपयोगानन्यत्वात् सङ्घो वा प्रवचनं ३ गृणन्ति यथावस्थितं शास्त्रार्थमिति गुरवो–धर्मोपदेशादिदातारः ४ स्थविरा जातिश्रुतपर्यायभेदभिन्नाः, तत्र जातिस्थविराः षष्टिवर्षप्रमाणाः श्रुतस्थविराः समवायधराः पर्यायस्थविरा विंशतिवर्षव्रतपर्यायाः ५ बहु श्रुतं येषां ते बहुश्रुताः, तच्च बहुश्रुतमापेक्षिकं प्रतिपत्तव्यं, श्रुतं च त्रिधा–सूत्रतोऽर्थत उभयतश्च, तत्र सूत्रधरेभ्योऽर्थधराः प्रधानास्तेभ्योऽप्युभयधराः प्रधाना इति ६ तथा विचित्रमनशनादिभेदभिन्नं तपो विद्यते येषां ते तपस्विनः–सामान्यसाधवः, अर्हन्तश्च सिद्धाश्च प्रवचनं च गुरवश्च स्थविराश्च बहुश्रुताश्च तपस्विनश्च अर्हत्सिद्धप्रवचनगुरुस्थविरबहुश्रुततपस्विनः सूत्रे 'बहुस्सुए' इत्यत्र एकारः प्राकृतत्वादलाक्षणिकस्तेषु, 'एसिं'ति प्राकृतत्वात् सप्तम्यर्थे षष्ठी, भवति च प्राकृतत्वाद्विभक्तिव्यत्ययो, यदाह पाणिनिः स्वप्राकृतलक्षणे–"व्यत्ययोऽप्यासा"मिति, एतेषु सप्तसु स्थानेषु वत्सलभावो वत्सलता–अनुरागः यथावस्थितगुणोत्कीर्त्तनं तदनुरूपोपचारलक्षणः तीर्थकरनामकर्म्मबन्धकारणमिति योगः, तथा अभीक्ष्णम्–अनवरतं ज्ञानोपयोगो—ज्ञाने व्याप्रियमाणता, इदमष्टमं कारणं। द्वितीयगाथाव्याख्या–'दंसणे'त्यादि, दर्शनं–सम्यक्त्वं विनयो–ज्ञानादिविनयः, स च दशवैकालिकनिर्युक्तेरवसेयो वक्ष्यमाणो वा, दर्शनं च विनयश्च दर्शनविनयं समाहारो द्वन्द्वः तस्मिन् ९–१० आवश्यकं–अवश्यकर्त्तव्यं प्रतिक्रमणादि तस्मिन् ११ शीलानि च व्रतानि च शीलव्रतं अत्रापि समाहारद्वन्द्वः तस्मिन्, तत्र व्रतानि–मूलगुणाः शीलानि–उत्तर-

Jain Education Intern For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥ १६१ ॥

गुणाः, एतेषु निरतिचारः सन् तीर्थकरनामकर्म बध्नातीति क्रियायोगः १२–१३ एतावता पञ्च कारणान्युक्तानि, तथा क्षणलवे १४ तपसि १५ त्यागे १६ वैयावृत्त्ये १७ च समाधिस्तीर्थकरनामकर्मबन्धकारणं, तत्र क्षणलवग्रहणमशेषकाल-विशेषोपलक्षणं, क्षणलवादिषु कालविशेषेषु निरन्तरं संवेगभावनातो ध्यानासेवनतश्च समाधिः क्षणलवसमाधिः, तथा तपसि–बाह्याभ्यन्तरभेदभिन्ने यथाशक्ति निरन्तरं प्रवृत्तिः तपःसमाधिः, त्यागो द्विधा–द्रव्यत्यागो भावत्यागश्च, द्रव्यत्यागो नाम आहारोपधिशय्यादीनामप्रायोग्याणां परित्यागः, प्रायोग्याणां यतिजनेभ्यो दानं, भावत्यागः क्रोधादीनां विवेको ज्ञानादीनां यतिजनेभ्यो वितरणं, एतस्मिन् द्विविधेऽपि त्यागे सूत्रानतिक्रमेण यथाशक्ति निरन्तरं प्रवृत्तिस्त्याग-समाधिः, वैयावृत्त्यं दशविधं, तद्यथा—आचार्यवैयावृत्त्यं १ उपाध्यायवैयावृत्त्यं २ स्थविरवैयावृत्त्यं ३ तपस्विवैयावृत्त्यं ४ ग्लानवैयावृत्त्यं ५ शैक्षकवैयावृत्त्यं ६ साधर्मिकवैयावृत्त्यं ७ कुलवैयावृत्त्यं ८ गणवैयावृत्त्यं ९ सङ्घवैयावृत्त्यं चेति १०, एकैकं त्रयोदशविधं, तद्यथा—भक्तदानं १ पानदानं २ आसनप्रदानं ३ उपकरणप्रत्युपेक्षा ४ पादप्रमार्जनं ५ वस्त्रदानं ६ भैषजदानं ७ अध्वनि साहाय्यं ८ दुष्टस्तेनादिभ्यो रक्षणं ९ वसतौ प्रविशतां दण्डकग्रहणं १० कायिकामात्रकसम-र्पणं ११ संज्ञामात्रकसमर्पणं १२ श्लेष्ममात्रकसमर्पण १३ मिति, एतेषु वैयावृत्त्यभेदेषु यथाशक्ति निरन्तरं प्रवृत्तिर्वै-यावृत्त्यसमाधिः । तृतीयगाथाव्याख्या–'अप्पुव्वे'त्यादि, अपूर्वस्य ज्ञानस्य निरन्तरं ग्रहणमपूर्वग्रहणं १८ अष्टादशं तीर्थ-करनामकर्मबन्धकारणम्, एकोनविंशतितमं श्रुतभक्तिः–श्रुतविषयं बहुमानं १९ विंशतितमं प्रवचनप्रभावना, सा च यथाशक्ति प्रवचनार्थोपदेशदानादिरूपा २० । एभिरनन्तरोक्तैः कारणैस्तीर्थकरत्वं लभते जीवः ॥

विंशतिः स्थानकानि गा. १७६-१७८

॥ १६१ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

पुरिमेण पच्छिमेण य एए सव्वेऽवि फासिया ठाणा। मज्झिमएहिं जिणेहिं एक्कं दो तिन्नि सव्वे वा ॥ १७९ ॥

पूर्वेण-ऋषभनाथेन पश्चिमेन च-वर्द्धमानस्वामिना प्राग्भवे एतानि अनन्तरोक्तानि स्थानानि सर्वाण्यपि स्पृष्टानि-आसेवितानि, मध्यमैर्जिनैः-अजितस्वामिप्रभृतिभिरेकं द्वे त्रीणि सर्वाणि वा स्पृष्टानि, किमुक्तं भवति ?-केनाप्येकं केनापि द्वे केनापि त्रीणि केनापि सर्वाण्यपीति ॥ आह-

तं च कहं वेइज्जइ ? अगिलाए धम्मदेसणाईहिं। बज्झइ तं तु भयवतो, तइयभवोसक्कइत्ताणं ॥ १८० ॥

चशब्दः पुनरर्थे, तत्पुनः-तीर्थकरनामकर्म विपाकावस्थाप्राप्तं कथं वेद्यते ?, एवं शिष्येण प्रश्ने कृते सति सूरिराह-अग्लान्या-ग्लानिपरिहारेण धर्मदेशनादिभिः-अष्टमहाप्रातिहार्यादिरूपे सुरेन्द्रकृते पूजोपचारे सति सदेवमनुजासुरायां पर्षदि धर्मदेशनया-श्रुतचारित्ररूपधर्मप्ररूपणया, आदिशब्दाच्चतुस्त्रिंशता देहसौगन्ध्यादिभिरतिशयैः पञ्चात्रिंशता बुद्धवचनातिशेषैरित्यादिपरिग्रहः, तत्तु-तीर्थकरनामकर्म भगवतस्तीर्थकरभवात् प्राक् अवष्वष्क्य-पृष्ठतो गत्वा तृतीयभवं प्राप्य बध्यते-बन्धमायाति ॥ आह-तीर्थकरनामकर्मणो जघन्यत उत्कर्षतश्च बन्धस्थितिरन्तःसागरोपमकोटीकोटीप्रमाणा, ततः कथमुक्तं तीर्थकरभवात्प्राक् अवष्वष्क्य तृतीयभवे बध्यते इति ?, नैष दोषः, बध्यते इति किमुक्तं भवति ?, निकाचितावस्थीक्रियते, द्विविधो हि बन्धो-निकाचनारूपोऽनिकाचनारूपश्च, तत्रानिकाचनारूपस्तृतीयभवात् प्राक्तरामपि भवति, जघन्यतोऽप्यन्तःसागरोपमकोटीकोटीस्थितिकत्वात्, निकाचनारूपस्तु तीर्थकरभवात् प्राक् तृतीयभव एवाधिकृतवचनप्रामाण्यात्, तत्र निकाचितमवन्ध्यफलमितरत्तूभयथापि, 'बन्धा(यद्वा')ओसक्क

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः

॥ १६२ ॥

इत्ताणंति संसारं यदिवा प्राक् बद्धां सुदीर्घां तीर्थकरनामकर्म्मणः स्थितिमवष्वष्क्व-अपवर्त्त्य, किमुक्तं भवति ?-तीर्थकरभवात् प्राक् यावत्तृतीयो भवस्तावत्प्रमाणां कृत्वेति, तीर्थकरभवात् प्राक् तृतीयभवे निकाच्यते इति, उक्तं च विशेषणवत्याम्-'कोडाकोडी अयरोवमाण तित्थयरनामकम्मठिई । वज्झइ य तं अणंतरभवंमि तइयंमि निद्दिट्ठं ॥ १ ॥ तं ठिइमोसक्केउं तइयभवो जाव अहव संसारं । तित्थयरभवातो वा ओसक्केत्तुं भवे तइए ॥ २ ॥ जं वज्झइत्ति भणियं तत्थ निकाइज्जइत्ति नियमोऽयं । तदवंझफलं नियमा भयणा अनिकाइयावत्थे ॥ ३ ॥" निकाचनारूपश्च बन्धः तृतीय-भवादारभ्य तावद्यावत्तीर्थकरभवेऽपूर्वकरणस्य सङ्ख्येयभागः, तत ऊर्ध्वं बन्धव्यवच्छेदः, केवलिकाले तु तस्योदय इति ॥ अथ कस्यां गतौ बध्यते इत्याह—

नियमा मणुयगईए इत्थी पुरिसेयरो व सुहलेसो । आसेवियबहुलेहिं वीसाए अन्नयरएहिं ॥ १८१ ॥

नियमात्-नियमेन मनुष्यगतौ बध्यते-निकाचनरूपो बन्धः प्रारभ्यते, किंस्वरूपायां गतौ बध्नातीत्यत आह—स्त्री पुरुष इतरो वा-नपुंसकः, किं सर्व एव?, नेत्याह—शुभा लेश्या यस्यासौ शुभलेश्यः, कैः कृत्वेत्यत आह—विंशते-रन्यतरैः स्थानैः, कथम्भूतैरित्याह-'आसेवितबहुलैः, बहुलम्—अनेकप्रकारमासेवितैरित्यर्थः, पूर्वापरपदनिपातव्यत्ययः प्राकृतशैलीवशात् ॥ कथानकशेषमुच्यते—एवं तेण वयरनाभेण तित्थगरत्तं निवद्धं, बाहुणा वेयावच्चेण भोगा निव-त्तिया, सुबाहुणा बाहुबलं, इयरेहिं दोहिवि इत्थीनामगोयं कम्मं, ततो पंचवि अहाउयं पालइत्ता कालं काऊण सवट्ठ-सिद्धिमहाविमाणे तेत्तीससागरोवमट्ठिइया देवा उववण्णा, तत्थवि अहाउयं पालइत्ता पढमं वयरनाभो चइऊण इमीसे

जिनकर्म-बन्धः फलं च गा. १७९-८१

॥ १६२ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उस्सप्पिणीए सुसमसुसमाए वइक्कंताए सुसमाएवि वइक्कंताए सुसमदुसमाएवि तइयाए बहुवइक्कंताए चउरासीए पुवसयसहस्सेसु एगूणनईए य पक्खेसु सेसेसु आसाढे बहुलचउत्थीए उत्तरासाढाजोगजुत्ते मियंके इक्खागभूमीए नाभिस्स कुलगरस्स मरुदेवाए भारियाए कुच्छिंसि गब्भत्ताए उववन्ने, सा उसहगयसीहमाईए चोद्दस सुमिणे पासित्ता पडिबुद्धा, नाभिस्स कुलगरस्स कहियं, तेण भणियं—तुब्भ पुत्तो महाकुलगरो भविस्सइ, सक्कस्स य आसणं चलिअं, सिग्घं आगमणं, भणइ—देवाणुप्पिए ! तव पुत्तो सयलमंगलालओ पढमराया पढमधम्मचक्कवट्टी भविस्सइ, केई भणंति–बत्तीसंपि इंदा आगंतूण वागरेंति, ततो मरुदेवी हट्ठतुट्ठा गब्भं वहइ । अमुमेवार्थमुपसंहरन्नाह—

उववातो सव्वट्ठे सव्वेसिं पढमतो चुतो उसभो । रिक्खेण असाढाहिं असाढबहुले चउत्थीए ॥ १८२ ॥

उपपातः सर्वेषां—वज्रनाभप्रभृतीनां सर्वार्थमहाविमाने, आयुष्कपरिक्षये सति प्रथमं च्युत ऋषभः ऋक्षेण– नक्षत्रेण आषाढाभिः, उत्तराषाढारूपे नक्षत्रे चन्द्रेण सह योगमुपागते इत्यर्थः, आषाढबहुले चतुर्थ्याम्, आषाढप्रथमपक्षचतुर्थ्यामित्यर्थः ॥ सम्प्रति तद्वक्तव्यतामभिधित्सुर्द्वारगाथामाह—

जम्मणे नाम वुड्ढी य, जाईस्सरणे इय । वीवाहे य अवच्चे, अभिसेए रज्जसंगहे ॥ १८३ ॥

'जम्मणे' इति प्रथमं जन्मविधिर्वक्तव्यः, यथा 'चेत्तबहुलट्ठमी' इत्यादि, तदनन्तरं नामविषयः, ततो भगवतो वृद्धिर्वाच्या, 'अह वड्ढइ सो भयव'मित्यादि, ततो जातिस्मरणे–जातिस्मरणविषयो विधिर्वाच्यः, 'जाइस्सरो उ भयव'मित्यादि, तदनन्तरं विवाहविषयो विधिर्वक्तव्यः, 'भोगसमत्थं नाउ'मित्यादि, 'अवच्चे'इति अपत्येषु क्रमो वाच्यः, वक्ष्यति–

आ.सू. २८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

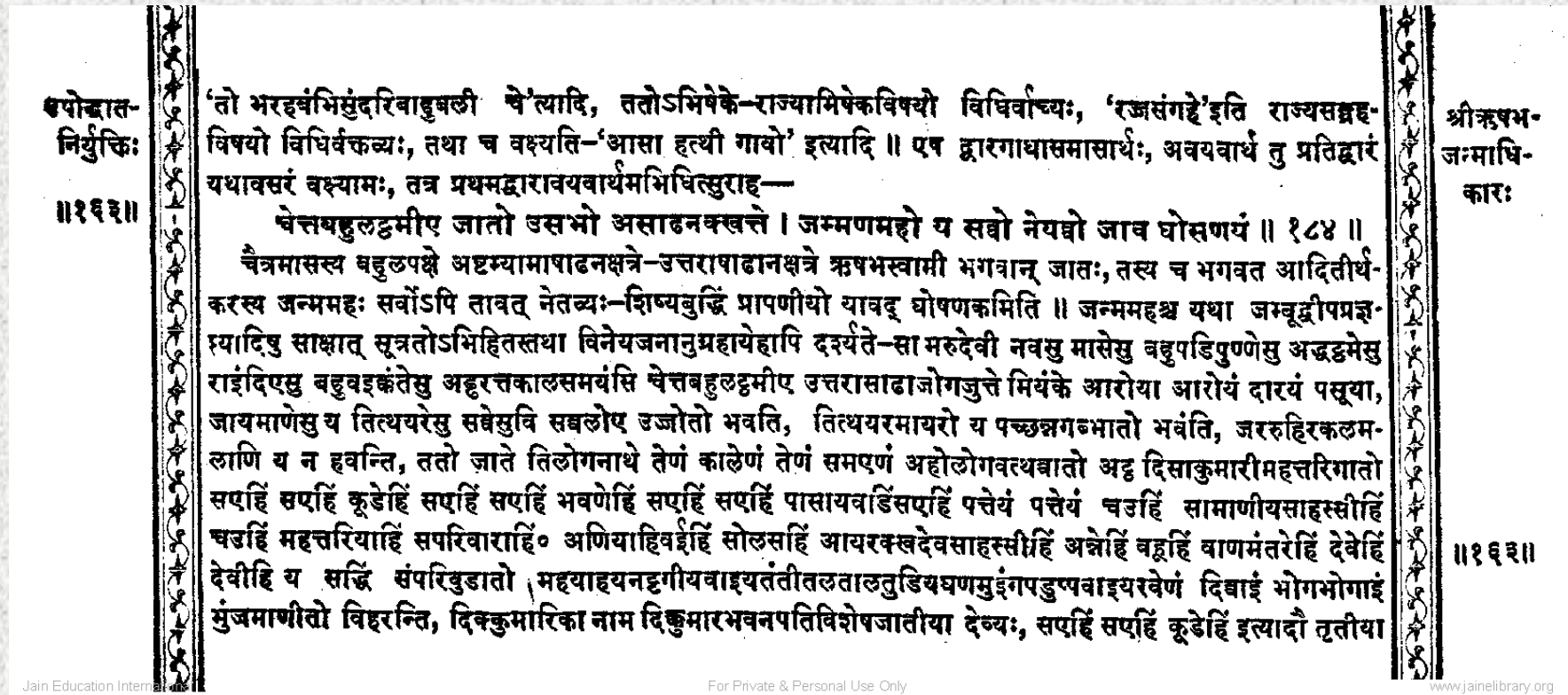

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥१६३॥

'तो भरहवंभिसुंदरिबाहुबली चे'त्यादि, ततोऽभिषेके–राज्याभिषेकविषयो विधिर्वाच्यः, 'रज्जसंगहे'इति राज्यसङ्ग्रह-विषयो विधिर्वक्तव्यः, तथा च वक्ष्यति–'आसा हत्थी गावो' इत्यादि ॥ एष द्वारगाथासमासार्थः, अवयवार्थं तु प्रतिद्वारं यथावसरं वक्ष्यामः, तत्र प्रथमद्वारावयवार्थमभिधित्सुराह—

चेत्तबहुलट्ठमीए जातो उसभो असाढनक्खत्ते । जम्मणमहो य सव्वो नेयव्वो जाव घोसणयं ॥ १८४ ॥

चैत्रमासस्य बहुलपक्षे अष्टम्यामाषाढनक्षत्रे–उत्तराषाढानक्षत्रे ऋषभस्वामी भगवान् जातः, तस्य च भगवत आदितीर्थ-करस्य जन्ममहः सर्वोऽपि तावत् नेतव्यः–शिष्यबुद्धिं प्रापणीयो यावद् घोषणकमिति ॥ जन्ममहश्च यथा जम्बूद्वीपप्रज्ञ-प्त्यादिषु साक्षात् सूत्रतोऽभिहितस्तथा विनेयजनानुग्रहायेहापि दर्श्यते–सा मरुदेवी नवसु मासेसु बहुपडिपुण्णेसु अद्धट्ठमेसु राइंदिएसु बहुवइक्कंतेसु अद्धरत्तकालसमयंसि चेत्तबहुलट्ठमीए उत्तरासाढाजोगजुत्ते मियंके आरोया आरोयं दारयं पसूया, जायमाणेसु य तित्थयरेसु सव्वेसुवि सव्वलोए उज्जोतो भवति, तित्थयरमायरो य पच्छन्नगब्भातो भवंति, जररुहिरकलम-लाणि य न हवन्ति, ततो जाते तिलोगनाथे तेणं कालेणं तेणं समएणं अहोलोगवत्थव्वातो अट्ठ दिसाकुमारीमहत्तरिगातो सएहिं सएहिं कूडेहिं सएहिं सएहिं भवणेहिं सएहिं सएहिं पासायवडिंसएहिं पत्तेयं पत्तेयं चउहिं सामाणीयसाहस्सीहिं चउहिं महत्तरियाहिं सपरिवाराहिं० अणियाहिवईहिं सोलसहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं अन्नेहिं बहूहिं वाणमंतरेहिं देवेहिं देवीहि य सद्धिं संपरिवुडातो महयाहयनट्टगीयवाइयतंतीतलतालतुडियघणमुइंगपडुप्पवाइयरवेणं दिव्वाइं भोगभोगाइं मुंजमाणीतो विहरन्ति, दिक्कुमारिका नाम दिक्कुमारभवनपतिविशेषजातीया देव्यः, सएहिं सएहिं कूडेहिं इत्यादौ तृतीया

श्रीऋषभ-जन्माधि-कारः

॥१६३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अथ भगवन्त "ऋषभ'स्य जन्माधिकार: वर्णयते, छप्पन दिक्कुमारी आगमन एवं जन्म महोत्सव-करणं

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

सप्तम्यर्थे प्राकृतत्वात्, ततोऽयमर्थः–स्वकीयेषु स्वकीयेषु कूटेषु स्वकीयेषु २ भवनेषु स्वकीयेषु २ प्रासादावतंसकेषु, प्रासादावतंसका नाम प्रासादविशेषाः, 'सामाणियसाहस्सीहिं' इति समाने विभवादौ भवा सामानिकाः, अध्यात्मादित्वादिकण्, दिक्कुमारिकामहत्तरिकाः सदृशद्युतिविभवादिका देव्य इत्यर्थः तेषां सहस्राणि सामानिकसहस्राणि तैश्चतुर्भिः, प्राकृतत्वाच्च सूत्रे दीर्घत्वं स्त्रीत्वं च, 'चउहिं महत्तरियाहिं'ति महत्तरिका नाम दिक्कुमारिकातुल्यविभवा दिक्कुमारिकाणामनतिक्रमणीयवचनाः, 'महयाहये'त्यादि महता रवेणेति योगः, 'आहय'त्ति आख्यानकप्रतिबद्धानीति वृद्धाः अथवा अहतानि–अक्षतानि अव्याहतानि इति भावः नाट्यगीते प्रतीते वादितानि च तानि तन्त्री–वीणा तला–हस्ततलास्तालाः–कंसिकास्त्रुटितानि–शेषतूर्याणि वादिततन्त्रीतलतालत्रुटितानि घनो घनवत् गम्भीरध्वनिर्यो मृदङ्गो–मर्दलः पटुना–दक्षपुरुषेण प्रवादितस्ततः एतेषां पदानां द्वन्द्वस्तेषां यो रवस्तेन दिव्यान्–अतिप्रधानान् भोगार्हा ये भोगाः– शब्दादयस्ते भोगभोगास्तान्, सूत्रे नपुंसकतानिर्देशः प्राकृतत्वात्, भुञ्जाना विहरन्ति–आसते, तंजहा–"भोगङ्करा १ भोगवती २, सुभोगा ३ भोगमालिनी ४। तोयधारा ५ विचित्ता य ६, पुप्फमाला ७ अणिंदिया ८॥१॥ तते णं तासिं अहोलोगवत्थव्वाणं अट्ठण्हं दिसाकुमारिमयहरिगाणं पत्तेयं पत्तेयं आसणाणि चलंति, तते णं ताओ अहोलोगवत्थव्वातो अट्ठ दिसाकुमारिमयहरियातो पत्तेयं पत्तेयं आसणाइं चलियाइं पासंति पासित्ता ओहिं पउंजंति, भगवं तित्थयरं ओहिणा आभोएंति, आभोएत्ता हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिया पीइमणा परमसोमणस्सिया हरिसवसविसप्पमाणहियया वियसियवरकमलनयणा पयलियवरकडगतुडियकेऊरमउडकुंडलहारविरायंतरइयवच्छा पालंबपलंबमाणघोलंतभूसणधरा ससंभमं तुरियं चवलं सीहासणातो अब्भुट्ठेंति २ पायपीढातो पच्चोरुहंति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥१६४॥

पच्चोरुहित्ता अंजलिमउलियग्गहत्था तित्थगराभिमुहं सत्तट्ठ पयाइं अणुगच्छंति अणुगच्छित्ता एवं जहा सक्के जाव वंदित्ता नमंसित्ता अन्नमन्नं सद्दावेंति सद्दावेत्ता एवं वयासी–उप्पण्णे खलु भो जंबुद्दीवे भयवं ! तित्थयरे तं जीयमेयं तीयपच्चुप्पन्नमणागयाणं अहोलोगवत्थव्वाणं अट्ठण्हं दिसाकुमारिमयहरियाणं जम्मणमहिमं करेंतए, तं गच्छामो णं अम्हेवि भगवतो जम्मणमहिमं करेमोत्तिकट्टु एवं वयंति वइत्ता पत्तेयं २ आभियोगे देवे सद्दावेंति, सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! अणेगखंभसयसंनिविट्ठं लीलट्ठियसालिभंजियागं ईहामिगउसभतुरगनरमगरविहगवालगकिन्नररुरुसरभचमरकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्तं खंभुग्गयवरवइरवेइआपरिगयाभिरामं विज्जाहरजमलजुयलजंतजुत्तंपिव अच्चीसहस्समालणीयं रूवगसहस्सकलियं भिसमाणं भिब्भिसमाणं चक्खुल्लोयणलेसं सुहफासं सस्सिरीयरूवं घंटावलिचलियमहुरमणहरसरं सुभं कंतं दरिसणिज्जं निपुणोचियमिसमिसंतमणिरयणघंटियाजालपरिक्खित्तं जोयणविच्छिन्नं दिव्वं जाणविमाणं विउव्वह विउव्वित्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह, तए णं ते आभिओगा देवा अणेगखंभसयसंनिविट्ठं जाव पच्चप्पिणंति, तए णं ताओ अहोलोगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारिमयहरियातो हट्ठतुट्ठा जाव हयहियया पत्तेयं पत्तेयं चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं चउहिं मयहरियाहिं जाव अण्णेहिं बहूहिं देवेहिं देवीहि य सद्धिं संपरिवुडातो ते दिव्वे जाणविमाणे दुरूहंति, दुरुहित्ता सव्वड्ढीए सव्वजुईए सव्वबलेणं सव्वसमुदएणं सव्वायरेणं सव्वविभूईए सव्वविभूसाए सव्वसंभमेणं सव्वदिव्वतुडियसद्दनिनाएण महयाहयनट्टगीयवाइयतंतीतलतालतुडियघणमुयंगपडुप्पवाइयरवेणं ताए उक्किट्ठाए तुरियाए चवलाए चंडाए सिग्घाए जवणाए उद्धुयाए दिव्वाए देवगतीए जेणेव भगवतो तित्थयरस्स जम्मणभवणे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता भगवतो

दिक्कुमारी-महोत्सवः

॥१६४॥

Jain Education Inter... For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तित्थयरस्स जम्मणभवणं तेहिं दिवेहिं जाणविमाणेहिं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेंति, करेत्ता उत्तरपुरच्छिमे दिसीभागे ईसिं चउरंगुलमसंपत्ते धरणितले ते दिवे जाणविमाणे ठावेंति, ठावित्ता पत्तेयं पत्तेयं चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं जाव सद्धिं संपरिवुडातो दिवेहिंतो जाणविमाणेहिंतो पच्चोरुहंति, पच्चोरुहित्ता जेणेव भगवं तित्थयरे तित्थयरमाया य तेणेव उवागच्छंति २ तित्थयरं तित्थयरमायं च तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेंति करेत्ता पत्तेयं पत्तेयं करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी—नमोऽत्थु ते रयणकुच्छिधारिए ! जगप्पदीवदायए चक्खुणो य मुत्तस्स सवजगजीववच्छलस्स हियकरगमग्गदेसियवागद्धिविभुप्पभुस्स जिणस्स नाणिस्स नायगस्स बुद्धस्स बोहगस्स सवलोगनाहस्स सवजगमंगलस्स निम्ममस्स पवरकुलसमुब्भवस्स जाइखत्तियस्स जंसि लोगुत्तमस्स जणणी धन्नाऽसि पुण्णाऽसि तं कयत्थे !, अम्हे णं देवाणुप्पिये ! अहोलोगवत्थव्वातो अट्ठ दिसाकुमारिमयहरिगातो भगवतो तित्थयरस्स जम्मणमहिमं करेस्सामो, तं तुब्भेहिं न भाइयव्वंतिकट्टु उत्तरपुरच्छिमं दिसीभागं अवक्कमंति अवक्कमित्ता वेउवियसमुग्घाएणं समोहणंति समोहणित्ता संखिज्जाइं जोयणाइं दंडं निसिरंति, तंजहा—रयणाणं १ वयराणं २ वेरुलियाणं ३ लोहियक्खाणं ४ मसारगल्लाणं ५ हंसगब्भाणं ६ पुलगाणं ७ सोगंधियाणं ८ जोइरसाणं ९ अंजणाणं १० अंजणपुलगाणं ११ रयणाणं १२ जायरूवाणं १३ अंकाणं १४ फलिहाणं १५ रिट्ठाणं १६ अहाबायरे पोग्गले परिसाडेंति अहाबायरे २ अहासुहुमे पोग्गले परियायेंति परियाइत्ता दोच्चंपि वेउवियसमुग्घाएणं समोहणंति समोहणित्ता संवट्टगवाए विउवंति, से जहानामए कम्मगरदारए सिया तरुणे जुगवं बलवं अप्पायंके थिरसंघयणे थिरग्गहत्थे पडिपुण्णपाणिपाए पिट्ठंतरोरुसं-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घायपरिणए घणनिचियवट्टवलियखंधे लंघणवग्गणजवणवायामसमत्थे उरस्सबलसमण्णागए तलजमलजुगलपरिघनिभबाहू छेदे दक्खे कुसले मेहावी निउणसिप्पोवगए एगं महं दंडसंपुच्छणिं वा सिलागाहत्थगं वा वेणुसलाइयं वा गहाय रायंगणं वा रायंतेउरं वा आरामं वा देउलं वा सभं वा पवं वा अतुरियमचवलमसंभंतं निरंतरं सुनिउणं सव्वतो समंता संमज्जेज्जा, एवमेताओवि अहोलोगवत्थव्वातो अट्ठ दिसाकुमारिमयहरिगातो संवट्टवाए विउव्वंति, विउव्वित्ता तेणं सिवेणं मउएणं मारुएणं अणुद्धिएणं भूमितलविमलकरणेणं सव्वोउयसुरभिकुसुमगंधाणुवासिएणं पिंडिमनीहारिमगंधुद्धुरेणं तिरियं पवाइएणं भगवतो तित्थगरस्स जम्मणट्ठाणस्स सव्वतो समंता जोयणपरिमंडलं जं किंचि तणं वा पत्तं वा कट्ठं वा कअवरं वा असुइमचोक्खं पूइं दुब्भिगंधं तं सव्वं आहुणिय आहुणिय एगंते एडंति, एडित्ता जेणेव भयवं तित्थयरे तित्थयरमाया य तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता भगवतो तित्थयरस्स तित्थगरमायाए य अदूरसामंते आगायमाणीतो चिट्ठंति, अत्र विषमपदव्याख्या—'ओहिं पउंजंति' अवधिं प्रयुञ्जते—व्यापारयन्ति, आभोगयन्ति—परिभावयन्तीति भावः, 'हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिया' इति हृष्टतुष्टा—अतीवतुष्टा, अथवा हृष्टा नाम विस्मयमापन्ना यथा अहो भगवान् आदितीर्थकरः समुत्पन्न इति तुष्टाः—तोषं कृतवत्यः, यथा भव्यमभूत् यदादिनाथो जात इति,तोषवशादेव चित्तमानन्दितं—स्फीतीभूतं 'दुनदि समृद्धा'विति वचनात् यासां ताः चित्तानन्दिताः सुखादिदर्शनात् निष्ठान्तस्य पाक्षिकः परनिपातः मकारः प्राकृतत्वादलाक्षणिकः, ततः पदत्रयस्य पदद्वयपदद्वयमीलनेन कर्मधारयः, 'पीइमणा' इति प्रीतिर्मनसि भगवद्विषया यासां ताः प्रीतिमनसः, भगवति बहुमानपरायणमानसा इति, एतदेव व्यक्तीकरोति–'परमसोमणस्सिया' इति शोभनं मनो येषां ते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुमनसस्तेषां भावस्सौमनस्यं परमं च तत् सौमनस्यं च परमसौमनस्यं तत्सञ्जातं यासां ताः परमसोमनस्यिताः, एतदेव व्यक्तीकरोति–'हरिसवसविसप्पमाणहियया' हर्षवशेन विसर्प्पद्–विस्तारयायि हृदयं यासां ता हर्षवशविसर्प्पद्हृदयाः, हर्षवशादेव च विकसिते वरकमलवन्नयने यासां ता विकसितवरकमलनयनाः, हर्षवशच्छरीरोद्भर्षे 'पयलियवरकडगतुडियकेयूरमउडकुंडले'त्ति प्रचलितानि वराणि कटकानि–कलाचिकाभरणानि त्रुटितानि–बाहुरक्षिकाः केयूराणि–बाह्वाभरणविशेषरूपाणि मुकुटाः–शिरोभूषणानि कुण्डलानि–कर्णाभरणानि यासां ताः प्रचलितवरकटकत्रुटितकेयूरमुकुटकुण्डलाः, तथा हारेण विराजमानमत एव रतिदं वक्षो यासां ता हारविराजमानरतिदवक्षसः, ततः पूर्वपदेन विशेषणसमासः, तथा प्रलम्बते इति प्रलम्बः–आभरणविशेषः तं प्रलम्बमानं घोलन्ति भूषणानि च धरन्तीति प्रलम्बमानप्रलम्बघोलद्भूषणधराः, प्रलम्बमानपदस्य विशेष्यात् परनिपातः प्राकृतत्वाद्, हर्षवशादेव 'ससम्भ्रमं' सम्भ्रमः इह विवक्षितक्रियायामादरबहुमानपूर्विका प्रवृत्तिः सह सम्भ्रमो यस्याभ्युत्थानस्य तत्ससम्भ्रमं, क्रियाविशेषणमेतत्, त्वरितं–शीघ्रं चपलं–सम्भ्रमवशादेव यथा व्याकुलं भवति, एवं च सिंहासनादभ्युत्तिष्ठन्ति, 'अञ्जलियमउलियहत्था' इति अञ्जल्या–अञ्जलिरूपतया मुकुलितौ हस्तौ यासां तास्तथा, 'एवं जहा सक्के' इति एवं यथा शक्रे वक्ष्यमाणं तथाऽत्र वेदितव्यम्, 'अणेगखंभसयसंनिविट्ठ'मिति अनेकेषु स्तम्भशतेषु निविष्टमनेकस्तम्भशतनिविष्टं 'लीलट्ठियसालभंजियाग'मिति लीलया स्थिताः लीलास्थिताः शालभञ्जिकाः–पुत्तलिका यत्र तत्तथा, 'ईहामिये'त्यादि ईहामृगा–वृका व्यालाः–श्वापदभुजगा ईहामृगऋषभतुरगनरमकरविहगव्यालकिन्नररुरुसरभचमरकुंजरवनलतापद्मलतानां भक्त्या–विच्छित्त्या चित्रम्–आलेख्यो यत्र तत्तथा, तथा स्तम्भोद्ग-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः

॥१६६॥

तया–स्तम्भोपरिवर्त्तिन्या वरवज्ररत्नमय्या वेदिकया परिगतं सत् यदभिरामं स्तम्भोद्गतवरवज्रवेदिकापरिगताभिरामं, तथा विद्यां धरन्तीति विद्याधराः–विशिष्टविद्याशक्तिमन्तस्तेषां यमलयुगलानि–समानशीलानि द्वन्द्वानि तेषां यन्त्राणि–प्रपञ्च-विशेषाः अर्चिषां–मणिरत्नप्रभाज्वालानां सहस्रैर्मालनीयं–परिवारणीयं, किमुक्तं भवति ?–एवं नाम अत्यद्भुतैर्मणिरत्न-प्रभाजालैराकलितमवभाति यथा नूनमिदं न स्वाभाविकं किन्तु विशिष्टविद्याशक्तिमत्पुरुषप्रपञ्चप्रभावितमिति, तथा रूपकसहस्रकलितं, तथा 'भिसमाणं' दीप्यमानं 'भिसंतं दिप्यंत'मितिवचनात्, 'भिब्भिसमाणम्'असकृत् देदीप्यमानं 'चक्खुल्लोयणलेसं'ति चक्षुः कर्तृ लोकने–अवलोकने लिसतीव दर्शनीयत्वातिशयभावात् यत्तत्तथा शुभस्पर्शं, सश्रीकं रूपम्–आकारो यत्र तत्सश्रीकरूपं, तथा घण्टावलेः–घण्टापङ्क्तेः वातवशेन चलितायाः–कम्पितायाः मधुरः–श्रोत्रप्रियो मनोहरो–मनोनिर्वृत्तिकरः स्वरो यत्र तद् घण्टावलिचलितमधुरमनोहरस्वरं, शुभं यथोदितवास्तुलक्षणोपेतत्वात्, कान्तं कमनीयमत एव दर्शनीयं, 'निउणोवियमिसमिसंतमणिरयणघंटियाजालपरिक्खित्त'मिति निपुणमिति–निपुणक्रियमोवि-यत्ति–खचितानि मिसमिसंतत्ति–देदीप्यमानानि मणिरत्नानि यत्र घण्टिकाजाले तत्तथा तेन इत्थंभूतेन घण्टिकाजालेन–क्षुद्रघण्टिकासमूहेन परि सामस्त्येन क्षिप्तं यत्तत्तथा, 'सव्वड्ढीए' इत्यादि सर्वर्द्ध्या–परिवारादिकया सर्वद्युत्या–यथाशक्ति विस्फारितेन शरीराभरणतेजसा सर्वबलेन–समस्तानीकेन सर्वसमुदायेन–स्वस्वाभियोग्यादिसमस्तपरिवारेण सर्वादरेण समस्तेन यावच्छक्तितो बलेन सर्वविभूत्या–सर्वसम्पदा सर्वविभूषया–यावच्छक्ति स्कारोदारश्रृङ्गारकरणेन सर्वसम्भ्रमेण सम्भ्रमो नामात्र भगवत्समीपागमनं प्रति यावच्छक्ति त्वरिता प्रवृत्तिः 'सवदिवतुडियसद्दसंनिनाएणं'ति सर्वाणि च तानि

दिक्कुमारी-महोत्सवः

॥१६६॥

Jain Education Intern For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिव्यतुटितानि–दिव्यतूर्याणि च तेषां शब्दाः सर्वदिव्यतुटितशब्दास्तेषां एकत्र मीलनेन य सङ्गतो तितरां नादो– महान् घोषः सर्वदिव्यतुटितशब्दसन्निनादस्तेन, 'ताए उक्किट्ठाए' इत्यादि तया देवजनप्रसिद्धया उत्कृष्टया–प्रशस्तया शीघ्रसञ्चरणात् त्वरितया–शीघ्रतरमेव तया प्रदेशान्तरक्रमणात् चपलेव चपला तया–क्रोधाविष्टस्येव श्रमासंवेदनात् चण्डेव चण्डा तया शीघ्रत्वगुणयोगात् शीघ्रा तया शीघ्रया परमोत्कृष्टवेगपरिणामोपेता जवना तया वातोद्धूतस्य दिगन्तव्यापिनो रजस इव या गतिः सा उद्धूता तया, इत्थंभूतया दिव्यया देवगत्या 'आयाहिणं पयाहिणं करेंति' आ सर्वतः समन्तात् परिभ्रमतां दक्षिणमेव जन्मभवनं यथा भवति, एवं प्रदक्षिणं कुर्वन्ति, 'करयलपरिग्गहिय'मित्यादि द्वयोर्हस्तयोरन्योऽन्यान्तरिताङ्गुलिकयोः सम्पुटरूपतया यदेकत्र मीलनं सा अञ्जलिस्तां, कथंभूतामित्याह–करतलाभ्यां परिगृहीता–निष्पादिता करतलपरिगृहीता तां, तथा आवर्त्तनमावर्त्तः शिरस्यावर्त्तो यस्यां सा शिरस्यावर्त्ता 'कण्ठेकाल उरसिलोमे'त्यादिवत् अलुक्समासः तामत एव मस्तके कृत्वा नमोऽस्तु ते–तुभ्यं रत्नं भगवल्लक्षणं कुक्षौ धारयतीति रत्नकुक्षिधारिका तस्याः सम्बोधनं रत्नकुक्षिधारिके, जगतः प्रदीप इव जगत्प्रदीपस्तद्दायिके, चक्षुरिव चक्षुः, चक्षुर्भावचक्षुरित्यर्थः तस्येदं भगवद्विशेषणं, भावचक्षुः किल विवेकरूपममूर्त्तं भवति भगवांश्च साक्षान्मूर्त्त इत्यत आह–मूर्त्तस्य, तथा सर्वजगज्जीववत्सलस्य 'छज्जीवहियं जिणा वेंती'ति वचनात्, तथा हितकर्येव हितकरिका मार्गदेशिका च या वागृद्धिः– वाक्सम्पद्, पुनः कथम्भूतेत्यत आह–विभुः–व्यापिका सर्वस्वस्वभाषानुगमनेन परिणमनात् तस्याः प्रभुः–स्वामी हितकरमार्गदेशकवागृद्धिविभुप्रभुस्तस्य, पुंवद्भावः समासस्य कर्मधारयत्वात्, विभुशब्दस्य परनिपातः प्राकृतत्वात्, जिनस्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥ १६७ ॥

ज्ञानिनो ज्ञानत्रयोपेतत्वात्, भाविकेवलज्ञानसम्भवाद्वा, ज्ञायकस्यापरेषां ज्ञानोत्पादकत्वात्, बुद्धस्य स्वयं बुद्धत्वाद् बोधकस्य सद्धर्मदेशनया मार्गे प्रवर्त्तकत्वात् सर्वलोकनाथस्य इन्द्रादीनामपि नमस्करणीयत्वात् सर्वजगमङ्गलस्य भुवनत्रयेऽप्युपद्रवविनाशकत्वात् निर्ममस्य क्वचिदपि ममत्वाभावात्, प्रवरं यत्कुशलं-कुशलानुष्ठानजन्यं तीर्थकरनामकर्म तस्मात् समुद्भावः—उत्पत्तिर्यस्य स प्रवरकुशलसमुद्भवस्तस्य, जात्यक्षत्रियस्य भावक्षतात्रायकत्वात्, यदसि भगवतो लोकोत्तमस्य जननी, तत् हे कृतार्थे! धन्याऽसि-सपुण्यासि। 'वेउव्वियसमुग्घाएण'मित्यादि, वैक्रियसमुद्घातेन—वैक्रियकरणाय प्रयत्नविशेषेण समवहन्यन्ते, समवहता भवन्तीत्यर्थः, समवहताश्चात्मप्रदेशान् दूरतो विक्षिपन्ति, तथा चाह—'संखेज्जाणि जोयणाणि दंडं निसिरंति', दण्ड इव दण्ड ऊर्ध्वाधआयतः शरीरबाहल्यो जीवप्रदेशसमूहस्तं शरीराद्बहिः सङ्ख्येयानि योजनानि यावत् निसृजन्ति-निष्काशयन्ति, निसृज्य तथाविधान् पुद्गलान् आददते, एतदेव दर्शयति-तद्यथा—रत्नानां-कर्केतनादीनां वज्राणामित्यादि पाठसिद्धं यथाबादरान्—असारान् पुद्गलान् परिशातयन्ति, तथा सूक्ष्मान्—सारान् पुद्गलान् पर्यादाय चिकीर्षितरूपनिर्म्मापणार्थं द्वितीयमपि वारं वैक्रियसमुद्घातेन समवहन्यन्ते, समवहत्य च यथोक्तानां रत्नादीनां योग्यान् पुद्गलान् यथाबादरान् परिशातयन्ति, यथासूक्ष्मान् पर्याददते, 'से जहा नामए' इत्यादि, सः-वक्ष्यमाणगुणो यथानामकः-अनिर्दिष्टनामा कश्चित् कर्म्मकरदारकः, किंविशिष्ट इत्याह-तरुणः-प्रवर्द्धमानवयाः, आहदारकः प्रवर्द्धमानवया एव भवति ततः किमनेन विशेषणेन?, न, आसन्नमृत्योः प्रवर्द्धमानवयस्त्वाभावात्, नहि आसन्नमृत्युः प्रवर्द्धमानवया भवति, न च तस्य विशिष्टसामर्थ्यसम्भवः आसन्नमृत्युत्वादेव, विशिष्टसामर्थ्यप्रतिपादनार्थश्चैष आरम्भस्ततो-

दिक्कुमारी-महोत्सवः ॥ १६७ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

ऽर्थवद्विशेषणम्, अन्ये तु व्याचक्षते—इह यद्द्रव्यं विशिष्टवर्णादिगुणोपेतमभिनवं च तत्तरुणमिति लोके प्रसिद्धं, यथा तरुणमिदमश्वत्थपत्रमिति, ततः स कर्म्मकरदारकस्तरुण इति किमुक्तं भवति ?—अभिनवो विशिष्टवर्णादिगुणोपेतश्चेति, तथा युगं—सुषमदुष्षमादिः कालः स स्वेन रूपेण यस्यास्ति न दोषदुष्टः स युगवान्, कालोपद्रवरहित इत्यर्थः, बलं—सामर्थ्यं तद् यस्यास्ति स बलवान्, 'अप्पायंके' इत्यादि, अल्पशब्दोऽभाववाची अल्पः—सर्वथा अविद्यमानः आतङ्को—ज्वरादिर्यस्य सोऽल्पातङ्कः स्थिरं—दृढं प्रथममित्यर्थः संहननं यस्य स स्थिरसंहननः, तथा स्थिरौ—अग्रहस्तौ यस्य स स्थिराग्रहस्तः-प्रतिपूर्णपाणिपादः, इतरस्य सम्यक्कर्मकरत्वायोगात्, 'पिट्ठंतरोरुसंघायपरिणए' पृष्ठं अन्तरे च—पार्श्वरूपे ऊरू च सङ्घातन—संहतत्वेन परिणतौ यस्य स पृष्ठान्तरोरुसङ्घातपरिणतः, दृढपृष्ठान्तरोरुरितिभावः, तथा घनम्—अतिशयेन निचितौ—निबिडतरचयमापन्नौ वृत्तौ वलिताविव वलितौ स्कन्धौ यस्य स निचितघनवृत्तवलितस्कन्धः, तथा लङ्घने—अतिदीर्घस्यात्युच्चस्यापि चातिक्रमणे वल्गने प्रतीते जवने—वेगे व्यायामे च समर्थो लङ्घनवल्गनजवनव्यायामसमर्थः, तथा उरसि भवमुरस्यं तच्च तद्बलं च उरस्यबलं तत्समन्वागतः—प्राप्त उरस्यबलसमन्वागतः, आन्तरोत्साहवीर्ययुक्त इति भावः, तथा तलौ—तालवृक्षौ तयोर्यमलयुगलं—समश्रेणिकं युगलं तेन परिघेण च अतिसरलतया पीवरतया च निभौ—सदृशौ बाहू यस्य स तलयमलपरिघनिभबाहुः, छेको—द्वासप्ततिकलापण्डितः दक्षः—कार्याणामविलम्बितकारी कुशलः—सम्यक्क्रियापरिज्ञानवान् मेधावी—परस्पराव्याहतपूर्वापरानुसन्धानदक्षः अत एव निपुणं यथा भवति, एवं शिल्पं—क्रियासु कौशलमुपगतः—प्राप्तो निपुणशिल्पोपगतः, 'दंडसंपुच्छणं'ति दंडपुच्छणकं शलाकाहस्तकं—सरत्पर्णादि-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शलाकासमुदायं वेणुशलाकिकां—वेणुशलाकामयीं सम्मार्जनीं, 'तेणं सिवेण'मित्यादि, तत्कालविकुर्वितेन शिवेन कल्याण्युपद्रवकारित्वाभावात्, मृदुना शरीरसुखस्पर्शहेतुत्वात् 'पिण्डिमनीहारिमगंधुद्धरेणं'ति पिण्डिमः—पिण्डितः सन् यो निहारिमो—दूरं यावद् गमनशीलो गन्धस्तेन कृत्वा उद्धुरः—उद्धतः पिण्डिमनिर्हारिमगन्धोद्धुरस्तेन, 'जोयणपरिमंडलं जं किंचि तणं वा'इत्यादि, योजनपरिमण्डलक्षेत्रं यावत् यत्किञ्चित् तृणं वा इत्यादि प्रतीतम्, अशुचि—अपवित्रं, एतदेव व्याचष्टे—अचोक्षं—पूतिविरूपगन्धम्, एतदेव व्याचष्टे—दुरभिगन्धं, शेषं सुगमं। तेणं कालेणं तेणं समएणं उद्धलोगवत्थव्वातो अट्ठ दिसाकुमारिमयहरियातो सएहिं २ तं चेव जाव विहरन्ति, तंजहा—मेहंकरा १ मेहवती २, सुमेहा ३ मेहमालिणी ४। सुवच्छा ५ वच्छमित्ता ६ य, वारिसेणा ७ बलाहगा ८ ॥ १ ॥ तए णं तासिं उद्धलोगवत्थव्वाणं अट्ठण्हं दिसाकुमारिमयहरियाणं पत्तेयं पत्तेयं आसणाइं चलंति, एवं तं चेव भाणियव्वं, जाव अम्हे णं देवाणुप्पिए ! उद्धलोयवत्थव्वातो अट्ठ दिसाकुमारिमयहरियातो भयवतो तित्थयरस्स जम्मणमहिमं करिस्सामो, तं तुब्भेहिं न भाइयव्वंतिकट्टु उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमंति २ जाव दोच्चंपि वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणंति समोहणित्ता अब्भवद्दलए विउव्वंति, से जहा नामए कम्मकरदारगे सिया तरुणे जाव निउणसिप्पोवगए, एगं महं दगवारगं वा दगकुंभगं वा दगथालगं वा दगकलसं वा गहाय रायंगणं वा रायंतेउरं वा आरामं वा देउलं वा सभं वा पवं वा अतुरियमचवलमसंभंतं सुनिउणं सव्वतो समंता आवरिसिज्जा, एवमेव तातोऽवि उद्धलोगवत्थव्वातो अट्ठदिसाकुमारिमयहरियातो अब्भवद्दलए विउव्वंति, वाः—पानीयं तस्य दलानि वार्दलानि तान्येव वार्दलकानि मेघा इत्यर्थः, अपो बिभ्रतीति अब्भाणि—मेघास्तान्यस्मिन् सन्तीति

Jain Education Inter... For Private & Personal Use Only ...www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

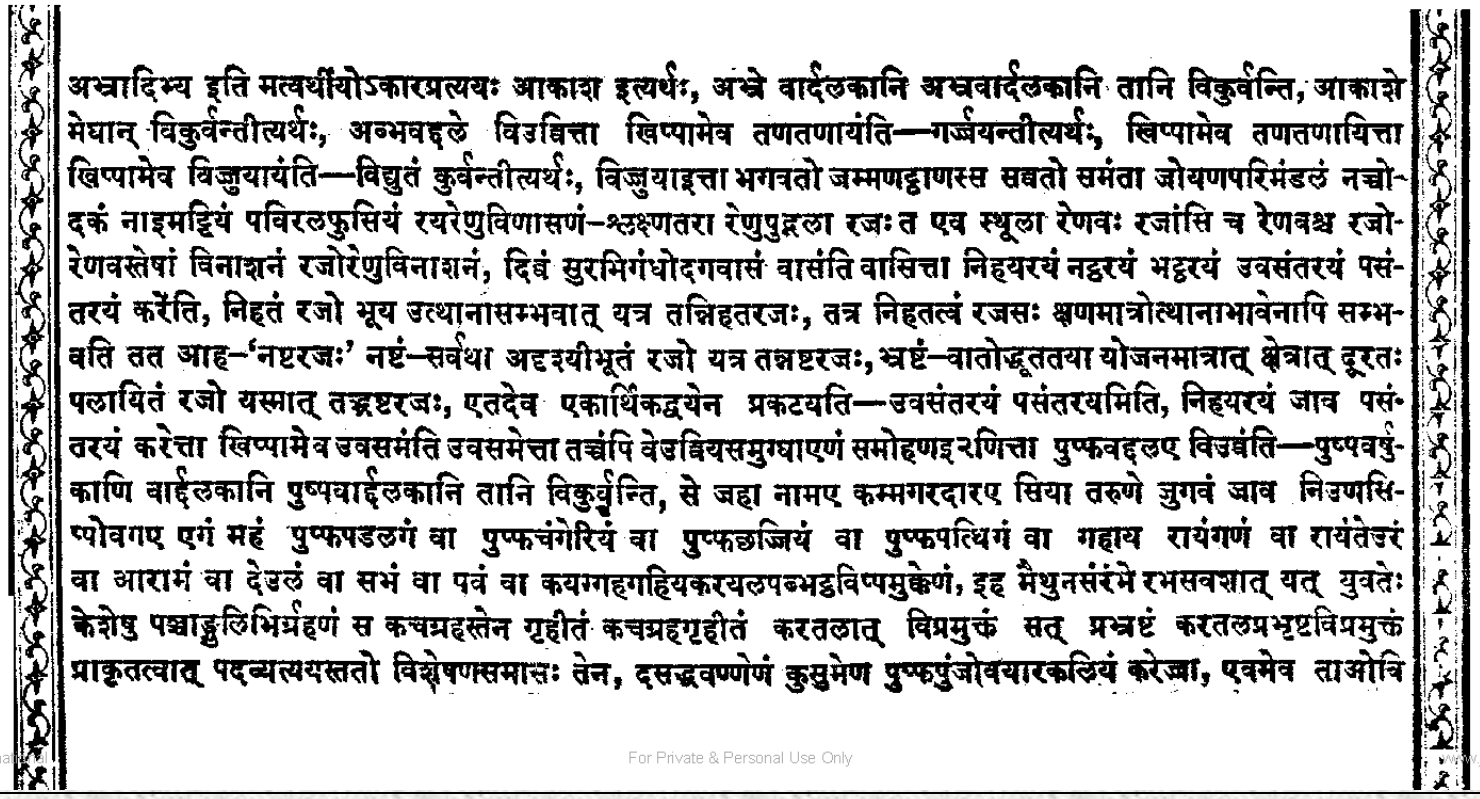

अभ्रादिभ्य इति मत्वर्थीयोऽकारप्रत्ययः आकाश इत्यर्थः, अभ्रे वार्दलकानि अभ्रवार्दलकानि तानि विकुर्वन्ति, आकाशे मेघान् विकुर्वन्तीत्यर्थः, अब्भवद्दले विउव्वित्ता खिप्पामेव तणतणायंति—गर्जयन्तीत्यर्थः, खिप्पामेव तणतणायित्ता खिप्पामेव विज्जुयायंति—विद्युतं कुर्वन्तीत्यर्थः, विज्जुयाइत्ता भगवतो जम्मणट्ठाणस्स सव्वतो समंता जोयणपरिमंडलं नच्चोदकं नाइमट्टियं पविरलफुसियं रयरेणुविणासणं–श्लक्ष्णतरा रेणुपुद्गला रजः त एव स्थूला रेणवः रजांसि च रेणवश्च रजोरेणवस्तेषां विनाशनं रजोरेणुविनाशनं, दिव्वं सुरभिगंधोदगवासं वासंति वासित्ता निहयरयं नट्ठरयं भट्ठरयं उवसंतरयं पसंतरयं करेंति, निहतं रजो भूय उत्थानासम्भवात् यत्र तन्निहतरजः, तत्र निहतत्वं रजसः क्षणमात्रोत्थानाभावेनापि सम्भवति तत आह–'नष्टरजः' नष्टं–सर्वथा अदृश्यीभूतं रजो यत्र तन्नष्टरजः, भ्रष्टं–वातोद्धूततया योजनमात्रात् क्षेत्रात् दूरतः पलायितं रजो यस्मात् तद्भ्रष्टरजः, एतदेव एकार्थिकद्वयेन प्रकटयति—उवसंतरयं पसंतरयमिति, निहयरयं जाव पसंतरयं करेत्ता खिप्पामेव उवसमंति उवसमेत्ता तच्चंपि वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणइ२त्ता पुप्फवद्दलए विउव्वंति—पुप्पवर्षुकाणि वार्दलकानि पुष्पवार्दलकानि तानि विकुर्वन्ति, से जहा नामए कम्मगरदारए सिया तरुणे जुगवं जाव निउणसिप्पोवगए एगं महं पुप्फपडलगं वा पुप्फचंगेरियं वा पुप्फछज्जियं वा पुप्फपत्थिगं वा गहाय रायंगणं वा रायंतेउरं वा आरामं वा देउलं वा सभं वा पवं वा कयग्गहगहियकरयलपब्भट्ठविप्पमुक्केणं, इह मैथुनसंरंभे रभसवशात् यत् युवतेः केशेषु पञ्चाङ्गुलिभिर्ग्रहणं स कचग्रहस्तेन गृहीतं कचग्रहगृहीतं करतलात् विप्रमुक्तं सत् भ्रष्टं करतलभ्रष्टविप्रमुक्तं प्राकृतत्वात् पदव्यत्ययस्ततो विशेषणसमासः तेन, दसद्धवण्णेणं कुसुमेण पुप्फपुंजोवयारकलियं करेज्जा, एवमेव ताओवि

आ.चू. २९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

उपोद्घात-निर्युक्ति: ॥१६९॥

उड्ढलोगवत्थव्वातो अट्ठ दिसाकुमारिमयहरियातो पुप्फवद्दलए विउव्वित्ता खिप्पामेव तणतणायंति खिप्पामेव विज्जुयायंति विज्जुयाइत्ता भगवतो जम्मणत्थाणस्स सवतो समंता जोयणपरिमंडलं जलजत्थलजभासुरप्पभूयस्स जलजं-पद्मादि स्थलजं-विचकिलादि भास्वरं—दीप्यमानं प्रभूतम्-अतिप्रचुरं ततः पदद्वय२मीलनेन विशेषणसमासः, तस्स वेंटट्ठाइयस्स दसद्धवण्णकुसुमस्स पंचवण्णकुसुमजातस्येत्यर्थः जन्नुस्सेहपमाणमेत्तं वासं वासंति वासित्ता कालागरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंतगंधुद्धूयाभिरामं सुगंधवरगंधगंधियं गंधवट्टीभूयं सुरवराभिगमणजोग्गं करेंति करेत्ता जेणेव भयवं तित्थयरे तित्थयरमाया य तेणेव उवागच्छंति जाव परिगायमाणीओ चिट्ठंति, अत्र कालागुरुः प्रसिद्धः प्रवरः—प्रधानः कुन्दुरुक्कः—चीडा तुरुष्कं-सिल्हकं तेषां धूपस्य यो मघमघायमानो गन्धः उद्धूतः-इतस्ततो विप्रसृतस्तेनाभिरामं-रमणीयं कालागुरुप्रवरकुन्दुरुक्कतुरुष्कधूपमघमघायमानगन्धोद्धुताभिरामं, तथा शोभनो गन्धो येषां ते सुगन्धास्ते च ते वरगन्धाश्च—वासाः सुगन्धवरगन्धास्तेषां गन्धः सोऽस्यास्तीति सुगन्धवरगन्धगन्धिकं, 'अतोऽनेकस्वरा'दितीकप्रत्ययः, अत एव गन्धवर्त्तिभूतं सौरभ्यातिशयात् । तेणं कालेणं तेणं समएणं पुरच्छिमरुयगवत्थव्वातो अट्ठ दिसाकुमारिमहयरियातो सएहिं सएहिं कूडेहिं जाव विहरंति, तंजहा—नंदुत्तरा य १ नंदा २, आणंदा ३ नंदिवद्धणा ४ । विजया य ५ वेजयंती ६, जयंती ७ अपराजिया ८ ॥ १ ॥ सेसं तहेव जाव तुब्भेहिं न भाइयव्वंतिकट्टु भगवतो तित्थयरस्स तित्थयरमाऊए य पुरत्थिमेणं आयंसहत्थगयातो आगायमाणीतो परिगायमाणीओ चिट्ठंति । तेणं कालेणं तेणं समएणं दाहिणरुयगवत्थव्वातो अट्ठ दिसाकुमारिमहयरियातो सएहिं सएहिं कूडेहिं तहेव जाव विहरंति, तंजहा—समाहारा १

ऊर्ध्वलोक-दिक्कुमारी-महोत्सवः ॥१६९॥

Jain Education Intern For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुप्पदिण्णा २ सुप्पबद्धा ३ जसोधरा ४ । लच्छिमती ५ चित्तगुत्ता ६ वसुन्धरा ७ सेसवती ८, तहेव जाव न भाइयव्वंतिकट्टु भगवतो तित्थयरस्स तित्थयरमाऊए य दाहिणेणं भिंगारहत्थगयाओ आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंति । तेणं कालेणं तेणं समएणं पच्चत्थिमरुयगवत्थव्वातो अट्ठ दिसाकुमारिमहयरियातो सएहिं सएहिं कूडेहिं तहेव जाव विहरंति, तंजहा–इलादेवी १ सुरादेवी २ पुहवी ३ पउमावई ४ । एगनासा ५ नवमीया ६ भद्दा ७ सीया य ८ अट्ठमिया, तहेव जाव तुब्भेहिं न भाइयव्वंतिकट्टु भगवओ तित्थयरस्स तित्थयरमाउए य पच्चत्थिमेण तालविण्टहत्थगयाओ आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंति । तेणं कालेणं तेणं समएणं उत्तरिल्लरुयगवत्थव्वातो अट्ठ दिसाकुमारिमहयरियाओ सएहिं सएहिं कूडेहिं तहेव जाव विहरंति, तंजहा–अलंबुसा १ मिस्सकेसी य २ पुंडरीका य ३ वारुणी ४ । हासा ५ सव्वप्पभा चेव ६ हिरी ७ सिरी चेव ८ उत्तरतो तहेव जाव तुब्भेहिं न भाइयव्वंतिकट्टु भयवओ तित्थयरस्स तित्थयरमाऊए य उत्तरेणं चामरहत्थगयातो आगायमाणीओ परिगायमाणीतो चिट्ठंति । तेणं कालेणं तेणं समएणं विदिसिरुयगवत्थव्वातो चत्तारि दिसाकुमारिमयहरियातो सएहिं २ कूडेहिं तहेव जाव विहरंति, तंजहा–चित्ता य १ चित्तकणगा २ सतेरा ३ सोयामणी ४, तहेव जाव न भाइयव्वंतिकट्टु भगवतो तित्थयरस्स तित्थयरमाऊए य चऊसु विदिसासु दीविआहत्थगयातो आगायमाणीतो परिगायमाणीतो चिट्ठंति । तेणं कालेणं तेणं समएणं मज्झिमरुयगवत्थव्वातो चत्तारि दिसाकुमारिमयहरियातो सएहिं सएहिं कूडेहिं तहेव जाव विहरंति, तंजहा—"रूया १ रुयंसा २ सुरूया ३ रुयगावती ४, तहेव जाव तुब्भेहिं न भाइयव्वंतिकट्टु भगवतो तित्थयरस्स चउरंगुलवज्जं नाभिं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्तिः

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥१७०॥

कप्पंति कप्पेत्ता वियरं खणंति खणित्ता वियरए नाभिं निहणंति निहणित्ता रयणाणं वयराण य पूरंति पूरित्ता हरियालियापेढं पवंधंति, भगवतो तित्थयरस्स जम्मणभवणस्स पुरत्थिमदाहिणुत्तरेणं ततो कयलीहरगे विउव्वंति, तएणं तेसिं कयलीहरगाणं बहुमज्झदेसभागे तओ चाउस्सालए विउव्वंति, तए णं तेसिं चाउस्सालाणं बहुमज्झदेसभागे ततो सीहासणे विउव्वंति, तेसि णं सीहासणाणं अयमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, तंजहा—तवणिज्जमया चक्कला रययामया सीहा सोवन्निया पाया नाणामणिमयाइं पायसीसगाइं जंबूणयामयाइं गत्ताइं नाणामणिमयं विच्चासणं सिंहासणे ईहामियउसभनरमगरविहगवालगकिन्नररुरुसरभचमरकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्ता ससारसारोवचियमणिरयणपायवीढा अत्थरयमउयमसूरनवत्तयकुसंतलिच्चकेसरपच्चत्थुयाभिरामा सुविरइयरइत्ताणा ओवचियखोमदुगुल्लपट्टपडिच्छायणा रत्तंसुयसंवुया सुरम्मा आईणगरूयबूरनवणीयतूलफासा पासाईया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा, अत्र तपनीयमयानि चक्कलानि—पादानामधो वृत्ताकारा अवयवविशेषाः, रजतमयाः सिंहा यैरुपशोभितं सत्तत्सिंहासनमुच्यते, सौवर्णिकाः—सुवर्णमयाः पादाः, नानामणिमयानि पादशीर्षकाणि—पादानामुपरितना अवयवविशेषाः, जाम्बूनदं—सुवर्णविशेषस्तन्मयानि गात्राणि—ईषादीनि नानामणिमयं विच्चं—वानं, 'ससारोवचिये'त्यादि सारसारैः—प्रधानप्रधानैः मणिरत्नैरुपचितेन पादपीठेन सह यानि तानि ससारसारोपचितमणिरत्नपादपीठानि, प्राकृतत्वात्पदव्यत्ययः, तथा आस्तरकमृ—आच्छादकं मृदु यस्य तदास्तरकमृदु विशेषणस्य परनिपातः प्राकृतत्वात् नवा त्वच् येषां ते नवत्वचः कुशान्ता—दर्भपर्यन्ता नवत्वचश्च ते कुशान्ताश्च नवत्वकुशान्तास्त एव लिच्चानि—कोमलानि नमनशीलानि च केसराणि मध्ये यस्य

पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तर-विदिग्मध्यरुचक-कुमार्यः ॥१७०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

मसूरकस्य तन्नवत्वकुशान्तलिञ्चकेसरं आस्तरकमृदुना मसूरकेन नवत्वकुशान्तलिञ्चकेसरेण प्रत्यवस्तृतानि–आच्छादितानि सन्ति यानि अभिरामाणि तानि तथा, तथा सुष्ठु विरचितं रजस्त्राणं येषामुपरि तानि सुविरचितरजस्त्राणानि, तथा ओयवियं—विशिष्टपरिकर्म्मणापरिकर्म्मितं क्षौमं–दुकूलपट्टरूपं प्रतिच्छादनं येषां तानि तथा, पार्श्वतो रक्तांशुकसंवृतानि, अत एव सुरम्याणि तथा आजिनकं–चर्म्ममयं वस्त्रं एतच्च स्वभावादतिकोमलं भवति रूतं–कर्पासपक्ष्म बूरो–वनस्पतिविशेषः नवनीतं–म्रक्षणं तुलम्–अर्कतूलं तेषामिव स्पर्शो येषां तानि तथा, प्रासादीयानि मनःप्रसादहेतुत्वाद् दर्शनीयानि रूपातिशयभावात् तथा अभि–प्रतिक्षणं नवं नवमिव रूपं येषां तानि अभिरूपाणि इत्थं प्रतिरूपाणि–प्रतिविशिष्टरूपाणीति। तए णं तातो रूयगमज्झवत्थवातो चत्तारि दिसाकुमारिमयहरियातो जेणेव भगवं तित्थयरे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता भयवं तित्थयरं करयलपुडेण तित्थयरमायरं च बाहाए गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव दाहिणिल्ले कयलीहरए जेणेव चाउस्सालए जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता भगवं तित्थयरं तित्थयरमायरं च सीहासणे निसीयाविंति निसीयावित्ता सयपागसहस्सपागतिल्लेहिं अब्भंगिंति अब्भंगित्ता सुरभिगंधवट्टएणं उव्वट्टिंति उव्वट्टित्ता भयवं तित्थयरं करयलपुडेणं तित्थयरमायरं च बाहाहिं गिण्हन्ति गेण्हेत्ता जेणेव पुरत्थिमिल्ले कयलीहरए जेणेव चाउस्साले जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता भयवं तित्थयरं तित्थयरमायरं च सीहासणे निसीयाविंति, निसीयावित्ता तिहिं उदएहिं मज्जावेंति, तंजहा– गंधोदएणं पुप्फोदएणं सुद्धोदगेणंति, मज्जावित्ता सव्वालंकारविभूसिए करेंति करेत्ता भयवं तित्थयरं करयलपुडेणं तित्थयरमायरं च बाहाहिं गेण्हंति गिण्हित्ता जेणेव उत्तरिल्ले कयलीघरगे जेणेव चाउस्सालए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥१७१॥

जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता भयवं तित्थयरं तित्थयरमायरं च सीहासणे निसीयावेंति निसीयावित्ता अभियोगे देवे सद्दावेंति, सद्दावित्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! चुल्लहिमवंतातो वासहरपव्वयातो गोसीसचंदणकट्ठाइं साहरह, तए णं ते आभियोगा देवा ताहिं रुयगमज्झवत्थव्वाहिं चउहिं दिसाकुमारिमयहरियाहिं एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा जाव हरिसवसविसप्पमाणहियया विणएण वयणं पडिच्छित्ता खिप्पामेव चुल्लहिमवंतातो वासहरपव्वयातो गोसीसचंदनकट्ठाइं सरसाइं साहरेंति, तए णं तातो मज्झिमरुयगवत्थव्वातो चत्तारि दिसाकुमारिमयहरियातो सरगं करेंति सरगं करेत्ता अरणिं घडंति अरणिं घडेत्ता सरएणं अरणिं महंति अरणिं महित्ता अग्गिं पाडेंति अग्गिं पाडेत्ता अग्गिं संधुक्कंति अग्गिं संधुक्कित्ता गोसीसचंदणकट्ठे पक्खिवंति पक्खिवित्ता अग्गिं उज्जालेंति अग्गिं उज्जालेत्ता समिधाकट्ठाइं पक्खिवंति समिधाकट्ठाइं पक्खिवित्ता अग्गिहोमं करेंति अग्गिहोमं करेत्ता भूइकम्मं करिंति भूइकम्मं करित्ता रक्खापोट्टलियं बंधंति बंधित्ता नाणामणिरयणभत्तिचित्ते दुवे पासाणवट्टगे गहाय भगवतो तित्थयरस्स कण्णमूलंसि टिट्टियावेंति, भवउ भयवं ! पव्वयाउए, तए णं ताओ रुयगमज्झवत्थव्वातो चत्तारि दिसाकुमारिमयहरियातो भगवं तित्थयरं करयलपुडेणं तित्थयरमायरं च बाहाए गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव तित्थयरस्स भगवतो जम्मणभवणे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता तित्थयरमायरं सयणिज्जंसि निसीयावेंति, भगवं तित्थयरं माऊए पासे ठवेंति ठवेत्ता आगायमाणीओ परिगायमाणीतो चिट्ठंति ॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं सक्के नामं देविंदे देवराया वज्जपाणी पुरंदरे सतक्कऊ सहस्सक्खे मघवं पाकसासणे दाहिणड्ढलोगाहिवई बत्तीसविमाणावाससयसहस्साहिवई एरावणवाहणे सुरिंदे अर-

दिक्कुमारी-कृतं जिन-मज्जनादि

॥१७१॥

Jain Education Intern... For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अथ शक्र आदि इन्द्रादि आगमन एवं जिन-जन्म महोत्सव करणं

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

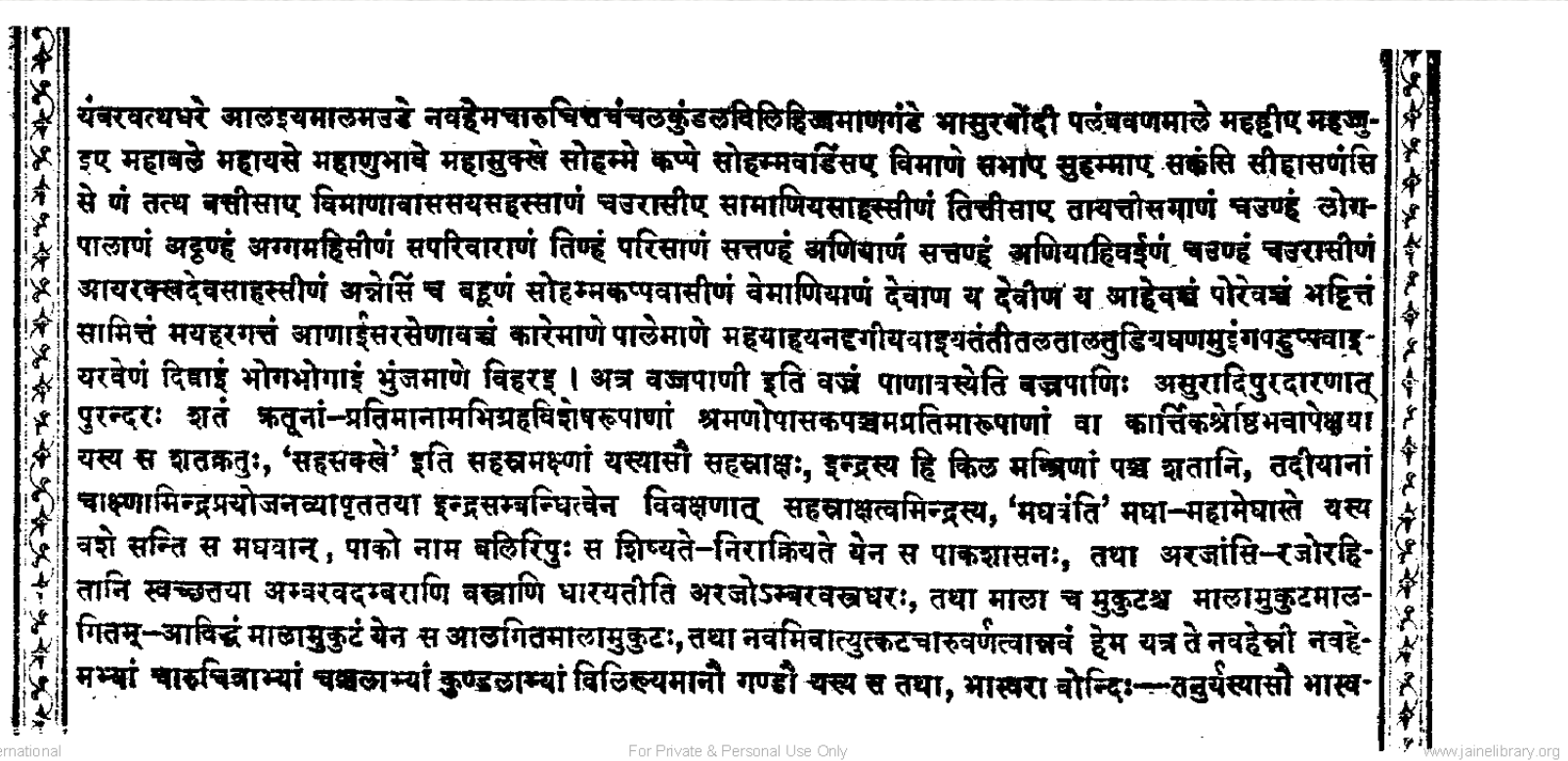

यंबरवत्थधरे आलइयमालमउडे नवहेमचारुचित्तचंचलकुंडलविलिहिज्जमाणगंडे भासुरबोंदी पलंबवणमाले महड्ढीए महज्जुइए महाबले महायसे महाणुभावे महासुक्खे सोहम्मे कप्पे सोहम्मवडिंसए विमाणे सभाए सुहम्माए सक्कंसि सीहासणंसि से णं तत्थ बत्तीसाए विमाणावाससयसहस्साणं चउरासीए सामाणियसाहस्सीणं तित्तीसाए तायत्तीसगाणं चउण्हं लोगपालाणं अट्ठण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं तिण्हं परिसाणं सत्तण्हं अणियाणं सत्तण्हं अणियाहिवईणं चउण्हं चउरासीणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं सोहम्मकप्पवासीणं वेमाणियाणं देवाण य देवीण य आहेवच्चं पोरेवच्चं भट्टित्तं सामित्तं मयहरगत्तं आणाईसरसेणावच्चं कारेमाणे पालेमाणे महयाहयनट्टगीयवाइयतंतीतलतालतुडियघणमुइंगपडुप्पवाइयरवेणं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ। अत्र वज्रपाणी इति वज्रं पाणावस्येति वज्रपाणिः असुरादिपुरदारणात् पुरन्दरः शतं क्रतूनां–प्रतिमानामभिग्रहविशेषरूपाणां श्रमणोपासकपञ्चमप्रतिमारूपाणां वा कार्त्तिकश्रेष्ठिभवापेक्षया यस्य स शतक्रतुः, 'सहसक्खे' इति सहस्रमक्ष्णां यस्यासौ सहस्राक्षः, इन्द्रस्य हि किल मन्त्रिणां पञ्च शतानि, तदीयानां चाक्ष्णामिन्द्रप्रयोजनव्यापृततया इन्द्रसम्बन्धित्वेन विवक्षणात् सहस्राक्षत्वमिन्द्रस्य, 'मघवंति' मघा–महामेघास्ते यस्य वशे सन्ति स मघवान्, पाको नाम बलिरिपुः स शिष्यते–निराक्रियते येन स पाकशासनः, तथा अरजांसि–रजोरहितानि स्वच्छतया अम्बरवदम्बराणि वस्त्राणि धारयतीति अरजोऽम्बरवस्त्रधरः, तथा माला च मुकुटश्च मालामुकुटमालगितम्–आविद्धं मालामुकुटं येन स आलगितमालामुकुटः, तथा नवमिवात्युत्कटचारुवर्णत्वान्नवं हेम यत्र ते नवहेन्नी नवहेमभ्यां चारुचित्राभ्यां चञ्चलाभ्यां कुण्डलाभ्यां विलिख्यमानौ गण्डौ यस्य स तथा, भास्वरा बोन्दिः–तनुर्यस्यासौ भास्व-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

रवोन्दिः, प्रलम्बते इति प्रलम्बा वनमाला यस्य स तथा, महर्द्धिको विमानपरिवारादिकाया ऋद्धेः अत्यद्भुतत्वात् महाद्युतिः शरीरगताभरणगतमहाद्युतिसद्भावात्, महाबलो महाशरीरप्राणसद्भावात् महायशा भुवनत्रयगतख्यातित्वात्, महानुभागः सद्भूतशापानुग्रहविषयसामर्थ्यसद्भावात्, अत एव महासौख्यः, 'आहेवच्च'मित्यादि, अधिपतेः कर्म आधिपत्यं रक्षा इत्यर्थः सा च रक्षा सामान्येनाप्यारक्षकेणेव क्रियते तत आह–पुरस्य पतिः पुरपतिः तस्य कर्म्म पौरपत्यं, सर्वेषामात्मीयानां मध्येऽग्रेसरत्वमिति भावः, तच्चाग्रेसरत्वं नायकत्वमन्तरेणापि स्वनायकनियुक्तं तथाविधगृहचिन्तकसामान्यपुरुषस्येव भवति, तत आह–'स्वामित्वं' स्वमस्यास्तीति स्वामी तद्भावः स्वामित्वं नायकत्वमित्यर्थः, तच्च नायकत्वं कदाचित्पोषकत्वमन्तरेणापि भवति यथा हरिणयूथाधिपतेर्हरिणस्य, तत आह–भर्तृत्वं–पोषकत्वमत एव महत्तरकत्वं, तदपि च महत्तरकत्वं कस्यचिदाज्ञाविकलस्यापि सम्भवति यथा कस्यद्वणिजः स्वदासदासीवर्गं प्रति, तत आह— 'आणाईसरसेणावच्चं' आज्ञया ईश्वरः आज्ञेश्वरः सेनायाः पतिः सेनापतिः आज्ञेश्वरश्चासौ सेनापतिश्च तस्य कर्म आज्ञेश्वरसेनापत्यं, कारयन् अन्यैर्नियुक्तपुरुषैः पालयन् स्वयम् । तए णं तस्स सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो आसणं चलेइ, तए णं से सक्के जाव आसणं चलियं पासइ पासित्ता ओहिं पउंजइ, पउंजित्ता भयवं तित्थयरं आभोएइ आभोइत्ता, हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए पीइमणे परमसोमणस्सिए धाराहयनीवसुरभिकुसुमचंचुमालइयऊसवियरोमकूवे वियसियवरकमलनयणे पयलियवरकडगतुडियकेऊरमउडकुंडलहारविरायंतरइयवच्छे पालंबपलंबमाणघोलंतभूसणधरे ससंभमं तुरियं चवलं सुरिंदे सीहासणातो अब्भुट्ठेइ अब्भुट्ठित्ता निउणोचियमिसमिसंतमणिरयणमंडियातो पाउयाओ ओमुयइ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

ओमुइत्ता एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ करेत्ता अंजलिमउलियहत्थे तित्थयराभिमुहे सत्तट्ठ पयाइं अणुगच्छइ अणुगच्छित्ता वामं जाणुं अंचेइ उत्पाटयतीत्यर्थः दाहिणं जाणुं धरणितलंसिनिहट्टु तिक्खुत्तो मुद्धाणं धरणितलंसि निवाडेइ निवाडेत्ता कडगतुडियथंभियातो भुयातो साहरेइ साहरित्ता करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी—नमोऽत्थु णं अरहंताणं भगवंताणं, आदिगराणं तित्थयराणं जावसिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपत्ताणं, नमोऽत्थु णं भगवतो पढमतित्थयरस्स जाव संपाविउकामस्स, वंदामि णं भगवंतं पढमतित्थयरं इहगए, पासउ मे भगवं तत्थ गए इह गयंतिकट्टु वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे संनिसण्णे, तएणं तस्स सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो अयमेयारूवे अब्भत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था—उप्पण्णे खलु भो जंबुद्दीवे दीवे भयवं पढमतित्थयरे, तं जीयमेयं तीयपच्चुप्पन्नमणागयाणं सक्काणं देविंदाणं देवराईणं तित्थगराणं जम्मणमहिमं करेत्तए, तं गच्छामि अहंपि भगवतो तित्थयरस्स जम्मणमहिमं करेमित्तिकट्टु एवं संपेहेइ संपेहित्ता हरिणेगमेसिं पायत्ताणियाहिवइं देवं सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! मेघोघरसियगंभीरमहुरसद्दं जोयणपरिमंडलं सुघोसं सुसरं घंटं तिक्खुत्तो उल्लालेमाणे महया महया सद्देणं उग्घोसेमाणे एवं वयासी—आणवए णं भो ! सक्के देविंदे देवराया गच्छइ भो ! सक्के देविंदे देवराया जंबुद्दीवं दीवं भारहं वासं पढमतित्थयरस्स भगवतो जम्मणमहिमं करेत्तए, तं तुब्भेऽवि णं देवाणुप्पिया ! सविड्ढीए सवजुईए सवबलेणं सवसमुदएणं सवायरेणं सवविभूइए सवविभूसाए सवसंभमेणं सवनाडएणं सवोरोहेहिं सवपुप्फगंधमल्लालंकारविभूसाए सवदिव्वतुडियसंनिनाएणं महया इड्ढीए महया जुईए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उपोद्घात-निर्युक्तिः

॥ १७३ ॥

महया बलेणं महया समुदएणं जाव महया पुप्फगंधमल्लालंकारविभूसाए महया वरतुडियजमगसमगपडुप्पवाइअरवेणं संख-पणवपडहभेरिझल्लरिखरमुहिहुडुक्कमुरवमुइंगदुंदुभिनिग्घोसनादितरवेणं नियगपरिवारसंपरिवुडा सयाइं सयाइं जाणवि-माणाइं दुरूढा समाणा अकालपरिहीणं चेव सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो अंतियं पादुब्भवह, एतत्सर्वं प्रायो व्याख्या-तार्थं सुगमं च, नवरं 'धाराहए'त्यादि यथा धाराहतानि नीपस्य—वृक्षविशेषस्य सुरभीणि कुसुमानि चक्षुभिरिव मालितानि भवन्ति तद्वत् उच्छ्रायिता रोमकूपा येन स धाराहतनीपसुरभिकुसुमचक्षुमालितोच्छ्रायितरोमकूपः, प्राकृत-त्वात् पदव्यत्ययः, 'अयमेयारूवे अब्भत्थिए' इत्यादि सङ्कल्पः समुदपद्यत, किंविशिष्ट इत्याह—आत्मनि अधि अध्यात्म तत्र भव आध्यात्मिक आत्मविषय इत्यर्थः, पुनः कथंभूत इत्याह-मनोगतो—मनसि व्यवस्थितो, नाद्यापि वचसा प्रकाशितस्वरूप इत्यर्थः, 'मेघोघरसिये'त्यादि मेघस्येव ओघेन—प्रवाहेण रसितं यस्याः सा मेघौघरसिता, तथा गम्भी-रतरो मधुरः शब्दो यस्याः सा तथा विशेषणसमासः, 'सुघोस'मिति सुघोषाभिधानां, 'सव्वोरोहेहिं' इति सर्वैरन्तःपुरैः, इह स्वल्पेष्वपि सर्वशब्दो दृष्टो यथा सर्वमनेन घृतं पीतमिति तत आह—'महया इड्ढीए' इत्यादि, 'महया वरतुडिय' इत्यादि, महता—स्फूर्त्तिमता वराणां—प्रधानानां तुटितानाम्—आतोद्यानां यमकसमकम्—एककालं पटुभिः पुरुषैः प्रवादितानां यो रवस्तेन, एतदेव विशेषेणाचष्टे—'संखपणवे'त्यादि शङ्खः प्रतीतः पणवो—भाण्डानां पडहः पटहः—प्रतीतः भेरी—ढक्का झल्लरी—चर्म्मावनद्धा विस्तीर्णवलयाकारा खरमुखी—काहला हुडुक्का प्रतीता महाप्रमाणो मुरजो मर्दलः स एव लघुर्मृदङ्गः दुन्दुभिः—भेर्याकारा सङ्कटमुखी एतेषां द्वन्द्वस्तासां निर्घोषो—महान् ध्वानो नादितं च—

हरिणैगमे-षिकृतं घ-ण्टावादनं

॥ १७३ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

घण्टायामिव वादनोत्तरकालभावी सततध्वनिस्तल्लक्षणो यो रवस्तेन। तए णं से हरिणेगमेसी देवे पायत्ताणियाहिवई सक्केणं देविंदेणं देवरण्णा एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए जाव विसप्पमाणहियए करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं देवो तहत्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो अंतियातो पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमइत्ता जेणेव सभाए सुहम्माए मेघोघरसियगंभीरमहुरसद्दा जोयणपरिमंडला सुघोसा घंटा तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता तं मेघोघरसियं गंभीरमहुरसद्दं जोयणपरिमंडलं सुघोसं घंटं तिक्खुत्तो उल्लालेइ। तए णं मेघोघरसियमहुरसद्दाए जोयणपरिमंडलाए सुघोसाए घंटाए तिक्खुत्तो उल्लालियाए समाणीए सोहम्मे कप्पे एगूणेहिं बत्तीसाए विमाणावाससयसहस्सेहिं अण्णाइं एगूणगाइं बत्तीसं घंटासयसहस्साइं जुगवं समगं कणकणारवं काउं पयत्ताइंपि होत्था। तए णं सोहम्मे कप्पे पासायविमाणनिक्खुडावडियसद्दघंटापडंसुयासयसहस्ससंकुचिए जाए यावि होत्था, तए णं तेसिं सोहम्मकप्पवासीणं बहूणं वेमाणियाणं देवाणं देवीण य एगंतरइपसत्तनिच्चपमत्तविसयसुहमुच्छियाणं सूसरघंटारसियविउलबोलतुरियचवलपडिबोहणे कए समाणे घोसणकुतूहलदिण्णकण्णएगग्गचित्तउवउत्तमाणसाणं सो पायत्ताणीयाहिवई देवो तंसि घंटारवंसि निसंतपसंतंसि समाणंसि तत्थ २ तहिं २ देसे महया महया सद्देणं उग्घोसेमाणे एवं वयासी—हंदि सुणंतु भवंतो बहवे सोहम्मकप्पवासी वेमाणिया देवा देवीतो य सोहम्मकप्पवइणो इमं वयणं हियसुहत्थं—आणवइ णं भो! सक्के तं चेव जाव अंतियं पादुब्भवह, इदमपि सुगमम्, नवरं एवं देवो तहत्ति आणाए इति—हे देव!, आमन्त्रणे ओकारान्तता प्राकृतत्वात् यथा समासमणो इति, एवं—यथैव यूयमादिशथ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः

॥ १७४ ॥

तथैवाज्ञया–युष्मदादेशेन कुर्म्म इत्येवंरूपेण विनयेन, 'तिक्खुत्तो उल्लालेइ' त्रिकृत्वस्ताडयति, 'तए ण' मित्यादि, ततस्तस्यां मेघौघरसितगम्भीरमधुरशब्दायां योजनपरिमण्डलायां सुघोषायां घण्टायां त्रिकृत्व उल्लालितायां सत्यां सौधर्म्मे कल्पे 'अन्नेहिं' इत्यादौ सप्तम्यर्थे तृतीया अन्येष्वपि एकोनेषु द्वात्रिंशति विमानावासशतसहस्रेषु यान्यन्यानि एकोनानि द्वात्रिंशत् घण्टाशतसहस्राणि तानि स्वयमेव यमकसमकम्–एककालं कणकणारवं प्रवृत्तान्यप्यभवन्, दिव्यप्रभाव एषः नात्र युक्त्यन्तरमिति, ततः सौधर्म्मकल्पः प्रतिविमानप्रासादनिष्कुटेषु विमाननिष्कुटेषु च ये आपतिताः शब्दाः—शब्दवर्गणापुद्गलास्तेभ्यः समुच्छलितानि यानि घण्टाप्रतिश्रुतां शतसहस्राणि तैः सङ्कुचितोऽपि जातोऽभवत्, किमुक्तं भवति ?—प्रतिविमानं कणकणारवं कर्त्तुं प्रवृत्तासु घण्टासु ये विनिर्गताः शब्दास्तत्प्रतिघातवशतः सर्वासु दिक्षु विदिक्षु च दिव्यानुभावतः समुच्छलितैः प्रतिशब्दैः सकलोऽपि सौधर्मकल्पो बधिरितैव इवोपजायते इति, एतेन यदुच्यते द्वादशभ्यो योजनेभ्यः समागतः शब्दः श्रोत्रग्राह्यो भवति न परतः, ततः कथमेकत्र ताडितायां घण्टायां सकलेऽपि सौधर्म्मकल्पे शब्दश्रवणमिति तदपास्तमवगन्तव्यम्, उक्तयुक्तितः सर्वत्रापि शब्दश्रवणसम्भवात्, 'एगंतरई'त्यादि, एकान्तेनसर्वात्मना रतौ–रमणे प्रसक्ता एकान्तरतिप्रसक्ताः, अत एव नित्यं—सर्वकालं प्रमत्ता नित्यप्रमत्ताः, कस्मादेवंभूता इति चेत् अत आह—विषयसुखेषु मूर्छिता–अध्युपपन्ना विषयसुखमूर्च्छितास्ततो विशेषणसमासश्लेषां सुस्वरघण्टारसितरूपेण विपुलेन सकलसौधर्म्मकल्पव्यापिना ब्रोलेन त्वरितं–शीघ्रं चपले–आकुले प्रतिबोधने कृते सति घोषणे कुतूहलेन दत्तौ कर्णौ यैस्ते घोषणकुतूहलदत्तकर्णाः, एकाग्रचित्ता–घोषणावगमविषयनिक्षिप्तमानसाः, एकाग्रचित्तत्वेऽपि कदाचिदन्तरा-

शेषदेवप्रतिबोधनम्

॥ १७४ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ.सू. ३०

अनुपयोगः स्यादत आह–उपयुक्तमानसाः–निरन्तरमव हितमनसः,ततो विशेषणसमासः पदत्रयस्य, 'निसंतपसंतसी'ति नितरां शान्तो निशान्तः–अत्यन्तं मन्दीभूतस्ततः प्रकर्षेण–सर्वात्मना शान्तः प्रशान्तः ततः छिन्नप्ररूढ इत्यादाविव विशेषणसमासः,'हंदे'ति हन्तेति हर्षे,हर्षश्च स्वामिना आदिष्टत्वादादितीर्थकरजन्ममहिमार्थं च प्रस्थानसमारम्भात्,'हियसुहत्थं'ति हितार्थं सुखार्थं चेत्यर्थः।तए णं ते देवा देवीतो य एयमट्ठं सोच्चा हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिया जाव विसप्पमाणहियया अप्पेगइया वंदणवत्तियं अप्पेगइआ पूअणवत्तियं अप्पेगइया सक्कारवत्तियं अप्पेगइया सम्माणवत्तियं अप्पेगइया दंसणकोउहला० अप्पेगइआ सक्कस्स वयणमणुयत्तमाणा अप्पेगइया अण्णमणुयत्तमाणा अप्पेगइया जीयमेयं एवमाइत्तिकट्टु सवड्ढीए जाव अकालपरिहीणमेव सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो अंतियं पाउब्भवंति,तए णं से सक्के देविंदे देवराया ते बहवे वेमाणिए देवे देवीओ य अकालपरिहीणं चेव अंतियं पाउब्भवमाणे पासइ पासेत्ता हट्ठतुट्ठजावविसप्पमाणहियए पालयं नाम अभियोग्गं देवं सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! अणेगखंभसयसंनिविट्ठं लीलट्ठियसालभंजियाकलियं ईहामिगउसभतुरगनरमगरविहगवालगकिन्नररुरुसरभचमरकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्तं खंभोग्गयवइरवेइयापरिगयाभिरामं विज्जाहरजमलजुगलजुत्तजंतंपिव अच्चीसहस्समालणीयं रूवगसहस्सकलियं भिसमाणं भिब्भिसमाणं चक्खुल्लोयणलेसं सुहफासं सस्सिरीयरूवं घंटावलिपचलियमहुरमणहरसरं सुभं कंतं दरिसणिज्जं निउणोचियमिसमिसंतमणिरयणघंटियाजालपरिक्खित्तं जोयणसयसहस्सविच्छिन्नं पंचजोयणसयोविद्धं सिग्घतुरियजइणनिवायं दिव्वं जाणविमाणं विउव्वाहि विउव्वित्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणाहि, एतत्सर्वं प्राग्वत् परिभावनीयम्। तए णं से पालए देवे सक्केण देविंदेण देवरण्णा एवं वुत्ते समाणे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हट्ठतुट्ठे विसप्पमाणहियए वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणइ जाव दोच्चंपि वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणित्ता अणेगवरखंभसय-संनिविट्ठं जाव दिव्वं जाणविमाणं विउव्विउं पवत्ते यावि होत्था,तए णं से पालए देवे तस्स दिव्वस्स जाणविमाणस्स तिदिसिं ततो तिसोवाणपडिरूवगे विउव्वइ, तंजहा—पुरच्छिमेणं दाहिणेणं उत्तरेणं, तेसि णं तिसोवाणपडिरूवगाणं इमे एयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, तंजहा—वइरामया नेमा रिट्ठामया पइट्ठाणा वेरुलियमया खंभा सुवण्णरुप्पमया फलगा लोहियक्खम-तीतो सूईओ वइरामया संधीओ नाणामणिमया अवलंबणा अवलंबणबाहातो य पासाइया जाव पडिरूवा,तत्र 'तिदिसिं तओ०' इति तिस्रो दिशः समाहृतास्त्रिदिक् तस्मिन् त्रिदिशि 'ततो तिसोवाणपडिरूवा' इति एकैकस्यां दिशि एकैकभावेन प्रतिविशिष्टं रूपं येषां तानि प्रतिरूपकाणि त्रयाणां सोपानानां समाहारस्त्रिसोपानं त्रिसोपानानि च तानि प्रतिरूपकाणि चेति विशेषणसमासः,विशेषणस्य परनिपातः प्राकृतत्वात्,'तेसि ण'मित्यादि, तेषां च त्रिसोपानप्रतिरूपकाणामयमेतद्रूपो वर्णावासो—वर्णकनिवेशः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—वज्रमया—वज्ररत्नात्मिका नेमाः—भूमिकात ऊर्ध्वं निर्गच्छन्तः प्रदेशा रिष्ठमयानि—रिष्टरत्नमयानि प्रतिष्ठानानि—त्रिसोपानमूलप्रदेशाः वैडूर्यमयाः स्तम्भाः सुवर्णरूप्यमयानि फलकानि—त्रिसोपानाङ्गभूतानि लोहिताक्षमय्यः सूचयः—फलकद्वयसम्बन्धविघटनाभावहेतुपादुकास्थानीयाः वज्रमया—वज्ररत्नापूरिताः सन्धयः—फलक-द्वयापान्तरालप्रदेशा नानामणिमयानि अवलम्ब्यन्ते इति अवलम्बनानि—अवतरतामुत्तरतां चालम्बनहेतुभूताः अवलम्ब-नबाहातो विनिर्गता नागदन्ताख्यानीयाः केचिद्वदयबाहाः, 'अवलंबणबाहातो य' इति अवलम्बनबाहा नाम उभयोः पा-र्श्वयोरवलम्बनानामाश्रयभूता भित्तयस्ता अपि नानामणिमय्यः ॥ तेसि णं तिसोवाणपडिरूवगाणं पुरतो तोरणे विउव्वइ,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

ते णं तोरणा नानामणिमयेसु खंभेसु उव[नि]विट्ठसंनिविट्ठविविहतारारूवोवचिया विविहमुत्तंतरोविया ईहामिगउसभतुर-गनरमगरविहगवालगकिन्नररुरुसरभचमरकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्ता खंभुग्गयवइरवेइयापरिगयाभिरामा विज्जाह-रजमलजुगलजंतजुत्ताविव अच्चीसहस्समालिणीया रूवगसहस्सकलिया भिसमाणा भिब्भिसमाणा चक्खुल्लोयणलेसा सुहफासा सस्सिरीयरूवा पासाईया जाव पडिरूवा, अत्र 'उवविट्ठसंनिविट्ठा' इति उपविष्टानि सामीप्येन स्थितानि, तानि च कदाचिच्चलानि अथवा अपदपतितानि आशङ्क्येरन् तत आह—सम्यक्–निश्चलतया अपदपरिहारेण च निविष्टानि सन्निविष्टानि, ततो विशेषणसमासः, तथाविधैस्तारारूपैः–तारिकाभिरुपचितानि, तोरणेषु शोभार्थं तारका निबध्यन्ते इति प्रतीतं लोकेऽपीति, तथा'विविहमुत्तंतरोविया' इति विविधविच्छित्तिकलिता मुक्ता–मुक्ताफलानि 'अंतरे'ति अन्तराशब्दोऽगृहीतवीप्सोऽपि सामर्थ्यात् वीप्सां गमयति अन्तरा अन्तरा रोविया–आरोपिता यत्र तानि तथा, शेषं प्रागेव व्याख्यातमिति । तेसिं तोरणाणं उप्पिं अट्ठट्ठमंगलगा पन्नत्ता, तंजहा–सोत्थिय सिरिवच्छ नंदियावत्त वद्धमाणग भद्दासणग कलस मच्छ दप्पणा, सव्वरयणामया अच्छा सण्हा लण्हा घट्ठा मट्ठा नीरया निम्मला निप्पंका निक्कंकडच्छाया सप्पिरीया सउज्जोया पासाईया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा, अत्र 'अच्छा' इति अच्छानि आकाशस्फटिकवत् अतीव स्वच्छानि श्लक्ष्णानि–श्लक्ष्णपुद्गलस्कन्धनिष्पन्नानि श्लक्ष्णदलनिष्पन्नपटवत्, लण्हानि–मसृणानि घुंटितपटवत्, घृष्टानीव घृष्टानि खरशानया पाषाणप्रतिमावत्, मृष्टानीव मृष्टानि सुकुमालशानया पाषाणप्रतिमेव, अत एव नीरजांसि स्वाभा-विकरजोरहितत्वात् निर्म्मलानि अभ्यागन्तुकमलाभावात्, निष्पङ्कानि कलङ्कविकलानि, तथा निष्कङ्कटा—निष्कवचा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥१७६॥

निरावरणा निरुपघातेति भावः छाया—दीप्तिर्येषां तानि निष्कङ्कटच्छायानि सप्रभाणि—स्वरूपतः प्रभावन्ति समरीचीनि च—बहिर्विनिर्गतकिरणजालानि अत एव सोद्योतानि—बहिर्व्यवस्थितवस्तुस्तोमप्रकाशकराणि, 'पासाइया' इत्यादि पदचतुष्टयं प्राग्वत्। तेसि णं तोरणाणं उप्पिं बहवे किण्हचामरज्झया लोहियचामरज्झया नीलचामरज्झया सुक्किलचामरज्झया हालिद्दचामरज्झया अच्छा सण्हा रुप्पपट्टा वयरामयदंडा जलयामलगंधिया सुरम्मा पासाइया जाव पडिरूवा, अत्र कृष्णचामरयुक्ता ध्वजाः कृष्णचामरध्वजाः, एवं शेषपदेष्वपि भावना कार्या, 'रूप्यपट्टा' इति रूप्यो—रूप्यमयो वज्रमयस्य दण्डस्योपरि पट्टो येषां ते रूप्यपट्टाः, 'वइरदंडा' इति वज्रो—वज्ररत्नमयो दण्डो रूप्यपट्टमध्यवर्त्ती येषां ते वज्रदण्डाः, तथा जलजानामिव—जलजकुसुमानां पद्मादीनामिवामलो—निर्मलो यो गन्धः स विद्यते येषां ते जलजामलगन्धिकाः अत एव सुरम्याः, प्रासादीया इत्यादि प्राग्वत्। तए णं तेसि णं तोरणाणं उप्पिं बहवे छत्तातिच्छत्ते घंटाजुयले पडागाइपडागे उप्पलहत्थए कुमुदहत्थए नलिणहत्थए सुभगहत्थए सोगंधियहत्थए पुंडरीयहत्थए सयवत्तहत्थए सहस्सपत्तहत्थए सव्वरयणामए अच्छे सण्हे जाव पडिरूवे विउवइ, इह छत्रात् लोकप्रसिद्धादेकसङ्ख्यकात् अतिशायीनि छत्राणि उपर्यधोभावेन द्विसङ्ख्यानि त्रिसङ्ख्यानि वा छत्रातिच्छत्राणि, पताका लोकप्रसिद्धास्ताभ्योऽतिशायिन्यो दीर्घत्वेन विस्तारेण च पताकाः पताकातिपताकाः, उत्पलहस्तान्—उत्पलाख्यजलजकुसुमसमूहविशेषान्, एवं शेषपदान्यपि भावनीयानि, नवरमुत्पलं—गर्दभकं पद्मं—सूर्यविकासि कुमुदं—कैरवं नलिनम्—ईषद्रक्तं पद्मं सुभगं—पद्मविशेषः सौगन्धिकं—कल्हारं पुण्डरीकं—श्वेताम्बुजं सहस्रपत्रशतपत्रे पत्रसङ्ख्याभेदकृतौ पद्मविशेषौ। तए णं से पालए देवे तस्स णं दिव्वस्स

तोरणानि ध्वजादीनि च ॥१७६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

जाणविमाणस्स अंतो बहुसमरमणिज्जं भूमिभागं विउव्वइ, से जहानामए आलिंगपुक्खरेइ वा मुइंगपुक्खरेइ वा सरतलेइ वा करयलेइ वा चंदमंडलेइ वा सूरमंडलेइ वा आयंसमंडलेइ वा उरब्भचम्मेइ वा वराहचम्मेइ वा वग्घचम्मेइ वा दीवियचम्मेइ वा अणेगसंकुकीलगसहस्सवितते आवडपच्चावडसेढिपसेढिसोत्थियसोवत्थियपूसमाणगवद्धमाणगमच्छंडमारंडजारमारफुल्लावलिपउमपत्तसागरतरंगवसंतलयपउमलयभत्तिचित्तेहिं सच्छाएहिं सप्पभेहिं समिरीएहिं सउज्जोएहिं नाणाविहपंचवण्णेहिं मणीहिं उवसोभिते, तंजहा—किण्हेहिं नीलेहिं लोहिएहिं हलिद्देहिं सुक्किलेहिं, अत्र 'आलिंगपुक्खरइ वे'ति आलिङ्ग्य वाद्यते इत्यालिङ्गो–मुरजवाद्यविशेषः तस्य पुष्करं–चर्म्म पुटं तत्किलात्यन्तसममिति तेनोपमा क्रियते, इति शब्द उपमाभूतवस्तुपरिसमाप्तिद्योतकः, वाशब्दः समुच्चये, एवं शेषपदान्यपि भावनीयानि, नवरं 'वग्घचम्मेइ वे'ति वृकचर्म्म, द्वीपी–चित्रकः, उरभ्रादिचर्म्मविशेषणमाह–'अणेगे'त्यादि, अनेकैः शङ्कुसमाणैः कीलसहस्रैर्महद्भिः कीलकैस्ताडितं प्रायो मध्यक्षामं भवति, तथारूपताडासम्भवात्, ततः शङ्कुग्रहणं, वितत–वितनीकृतं ताडितमिति भावः, यथा अत्यन्तं बहुसमं भवति तथा तस्यापि यानविमानस्यान्तर्बहुसमो भूमेभागः, कथम्भूत इत्याह—'नाणाविहपंचवण्णेहिं मणीहिं उवसोभिए' नानाविधा–जातिभेदान्नानाप्रकारा ये पञ्चवर्णा मणयस्तैरुपशोभितः, कथम्भूतैरित्याह–'आवडे'त्यादि, आवर्त्तादीनि मणीनां लक्षणानि, तत्रावर्त्तः प्रतीतः, एकस्यावर्त्तस्य प्रत्यभिमुख आवर्त्तः प्रत्यावर्त्तः, श्रेणिः—तथाविधबिन्दुजालादेः पङ्क्तिः तस्याश्च श्रेणेर्या विनिर्गता अन्या श्रेणिः सा प्रश्रेणिः, स्वस्तिकः प्रतीतः, सौवस्तिकपुष्पमाणवौ लक्षणविशेषौ लोकात् प्रत्येतव्यौ, वर्द्धमानकं—शरावसम्पुटं, मत्स्याण्डकमकराण्डके प्रतीते, जारमारौ—लक्षणविशेषौ

Jain Education Int For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

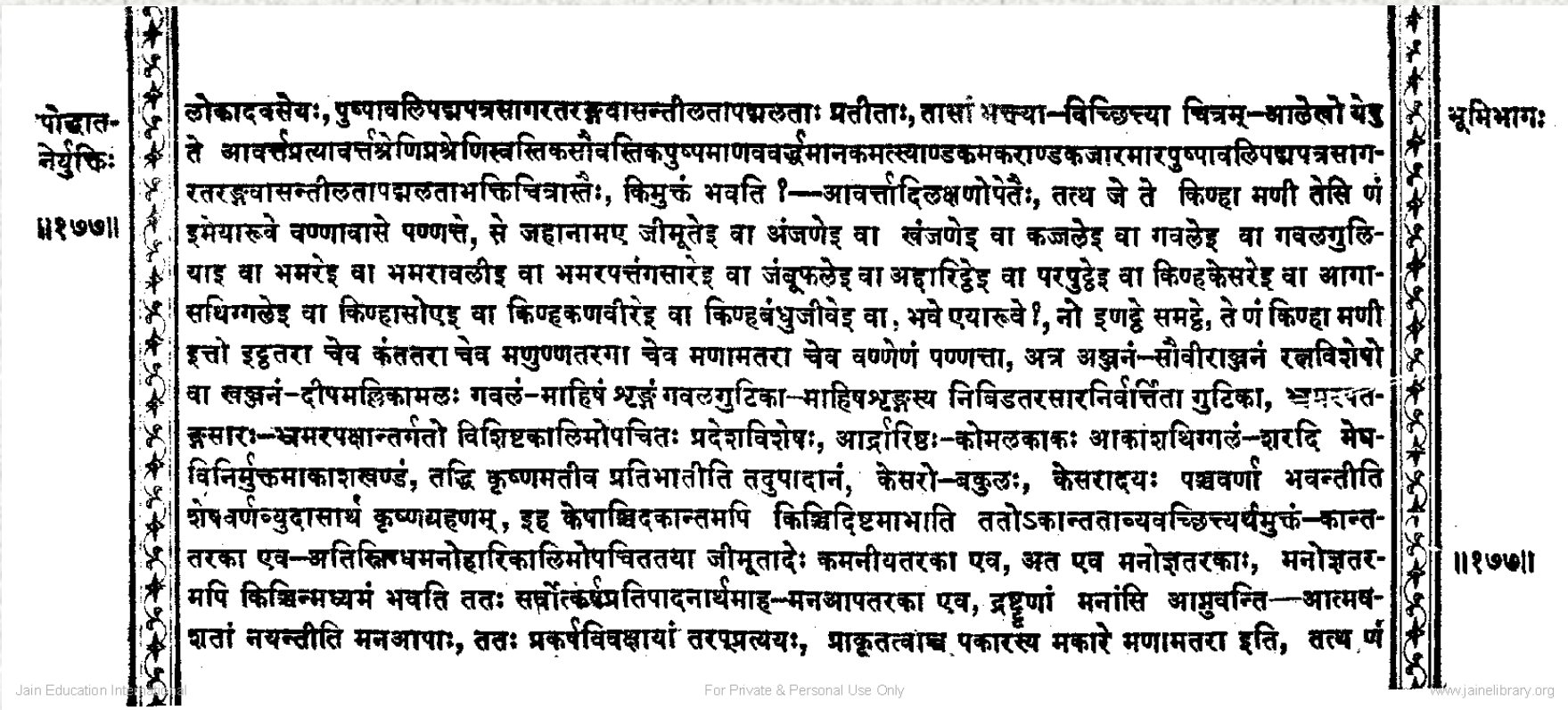

पोद्घात-निर्युक्तिः ॥१७७॥

लोकादवसेयः, पुष्पावलिपद्मपत्रसागरतरङ्गवासन्तीलतापद्मलताः प्रतीताः, तासां भक्त्या-विच्छित्त्या चित्रम्-आलेखो येषु ते आवर्त्तप्रत्यावर्त्तश्रेणिप्रश्रेणिस्वस्तिकसौवस्तिकपुष्पमाणववर्द्धमानकमत्स्याण्डकमकराण्डकजारमारपुष्पावलिपद्मपत्रसागरतरङ्गवासन्तीलतापद्मलताभक्तिचित्रास्तैः, किमुक्तं भवति ?—आवर्त्तादिलक्षणोपेतैः, तत्थ जे ते किण्हा मणी तेसि णं इमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, से जहानामए जीमूतेइ वा अंजणेइ वा खंजणेइ वा कज्जलेइ वा गवलेइ वा गवलगुलियाइ वा भमरेइ वा भमरावलीइ वा भमरपत्तंगसारेइ वा जंबूफलेइ वा अद्दारिट्ठेइ वा परपुट्ठेइ वा किण्हकेसरेइ वा आगासथिग्गलेइ वा किण्हासोएइ वा किण्हकणवीरेइ वा किण्हबंधुजीवेइ वा, भवे एयारूवे ?, नो इणट्ठे समट्ठे, ते णं किण्हा मणी इत्तो इट्ठतरा चेव कंततरा चेव मणुण्णतरगा चेव मणामतरा चेव वण्णेणं पण्णत्ता, अत्र अञ्जनं-सौवीराञ्जनं रत्नविशेषो वा खञ्जनं-दीपमल्लिकामलः गवलं-माहिषं शृङ्गं गवलगुटिका-माहिषशृङ्गस्य निबिडतरसारनिर्वर्त्तिता गुटिका, भ्रमरपत्तङ्गसारः-भ्रमरपक्षान्तर्गतो विशिष्टकालिमोपचितः प्रदेशविशेषः, आर्द्रारिष्टः-कोमलकाकः आकाशथिग्गलं-शरदि मेघविनिर्मुक्तमाकाशखण्डं, तद्धि कृष्णमतीव प्रतिभातीति तदुपादानं, केसरो-बकुलः, केसरादयः पञ्चवर्णा भवन्तीति शेषवर्णव्युदासार्थं कृष्णग्रहणम्, इह केषाञ्चिदकान्तमपि किञ्चिदिष्टमाभाति ततोऽकान्ततान्यवच्छित्त्यर्थमुक्तं-कान्ततरका एव-अतिस्निग्धमनोहारिकालिमोपचिततया जीमूतादेः कमनीयतरका एव, अत एव मनोज्ञतरकाः, मनोज्ञतरमपि किञ्चिन्मध्यमं भवति ततः सर्वोत्कर्षप्रतिपादनार्थमाह-मनआपतरका एव, द्रष्टृणां मनांसि आप्नुवन्ति—आत्मवशतां नयन्तीति मनआपाः, ततः प्रकर्षविवक्षायां तरप्प्रत्ययः, प्राकृतत्वाच्च पकारस्य मकारे मणामतरा इति, तत्थ णं

भूमिभागः

॥१७७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

जे ते नीला मणी तेसि णं मणीणं इमे एयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, से जहानामए भिंगेइ वा भिंगपत्तेइ वा सुएइ वा सुयपिच्छेइ वा चासेइ वा चासपिच्छेइ वा नीलीइ वा नीलभेदेइ वा नीलीगुलियाइ वा सामागेइ वा उच्चंतगेइ वा हलहरवसणेइ वा मोरग्गीवाइ वा अवसीकुसुमेइ वा अंजणकेसियाकुसुमेइ वा नीलुप्पलेइ वा नीलासोगेइ वा नीलबंधुजीवगेइ वा नीलकणवीरेइ वा, भवे एयारूवे ?, नो इणट्ठे समट्ठे, ते णं नीला मणी तत्तो इट्ठतरा चेव कंततरा चेव मणुन्नतरा चेव मणामतरा चेव वन्नेणं पन्नत्ता, अत्र भृङ्गः कीटविशेषः, पक्ष्मलं भृङ्गपत्रं–तस्यैव भृङ्गाभिधानस्य कीटविशेषस्य पक्ष्म, उच्चंतगो दन्तरागः, हलधरो–बलदेवस्तस्य वसनं हलधरवसनं, तच्च किल नीलं भवति, सदैव तथा स्वभावतया हलधरस्य नीलवस्त्रपरिधानात्, अञ्जनकेशिका–वनस्पतिविशेषः। तत्थ णं जे ते लोहिया मणी तेसि णं मणीणं इमे एयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते से जहानामए उरब्भरुहिरेइ वा ससगरुहिरेइ वा नररुहिरेइ वा वराहरुहिरेइ वा बालिंदगोपगेइ वा बालदिवागरेइ वा संझब्भरागेइ वा गुंजद्धरागेइ वा जासुमणकुसुमेइ वा किंसुयकुसुमेइ वा पारिजातकुसुमेइ वा जायहिंगुलए वा सिलप्पवालेइ वा पवालंकुरेइ वा लोहियक्खमणीइ वा लक्खारसगेइ वा किमिरागकंबलेइ वा चीणपिट्ठरासीइ वा रत्तुप्पलेइ वा रत्तासोगेइ वा रत्तकणवीरेइ वा रत्तबंधुजीवेइ वा, भवे एयारूवे ?, नो इणट्ठे समट्ठे, ते णं लोहिया मणी एत्तो इट्ठतरा चेव कंततरा चेव मणुण्णतरा च मणामतरा चेव वण्णेणं पण्णत्ता, उरभ्रादिरुधिराणि शेषरुधिरेभ्यो लोहितवर्णोत्कटानि भवन्तीति तेषामुपादानं, बालेन्द्रगोपकः–सद्योजात इन्द्रगोपकः, स हि प्रवृद्धः सन् ईषत्पाण्डुरक्तो भवति ततो बालग्रहणं, शिलाप्रवालं–प्रवालनामा रत्नविशेषः प्रवालाङ्कुरः–तस्यैव रत्नविशेषस्याङ्कुरः। तत्थ णं जे ते हालिद्दा मणी तेसि णं मणीणं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥१७८॥

इमे एयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, से जहानामए चंपेइ वा चंपगच्छल्लीइ वा हलिद्दाइ वा हलिद्दभेएइ वा हलिद्दगुलियाइ वा हरियालेइ वा हरियालभेदेइ वा हरियालगुलियाइ वा चिकुरेइ वा चिकुरंगरागेइ वा वरकणगनिघसेइ वा वरपुरिसवसणेइ वा चंपगकुसुमेइ वा कोहंडियाकुसुमेइ वा तडउडाकुसुमेइ वा घोसाडियाकुसुमेइ वा सुवण्णजूहियाकुसुमेइ वा जूहियाकुसुमेइ वा सुहिरण्णकुसुमेइ वा कोरिंटवरमल्लदामेइ वा पीयासोगेइ वा पीयकणवीरेइ वा पीयबंधुजीवेइ वा, भवे एयारूवे ?, नो इणट्ठे समट्ठे, तेणं हालिद्दा मणी एत्तो इट्ठतरगा चेव कंततरा चेव मणुण्णतरा चेव मणामतरगा चेव वण्णेणं पण्णत्ता, चम्पकः—सुवर्णचम्पको वृक्षः, चिकुरो—रागद्रव्यविशेषः, चिकुराङ्गरागः—चिकुरसंयोगनेमित्तो वस्त्रादौ रागः (ग्रन्थाग्रम्७०००) वरकनकनिघसो—वरकनकस्य कषपट्टके रेखा वरपुरुषो—वासुदेवस्तस्य वसनं वरपुरुषवसनं, तच्च किउ पीतमेव भवतीति तदुपादानं, कूष्माण्डी—पुष्पफली तडवडा—आउली सुहिरण्यको—वनस्पतिविशेषः । तत्थ णं जे ते सुक्किला मणी तेसि णं मणीणं इमे एयारूवे वण्णावासे वण्णत्ते, से जहानामए अंकेइ वा संखेइ वा कुंदेइ वा दगरइ वा हंसावलीइ वा चंदावलीइ वा सारइयबलाहएइ वा धंतधोयरुप्पपट्टेइ वा सालिपिट्ठरासीइ वा कुमुदपुप्फरासीइ वा सुक्कच्छेवाडीइ वा पेहुणमिंजियाइ वा बिसेइ वा मुणालियाइ वा गयदंते वा लवंगदलेइ वा सेयासोगेइ वा सेयकणवीरेइ वा सियबंधुजीवेइ वा, भवे एयारूवे ?, नो इणट्ठे समट्ठे, ते णं सुक्किला मणी एत्तो इट्ठतरगा चेव कंततरा चेव मणुण्णतरा चेव मणामतरा चेव, अत्र अङ्को—रत्नविशेषः बलाका—बिसकण्ठिका चन्द्रावली—तडागादेर्जलमध्यप्रतिबिम्बितचन्द्रपङ्क्तिः शारदिकबलाकः—शरत्कालभावी मेघः 'धंतधोयरुप्पपट्टेइ वे' ति ध्मातः—अग्निसम्पर्केण निर्मलीकृतो धौतो—भूतिखरण्टितहस्तसम्मार्ज-

पंचवर्णमणिवर्णनं

॥१७८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नेनातिनिर्म्मलीकृतो यो रूप्यपट्टो–रजतपत्रकं स धमातधौतरजतपट्टः, 'सुक्किछगडियाइ वे' ति छेगडी नाम वस्त्रादिफलिका, सा च क्वचिद्देशे शुष्का सती अतीव शुक्ला भवति ततस्तदुपादानं, 'पिहुगमिंजियाइ वे' ति पेहुणं–मयूरपिच्छं तन्मध्यवर्त्तिनी मञ्जिका सा चातिशुक्लेति तदुपन्यासः, बिसं–पद्मिनीकन्दः मृणालिका–पद्मतन्तुः लवंगदलं–लवङ्गपत्रमेति । तेसि णं मणीणं इमे एयारूवे गंधे पण्णत्ते, से जहानामए कुट्ठपुडाण वा तगरपुडाण वा चोयपुडाण वा चंपापुडाण वा दमणापुडाण वा कुंकुमपुडाण वा चंदणपुडाण वा उसीरपुडाण वा मरुयापुडाण वा जाइपुडाण वा जूहियापुडाण वा मल्लियापुडाण वा पहाणमल्लिकापुडाण वा पाडलिपुडाण वा पडिवायंमि उब्भिज्जमाणाण वा कोट्टिज्जमाणाण वा उक्करिज्जमाणाण वा रुचिज्जमाणाण वा भाएज्जमाणाण वा भंडातो भंडं साहरिज्जमाणाण वा ओराला मणुण्णा मणहरा घाणमणनिव्वुइकरा सव्वतो समंता अभिनिस्सरंति, भवे एयारूवे ?, नो इणट्ठे समट्ठे, तेसिं मणीणं इट्ठतरगाए चेव गंधे पण्णत्ते, अत्र कुष्ठं–गन्धद्रव्यं प्रतीतमेव चोओ–गन्धद्रव्यविशेषः स्नानमल्लिका–मल्लिकाविशेषः, एतेषां पुटानां प्रतिवाते–आघ्रायकवेवक्षितपुरुषाणां प्रत्यभिमुखं वाते वाति सति उद्भिद्यमानानाम्–उद्घाट्यमानानां 'कोट्टिज्जमाणाण वा' इति इह पुटैः परिमितानि यानि कोष्ठादीनि गन्धद्रव्याणि तान्यपि परिमेये परिमाणोपचारात् कोष्ठपुटादीनीत्युच्यन्ते तेषां कुट्टयमानानाम्–उदूखलेन क्षुद्यमानानां 'रुंचिज्जमाणाण वा' इति श्लक्ष्णखण्डीक्रियमाणानामेतच्च विशेषगद्वयं कुष्ठादिद्रव्याणामवसेयं, तेषामेव प्रायः कुट्टनश्लक्ष्णखण्डीकरणसम्भवात्, न तु यूथिकादीनाम्,'उक्करिज्जमाणाणं' क्षुरिकादिभिः कुष्ठादिपुटानां कुष्ठादिगन्धद्रव्याणां वा उत्कीर्यमानानां परिभाव्य (ज्य) मानानां–पार्श्ववर्त्तिभ्यो मनाक् मनाग्दीयमानानां, तथा भाण्डादेकस्मात् स्थानाद् भाण्डं–

Jain Education Intern... For Private & Personal Use Only ...www.jainelibrary.org

भाजनान्तरं संहियमाणानां उदाराः–स्फाराः, ते चामनोज्ञा अपि स्युः अत आह–मनोज्ञा–मनोऽनुकूलाः, तच्च मनोज्ञत्वं कुत इत्याह–मनोहरा–मनो हरन्तीति–आत्मवशं नयन्तीति मनोहरा यतस्ततो मनोज्ञाः, तदपि मनोहरत्वं कुत इत्याह–घ्राणमनोनिर्वृतिकराः। तेसि णं मणीणं इमे एयारूवे फासे पण्णत्ते, से जहानामए आईणेइ वा रुएइ वा बूरेइ वा नवणीएइ वा हंसतूलेइ वा सिरीसकुसुमनिचएइ वा बालकुसुमपत्तरासीइ वा, भवे एयारूवे?, नो इणट्ठे समट्ठे, ते णं मणी एत्तो इट्ठतरा चेव कंततरा चेव मणुण्णतरा चेव मणामतरा चेव फासेणं पण्णत्ता, तए णं से आभियोगे पालए तस्स दिवस्स जाणविमाणस्स बहुमज्झभागे एत्थ णं पेच्छाघरमंडवं विउव्वइ, अणेगखंभसयनिविट्ठं अब्भुग्गयसुकयवरवेइयातोरणवरवेइयासालंभजियागसुसिलिट्ठविसिट्ठलट्ठसंठिअपसत्थवेरुलियविमलखंभं नाणामणिकणगरयणखचिओज्जलबहुसमसुविभत्तदेसभागं ईहामिगउसभतुरगनरमगरविहगवालगकिन्ररुरुसरभचमरकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्तं कंचणमणिरयणथूभियागं नाणाविहपंचवण्णघंटापडागपरिमंडियग्गसिहरं चंचलं (चवलं) मरीचिकवयं विणिम्मुयंतं लाउल्लोइयमहियं गोसीसरत्तचंदणदद्दरदिन्नपंचंगुलितलं उवचियवंदणकलसं चंदणघडसुकयतोरणपडिदुवारदेसभागं आसत्तोसत्तविउलवट्टवग्घारियमल्लदामकलावं पंचवण्णसरससुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलियं कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामं सुगंधवरगंधगंधियं गंधवट्टिभूअं दिव्वतुडियसद्दसंपणइयं अच्छं सण्हं जाव पडिरूवं, अत्र 'अब्भुग्गये'त्यादि, अभ्युद्गता–अत्युत्कटा सुकृता–सुनिष्पादिता वरवेदिका तोरणानि वरवेदिकाशालभञ्जिकाश्च यत्र तदभ्युद्गतसुकृतवरवेदिकातोरणवरवेदिकाशालभञ्जिकाकं, तथा सुश्लिष्टा विशिष्टा लष्टसंस्थिता–मनोज्ञसंस्थानाः प्रशस्ता–वास्तुलक्षणोपेता वैडूर्यविमलस्तम्भा–वैडूर्यर-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

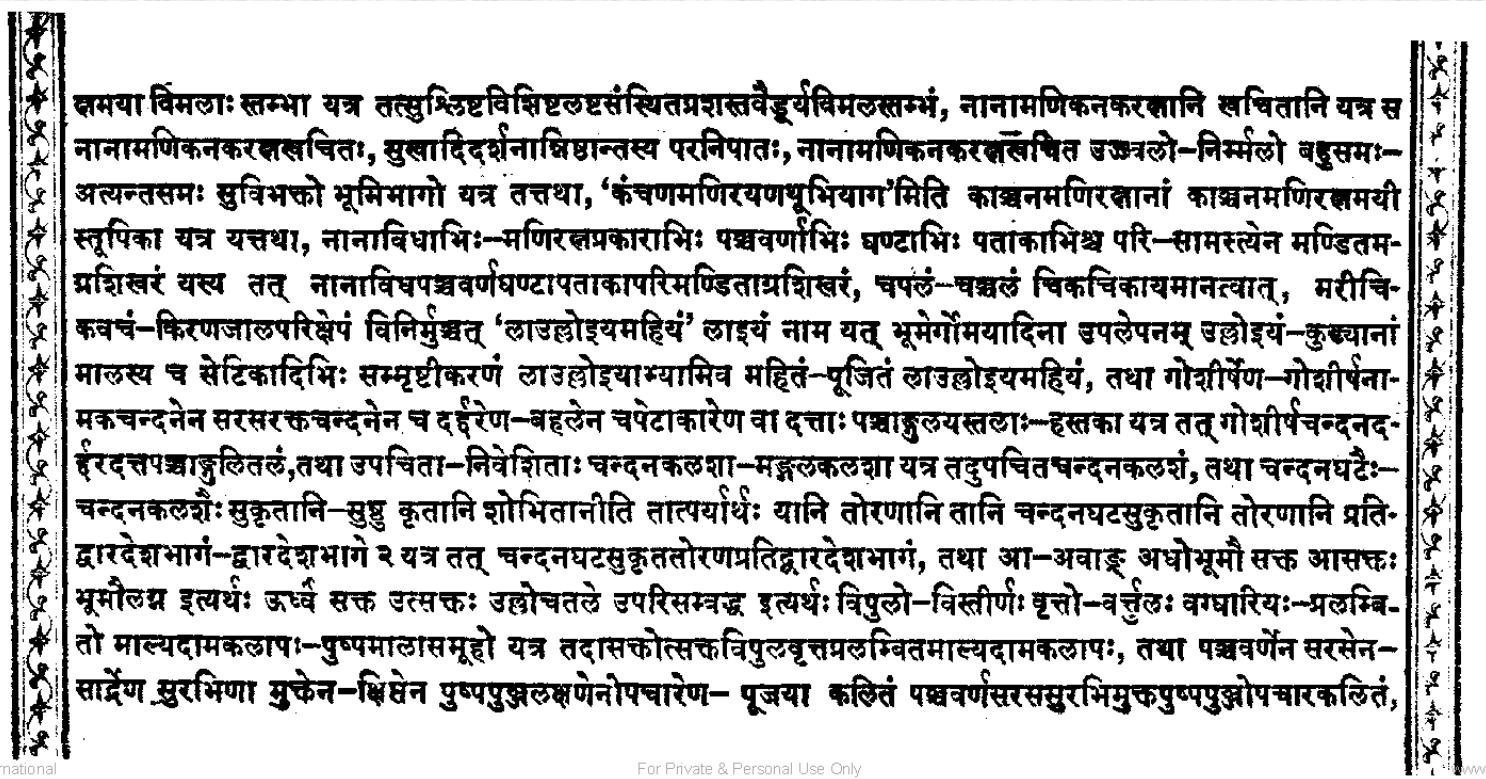

क्षमया विमलाः स्तम्भा यत्र तत्सुश्लिष्टविशिष्टलष्टसंस्थितप्रशस्तवैडूर्यविमलस्तम्भं, नानामणिकनकरत्नानि खचितानि यत्र स नानामणिकनकरत्नखचितः, सुखादिदर्शनान्निष्ठान्तस्य परनिपातः, नानामणिकनकरत्नखचित उज्ज्वलो–निर्मलो बहुसमः–अत्यन्तसमः सुविभक्तो भूमिभागो यत्र तत्तथा, 'कंचणमणिरयणथूभियाग'मिति काञ्चनमणिरत्नानां काञ्चनमणिरत्नमयी स्तूपिका यत्र यत्तथा, नानाविधाभिः–मणिरत्नप्रकाराभिः पञ्चवर्णाभिः घण्टाभिः पताकाभिश्च परि–सामस्त्येन मण्डितमग्रशिखरं यस्य तत् नानाविधपञ्चवर्णघण्टापताकापरिमण्डिताग्रशिखरं, चपलं–चञ्चलं चिकचिकायमानत्वात्, मरीचिकवचं–किरणजालपरिक्षेपं विनिर्मुञ्चत् 'लाउल्लोइयमहियं' लाइयं नाम यत् भूमेर्गोमयादिना उपलेपनम् उल्लोइयं–कुड्यानां मालस्य च सेटिकादिभिः सम्मृष्टीकरणं लाउल्लोइयाभ्यामिव महितं–पूजितं लाउल्लोइयमहियं, तथा गोशीर्षेण–गोशीर्षनामकचन्दनेन सरसरक्तचन्दनेन च दर्दरेण–बहलेन चपेटाकारेण वा दत्ताः पञ्चाङ्गुलयस्तलाः–हस्तका यत्र तत् गोशीर्षचन्दनदर्दरदत्तपञ्चाङ्गुलितलं,तथा उपचिता–निवेशिताः चन्दनकलशा–मङ्गलकलशा यत्र तदुपचितचन्दनकलशं, तथा चन्दनघटैः–चन्दनकलशैः सुकृतानि–सुष्ठु कृतानि शोभितानीति तात्पर्यार्थः यानि तोरणानि तानि चन्दनघटसुकृतानि तोरणानि प्रतिद्वारदेशभागं–द्वारदेशभागे २ यत्र तत् चन्दनघटसुकृततोरणप्रतिद्वारदेशभागं, तथा आ–अवाङ् अधोभूमौ सक्त आसक्तः भूमौलग्न इत्यर्थः ऊर्ध्वं सक्त उत्सक्तः उल्लोचतले उपरिसम्बद्ध इत्यर्थः विपुलो–विस्तीर्णः वृत्तो–वर्तुलः वग्घारियः–प्रलम्बितो माल्यदामकलापः–पुष्पमालासमूहो यत्र तदासक्तोत्सक्तविपुलवृत्तप्रलम्बितमाल्यदामकलापः, तथा पञ्चवर्णेन सरसेन–सार्द्रेण सुरभिणा मुक्तेन–क्षिप्तेन पुष्पपुञ्जलक्षणेनोपचारेण– पूजया कलितं पञ्चवर्णसरससुरभिमुक्तपुष्पपुञ्जोपचारकलितं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तथा दिव्यानां त्रुटितानाम्-आतोद्यानां वेणुवीणामृदङ्गादीनां ये शब्दास्तैः सम्प्रगदितं-सम्यक् श्रोत्रमनोहारितया प्रकर्षेण नदितं-शब्दवत् दिव्यत्रुटितशब्दसम्प्रगदितं, शेषं प्राग्वत्। तस्स णं पेच्छाघरमंडवस्स बहुसमरमणिज्जं भूमिभागं विउव्वइ, तस्स वण्णतो जाव मणीणं फासो,तस्स णं पेच्छाघरमंडवस्स उल्लोयं विउव्वइ पउमलयभत्तिचित्तं अच्छं सण्हं जाव पडिरूवं, तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभागे एत्थ णं महं वयरामयं अक्खाडगं विउव्वइ,तस्स णं अक्खाडगस्स बहुमज्झदेसभागे एत्थ णं महं एगं मणिपेढियं विउव्वइ अट्ठ जोयणाइं आयामविक्खंभेणं चत्तारि जोयणाइं बाहल्लेणं सव्वमणिमयं अच्छं जाव पडिरूवं, तीसे णं मणिपेढियाए उवरिं एत्थ णं महं एगं सीहासणं विउव्वइ, तस्स णं सीहासणस्स इमे एयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, तंजहा-तवणिज्जमया चक्कवाडा रयणामया सीहा सोवण्णिया पाया णाणामणिमया पायसीसगाइं जंबूणयमयाइं गत्ताइं नाणामणिमए विच्छासणं सीहासणे ईहामिग(उसभ)तुरगनरमगरविहगवालगकिन्नररुरुसरभचमरकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्तं ससारसारोवचियमणिरयणपायवीढे अत्थरगमदुमसूरनवत्तयकुसंतलिच्चकेसरपच्चुत्थुयाभिरामे सुविरइयरयत्ताणे ओयवियखोमदुगुल्लपट्टपडिच्छायणे रत्तंसुयसंवुए सुरम्मे आइणगरुयबूरनवणीयतूलफासे पासाईए जाव पडिरूवे, एतत् सर्वं प्राग्वत्, तस्स णं सीहासणस्स उवरिं एत्थ णं महं एगं विजयदूसं विउव्वइ, संखंककुंददगरयअमिअमहिआफेणपुंजसंनिगासं सव्वरयणामयं अच्छं सण्हं जाव पडिरूवं, विजयदूष्यं नाम वस्त्रविशेषः, कथम्भूतमित्याह-'संखंके'त्यादि, शङ्खः प्रतीतः अङ्को-रत्नविशेषः कुन्देति-कुन्दकुसुमं दकरजः-उदककणा अमृतस्य-क्षीरोदधिजलस्य मथितस्य यः फेनपुंजो-डिण्डीरोत्करस्तत्संनिकाशं-तत्सदृशप्रभं सर्वात्मना रत्नमयं सर्वरत्नमयं। तस्स णं सीहासणस्स उवरिं विजय-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आव. ३१

दूसस्स य बहुमज्झदेसभागे एत्थ णं वइरामयं अंकुसं विउव्वइ, तस्सिं च णं वइरामयंसि अंकुसंसि कुंभग्गं मुत्तदामं विउव्वइ से णं कुंभग्गे मुत्तदामे अन्नेहिं चउहिं कुंभग्गेहिं मुत्तादामेहिं तदद्धुच्चत्तपमाणेहिं सव्वतो समंता संपरिक्खित्ते, ते णं दामा तवणिज्जलंबूसगा सुवण्णपयरगमंडिया नाणामणिरयणविविहहारद्धहारउवसोभियसमुदाया ईसिं अन्नमन्नमसंपत्ता पुव्वावरदाहिणुत्तरागएहिं वाएहिं मंदायं २ इज्जमाणाणं इज्जमाणाणं वइज्जमाणाणं २ पलंबमाणाणं २ पझंझमाणाणं २ ओरालेणं मणुण्णेणं मणहरेणं कण्णमणनिव्वुइकरेणं सद्देणं ते पएसे सव्वतो समंता आपूरेमाणा २ सिरीए अतीव उवसोभेमाणा २ चिट्ठंति, अत्र 'अंकुसं विउव्वइ'त्ति अङ्कुशाकारं मुक्तादामावलम्बनाश्रयं विकुर्वति, तस्मिंश्च वज्रमये अङ्कुशे कुम्भाग्रं–मगधदेशप्रसिद्धकुम्भपरिमाणं मुक्तामयं मुक्तादामं विकुर्वति, 'ते णं दामा' इत्यादि तानि पञ्चापि दामानि तपनीयस्य–तपनीयमयो लम्बूसको–मण्डलविशेषरूपो भागो येषां प्रलम्बमानानां तानि तथा, तथा नानामणिरत्नानां–नानामणिरत्नमयैर्विविधैः–विचित्रैर्हारैरर्द्धहारैश्च उपशोभितः–सामस्त्येन शोभितः समुदायो येषां तानि तथा, तथा ईषत्–मनागन्योऽन्यं–परस्परमसम्प्राप्तानि–असंलग्नानि पूर्वापरदक्षिणोत्तरागतैर्वातैर्मन्दायं मंदायमिति–मन्दकं २ मन्दं मन्दमित्यर्थः, 'एज्जमानानि' २ 'भृशाभीक्ष्णाविच्छेदे द्विः प्राक्तमवादे'रित्यविच्छेदे द्विर्वचनं यथा पचति पचतीत्यर्थः, तथा व्येज्यमानानि, कम्पनवशादेव घर्षः, इतस्ततो मनाक् चलनेन प्रलम्बमानानि २, ततः परस्परसम्पर्कवशतः 'पझंझमाणा २' इति शब्दायमानानि २, शेषं सुगमम् । तए णं से आभियोगे पालए देवे तस्स सीहासणस्स अवरुत्तरेणं उत्तरेणं उत्तरपुरत्थिमेणं एत्थ णं सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो चउरासीइए सामाणियसाहस्सीणं चउरासीइसहस्साइं भद्दासणाइं विउव्वइ, तस्स णं सीहासणस्स

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥१८१॥

पुरत्थिमेणं अट्ठण्हं अग्गमहिसीणं अट्ठ भद्दासणाइं विउव्वइ, तस्स णं सीहासणस्स दाहिणपुरत्थिमेणं एत्थ णं सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो अब्भिंतरपरिसाए दुवालसण्हं देवसाहस्सीणं दुवालस भद्दासणसाहस्सीतो विउव्वइ, तस्स णं सीहासणस्स दाहिणेणं एत्थ णं सक्कस्स मज्झिमपरिसाए चउद्दसण्हं देवसाहस्सीणं चउद्दस भद्दासणसाहस्सीतो विउव्वइ, तस्स णं सीहासणस्स दाहिणपच्चत्थिमेणं सक्कस्स बाहिरपरिसाए सोलसण्हं देवसाहस्सीणं सोलस भद्दासणसाहस्सीतो विउव्वइ, तस्स णं सीहासणस्स पच्चत्थिमेणं सत्तण्हं अणियाहिवईणं सत्त भद्दासणे विउव्वइ, तस्स णं सीहासणस्स चउद्दिसिं एत्थ णं सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो चउण्हं चउरासीणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं चत्तारि चउरासीतो भद्दासणसाहस्सीतो विउव्वइ, तंजहा–पुरत्थिमेणं चउरासीइ भद्दासणसाहस्सीतो विउव्वइ, दाहिणेणं चउरासीइ भद्दासणसाहस्सीओ विउव्वइ, पच्चत्थिमेणं चउरासीइं भद्दासणसाहस्सीतो विउव्वइ, उत्तरेणं चउरासीइ भद्दासणसाहस्सीतो विउव्वइ, तस्स णं दिव्वस्स जाणविमाणस्स इमे एयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, से जहा नामए अचिरोग्गयस्स वा हेमंतियबालसूरियस्स खाइलिंगालाण वा रत्तिं पज्जलियाणं जासुमणवणस्स वा किसुयवणस्स वा परिजायवणस्स वा सव्वतो समंता संकुसुमियस्स, भवे एयारूवे ?, नो इणट्ठे समट्ठे, तस्स णं दिव्वस्स जाणविमाणस्स इत्तो इट्ठतरागे चेव कंततरागे चेव मणुण्णतरागे चेव मणामतरागे चेव वण्णे पण्णत्ते, गंधो फासो य जहा मणीणं, ततो तेण से आभियोगे पालए देवे तं दिव्वं जाणविमाणं विउव्वित्ता जेणेव सक्के देविंदे देवराया तेणेव उवागच्छइ उवागच्छेत्ता सक्कं देविंदं देवरायं करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु जएणं विजएणं वद्धावेति वद्धावेत्ता तमाणत्तियं पच्च-

पुष्पकविमानरचना

॥१८१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

ण्पिणइ । तए णं से सक्के देविंदे देवराया आभिओगस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा हट्ठतुट्ठ जाव विसप्पमाणहियए दिव्वं जिणिंदाभिगमणजोग्गं उत्तरवेउव्वियरूवं वेउव्विता अट्ठहिं अग्गमहिसीहिं सपरिवाराहिं दोहिं अणीएहिं, तंजहा–नट्टाणीएणं गंधव्वाणीएण य, सद्धिं संपरिवुडे तं दिव्वं जाणविमाणं अणुपयाहिणीकरेमाणे पुरत्थिमिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवेणं दुरूहइ दुरूहित्ता जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सीहासणवरगते पुरत्थाभिमुहे सन्निसन्ने, तते णं तस्स सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो चउरासीई सामाणियसाहस्सीतो तं दिव्वं जाणविमाणं अणुपयाहिणीकरेमाणा उत्तरिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवेणं दुरूहंति दुरूहित्ता पत्तेयं २ पुव्वन्नत्थेसु भद्दासणेसु निसीयंति, अवसेसा देवा देवीतो य तं दिव्वं जाणविमाणं अणुपयाहिणीकरेमाणा दाहिणेणं तिसोवाणपडिरूवेणं दुरूहंति, दुरूहित्ता पत्तेयं पत्तेयं पुव्वन्नत्थेसु भद्दासणेसु निसीयंति, तए णं तस्स सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो तं दिव्वं जाणविमाणं दुरूढस्स समाणस्स अट्ठट्ठमंगलगा पुरतो अहाणुपुव्वीए संपत्थिया, तंजहा–सोत्थियसिरिवच्छजाव दप्पणो, तयणंतरं च णं पुण्णकलसभिंगारदिव्वायवत्तपडागा सचामरा दंसणरइया आलोयदरिसणिज्जा वाउद्धुयविजयवेजयंती य ऊसिया गयणतलमणुलिहंती पुरतो अहाणुपुव्वीए संपत्थिया, अस्या व्याख्या–पूर्णकलशभृङ्गारदिव्यातपत्रपताकाः सचामराः, कथम्भूता इत्याह—दर्शनरतिकाः, पुनः किंविशिष्टा इत्याह–आलोके दर्शनीया–द्रष्टुं योग्या न पुनरत्युच्चा इत्यालोकदर्शनीयाः, तथा वातोद्धूता विजयसूचिका वैजयन्ती विजयवैजयन्ती च उत्सृता–ऊर्ध्वीकृता गगनतलमनुलिखन्ती– अभिलङ्घयन्ती पुरतो यथानुपूर्व्या सम्प्रस्थिता। तयणंतरं च णं वेरुलियभिसंतविमलदंडं पलंबकोरंटमल्लदामोवसोभियं चंदमंडलनिभं समूसियं विमलमायवत्तं पवरसी-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हासणं च मणिरयणभत्तिचित्तं सपायपीढं पाउयाजोगसमाउत्तं बहुकिंकरामरपरिग्गहियं पुरतो अहाणुपुव्वीए संपत्थियं, एतत्पाठसिद्धं। तयणंतरं च णं वइरामयवट्टलट्ठसंठियसिलिट्ठपरिघट्ठ(मट्ठ)सुपइट्ठिए अणेग[प]वरपंचवण्णकुडभीसहस्सपरिमंडियाभिरामे वाउद्धुयविजयवेजयंतीपडागाछत्तातिच्छत्तकलिते तुंगे गगणतलमभिलंघमाणसिहरे जोयणसहस्समूसिए महइमहालए महिंदज्झए पुरतो अहाणुपुव्वीए संपत्थिए, अत्र वज्रमयो—वज्ररत्नात्मको वृत्तो—वर्तुलः लष्टसंस्थितो—मनोज्ञसंस्थानः श्लिष्टः—सुसंहतावयवः परिघृष्ट इव खरशानया पाषाणप्रतिमेव परिघृष्टः मृष्ट इव—मसृणीकृत इव सुकुमारशानया पाषाणप्रतिमावत् मृष्टः सुप्रतिष्ठितो—यत्र मुक्तस्तत्र सुनिश्चलः, तत एषां पदानां पदद्वयपदद्वयमीलनेन विशेषणसमासः, यथाऽनेकैर्वरैः—प्रधानैः पञ्चवर्णैः कुडभीसहस्रैः—लघुपताकासहस्रैः परिमण्डितः सन् अभिरामोऽनेकवरपञ्चवर्णकुडभीसहस्रपरिमण्डिताभिरामः, तथा वातोद्धूता विजयसूचकवैजयन्तीरूपाः पताकाश्छत्रातिछत्राणि च तैः कलितः, शेषं सुगमं। तयणंतरं च णं सुरूवनेवत्थहवपरियच्छिया सुसज्जा सबालंकारविभूसिया महया भडचडगरपहकरेणं पंच अणीया पंच अणीयाहिवइणो पुरतो संपत्थिया, अत्र सुरूपं नेपथ्यं हवं—शीघ्रं परिकक्षितं—परिगृहीतं यैस्ते तथा, सुष्ठु—अतिशयेन सज्जाः—स्वसामग्रीयुक्ततया प्रगुणीभूता महता भटचटकरपहकरेण—चटकरप्रधानभटवृन्देन, शेषं प्रतीतम्। तए णं आभियोगा देवा देवीतो य सएहिं सएहिं रूवेहिं सएहिं सएहिं विहवेहिं सएहिं २ निज्जोगेहिं पुरतो अहाणुपुव्वीए संपत्थिया, तयणंतरं च णं बहवे सोहम्मवासिणो देवा य देवीतो य सबड्ढीए सबजुईए जाव संखपणवपडहभेरिझल्लरिजावनाइयरवेणं सक्कं देविंदं देवरायं पुरतो पासतो मग्गतो अणुगच्छंति, तते णं से सक्के देविंदे देवराया पंचाणीयपरिक्खि-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

तेणं वइरामयलट्ठसंठियजावजोयणसहस्समूसिएण महइमहालएणं महिंदज्झएणं पुरतो पकड्ढिज्जमाणेणं पकड्ढिज्जमाणेणं चउरासीए सामाणियसाहस्सीहिं जाव चउहिं चउरासीहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं अन्नेहिं बहूहिं सोहम्मकप्पवासीहिं वेमाणिएहिं देवेहिं देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे सव्वड्ढीए सव्वजुईए जाव संखपणवजावनादितरवेणं सोहम्मकप्पस्स मज्झं-मज्झेणं तं दिवं देवड्ढिं दिवं देवजुइं दिवं देवाणुभावं उवदंसेमाणे पडिजागरेमाणे जेणेव सोहम्मस्स कप्पस्स उत्तरिल्ले निज्जा-णमग्गे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता जोयणसयसाहस्सिएहिं विग्गहेहिं ओवयमाणे ताए उक्किट्ठाए जाव दिवाए देव-गतीए तिरियमसंखेज्जाणं दीवसमुद्दाणं मज्झंमज्झेणं विइवयमाणे विइवयमाणे जेणेव नंदीसरे दीवे जेणेव पुरत्थिमिल्ले रइकरपव्वए तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता तं दिवं देवड्ढिं जाव दिवं देवाणुभावं पडिसाहरेमाणे जेणेव जंबुद्दीवे दीवे जेणेव भारहे वासे जेणेव भगवतो आदितित्थगरस्स जम्मणभवणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता भगवतो आदितित्थयरस्स जम्मणभवणं तेणं दिव्वेणं जाणविमाणेणं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ, करेत्ता भगवतो आदितित्थगरस्स जम्मण-भवणस्स उत्तरपुरत्थिमिल्ले दिसीभागे चउरंगुलमसंपत्तं धरणितलंसि तं दिवं जाणविमाणं ठवेइ ठवित्ता अग्गमहिसीहिं दोहिं य अणीएहिं, तंजहा–गंधव्वाणीएण नट्टाणीएण य, सद्धिं संपरिवुडे ततो दिव्वातो जाणविमाणातो पुरत्थिमिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवेणं पच्चोरुहइ, तए णं सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो चउरासीए सामाणियसाहस्सीतो ततो दिव्वातो जाणविमाणातो उत्तरिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवेणं पच्चोरुहंति, अवसेसा देवा य देवीतो य ततो दिव्वातो जाणविमाणातो दाहिणिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवेणं पच्चोरुहंति, ततेणं सक्के देविंदे देवराया चउरासीए सामाणियसाहस्सीहिं जाव चउहिं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चउरासीहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं अन्नेहिं बहूहिं सोहम्मकप्पवासीहिं वेमाणिएहिं देवेहिं देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे सव्वड्ढीए सव्वजुईए जाव संखपणवपडहभेरि जाव नादितरवेणं जेणेव भयवं तित्थयरे तित्थगरमाया य तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता आलोए पणामं करेइ करेत्ता भयवं तित्थयरं तित्थयरमायरं च तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करेत्ता करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी–नमोऽत्थु ते रयणकुच्छिधारिए !, एवं जहा दिसाकुमारीतो जाव धन्नासि सपुण्णासि तं कयत्थे !, अहण्णं देवाणुप्पिए ! सक्के नाम देविंदे देवराया भगवतो तित्थगरस्स जम्मणमहिमं करेस्सामि, तं णं तुब्भेहिं न भाइयव्वंतिकट्टु ओसोयणिं दलइ २ त्ता तित्थयरपडिरूवगं विउव्वइ, विउव्वित्ता तित्थयरमाऊए पासे ठवेइ, ठवेत्ता पंच सक्के विउव्वइ, एगे सक्के भगवं आदितित्थयरं करयलपुडेणं गेण्हइ, एगे सक्के पिट्ठतो आयवत्तं धरेइ, दुवे सक्का उभतो पासिं चामरुक्खेवं करेंति, एगे सक्के पुरतो वज्जपाणी वहइ, 'गहियजिणिंदो एक्को दोहि उ पासेहिं चामरा गहिया । धवलायवत्तकलितो एक्को एक्को य वज्जधरो ॥१॥ तए णं से सक्के देविंदे देवराया अण्णेहि य बहूहिं भवणवइवाणमंतरजोइसवेमाणिएहिं देवेहिं देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे सव्वड्ढीए सव्वजुईए जाव संखपणवपडह जाव नादितरवेणं ताए उक्किट्ठाए जाव दिव्वाए देवगईए जेणेव मंदरे पव्वए जेणेव पंडगवणे जेणेव अभिसेयसिला जेणेव आभिसेए सीहासणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे संनिसन्ने । तेणं कालेणं तेणं समएणं ईसाणे देविंदे देवराया सूलपाणी। वसभवाहणे उत्तरड्ढलोगाहिवई अट्ठावीसविमाणसयसहस्साधिवई अरयंबरवत्थधरे एवं जहा सक्के, नवरं इमं नाणत्तं–महाघोसा घंटा लहुपरक्कमे पायत्ताणीयाहिवई, पुप्फतो विमाणकारी, दक्खिणा निज्जा-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

णभूमी, उत्तरपुरत्थिमिल्ले रइकरगपव्वते, मंदरे समोसरितो जाव पज्जुवासइ, एवमवसेसावि इंदा भाणियव्वा जाव अच्चुतो, इमं नाणत्तं–चउरासीती १ असीती २ बावत्तरी य ३ सत्तरी य ४ सट्ठी ५ पण्णा ६ चत्तालीसा ७ तीसा ८ वीसा ९ दस सहस्सा १० एते सामाणिया, बत्तीस अट्ठावीसा बारस अट्ठ चउरो सयसहस्सा, पण्णा चत्तालीसा छच्च सहस्सा सहस्सारे, आणयपाणयकप्पे चत्तारि सया, आरणच्चुए तिण्णि सया, एए विमाणा, इमे जाणविमाणकारी–पालए १ पुप्फए २ सोमणसे३ सिरिवच्छे ४ नंदियावत्ते ५ कामगमे ६ पीइगमे ७ मणोरमे ८ विमले ९ सव्वतोभद्दे १०, सोहम्मगाणं सणंकुमाराणं बंभलोगाणं महासुक्काणं आणय[आरण]गाणं सुघोसा घंटा हरिणेगमेसी पायत्ताणीयाहिवती उत्तरिल्ला निज्जाणभूमी दाहिणपुरत्थिमिल्ले रइकरगपव्वते, ईसाणगाणं माहिंदलंतगसहस्सार[पाणय]अच्चुयइंदाणं महाघोसा घंटा लहुपरक्कमे पायत्ताणीयाधिवती दक्खिणिल्ले निज्जाणमग्गे उत्तरपुरत्थिमिल्ले रतिकरगपव्वते, सक्कस्स अब्भिंतरपरिसाए दुवालस देवसहस्सा मज्झिमपरिसाए चोद्दस देवसहस्सा बाहिरपरिसाए सोलस देवसहस्सा, ईसाणस्स अब्भिंतरपरिसाए दस देवसहस्सा मज्झिमपरिसाए बारस देवसहस्सा बाहिरिआए परिसाए चोद्दस देवसहस्सा, सणंकुमारस्स अब्भिंतरपरिसाए अट्ठ देवसहस्सा मज्झिमिआए परिसाए दस देवसहस्सा बाहिरिआए परिसाए बारस देवसहस्सा, माहिंदस्स देविंदस्स अब्भिंतरिआए परिसाए छ देवसहस्सा मज्झिमियाए परिसाए अट्ठ देवसहस्सा बाहिरपरिसाए दस देवसहस्सा, बंभलोगस्स अब्भिंतरियाए परिसाए चत्तारि देवसहस्सा मज्झिमपरिसाए छ देवसहस्सा बाहिरपरिसाए अट्ठ देवसहस्सा, लंतगस्स अब्भिंतरपरिसाए दो देवसहस्सा मज्झिमपरिसाए चत्तारि देवसहस्सा बाहिरपरिसाए छ देवसहस्सा, महासुक्कस्स अब्भिं-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥१८४॥

तरपरिसाए एगा देवसाहस्सी मज्झिमपरिसाए दो देवसाहस्सीतो बाहिरपरिसाए चत्तारि देवसाहस्सीतो, सहस्सारस्स अब्भिंतरपरिसाए पंच देवसया मज्झिमपरिसाए एगा देवसाहस्सी बाहिरपरिसाए दो देवसाहस्सीतो, आणयपाणयेंदस्स अब्भिंतरपरिसाए अड्ढाइज्जा देवसया मज्झिमपरिसाए पंच देवसया बाहिरपरिसाए एगा देवसाहस्सी, आरणअच्चुइंदस्स अब्भिंतरपरिसाए पणवीसं देवसयं मज्झिमपरिसाए अड्ढाइज्जा देवसया बाहिरपरिसाए पंच देवसया। आयरक्खा सव्वेसिं सामाणियचउग्गुणा, जाणविमाणा सव्वेसिं जोयणसयसहस्सविच्छिण्णा उच्चत्तेण सविमाणप्पमाणा, महिंदज्झया सव्वेसिं जोयणसाहस्सिया, सक्कवज्जा मंदरे समोयरंति जाव पज्जुवासंति। तेणं कालेणं तेणं समएणं चमरे असुरिंदे असुरराया चमरचंचाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए चमरंसि सीहासणंसि चउसट्ठीए सामाणियसाहस्सीहिं तायत्तीसाए तायत्तीसगेहिं चउहिं लोगपालेहिं पंचहिं अग्गमहिसीहिं सपरिवाराहिं तीहिं परिसाहिं सत्तहिं अणीएहिं सत्तहिं अणीआहिवईहिं चउहिं चउसट्ठीहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं अन्नेहि य चमरचंचारायहाणिवत्थव्वेहिं बहूहिं असुरकुमारेहिं देवेहिं देवीहि य एवं जहा सक्के, नवरं इमं नाणत्तं– दुमो पायत्ताणीयाहिवई ओघस्सरा घंटा विमाणं पण्णासं जोयणसहस्साइं महिंदज्झओ पंचजोयणसया विमाणकारी आभियोगे देवे, अवसिट्ठं तं चेव जाव मंदरे समोसरइ। तेणं कालेणं तेणं समएणं बली असुरिंदे असुरराया बलिचंचाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए वलिंसि सीहासणंसि सट्ठीए सामाणियसाहस्सीहिं तायत्तीसाए तायत्तीसगेहिं चउहिं लोगपालेहिं पंचहिं अग्गमहिसीहिं सपरिवाराहिं तीहिं परिसाहिं सत्तहिं अणिएहिं सत्तहिं अणियाहिवईहिं चउहिं सट्ठीहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं, सेसं जहा चमरस्स, नवरं महादुमो पायत्ताणीयाहिवई महा-

अच्युतादिपरिवारादि

॥१८४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओघस्सरा घंटा, सेसं तं चेव मंदरे समोसरइ, पज्जुवासइ । तेणं कालेणं तेणं समएणं धरणे नागिंदे नागराया तहेव नाणत्तं छ सामाणियसाहस्सीते छ अग्गमहिसीतो चउग्गुणा आयरक्खा मेघस्सरा घंटा भद्दसेणो पायत्ताणीयाहिवई विमाणं पणवीसं जोयणसहस्साइं महिंदज्झतो अड्ढाइज्जाइं सयाइं, एवं असुरिंदवज्जियाणं सवेसिं भवणवासिइंदाणं, नवरं इमं नाणत्तं– असुराणं ओघस्सरा घंटा नागाणं मेघस्सरा सुवण्णाणं हंसस्सरा विज्जूणं कोंचस्सरा अग्गीणं मंजुस्सरा दिसाणं मंजुघोसा उयहीणं सुसरा दीवाणं मधुरसरा वाऊणं मंदस्सरा थणियाणं नंदिघोसा, तथा–चउसट्ठी सट्ठी खलु छच्च सहस्सा उ असुरवज्जाणं, दाहिणिल्लाणं पायत्ताणियाहिवई भद्दसेणो, उत्तरिल्लाणं पायत्ताणीयाहिवई दक्खो, चमरस्स अब्भिंतरपरिसाए चउवीसं देवसहस्सा मज्झिमियाए अट्ठावीसं देवसहस्सा बाहिरियाए बत्तीसं देवसहस्सा, बलिस्स अब्भिंतरियाए परिसाए वीसं देवसहस्सा मज्झिमियाए चउवीसं देवसहस्सा बाहिरियाए अट्ठवीसं देवसहस्सा, धरणस्स अब्भिंतरियाए परिसाए सट्ठी देवसहस्सा मज्झिमियाए सत्तरिं देवसहस्सा बहिरियाए असीइ देवसहस्सा, भूयाणंदस्स अब्भिंतरियाए परिसाए पण्णासं देवसहस्सा मज्झिमियाए सट्ठी देवसहस्सा बाहिरियाए सत्तरी देवसहस्सा, एवं जहा धरणस्स तहा सवेसिं दाहिणिल्लिदाणं, जहा भूयाणंदस्स तहा सवेसिं उत्तरल्लिदाणं । तेणं कालेणं तेणं समएणं काले नामं पिसाइंदे पिसायराया चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं चउहिं अग्गमहिसीहिं सपरिवाराहिं तीहिं परिसाहिं सत्तहिं अणीएहिं सत्तहिं अणियाहिवईहिं सोलसहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं तं चेव एवं सवेसिं, नवरं महिंदज्झया पणुवीसं जोयणसया, घंटा दाहिणाणं मंजुस्सरा उत्तरिल्लाणं मंजुघोसा, पायत्ताणीयाहिवई विमाणकारी य आभियोगा देवा, सवेसिं अब्भिंतरपरि-

Jain Education Intern For Private & Personal Use Only jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उपोद्घात-निर्युक्तिः

॥ १८५ ॥

साए अट्ठ देवसहस्सा मज्झिमपरिसाए दस देवसहस्सा बाहिरियाए दुवालस देवसहस्सा, सव्वे मंदरे समोसरंति, जाव पज्जुवासंति । तेणं कालेणं तेणं समएणं जोइसिंदा जोइसरायाणो पत्तेयं पत्तेयं चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं चउहिं अग्गमहिसीहिं तीहिं परिसाहिं सत्तहिं अणिएहिं सत्तहिं अणियाहिवईहिं सोलसहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं एवं जहा वाणमंतरा एवं चंदसूराविं, नवरं दाहिणिल्लाणं चंदसूराणं सुसराओ घंटाओ, उत्तरिल्लाणं सूसरनिघोसाओ घंटाओ, परिसापरिमाणं जहा वाणमंतराणं, सव्वे मंदरे समोसरंति जाव पज्जुवासंति । तेणं कालेणं तेणं समएणं अच्चुए देविंदे देवराया महं देवाहिवे आभियोगं देवं सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो ! महत्थं महग्घं महरिहं विउलं तित्थयराभिसेयं उवट्ठवेह, तए णं ते हट्ठतुट्ठजाववि णएणं पडिसुणित्ता उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमंति अवक्कमित्ता वउव्वियसमुग्घाएणं समोहणइ समोहणित्ता संखिज्जाइं जोयणाइं दंडं निसरइ तंजहा—रयणाणं वयराणं जाव रिट्ठाणं, अहावायरे पोग्गले परिसाडंति परिसाडित्ता अहासुहुमे पोग्गले परियायंति परियायित्ता दोच्चंपि वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणंति समोहणित्ता अट्ठसहस्सं सुवण्णमयाणं कलसाणं १, अट्ठसहस्सं रुप्पमयाणं कलसाणं २ अट्ठसहस्सं मणिमयाणं कलसाणं ३ अट्ठसहस्सं सुवण्णरुप्पमयाणं कलसाणं ४ अट्ठसहस्सं सुवण्णमणिमयाणं कलसाणं ५ अट्ठसहस्सं रुप्पमणिमयाणं कलसाणं ६ अट्ठसहस्सं सुवण्णरुप्पमणिमयाणं कलसाणं ७ अट्ठसहस्सं भोमेज्जाणं कलसाणं ८, अट्ठसहस्सं चंदणकलसाणं ९ अट्ठसहस्सं भिंगाराणं १० अट्ठसहस्सं आयंसाणं ११ अट्ठसहस्सं थालाणं १२ अट्ठसहस्सं पाईणं १३ अट्ठसहस्सं सुपइट्ठाणं १४ अट्ठसहस्सं रयणकरंडगाणं १५ अट्ठसहस्सं वातकरगाणं १६ वातकरका नाम बहिश्चित्रिता उपरि गवच्छिता मध्ये जलशून्याः करकाः, अट्ठस-

अभिषेक-सामग्र्या-नयनं

॥ १८५ ॥

Jain Education Inte For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** जिन-जन्माभिषेक्स्य अभिषेक-सामग्रे: वर्णनं

हस्सं पुप्फचंगेरीणं १७ अट्ठसहस्सं मल्लचंगेरीणं १८ अट्ठसहस्सं चुण्णचंगेरीणं १९ अट्ठसहस्सं वत्थचंगेरीणं २० अट्ठसहस्सं आभरणचंगेरीणं २१ अट्ठसहस्सं लोमहत्थगचंगेरीणं २२ अट्ठसहस्सं पुप्फपडलगाणं २३ एवं जाव अट्ठसहस्सं लोमहत्थगपडलगाणं २४ अट्ठसहस्सं सीहासणाणं २५ अट्ठसहस्सं छत्ताणं २६ अट्ठसहस्सं चामरगाणं २७ अट्ठसहस्सं तेल्लसमुग्गाणं २८ एवं जाव अट्ठसहस्सं अंजणसमुग्गाणं, एत्थ संगहणिगाहा—"तेले कोट्ठ समुग्गे पत्ते चोए य तगर एला य। हरियाले हिंगुलए मणोसिला अंजणसमुग्गा ॥ १ ॥ अट्ठसहस्सं धूवकडुच्छुयाणं विउव्वइ, विउव्वित्ता साभावियवेउव्विए य कलसे जाव धूवकडुच्छुए गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव खीरोदे समुद्दे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता खीरोदगं गेण्हंति गेण्हेत्ता जाइं तत्थ उप्पलाइं पउमाइं सुभगाइं सोगंधियाइं पोंडरीयाइं महापोंडरीयाइं सयपत्ताइं सहस्सपत्ताइं ताइं गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव पुक्खरोदे समुद्दे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता पुक्खरोदगं गेण्हंति गेण्हेत्ता जाइं तत्थ उप्पलाइं जाव सहस्सपत्ताइं ताइं गिण्हंति गिण्हित्ता जेणेव समयखेत्ते जेणेव भरहेरवयवासाइं जेणेव मागहवरदामप्पभासाइं तित्थाइं तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता तित्थोदगं गेण्हंति तित्थोदगं गेण्हित्ता तित्थमट्टियं गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव गंगासिंधुरत्तारत्तवतीतो य महानदीतो तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता सलिलोदगं गेण्हंति, नद्युदकं गृह्णन्तीत्यर्थः, गेण्हेत्ता उभयोतडमट्टियं गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव चुल्लहिमवंतसिहरी तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता सव्वतूवरे सव्वपुप्फे सव्वगंधे सव्वमल्ले सव्वोसहिसिद्धत्थए य गेण्हंति गिण्हित्ता जेणेव पउमद्दहपुंडरीयद्दहातो तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता दहोदयं गेण्हंति २ जाइं तत्थ उप्पलाइं जाव जाइं तत्थ सहस्सपत्ताइं ताइं गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव हेम-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥ १८६ ॥

वएरण्णवयाइं वासाइं जेणेव रोहियारोहियंससुवण्णकूलरुप्पकूलातो महानदीतो तेणेव उवागच्छंति २ सलिलोदगं गेण्हंति २ उभतोतडमट्टियं गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव सद्दावइवियडावइ वट्टवेयड्ढा तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता सव्वतूवरे सव्वपुप्फे जाव सव्वोसहिसिद्धत्थए गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव महाहिमवंतरुप्पिवासहरपव्वया तेणेव उवागच्छंति २ सव्वतूवरे जाव सव्वोसहिसिद्धत्थए गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव महापउमद्दहमहापोंडरीयद्दहा तेणेव उवागच्छंति २ दहोदगं गेण्हंति गेण्हेत्ता जाइं तत्थ उप्पलाइं जाव सहस्सपत्ताइं ताइं गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव हरिवासगरम्मगवासाइं जेणेव हरिहरिकांतानरनारीकंतातो महानदीतो तेणेव उवागच्छंति २ सलिलोदगं गेण्हंति २ उभयतडमट्टियं गेण्हंति गिण्हेत्ता जेणेव गंधावइमालवंतपरियाता वट्टवेयड्ढा तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता सव्वतूवरे जाव सव्वोसहिसिद्धत्थए य गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव निसढनीलवंतवासहरपव्वया तेणेव उवागच्छंति २ सव्वतूवरे जाव सव्वोसहिसिद्धत्थए गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव तिगिच्छिद्दहकेसरिद्दहा तेणेव उवागच्छंति २ दहोदगं गेण्हंति २ जाइं तत्थ उप्पलाइं जाव सहस्सपत्ताइं ताइं गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव पुव्वविदेहअवरविदेहवासाइं जेणेव सीयासीतोदातो महानदीओ तेणेव उवागच्छंति २ सलिलोदगं गेण्हंति २ उभयोतडमट्टियं गेण्हंति गेण्हित्ता जेणेव सव्वचक्कवट्टिविजया जेणेव सव्वमागहवरदामपभासाइं तित्थाइं तेणेव उवागच्छंति २ तित्थोदगं गिण्हंति २ तित्थमट्टियं गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव सव्ववक्खारपव्वया तेणेव उवागच्छंति २ सव्वतूवरे जाव सव्वोसहिसिद्धत्थए गेण्हंति गिण्हित्ता जेणेव सव्वातो अंतरनदीतो तेणेव उवागच्छंति २ सलिलोदगं गेण्हंति २ उभयोतडमट्टियं गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव मंदरे पव्वते जेणेव भद्दसालवणे तेणेव उवागच्छंति २ सव्वतूवरे जाव सव्वोसहिसिद्धत्थए य

अभिषेक-सामग्र्या-नयनं ॥ १८६ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव नंदणवणे तेणेव उवागच्छंति २ सव्वतूवरे जाव सव्वोसहिसिद्धत्थए सरसं च गोसीसचंदणं गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव सोमणसवणे तेणेव उवागच्छंति २ सव्वतूवरे जाव सव्वोसहिसिद्धत्थए सरसं च गोसीसचंदणं दिव्वं च सुमणोदामं गेण्हंति गेण्हेत्ता जेणेव पंडगवणे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता सव्वतूवरे जाव सव्वोसहिसिद्धत्थए सरसं गोसीसचंदणं दिव्वं च सुमणदामं दद्दरमलए य सुगंधगंधिए गंधे गेण्हंति, इह दर्दरः—चीवरावनद्धं भाजनमुखं तेन गालितं तत्र पक्वं वा यत् मलयोद्भवतया प्रसिद्धत्वान्मलयं—श्रीखण्डं येषु तान् सुगन्धगन्धिकान्—परमगन्धिकेन गन्धकान् गन्धान् गृह्णन्ति, गेण्हेत्ता एगतो मेलंति, मेलित्ता जेणेव सामी आइतित्थयरे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता महत्थं महग्घं महरिहं विउलं तित्थयराभिसेयं उवणेंति । तए णं से अच्चुए देविंदे देवराया दसहिं सामाणियसाहस्सीहिं तायत्तीसाए तायत्तीसगेहिं चउहिं लोगपालेहिं तीहिं परिसाहिं सत्तहिं अणीएहिं सत्तहिं अणियाहिवईहिं चत्तालीसाए आयरक्खदेवसाहस्सीहिं अन्नेहि य बहूहिं आरणअच्चुयकप्पवासीहिं वेमाणिएहिं देवेहिं सद्धिं संपरिवुडे तेहिं साभाविएहिं वेउव्विएहिं पवरकमलपइट्ठाणेहिं सुरभिवरवारिपडिपुण्णेहिं चंदणकयचच्चेहिं आविद्धकंठगुणेहिं पउमुप्पलपिहाणेहिं अट्ठसहस्सेणं सोवण्णियाणं कलसाणं १ एवं रुप्पमयाणं २ मणिमयाणं ३ सुवण्णरुप्पमयाणं ४ सुवण्णमणिमयाणं ५ रुप्पमणिमयाणं ६ सुवण्णरुप्पमणिमयाणं ७ अट्ठसहस्सेणं भोमेज्जाणं कलसाणं ८ सव्वोदएहिं सव्वमट्टियाहिं सव्वतूवरेहिं सव्वपुप्फेहिं सव्वगंधेहिं सव्वमल्लेहिं सव्वोसहिसिद्धत्थएहिं सविड्ढीए सव्वजुईए सव्वबलेणं सव्वसमुदएणं सव्वायरेणं सव्वविभूईए सव्वसंभमेण सव्वपुप्फगंधमल्लालंकारेणं सव्वतुडियसद्दनिनाएणं महया इड्ढीए महया जुईए महया बलेणं महया समुदएणं महया वरतुडियजम-

Jain Education Internat For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

गसमगपडुप्पवाइयरवेणं संखपणवपडहभेरिझल्लरिखरमुहिहुडुक्कमुइंगदुंदुभिनिग्घोसनाइयरवेणं महया २ तित्थयराभिसेएणं अभिसिंचंति, तए णं सामिस्स भगवतो आदितित्थयरस्स अभिसेयंसि वट्टमाणंसि सबे इंदा छत्तचामरकलसधूवकडुच्छुयपुप्फगंधमल्लालंकारहत्थगया हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिया जाव हरिसवसविसप्पमाणहियया वज्जसूलपाणी पुरतो चिट्ठंति, अन्ने य देवा देवीतो य कलसहत्थगया भिंगारहत्थगया चामरहत्थगया जाव मल्लालंकारहत्थगया पंजलिउडा य पुरतो चिट्ठंति, अप्पेगइया देवा आसियसम्मज्जियोवलित्तं सम्मट्ठरत्थंतरावणवीहियं करेंति, अप्पेगइया देवा मंचातिमंचकलियं करेंति, अप्पेगइया देवा नानाविहरागऊसियज्झयपडागमंडियं करेंति, अप्पेगइया गोसीससरसचंदणदद्दरदिन्नपंचंगुलितलं करेंति, अप्पेगइया उवचियचंदणकलसं करेंति, अप्पेगइया चंदणघडसुकयतोरणपडिदुवारदेसभागं करेंति, अप्पेगइया आसत्तोसत्तविउलवट्टवग्घारियमल्लदामकलावं करेंति, अप्पेगइया पंचवण्णसरससुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलियं करेंति, अप्पेगइया कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामं सुगंधवरगंधगंधियं गंधवट्टिभूयं करेंति, अप्पेगइया हिरण्णवासं वासेंति, अप्पेगइया सुवण्णवासं वासेंति, अप्पेगइया रयणवासं वासेंति, अप्पेगइया वइरवासं वासंति, अप्पेगइया आभरणवासं वासंति, अप्पेगइया पत्तवासं वासंति, अप्पेगइया पुप्फवासं वासंति, अप्पेगइया फलवासं वासेंति, अप्पेगइया वण्णवासं वासेंति, अप्पेगइया चुण्णवासं वासेंति, अप्पेगइया गंधवासं वासेंति, अप्पेगइया हिरण्णविहिं भायंति जाव अप्पेगइया गंधविहिं भायंति, अप्पेगइया वत्थविहिं भायंति, अप्पेगइया दुयं नट्टविहिं उवदंसंति, अप्पेगइया विलंबियं नट्टविधिं उवदंसंति, अप्पेगइया दुयविलंबियं नट्टविधिं उवदंसंति, अप्पेगइया अंचियनट्टविधिं उवदंसंति, अप्पे-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गइया रिभियं नट्टविधिं उवदंसंति, अप्पेगइया अंचियरिभियं नट्टविहिं उवदंसंति, अप्पेगइया आरभडं नट्टविहिं उवदंसंति, अप्पेगइया भसोलं नट्टविधिं उवदंसेंति, अप्पेगइया आरभडभसोलं नट्टविहिं उवदंसेंति, अप्पेगइया उप्पयनिवयं० निव-उप्पयं० संकुचितपसारियं० भंताभंतं नाम नट्टविहिं उवदंसेंति, अप्पेगइया चउविहं वज्जं वायंति, तंजहा–ततं वितततं घणं झुसिरं, अप्पेगइया चउविहं गेयं गायंति, तंजहा–उक्खित्तयं पावत्तयं मउयं रोइयं, अप्पेगइया चउविहं अभिनयं अभिणेंति–दिट्ठंतियं पाडिस्सुयं लोगमज्झवसियं सामंतोवणिवाइयं, अप्पेगइया पीणंति अप्पेगइया तंडवेंति अप्पेगइया लासेंति अप्पेगइया उच्छलंति अप्पेगइया पुच्छलंति अप्पेगइया तिवइं छिंदंति अप्पेगइया हयहेसियं करेंति अप्पेगइया हत्थिगुलुगुलाइयं करेंति अप्पेगइया रहघणघणाइयं करेंति अप्पेगइया हयहेसियं रहघणघणाइयं करेंति अप्पेगइया हत्थिगुलुगुलाइयं रहघणघणाइयं करेंति, अप्पेगइया हयहेसियं हत्थगुलुगुलाइयं रहघणघणाइयं करेंति, अप्पेगइया अप्फोडेंति अप्पेगइया वग्गंति, अप्पेगइया सीहनादं नदंति, अप्पेगइया अप्फोडंति वग्गंति सीहनादं नदंति, अप्पेगइया पायददरं करेंति, अप्पेगइया भूमिचवेडं दलयंति, अप्पेगइया महया महया सद्देण रावंति, अप्पेगइया पायददरगं भूमिचवेडगं महया महया सद्देण रावंति, अप्पेगइया हक्कारेंति अप्पेगइया वोक्कारेंति अप्पेगइया थेक्कारेंति, अप्पेगइया देवा हक्कारेंति वोक्कारेंति थेक्कारेंति, अप्पेगइया ओवयंति अप्पेगइया उप्पयंति अप्पेगइया परिवत्तंति अप्पेगइया ओवयंति उप्पयंति परिवत्तंति, अप्पेगइया गज्जंति अप्पेगइया विज्जुयायंति अप्पेगइया वासं वासेंति, अप्पेगइया गज्जंति विज्जुयायंति वासं वासंति, अप्पेगइया देवुक्कलियं करेंति अप्पेगइया देवकहकहयं करेंति अप्पेगइया देवदुहदुहयं करेंति,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उपोद्घात-निर्युक्ति: ॥१८८॥

अप्पेगइया देवुक्कलियं देवकहक्कहयं देवदुहदुहयं करेंति, अप्पेगइया चेलुक्खेवं करेंति, अप्पेगइया चंदणकलसहत्थगया अप्पेगइया भिंगारहत्थगया, एएणं अभिलावेणं आयंसा थालपाती वायकरगा रयणकरंडगा पुप्फचंगेरी जाव लोमहत्थचंगेरी पुप्फपडलगजावलोमहत्थपडलग सीहासणछत्तचामरतेल्लसमुग्ग जाव अंजणसमुग्गयहत्थगया, अप्पेगइया धूवकडुच्छुयहत्थगया हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिया जाव हरिसवसविसप्पमाणहियया आधावेंति परिधावेंति, तएणं से अच्चुइंदे सपरिवारे सामिं तेणं महया तित्थगराभिसेएणं अभिसिंचइ, अभिसिंचित्ता करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु जएणं-विजएणं वद्धावेइ वद्धावित्ता ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणुण्णाहिं मणामाहिं वग्गूहिं जयजयसद्दं पउंजइ, तए णं तस्स अच्चुयस्स देविंदस्स अभियोगा सुबहुं अलंकारभंडं उवणेंति, तए णं से अच्चुए देविंदे तप्पढमयाए पम्हलसुकुमालयाए सुरभीए गंधकासाईए गायाइं लूहेइ लूहेत्ता सरसेण गोसीसचंदणेणं गायाइं अणुलिंपइ अणुलिंपित्ता नासानीसासवायवोज्झं चक्खुहरं वण्णफरिसजुत्तं हयलालापेलवाइतिरेगं धवलं कणगखचियंतकम्मं देवदूसजुयलं नियंसेइ नियंसित्ता कप्परुक्खगंपिव अलंकियविभूसियं करेइ करेत्ता नट्टविधिं उवदंसेइ, उवदंसित्ता अच्छेहिं सण्हेहिं रययामएहिं अच्छरसातंदुलेहिं भगवतो सामिस्स पुरतो अट्ठट्ठमंगलगे आलिहति, तंजहा—दप्पणभद्दासणवद्धमाणवरकलसमच्छसिरिवच्छा । सोत्थियनंदावत्ता लिहिया अट्ठट्ठमंगलगा ॥ १ ॥ लिहति लिहिऊण करेइ उवयारं, किं तं ?—पाडलिमल्लियचंपकअसोगपुन्नागचूतमंजरिनवमालियाबउलतिलगकणवीरकुंदकुज्जयकोरंटयदमणगवरसुरभिगंधगंधियस्स कयग्गाहगहियकरयलपब्भट्ठविप्पमुक्कस्स कुसुमनिगरस्स जाणुस्सेहपमाणमेत्तं ओहनिकरं करेत्ता चंदप्पभरयणवइरवेरु-

देवकृतं नाट्यादि अलंकारारोपणादि

॥१८८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लियविमलदंडकंचणमणिरयणभत्तिचित्तं कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवगंधुत्तमाणुविद्धं धूमवट्टिं विणिम्मुयन्तं वेरुलियमयं कडुच्छुयं पग्गहित्तु धूवं पयतो दाऊण जिणवरिंदस्स सत्तट्ठ पयाइं ओसरित्ता दसंगुलिं अंजलिं करिय मत्थगंमि पयतो मट्ठसयविसुद्धगंथजुत्तेहिं महावित्तेहिं अपुणरुत्तेहिं अत्थजुत्तेहिं संथुणइ, संथुणित्ता वामं जाणुं अंचेइ अंचेत्ता दाहिणजाणुं धरणितलंसि निवाडेइ, २ करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी–नमोऽत्थु ते सिद्ध बुद्धा ! नीरय समाहिया समण समत्ता समजोगि सल्लगत्तण निब्भय नीरागदोस निम्मम निस्संग निस्सल्ला माणमूसुमूरण गुणरयण सीलसागरा अणंतमप्पमेया भवियधम्मचाउरंतचक्कवट्टी, नमोऽत्थु ते अरहतोत्तिकट्टु वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता नच्चासणे नाइदूरे सुस्सूसमाणे जाव पज्जुवासेइ, अत्र विषमपदव्याख्या—'आसियसंमज्जिए'त्यादि, आसिक्त उदकच्छटया संमार्जितः कचवरशोधनेन उपलिप्त इव गोमयादिना उपलिप्तः स एवोचितो मेरुप्रदेशः, ततो विशेषणसमासः, तथा शुचीनि–पवित्राणि संमृष्टानि कचवरापनयनेन रथ्यान्तराणीव रथ्यान्तराणि आपणवीथी इव आपणवीथयो–रथ्याविशेषाश्च यत्र स शुचिसंमृष्टरथ्यान्तरापणवीथिकस्तं कुर्वन्तीति, अप्येकका देवा सञ्जातिमञ्चकलितं कुर्वन्तीत्यादि सुगमं प्राग्भावितं च यावद् गन्धवट्टिभूयं करेंति, अप्येकका हिरण्यवर्षं वर्षन्ति, हिरण्यवर्षं यथा भवत्येवं वर्षन्ति, हिरण्यवृष्टिं कुर्वन्तीति भावः, एवं सुवर्णरत्नवज्राभरणपत्रपुष्पफलवर्णकचूर्णगन्धवर्षपदान्यपि भावनीयानि, अप्येकका देवा हिरण्यविधिं–हिरण्यरूपं मङ्गलप्रकारं भाजयन्ति–विश्राणयन्ति, शेषदेवेभ्यो ददतीति भावः, एवं सुवर्णरत्नवज्राभरणपत्रपुष्पफलवर्णकचूर्णगन्धवस्त्रभाजनपदान्यपि भाव्यानि, 'अप्पेगइया दुयं नट्टविहिं'मित्यादि, इह द्वात्रिंशन्नाट्यवि-

Jain Education Inter... For Private & Personal Use Only ...www.jainelibrary.org

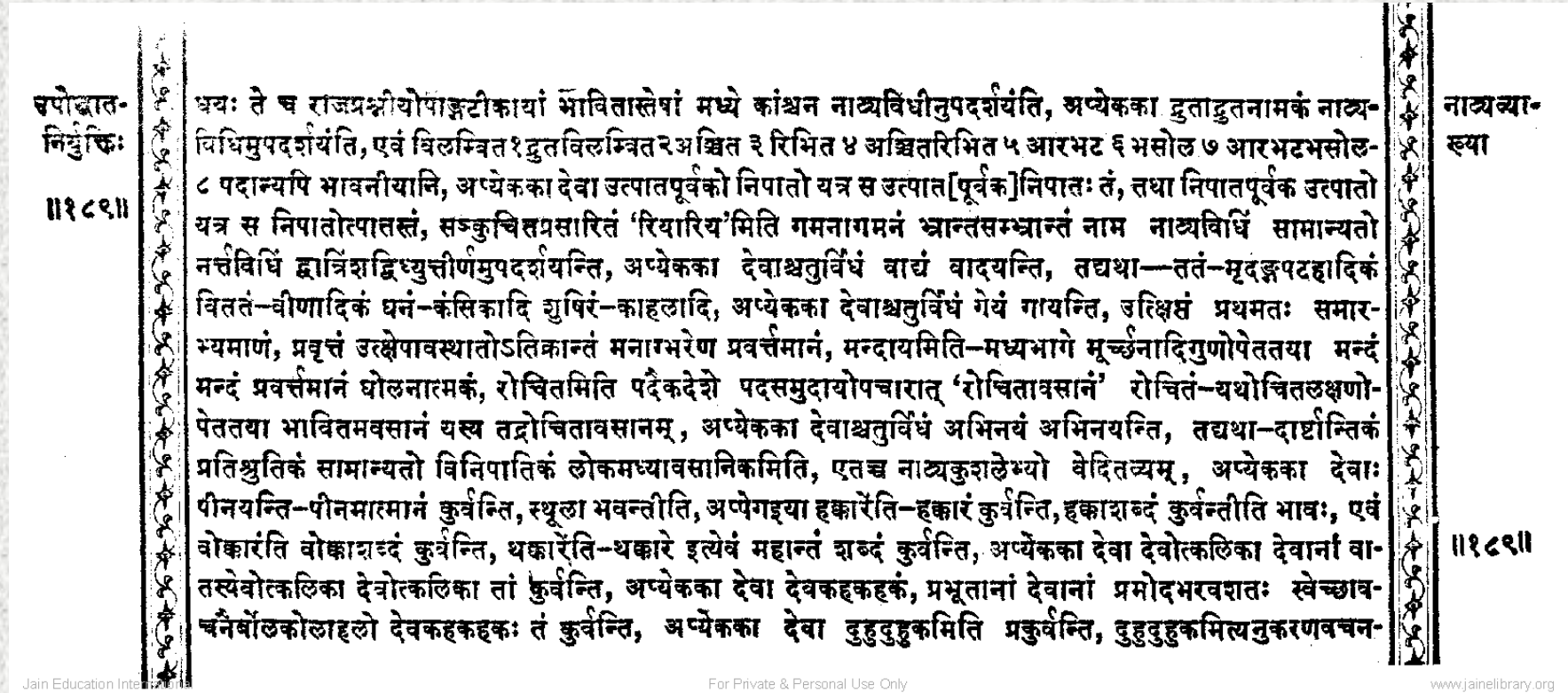

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥१८९॥

भयः ते च राजप्रश्नीयोपाङ्गटीकायां भावितास्तेषां मध्ये कांश्चन नाट्यविधीनुपदर्शयंति, अप्येकका द्रुताद्रुतनामकं नाट्यविधिमुपदर्शयंति, एवं विलम्बित१द्रुतविलम्बित२अञ्चित ३ रिभित ४ अञ्चितरिभित ५ आरभट ६ भसोल ७ आरभटभसोल-८ पदान्यपि भावनीयानि, अप्येकका देवा उत्पातपूर्वको निपातो यत्र स उत्पात[पूर्वक]निपातः तं, तथा निपातपूर्वक उत्पातो यत्र स निपातोत्पातस्तं, सङ्कुचितप्रसारितं 'रियारिय'मिति गमनागमनं भ्रान्तसम्भ्रान्तं नाम नाट्यविधिं सामान्यतो नर्त्तविधिं द्वात्रिंशद्विध्युत्तीर्णमुपदर्शयन्ति, अप्येकका देवाश्चतुर्विधं वाद्यं वादयन्ति, तद्यथा—ततं–मृदङ्गपटहादिकं विततं–वीणादिकं घनं–कंसिकादि शुषिरं–काहलादि, अप्येकका देवाश्चतुर्विधं गेयं गायन्ति, उत्क्षिप्तं प्रथमतः समार-भ्यमाणं, प्रवृत्तं उत्क्षेपावस्थातोऽतिक्रान्तं मनाग्भरेण प्रवर्त्तमानं, मन्दायमिति–मध्यभागे मूर्च्छनादिगुणोपेततया मन्दं मन्दं प्रवर्त्तमानं घोलनात्मकं, रोचितमिति पदैकदेशे पदसमुदायोपचारात् 'रोचितावसानं' रोचितं–यथोचितलक्षणो-पेततया भावितमवसानं यस्य तद्रोचितावसानम्, अप्येकका देवाश्चतुर्विधं अभिनयं अभिनयन्ति, तद्यथा–दार्ष्टान्तिकं प्रतिश्रुतिकं सामान्यतो विनिपातिकं लोकमध्यावसानिकमिति, एतच्च नाट्यकुशलेभ्यो वेदितव्यम्, अप्येकका देवाः पीनयन्ति–पीनमात्मानं कुर्वन्ति, स्थूला भवन्तीति, अप्येगइया हक्कारेंति–हक्कारं कुर्वन्ति, हक्काशब्दं कुर्वन्तीति भावः, एवं वोक्कारंति वोक्काशब्दं कुर्वन्ति, थक्कारेंति–थक्कारे इत्येवं महान्तं शब्दं कुर्वन्ति, अप्येकका देवा देवोत्कलिका देवानां वा-तस्येवोत्कलिका देवोत्कलिका तां कुर्वन्ति, अप्येकका देवा देवकहकहकं, प्रभूतानां देवानां प्रमोदभरवशतः स्वेच्छाव-चनैर्बोलकोलाहलो देवकहकहकः तं कुर्वन्ति, अप्येकका देवा दुहुदुहुकमिति प्रकुर्वन्ति, दुहुदुहुकमित्यनुकरणवचन-

नाट्यव्या-ख्या ॥१८९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

मेतत्, 'नासानीसासवायवोज्झं'ति नासिकानिःश्वासवातवाह्यं, अनेन तस्य श्लक्ष्णतामाह, 'चक्खुहरं'ति चक्षुर्हरति—आत्मवशं नयति विशिष्टरूपातिशयकलितत्वात् चक्षुर्हरं, वर्णस्पर्शयुक्तं अतिशायिना वर्णेनातिशायिना स्पर्शेन च युक्तं, 'हयलालापेलवाइरेग'मिति हयलाला—अश्वलाला तस्या अपि पेलवमतिरेकेण हयलालापेलवातिरेकं, बाहुलकादेवं समासः, विशिष्टमृदुत्वलघुत्वगुणोपेतमिति भावः, तथा कनकेन खचितानि—विच्छुरितानि अन्तकर्म्माणि—अञ्चलयोर्वानलक्षणानि यस्य तत् कनकखचितान्तकर्म, 'अच्छरसातंदुलेहिं'ति अच्छो रसो येषां ते अच्छरसाः, येषु प्रतिबिम्बमपि सङ्क्रान्तमुपलभ्यते इति, ते च ते तन्दुलाश्च अच्छरसतन्दुलाः, सूत्रे पूर्वपदस्य दीर्घान्तता प्राकृतत्वात्, 'पाडलियमल्लिये'त्यादि, पाटलीमल्लिकाचम्पकाशोकपुन्नागचूतमञ्जरीनवमालिकाबकुलतिलककणवीरकुन्दकुब्जकोरण्टकानि प्रतीतानि पत्रप्रधानो दमनकः पत्रदमनकः एवंरूपश्चासौ वरसुरभिगन्धिकश्च पाटलो यावत्पत्रदमनकं वरसुरभिगन्धिकस्तस्य ओघनिकरं—उच्चैस्त्वेन प्रवाहनिकरं, 'चंदप्पभवइरे'त्यादि, चन्द्रप्रभः—चन्द्रकान्तो वज्रवैडूर्ये प्रसिद्धे तेषां तन्मयो विमलो दण्डो यस्य स तथा तं, काञ्चनमणिरत्नैर्भक्त्या—विच्छित्त्या चित्रं यस्य स तथा तं, उत्तमेन कालागुरुप्रवरकुन्दुरुष्कतुरुष्कधूपगन्धेनानुविद्धा कालागुरुप्रवरकुन्दुरुष्कतुरुष्कधूपगन्धोत्तमानुविद्धा, उत्तमशब्दस्य परनिपातः प्राग्वत्, तां धूमवर्त्तिं विनिर्मुञ्चन्तं, 'दसंगुलं अंजलि'मिति अन्योऽन्यान्तरिता दश अङ्गुलयो यत्र सा दशाङ्गुलिस्तामञ्जलिं, 'अट्ठसयविसुद्धगंथजुत्तेहिं' विशुद्धो—निर्म्मलो लक्षणदोषरहित इति भावः यो ग्रन्थः—शब्दसन्दर्भस्तेन युक्तानि विशुद्धग्रन्थयुक्तानि अष्टशतं च तानि विशुद्धग्रन्थयुक्तानि च तैर्महावृत्तैरपुनरुक्तैरर्थसारैः, तथा नमोऽस्तु ते—तुभ्यं, सिद्धेत्यादीनि सर्वाण्यपि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः

॥१९०॥

पदानि, तत्र सिद्धः कृतकृत्यत्वाद्बुद्धोऽवगततत्त्वत्त्वात् नीरजा बध्यमानकर्म्मरहितत्वात् समाहितः परमसमाध्युपेतत्वात् श्रमणोऽनुत्तरश्रामण्यकलितत्वात् समाप्तः समाप्तवेदत्वात् समयोगी सुविशुद्धमनोवाक्काययोगत्वात् शल्यकर्त्तनो मायादिशल्यकर्त्तनस्वभावत्वात् निर्भय इहलोकादिसप्तप्रकारभयरहितत्वात् नीरागद्वेषो विगतक्रोधादिकषायत्वात् निर्म्ममो-ममत्वरहितो निस्सङ्गो बाह्याभ्यंतरसङ्गरहितत्वात् निःशल्यो मायादिशल्यरहितत्वात् मानमूसुमूरणो—मानमर्दनः गुणा एव रत्नानि यस्यासौ गुणरत्नः शीलेन सागर इव शीलसागरः अनन्तो ज्ञेयानन्तत्वात् अप्रमेयस्तद्गुणानां परैरप्रमेयत्वात्, तथा भव्यानां धर्मेण—धर्म्मरूपेण वरेण—इतरचक्रापेक्षया प्रधानेन भावचक्रत्वात् चतुरन्तेन—चतुर्गतिकसंसारान्तकारिणा चक्रेण वर्त्तत इत्येवंशीलो भविकधर्म्मवरचतुरन्तचक्रवर्त्ती तस्य सम्बोधनं, एताश्च भाविन्योऽप्यवस्था वर्त्तमाना इवावश्यंभावितया विवक्षित्वा संस्तुताः, शेषं सुगमम्, एवं जहा अच्चुयस्स तहा जाव ईसाणस्स भाणियव्वं, एवं भवणवइ-वाणमंतरजोइसिया य सूरपज्जवसाणा सएण सएण परिवारेण पत्तेयं पत्तेयं अभिसिंचंति, तए णं ईसाणे देविंदे देवराया पंच ईसाणे विउव्वइ, एगे ईसाणे भयवं तित्थयरं करयलपुडेण गेण्हइ गेण्हेत्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे संनिसन्ने, एगे ईसाणे पिट्ठतो आयवत्तं धरेइ, दो ईसाणा उभतो पासिं चामरुक्खेवं करेंति, एगे ईसाणे पुरतो सूलपाणी चिट्ठइ, तए णं से सक्के देविंदे देवराया भगवतो आदितित्थगरस्स चउद्दिसिं चत्तारि धवलवसभे विउव्वइ सेए संखदलविमल-निम्मलदधिघणगोखीरफेणरयणिगरप्पगासे पासाइए दरसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे, तए णं तेसिं चउण्हं धवलवसभाणं अट्ठहिं सिंगेहिंतो अट्ठ तोयधारातो निग्गच्छंति, तए णं तातो अट्ठ तोयधारातो उड्ढं वेहासं उप्पयंति उप्पइत्ता एगतो

ईशानश्च-क्राभिषेकौ

॥१९०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

मिलायंति एगतो मिलायित्ता भगवतो आदितित्थगरस्स मुद्धाणंसि णिवयंति, तए णं से सक्के देविंदे देवराया चउरासीए सामाणियसाहस्सीहिं एयस्स तहेव अभिसेओ भाणियवो जाव नमोऽत्थु ते अरहतोत्तिकट्टु पंच सक्के विउवइ, विउवित्ता एगे सक्के भयवं आइतित्थयरं करयलपुडेणं गेण्हइ, एगे सक्के पिट्ठतो आयवत्तं धरेइ, दुवे सक्का उभयोपासं चामरुक्खेवं करेंति, एगे सक्के पुरतो वज्जपाणी चिट्ठइ, तए णं से सक्के चउरासीए सामाणियसाहस्सीहिं जाव अण्णेहिं भवणवइवाणमंतरजोइसवेमाणिएहिं देवेहि य देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे सव्वड्ढीए जाव संखपणवजावनादितरवेण जेणेव भगवतो आदितित्थगरस्स जम्मणभवणे जेणेव आदितित्थगरमाया तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता भयवं तित्थयरं माऊए पासे ठवेइ २ तित्थयरपडिरूवगं पडिसाहरइ पडिसाहरेत्ता ओसोवणिं पडिसाहरइ पडिसाहरेत्ता एगं महं खोमजुयलं कुंडलजुयलं च भगवतो तित्थगरस्स ओसीसगमूले ठवेइ ठवेत्ता एगं महं सिरिदामगंडं तवणिज्जलंबूसगं सुवण्णपयरगमंडियं नाणामणिरयणविविहहारद्धहारउवसोभियं समुदयं भगवतो तित्थयरस्स उल्लोयंसि निक्खिवइ, जंणं भयवं तित्थयरं अणिमिसाए दिट्ठीए देहमाणे देहमाणे सुहंसुहेणं अभिरममाणे चिट्ठइ । तए णं से सक्के देविंदे देवराया वेसमणं देवं सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! बत्तीसं हिरण्णकोडीतो बत्तीसं सुवण्णकोडीतो बत्तीसं नंदाइं बत्तीसं भद्दाइं सुभगसोभग्गरूवजोव्वणगुणलावण्णे य भगवतो तित्थगरस्स जम्मणभवणंमि साहराहि साहरित्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह, तए णं से वेसमणे देवे सक्केणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं देवो तहत्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ, पडिसुणेत्ता जंभए देवे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥ १९१ ॥

सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो! देवाणुप्पिया ! बत्तीसं हिरन्नकोडीओ जाव भगवतो तित्थगरस्स जम्मणभवणंसि साहरह साहरित्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह, तए णं ते जंभगा देवा वेसमणेणं देवेणं एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा जाव विसप्पमाणहियया खिप्पामेव बत्तीसं हिरन्नकोडीओ जाव सुभगसोभग्गरूवजोव्वणगुणलावण्णे य भगवतो जम्मणभवणंसि साहरिंति साहरित्ता जेणेव वेसमणे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति, तए णं से वेसमणे देवे जेणेव सक्के देविंदे देवराया तेणेव जाव तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति, तए णं से सक्के देविंदे देवराया आभियोगे देवे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो! देवाणुप्पिया ! भगवतो तित्थगरस्स जम्मणट्ठाणंसि सिंघाडगतियचउम्मुहमहापथेसु महया २ सद्देणं उग्घोसेमाणे एवं वयह–हंद सुणंतु भवंतो बहवे भवणवइवाणमंतरजोइसवेमाणिया देवा देवीओ य जे णं देवाणुप्पिया ! तित्थगरस्स तित्थगरमाऊए असुभं मणं पहारेइ तस्स णं अज्जगमंजरिकादिव सयधा मुद्धाणं फुट्टउत्ति घोसणं घोसेह, घोसित्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह, तए णं ते आभियोगा देवा हट्ठतुट्ठा जाव विसप्पमाणहियया करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं देवो तहत्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणंति पडिसुणेत्ता सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो अंतियातो पडिनिक्खमंति पडिनिक्खमित्ता खिप्पामेव भगवतो तित्थगरस्स जम्मणनगरंसि सिंघाडग जाव सयहा मुद्धाणं फुट्टउत्तिकट्टु घोसणं घोसंति, एयमाणत्तियं पच्चप्पिणंति, तए णं बहवे भवणवइवाणमंतरजोइसवेमाणिया देवा भगवतो तित्थगरस्स जम्मणमहिमं करेत्ता जेणेव नंदीसरे दीवे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता ते अट्ठाहियातो महामहिमातो करेंति करेत्ता जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया, एतदपि सुगमं प्रायः

क्षौमयुग-लार्पणादि उत्सवान्तं ॥ १९१ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्राग्भावितार्थं च, नवरं 'देहमाणे' इति प्रेक्षमाणः प्रेक्षमाणः 'बत्तीसं हिरण्णकोडीतो' इति घटितं हिरण्यं अघटितं सुवर्णं, नन्दानि—आसनविशेषरूपाणि, भद्राणि—भद्रासनानि, तदेवं यदुक्तम्—"जम्मणमहो य सबो, नेयबो जाव घोसणय"मिति तत् जम्बूद्वीपप्रज्ञाप्त्यादिभिः सूत्रैः भावितं, 'यथागमं जन्ममहोत्सवो मया, प्रकाशितस्तीर्थकृतां परिस्फुटः। यदत्र पुण्यं भवति स्म तेन मे, जनो भवेज्जन्मनिबन्धनच्छिदे ॥ १ ॥ गतं जन्मद्वारम्। इदानीं नामद्वारं, तत्र भगवतो नामनिबन्धनं चतुर्विंशतिस्तवे वक्ष्यति—'ऊरूसु उसभलंछणमुसभं सुमिणंमि तेण उसभजिणो' इति । सम्प्रति वंशनामनिबन्धनमभिधातुकाम आह—

देसूणगं च वरिसं सक्कागमणं च वंसठवणा य। आहारमंगुलीए विहिंति देवा मणुण्णं तु ॥ १८५ ॥

देशोनं वर्षं भगवतो जातस्य यावदभूत् तावदेतावति समये शक्रस्यागमनमजायत, तेन च वंशस्थापना भगवतः कृता, एवं स भगवान् ऋषभनाथः सञ्जातः, तस्य गृहवासे आहारोऽसंस्कृत आसीत्। किञ्च—सर्वतीर्थकरा एव बालभावे वर्त्तमाना न स्तन्योपभोगं कुर्वन्ति, किन्त्वाहाराभिलाषे सति स्वामङ्गुलिं वदने प्रक्षिपन्ति, तस्यां चाङ्गुल्यामाहारं नानारसमायुक्तं मनोज्ञं देवाः स्थापयन्ति, तत आह—'आहारमंगुलीए विहिंति देवा मणुण्णं तु'। अतिक्रान्तबालभावास्तु सर्वेऽपि तीर्थकृतोऽग्निपक्वमाहारं गृह्णन्ति, भगवांस्तु ऋषभनाथो यावदद्यापि प्रव्रज्यां न प्रत्यपद्यत तावद्देवोपनीतमेवाहारमुत्तरकुरुगतकल्पद्रुमफलरूपमुपभुक्तवानिति। अभिहितमानुषङ्गिकमधुना प्रकृतमुच्यते, आह—इन्द्रेण वंशस्था-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पना कृता इत्यभिहितं, तत्र सा वंशस्थापना किं यथाकथञ्चित्कृता आहोश्चित्प्रवृत्तिनिमित्तपूर्विका ?, उच्यते, प्रवृत्तिनिमित्तपूर्विका, तथा चाह—

सक्को वंसट्ठवणे इक्खु अगू तेण हुंति इक्खागा । जं च जहा जम्मि वए जोग्गं कासीय तं सव्वं ॥ १८६ ॥

कथानकशेषं-जीयमेयं तीयपच्चुप्पन्नमणागयाणं देवाणं पढमतित्थगराणं वंसठवणं करेत्तए, ततो तियसगणसंपरिवुडो सक्को आगतो, पच्छा किह रिक्कहत्थतो पविसामित्ति महंतं इक्खुलट्ठिं गहाय आगतो, इतो य नाभिकुलगरो उसभसामिणा अंकगएण अच्छइ, सक्केण य उवागएण इक्खुलट्ठीहत्थगएणं जएणं विजएणं भयवं वद्धाविओ, भयवया लट्ठीसु दिट्ठी पाडिया, ताहे सक्केण भणियं—भयवं ! इक्खू अगू ?, 'अकं भक्षणे' भक्षयसि ?, ताहे सामिणा पसत्थलक्खणधरो अलंकियविभूसितो दाहिणहत्थो पसारितो, अतीव भगवंतस्स तासु हरिसो जातो, तए णं सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो अयमेयारूवे संकप्पे समुप्पज्जित्था—जम्हा भयवं तित्थयरो इक्खुं अभिलसइ तम्हा इक्खागुवंसो भवउ, पुव्वया य भगवतो इक्खुरसं पिवियाइया, इक्षवश्च तदा पानीयवल्लीवत् छिन्ना विद्धा वा रसं गलन्ति स्म, तेणं गोत्तं कासवन्ति, एवं सक्को वंसं ठवेऊण गओ । पुणोवि जं जहा जंमि वए जोग्गं तं सव्वं तहेव कासी, गाथाक्षरगमनिका—शक्रो वंशस्थापने प्रकृते इक्षुमादाय समागतः, भगवता च करे प्रसारिते स प्राह—भगवन् ! इक्षुमकु—भक्षयसि ?, एवमुक्ते भगवानिक्षुयष्टिग्रहणाय हस्तं प्रसारितवान्, तेन भवन्ति इक्ष्वाकवः—इक्षुभोजिन ऋषभनाथवंशजाः, एवं यद् यस्मिन् वयसि यथा योग्यं तत्सर्वं शक्रस्तथैव कृतवान्, अत्र पश्चार्द्धे पाठान्तरं 'तालफलाहयभगिणी भविस्स पत्ती य सारवणा' तालफलेनाहतस्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** शक्रेन्द्र द्वारा भगवन्त 'ऋषभ'स्य वंश-स्थापना

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पुरुषस्य भगिनी–सहजाता ऋषभस्य पत्नी भविष्यतीति सारवणा–तस्याः सङ्गोपना, इदं च पाठान्तरं किल भगवतो नन्दा-याश्च तुल्यवयस्त्वख्यापनाफलं, तथा चानन्तरमेव वक्ष्यति–'नंदाएँ सुमंगला सहितो' अन्ये तु प्रतिपादयन्ति–सर्वैवेयं जन्म-द्वारवक्तव्यता, द्वारगाथाऽपि किलैवं तैः पठ्यते–'जम्मणे य विवड्ढी य जाईसरणे इय' इति ॥ सम्प्रति वृद्धिद्वारमधिकृत्याह–

अह वड्ढइ सो भयवं दियलोगचुतो य अणुवमसिरीओ । देवगणसंपरिवुडो नंदाएँ सुमंगलासहितो ॥ १८७ ॥
असियसिरतो सुनयणो बिंबोट्ठो धवलदंतपंतीओ । वरपउमगब्भगोरो फुल्लुप्पलगंधनीसासो ॥ १८८ ॥

देवलोकात्–सर्वार्थसिद्धिविमानरूपकात् च्युतः सन् अथ–जन्मानन्तरं वर्द्धते स ऋषभनाथो भगवान्, किंविशिष्टः सन्नित्याह—अनुपमश्रीकः–निरुपमदेहकान्तिकलितः, 'देवगणसंपरिवृतः' सेवागतनानाविधदेवपरिवारोपेतो नन्दया सुमङ्गलया च सहितः सन्, ते अपि वर्द्धेते इति भावः, तथा असिताः–कृष्णाः शिरोजाः–केशा यस्यासौ असितशि-रोजः, शोभने नयने यस्यासौ सुनयनः, बिम्बं–गोलाफलं तद्वत् ओष्ठौ यस्य स बिम्बोष्ठः, धवले दन्तपङ्क्ती यस्य स धवल-दन्तपङ्क्तिकः, वरपद्मगर्भ इव गौरो–निर्मलो वरपद्मगर्भगौरः, फुल्लोत्पलगन्धवन्निःश्वासो यस्य स तथा ॥ इदानीं जाति-स्मरणद्वारमभिधित्सुराह—

जाईसरो उ भयवं अप्परिवडिएहिं तिहि उ नाणेहिं । कंतीए बुद्धीए य अब्भहितो तेहिं मणुएहिं ॥ १८९ ॥

जातिं स्मरतीति जातिस्मरो भगवान्, 'लिहादिभ्य' इत्यणपवादोऽचू, कथं जातिस्मर इत्याह—अप्रतिपतितैरेव त्रिभिः–मतिश्रुतावधिरूपैर्ज्ञानैः, अवधिज्ञानं हि भगवतो देवलोकिकमेवाप्रच्युतं भवति, तथा कान्त्या च बुद्ध्या च तेभ्यः-

Jain Education Inter For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥१९३॥

तत्कालभाविभ्यो मिथुनकमनुष्येभ्योऽभ्यधिकः ॥ अधुना विवाहद्वारमाह—

पढमो अकालमच्चू तहिं तालफलेण दारको उ हतो। कन्ना य कुलगरेहि य सिट्ठे गहिया उसभपत्ती ॥ १९० ॥

भगवतो देशोनवर्षकाल एव किञ्चिन्मिथुनकं सञ्जातापत्यं सत् तदपत्यमिथुनकं तालवृक्षस्याधो विमुच्य रिरंसया कदलीगृहादिक्रीडागृहमगमत्, तस्माच्च तालवृक्षात् पवनप्रेरितं पक्वं तालफलमपप्तत्, तेन दारकोऽकाल एव जीविताद् व्यपरोपितः, एष प्रथमोऽवसर्पिण्यामकालमृत्युः, तदपि मिथुनकं तां दारिकां वर्द्धयित्वा प्रतनुकषायं मृत्वा सुरलोके समुत्पन्नं, सा चोद्यानदेवतेवोत्कृष्टरूपा एकाकिन्येव वने विचचार, दृष्ट्वा च तां त्रिदशवधूसमानरूपां मिथुनकनरा विस्मयोत्फुल्लनयना नाभिकुलकराय न्यवेदयन्, निवेदिते च तैः कन्या नाभिकुलकरेण ऋषभपत्नी भविष्यतीति सङ्गृहीता, भगवांश्च तेन कन्याद्वयेन सार्द्धं विहरन् यौवनमनुप्राप्तः, अत्रान्तरे देवराजस्य चिन्ता समुदपादि—यथा कृत्यमेतदतीतप्रत्युपन्नानागतानां शक्राणां प्रथमतीर्थकराणां विवाहकर्म्म क्रियत इत्येवं सञ्चिन्त्यानेकसुरवधूवृन्दसमन्वितोऽवतीर्णवान्, अवतीर्य च भगवतः स्वयमेव महता ऋद्धिसत्कारसमुदयेन वरकर्म्म–प्रसाधनस्नानगीतवादित्रादि चकार, नन्दासुमङ्गलयोरपि शक्रमहिष्यो महता ऋद्धिसत्कारसमुदायेन विवाहकर्म्म कृतवत्यः ॥ एतदेवाह—

भोगसमत्थं नाउं वरकम्मं तस्स कासि देविंदो। दोण्हं वरमहिलाणं वहुकम्मं कासि देवीतो ॥ १९१ ॥

भोगसमर्थं भगवन्तं ज्ञात्वा तस्य–भगवतो वरकर्म्म देवेन्द्रोऽकार्षीत्, द्वयोर्वरमहिलयोः–नन्दासुमङ्गलयोर्वधूकर्म्म देव्यो–देवेन्द्रस्य अग्रमहिष्योऽकार्षुः ॥ इदानीमपत्यद्वारमाह—

जातिस्मर-विवाहापत्यद्वाराणि ॥१९३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

छप्पुव्वसयसहस्सा पुव्वि जायस्स जिणवरिंदस्स । तो भरहबंभिसुंदरि बाहुबली चेव जायाइं ॥ १९२ ॥

जातस्य जिनवरेन्द्रस्य जन्मकालादारभ्य यावत्षट् पूर्वशतसहस्राणि-पूर्वलक्षाणि व्यतिक्रामन् तावदेतावत्यवसरे भगवतो भरतो ब्राह्मी सुन्दरी बाहुबलीति चत्वारि अपत्यानि जातानि, तत्रायं सम्प्रदायः-अनुत्तरविमानादवतीर्य सुमङ्गलाया बाहुः पीठश्च भरतब्राह्मीति मिथुनकं जातं, तथा सुबाहुर्महापीठश्च सुनन्दाया बाहुबली सुन्दरीति मिथुनकमिति ॥ अमुमेवार्थं प्रतिपादयन्नाह मूलभाष्यकारः—

देवी सुमंगलाए भरहो बंभी य मिहुणगं जायं । देवीऍ सुनंदाए बाहुबली सुंदरी चेव ॥ १ (मू. भा.) ॥ ✸

सुगमा, आह—किमेतावन्त्येव भगवतोऽपत्यानि उतान्यान्यपि ?, उच्यते-अन्यान्यपि, तथा चाह—

अउणापन्नं जुयले पुत्ताण सुमंगला पुणो पसवे । नीतीण अइक्कमणे निवेयणं उसभसामिस्स ॥ १९३ ॥

एकोनपञ्चाशतं पुत्राणां युग्मानि सुमङ्गला पुनः प्रसूतवती, अत्रान्तरे प्राग्निरूपितानां हक्कारप्रभृतीनां दण्डनीतीनां लोकाः प्रचुरतरकषायसम्भवात् अतिक्रमणं कृतवन्तः, ततश्च नीतीनामतिक्रमणे सति ते लोका अभ्यधिकज्ञानादिगुणसमन्वितं भगवंतं विज्ञाय निवेदनं-कथनं ऋषभस्वामिने-आदितीर्थकराय, सूत्रे चतुर्थ्यर्थे षष्ठी प्राकृतत्वात्, कृतवन्त इति क्रियाध्याहारः । निवेदिते सति भगवानाह—

राया करेइ दंडं सिट्ठे ते बेंति अम्हवि स होउ । मग्गह य कुलगरं सो य वेइ उसभो य भे राया ॥ १९४ ॥

नीत्यतिक्रमणकारिणां राजा-सर्वनरेश्वरः करोति दण्डं, स च राजा अमात्यारक्षकादिबलयुक्तः कृताभिषेकोऽनति-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

✸अत्र मूल भाष्य-४- एव वर्तते | संभवत: मुद्रणदोष: अथवा संपादन-पद्धत्ति-परिवर्तन दृश्यते

क्रमणीयाज्ञश्च भवति, एवं भगवता शिष्टे–कथिते सति ते–मिथुनका ब्रुवते–अस्माकमपि सः–राजा भवतु, वर्त्तमानका-लनिर्देशः खल्वन्यास्वप्यवसर्प्पिणीषु प्राय एष एव न्याय इति प्रदर्शनार्थः, सूत्रस्य त्रिकालगोचरत्वात्, अथवा प्राकृ-तत्वादार्षत्वाद्वा 'बेंति'त्ति उक्तवन्तः, भगवानाह–यद्येवं 'मग्गह य कुलगरं' ति मार्गयत–याचध्वं कुलकरं–नाभिकुलकरं राजानं, ततस्तैर्याचितो नाभिकुलकरो, राजानं याचितश्च सन् स 'ब्रूते' उक्तवान्–अहं महान् जातः ऋषभो भवतां राजेति, ततस्ते मिथुनका राज्याभिषेककरणार्थं उदकानयनाय पद्मिनीसरो गतवन्तः, अत्रान्तरे देवराजस्य वज्रपाणे-रासनप्रकम्पो बभूव, ततोऽवधिना विज्ञाय सर्वर्द्ध्या सलोकपालः शक्रः समागत्य राज्याभिषेकं कृतवान् ॥ अमुमेवार्थ-मुपसंहरन् अनुक्तं च प्रतिपादयन्नाह—

आभोएउं सक्को उवागतो तस्स कुणइ अभिसेयं । मउडाइ अलंकारं नरिंदजोग्गं च से कुणइ ॥ १९५ ॥

आसनप्रकम्पानन्तरं आभोग्य–अवधिज्ञानेन सम्यग्वस्तुगतिमवगम्य शक्रो–देवराज उपागतस्तस्य–भगवतः ऋषभस्वा-मिनोऽभिषेकं–राज्याभिषेकं करोति, तथा मुकुटादि आदिशब्दात् कटककुण्डलकेयूरादिपरिग्रहः नरेन्द्रयोग्यं–नरेश्वरपद-व्युचितमलङ्कारं 'से' तस्य भगवतः करोति, अत्रापि वर्त्तमानकालनिर्देशप्रयोजनं प्राग्वद् भावनीयं, पाठान्तरं वा "आभोएउं सक्को उवागतो तस्स कासि अभिसेयं । मउडाइ अलंकारं नरिंदजोग्गं च से कासि ॥" अत्रान्तरे ते मिथुन-कपुरुषाः पद्मिनीसरसः खलु पद्मिनीपत्रैरुदकमादाय भगवतः समीपमागत्य भगवन्तं चालङ्कृतविभूषितं दृष्ट्वा विस्मयो-त्फुल्लनयनाः किंकर्त्तव्यताव्याकुलीकृतचेतसः कियन्तमपि कालं स्थित्वा भगवत्पादयोस्तदुदकं निक्षिप्तवन्तः, ततस्तानेवं-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

विधक्रियोपेतान् दृष्ट्वा वज्रपाणिर्देवराजोऽचिन्तयत्—अहो ! खलु विनीता एते पुरुषास्ततोऽत्र विनीता नगरी भवतु, ततो वैश्रमणं यक्षराजमाज्ञापितवान्–इह द्वादशयोजनदीर्घां नवयोजनविष्कम्भां विनीतां नाम नगरीं निष्पादयेति, स चाज्ञासमनन्तरमेव दिव्यप्राकारभवनमालोपशोभितां नगरीं चकार, एतदेवाह—

भिसिणीपत्तेहिंयरे उदयं घेत्तुं छुहंति पाएसु । साहु विणीया पुरिसा, विणीयनयरी अह निविट्ठा ॥ १९६ ॥

बिसिनीपत्रैः–पद्मिनीपत्रैरितरे–मिथुनकनरा उदकं गृहीत्वा छुभंति–प्रक्षिपन्ति भगवत्पादयोरुपरि, ततो देवराजोऽभिहितवान्–साधु विनीताः पुरुषा इति, ततः शक्रादेशादथ–अथानन्तरं वैश्रमणयक्षेण विनीताभिधाना नगरी निविष्टा—अन्तर्भूतण्यर्थत्वान्निवेशिता ॥ गतमभिषेकद्वारम्, इदानीं राज्यसङ्ग्रहद्वारमाह—

आसा हत्थी गावो गहियाइं रज्जसंग्गहनिमित्तं । घेत्तूण एवमाई चउविहं संगहं कुणइ ॥ १९७ ॥

अश्वा हस्तिनो गाव एतानि चतुष्पदानि तदा भगवता गृहीतानि, राज्ये–राज्यविषयः सङ्ग्रहो राज्यसङ्ग्रहः तन्निमित्तम्, अश्वादिग्रहणं चोष्ट्राद्युपलक्षणं, तथा चाह—एवमादि चतुष्पदजातमसौ भगवान् गृहीत्वा चतुर्विधं–वक्ष्यमाणलक्षणं सङ्ग्रहं करोति, वर्त्तमाननिर्देशप्रयोजनं सर्वत्रापि पूर्ववत्, पाठान्तरं वा 'चउविहं संगहं कासि' ॥ अथ कोऽसौ चतुर्विधः सङ्ग्रह इत्याह—

उग्गा भोगा रायण्ण खत्तिया संगहो भवे चउहा । आरक्खगुरुवयंसा सेसा जे खत्तिया ते उ ॥ १९८ ॥

उग्रा भोगा राजन्याः क्षत्रिया एष चतुर्धा भवति सङ्ग्रहः, एतेषामेव यथाक्रमं स्वरूपमाह—आरक्षका उग्रदण्डका-

Jain Education Inter... For Private & Personal Use Only ...www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥१९५॥

रित्वादुग्राः, गुरवो–गुरुस्थानीया भगवत आदितीर्थकरस्य प्रतिपत्तिस्थानीया इति भावः भोगाः, वयस्याः–स्वामिनः समवयसो राजन्याः, शेषा उक्तव्यतिरिक्ता ये ते पुनः क्षत्रिया इति ॥ सम्प्रति विविधलोकस्थितिनिबन्धनप्रतिपादनार्थं श्लोकचतुष्टयमाह—

आहारे सिप्प कम्मे य, मामणा य विभूसणा । लेहे गणिए य रूवे य, लक्खणे माण पोयए ॥ १९९ ॥
ववहारे नीइजुद्धे य, ईसत्थे य उवासणा । तिगिच्छा अत्थसत्थे य, बंधे घाए य मारणा ॥ २०० ॥
जण्णूसवसमवाए, मंगले कोउए इय । वत्थे गंधे य मल्ले य, अलंकारे तहेव य ॥ २०१ ॥
चोलोवण विवाहे य, दत्तिया मडयपूयणा । ण्हावणा थूभ सद्दे य, छेलावणग पुच्छणा ॥ २०२ ॥

प्रथमत आहारविषयो विधिर्वक्तव्यो, यथा कथं कल्पतरुफलाभावे पक्काहारः संवृत्त इति १ तथा शिल्पं–घटादिविषयं अभिज्ञानं तद्विषयो विधिर्वाच्यः, यथा कुतः कदा कथं कियन्ति वा शिल्पान्युपजातानीति २ तथा कर्म्म ३ मामणा ४-विभूषणः ५ लेख ६ गणित ७ रूप ८ लक्षण ९ मान १० पोत ११ व्यवहार १२ नीति १३ युद्धे १४ युशास्त्रो १५-पासना १६ चिकित्सा १७ र्थशास्त्र १८ बन्ध १९ घात २० मारणा २१ यज्ञो २२ त्सव २३ समवाय २४ मङ्गल २५-कौतुक २६ वस्त्र २७ गन्ध २८ माल्या २९ लङ्कार ३० चूलोपनयन ३१ विवाह ३२ दत्ति ३३ मृतकपूजना ३४-ध्यापना ३५ स्तूप ३६ शब्द ३७ च्छेलावण ३८ प्रश्न ३९ विषयाश्च विधयो वक्तव्याः, एष द्वारश्लोकचतुष्टयसङ्क्षेपार्थः, अवयवार्थं तु प्रत्येकमभिधित्सुः प्रथममाहारद्वारमधिकृत्याह—

राज्यसंग्रहः आहारशिल्पादुद्देशः

॥१९५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** भगवन्त उपदेशित शिल्प-कर्मादि वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

आसी य कंदहारा मूलाहारा य पत्तहारा य । पुप्फफलभोइणोऽवि य जइया किर कुलगरो उसभो ॥ २०३ ॥

यदा 'किले'ति परोक्षाप्तागमवादसंसूचकः ऋषभः कुलकरो-राजा आसीत् तदा ते मिथुनका आसन् कन्दाहाराः मूलाहाराः पत्राहाराः, पुष्पफलभोजिनोऽपि चासन् ।

आसी य इक्खुभोई इक्खागा तेण खत्तिया होंति । सणसत्तरसं धन्नं आमं ओमं च भुंजीया ॥ २०४ ॥

क्षत्रिया येन कारणेन बाहुल्येनेक्षुभोजिन आसीरन् तेन कारणेन ते क्षत्रिया इक्ष्वाकवो लोके ख्याताः, तथा सणः सप्तदशो यस्य तत्सणसप्तदशं धान्यं-शाल्यादि, तद्यथा—"सालि १ जव २ वीहि ३ कुद्दव ४ राली ५ तिल ६ मुग्ग ७ मास ८ चवले य ९ । चण १० तुवरि ११ मसूर १२ कुलत्थ १३ गोधूम १४ निप्फाव १५ अयसि १६ सणा १७ ॥१॥ आमम्-अपक्कं अवमं-न्यूनं 'भुञ्जीया' इति भुक्तवन्तः, तथापि कालदोषात् तदपि न जीर्यति, ततो भगवन्तं पृष्टवन्तः, भगवांस्त्वाह-हस्ताभ्यां घृष्ट्वा त्वचमपनीय आहारयध्वमिति ॥ अमुमेवार्थमाह—

ओमंऽपाहारेंता अजीरमाणंमि ते जिणमुवेंति । हत्थेहि घंसिऊणं आहारेहत्ति ते भणिया ॥ २०५ ॥

अवममपि-स्तोकमप्याहारयन्तोऽजीर्यत्याहारे ते मिथुनका जिनं-प्रथमतीर्थकरमुपयान्ति-उपसर्पन्ति, भगवता च हस्ताभ्यां घृष्ट्वा आहारयध्वमिति भणिताः सन्तस्ते किमित्याह—

"आसीय पाणिघंसी तिम्मिय तंदुलपवालपुडभोई । हत्थयलपुडाहारा जइया किल कुलगरो उसभो ॥ २०६ ॥

आसन् पाणिभ्यां घर्षितुं शीलं येषां ते पाणिघर्षिणः, किमुक्तं भवति ?-ता एव औषध्यः शाल्यादिका हस्ताभ्यां

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र यत् निर्युक्ति-गाथा २०३ "आसी य कंदहारा" आरभ्य गाथा २०९ "पक्खेवडहणमोसइ" पर्यन्ता ७ गाथा: हारिभद्रिया आवश्यक-वृत्तौ भाष्य-गाथा:रूपेण उल्लिखिता: तत्र भाष्यगाथा: क्रम (५) पञ्चमात् (११) एकादश: पर्यन्ता: इति निर्दिष्टा:

धर्षित्वा त्वचं चापनीय भुक्तवन्त इति, एवमपि कालदोषात् कियत्यपि काले गते ता अपि न जीर्णवन्तः, ततः पुनरपि भगवन्तमापृच्छ्य तदुपदेशात्तीमिततन्दुलप्रवालपुटभोजिनो बभूवुः, तीमितान् तन्दुलान् प्रवालपुटे–पत्रपुटे मुहूर्त्तं धृत्वा भुञ्जत इत्येवंशीलास्तीमिततन्दुलप्रवालपुटभोजिनः, तन्दुलग्रहणमशेषौषध्युपलक्षणम्, एवमपि कियति काले अतिक्रान्ते शाल्याद्यौषधयः कठिनभावतो न जीर्यन्तीति भूयोऽपि भगवन्तं पृष्ट्वा तदुपदेशेन हस्ततलपुटाहारा आसीरन्, हस्ततलपुटेषु निहित आहारो यैस्ते तथाविधाः, हस्ततलपुटेषु कियन्तमपि कालमौषधीः स्थापयित्वा भुक्तवन्त इत्यर्थः, एवमपि गच्छता कालेन कालदोषात् औषध्यः कठिनतरभावमापन्ना न जीर्यन्ति, ततो भगवदुपदेशेन कक्षासु स्वेदयित्वा भुक्तवन्तः, एतच्चानुक्तमपि व्याख्यानादवसीयते, तथा मूलटीकाकृता व्याख्यानाद्, एवंभूताश्च ते मिथुनका आसन् यदा ऋषभः कुलकरस्तदेति, तदनन्तरमभिहितप्रकारव्यादिसंयोगैराहारितवन्तः, तद्यथा—हस्ताभ्यां घृष्ट्वा पत्रपुटेषु च मुहूर्त्तं तीमित्वा, तथा हस्ताभ्यां घृष्ट्वा हस्तपुटेषु च मुहूर्तं धृत्वा, तथा हस्ताभ्यां घृष्ट्वा कक्षास्वेदं च कृत्वा, एते त्रयो भङ्गका द्विकसंयोगे, परिघृष्टपदं मुक्त्वा तीमित्वा हस्तपुटेषु च मुहूर्त्तं धृत्वा इत्यादिकामपि भङ्गयोजनामुपदर्शयन्ति केचित्, तच्चायुक्तं, त्वगपनयनमन्तरेण तीमितस्यापि हस्तपुटे कृतस्य सौकुमार्यानुपपत्तेः, यदिवा श्लक्ष्णत्वग्भावाददोष इति, त्रिकसंयोगेऽपि त्रयो भङ्गा हस्ताभ्यां घृष्ट्वा पत्रपुटेषु तीमित्वा हस्तपुटेषु मुहूर्तं धृत्वा १ हस्ताभ्यां घृष्ट्वा पत्रपुटेषु तीमित्वा कक्षासु स्वेदयित्वा २ तथा हस्ताभ्यां घृष्ट्वा हस्तपुटेषु धृत्वा कक्षासु स्वेदयित्वा ३ इति, यस्तु घृष्टपदं विहाय पत्रपुटेषु

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीमित्वा हस्तपुटेषु मुहूर्त्तं धृत्वा कक्षासु स्वेदयित्वा स प्राग्वदसमीचीनः समीचीनो वा वेदितव्यः, चतुष्कसंयोगे एक एव भङ्गः, हस्ताभ्यां घृष्ट्वा पत्रपुटेषु तीमित्वा हस्तपुटेषु धृत्वा कक्षासु स्वेदयित्वा इति ॥ अमुमेवार्थमुपसंहरन्नाह—

घंसेऊणं तिम्मण घंसणतिम्मणपवालपुडभोई । घंसणतिम्मपवाले हत्थउडे कक्खसेए य ॥ २०७ ॥

अस्या भावार्थ उक्त एव, नवरमियमुक्तार्थविषया अक्षरयोजना—घृष्ट्वा भुक्तवन्तः, तीमनं प्रवालपुटे तदनन्तरं कृत्वा भुक्तवन्त इत्यनेन प्रागभिहितप्रत्येकभङ्गकाक्षेपः कृतः, तथा हस्ताभ्यां घर्षणं कृत्वा तीमनं च प्रवालपुटे ततो भोजिन इत्यनेन समस्तद्विकसंयोगभङ्गकाक्षेपः, तथा घर्षणं हस्ताभ्यां तीमनं प्रवालपुटे तदनन्तरं मुहूर्त्तं हस्तपुटे करणं कृत्वा भुक्तवन्त इत्यनेन समस्तत्रिकसंयोगभङ्गकाक्षेपः, 'कक्खसेए य' इति अत्र चशब्दो घर्षणादिसमुच्चयार्थः, ततोऽयमर्थः— हस्ताभ्यां घर्षणे प्रवालपुटे तीमने हस्तपुटे च कियन्तं कालं धरणे तदनन्तरं च कक्षास्वेदे कृते सति भुक्तवन्तः, एतेन चतुष्कसंयोगभङ्गकोऽभिहितः ॥ अत्रान्तरे—

अगणिस्स य उट्ठाणं वणघंसा दट्ठु भीय परिकहणं । पासेसुं परिछिंदह गेण्हह पागं ततो कुणह ॥ २०८ ॥

ननु ते मिथुनकाः सर्वं तीमनादि भगवत्तीर्थकरोपदेशात्कृतवन्तः, स च भगवान् जातिस्मरः ततः किमित्यग्न्युत्पादोपदेशं न दत्तवान् ?, उच्यते, तदा कालस्य एकान्तस्निग्धतया सत्यपि यत्ने वह्न्युत्पादाभावात्, भगवांस्तु विजानाति-न एकान्तस्निग्धरूक्षयोः कालयोर्वह्न्युत्पादः, किन्तु विमात्रया स्निग्धरूक्षकाले, ततो नादिष्टवानिति । ते च मिथुनका यदा चतुर्थभङ्गविकल्पितमप्याहारं कालदोषान्न जीर्णवन्तस्तदा अस्मिन् प्रस्तावे कालस्य स्निग्धरूक्षत्वाद्वने द्रुमाणां पर-

Jain Education Intern... For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्परसङ्घर्षात् अग्नेरुत्थानमभूत्, तत उत्थितं प्रवृद्धज्वालावलीसनाथं भूप्राप्तं तृणादि दहन्तं वह्निं दृष्ट्वा अपूर्वरत्नबुद्ध्या ग्रहणं प्रति प्रवृत्तवन्तः, दह्यमानास्तु भीताः परिकथनं ऋषभाय कृतवन्तः, भीतानां परिकथनं भीतपरिकथनमिति समासो वा, ततो भगवानाह–अश्वेष्वारुह्य यावत्यग्निः प्रज्वलति तावन्तं प्रदेशं विहाय तस्य सर्वासु दिक्षु पार्श्वेषु तृणादिकं सर्वं परिच्छिन्दन्तु, एवमुक्तास्ते मिथुनका हस्तिभिरश्वैश्चारुह्यारुह्य पार्श्वेषु स्थितं सर्वं तृणादिकं किञ्चिन्मिलितं कृतवन्तः किञ्चित्सर्वथा ततोऽपनीतवन्तः, ततः स प्रवृद्धिं गच्छन्नग्निरुपशान्तः, ततः स्वामिनोक्तम्–अमुमग्निं गृहीत गृहीत्वा चैनं पाकं कुरुतेति, ते मिथुनका न जानन्ति, ततोऽग्निं गृहीत्वा तत्रैवौषधीः शाल्यादिकाः प्रक्षिप्तवन्तः, ताश्च दाहमापुः, पुनस्ते भगवतो हस्तिस्कन्धगतस्य न्यवेदयन्, स हि स्वयमेवौषधीर्भक्षयतीति, भगवानाह–तत्र नातिरोहितानां प्रक्षेपः क्रियते, किन्तु मृत्पिण्डमानयध्वमिति, तैरानीतो मृत्पिण्डः, ततो भगवान् हस्तिकुम्भे पिण्डं निधाय पत्रकाकारं निर्दिश्य ईदृशानि भाण्डानि कृत्वाऽत्रैवाग्नौ पक्त्वा एतेषु पाकं निवर्त्तयध्वमित्युक्तवान्, ततस्ते तथैव कृतवन्तः, इत्थं तावत् प्रथमकुम्भकारशिल्पमुत्पन्नम् ॥ अमुमेवार्थमुपसंहरन्नाह—

पक्खेवडहणमोसहि कहणं निग्गमण हत्थिसीसम्मि । पयणारंभपवित्ती ताहे कासीय ते मणुया ॥ २०९ ॥

भावार्थ उक्त एव, किन्तु क्रियाध्याहारकरणेनैवमक्षरगमनिका कार्या–यथा ते मिथुनका अग्नावौषधीनां प्रक्षेपं कृतवन्तः, ततो दहनमौषधीनामभूत्, ततो भगवते हस्तिस्कन्धारूढाय विनीताया नगर्या विनिर्गच्छते कथनं, ततो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

हस्तिशिरसि कुम्भे कर्दमरूपस्य मृत्पिण्डस्य पत्रकाकारकरणं, ततस्ते मिथुनकास्त्रयोरूपाणि भाण्डानि कृत्वा पचनारम्भप्रवृत्तिमकार्षुरिति ॥ गतमाहारद्वारम्, अधुना शिल्पद्वारमभिधित्सुराह—

पंचेव य सिप्पाइं घड लोहे चित्तऽणंत कासवए । एक्केक्कस्स य एत्तो वीसं वीसं भवे भेया ॥ २१० ॥

पञ्चैव मूलभूतानि शिल्पानि, तद्यथा–'घड लोहे चित्तणंतकासवए' इति तत्र घट इति कुम्भकारशिल्पस्योपलक्षणं, 'लोहे'त्ति' लोहकारशिल्पस्य 'चित्ते'ति चित्रकरशिल्पस्य, 'णन्त'मिति देशीवचनं वस्त्रवाचकं, ततोऽनेन वस्त्रशिल्पस्य ग्रहणं, 'कासप'इति नापितशिल्पस्य, इयमत्र भावना—वस्त्रवृक्षेषु परिहीयमानेषु भगवता वस्त्रोत्पादनिमित्तं वस्त्रशिल्पमुत्पादितं, तदनन्तरं गृहाकारेष्वपि कल्पद्रुमेषु हानिमुपगच्छत्सु गृहकरणनिमित्तं लोहकारादिशिल्पमुत्पादितं, पश्चात् प्राणिनां कालदोषान्नखरोमाण्यपि वर्द्धितुं प्रवृत्तानीति नापितशिल्पोत्पादना, गृहाण्यपि च चित्ररहितानि विशोभानि भान्तीति चित्रकरशिल्पोत्पादना, कुम्भकारशिल्पोत्पादकारणं प्रागेव भावितम्, 'एक्केक्कस्स ये'त्यादि एभ्यः पञ्चभ्य एकैकस्य विंशतिर्विंशतिर्भेदा अभूवन्निति सर्वसङ्ख्यया तदा शिल्पशतस्योत्पत्तिरभवदिति ॥ सम्प्रति कर्म्ममामणाविभूषणाद्वारप्रतिपादनार्थमाह—

कम्मं किसिवाणिज्जाइ मामणा जा परिग्गहे ममता । पुव्वं देवेहिं कया विभूसणा मंडणा गुरुणो ॥ २११ ॥

कर्म्म नाम कृषिवाणिज्यादि तच्चाम्नावुत्पन्ने सञ्जातमिति, 'मामणे'ति ममीकारार्थे देशीवचनमेतत्, ततो या परिग्रहे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** निर्युक्ति-गाथा क्रम [हरिभद्रसूरिजी कि वृत्ति और इस मलयगिरिजी कि वृत्तिमे निर्युक्ति-गाथा क्रम अलग अलग हि चल रहा है]

*** अत्र यत् निर्युक्ति-गाथा २११ "कम्मं किसिवाणिज्जाइ" आरभ्य गाथा २२९ "किंचिच्च भरहकाले" पर्यन्ता १९ गाथा: हारिभद्रिया आवश्यक-वृत्तौ भाष्य-गाथा:रूपेण उल्लिखिता: तत्र भाष्यगाथा: क्रम (१२) द्वादशात्त् (३०) त्रिंशत् पर्यन्ता: इति निर्दिष्टा:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

ममता सा मामंणा ज्ञातव्या, सा च तत्काल एव प्रवृत्तेति, तथा विभूषणा-मण्डना, सा च पूर्वं देवेन्द्रैर्गुरोः-भगवत आदितीर्थकृतः कृता, पश्चाल्लोकेऽपि प्रवृत्तेति ॥ सम्प्रति लेखगणितरूपद्वारद्वयप्रतिपादनार्थमाह—

लेहं लिवीविहाणं जिणेण बंभीऍ दाहिणकरेणं । गणियं संखाणं सुंदरीऍ वामेण उवइट्ठं ॥ २१२ ॥

लेखनं लेखो नाम सूत्रे नपुंसकता प्राकृतत्वात् लिपिविधानं, तच्च जिनेन-भगवता ऋषभस्वामिना ब्राह्म्या दक्षिणकरेण प्रदर्शितमत एव तदादित आरभ्य वाच्यते, गणितं नाम एकद्वित्र्यादिसङ्ख्यानं, तच्च भगवता सुन्दर्या वामकरेणोपदिष्टमत एव तत्पर्यन्तादारभ्य गण्यते ॥ अधुना रूपलक्षणमानरूपद्वारत्रयप्रतिपादनार्थमाह—

भरहस्स रूवकम्मं नराइलक्खणमहोइयं बलिणो । माणुम्माणवमाणंपमाणगणिमाइ वत्थूणं ॥ २१३ ॥

रूपं नाम काष्ठकर्म्म पुस्तककर्म्मेत्येवमादि, तच्च भगवता भरतस्योपदिष्टं, तथा लक्षणं नरादि-पुरुषलक्षणादि, तच्च अथ-भरतस्य काष्ठकर्म्माद्युपदेशानन्तरं भगवता बाहुबलिने उदितं-कथितं, तथा मानं नाम वस्तूनां मानोन्मानावमानप्रमाणगणितानि, तत्र मानं द्विधा-धान्यमानं रसमानं च, धान्यमानं 'दो असतीओ पसई दो पसईतो सेइया चत्तारि सेइया कुलवो चत्तारि कुलवा पत्थओ' इत्यादि, रसमानं 'चउसट्ठिया बत्तिसिया सोलसिया' इत्यादि, उन्मानं येनोन्मीयते, तच्च तुलागतं कर्षः पलमित्यादि, अवमानं येनावमीयते, तद्यथा-हस्तो दण्डो युगमित्यादि, प्रमाणं प्रतिमानं, तच्च सुवर्णपरिमाणहेतुर्गुञ्जादि, गणितं यदेकादिसङ्ख्यया परिच्छिद्यते, यत्तु गणितं तत्पागेव पृथग्द्वारतयाऽभिहितम्, एतत्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पञ्चप्रकारमपि मानं भगवति राज्यमनुशासति भगवदुपदेशेन प्रवृत्तमिति ॥ 'पोयए' इति द्वारगाथायां यदुक्तं तस्य संस्कारः प्रोतकमिति पोतक इति वा, तथा चाह—

मणियाई दोराइसु पोता तह सागरंमि वहणाइं । ववहारो लेहवणं कज्जपरिच्छेयणत्थं वा ॥ २१४ ॥

ये मणिकादयः आदिशब्दात् मुक्ताफलादिपरिग्रहः दवरकादिषु लोकेन प्रोताः क्रियन्ते तदेतत्प्रकर्षेण उतनं प्रोतं तदा प्रवृत्तं, अथवा पोता नाम सागरे–समुद्रे वहनानि–प्रवहणानि, तान्यपि तदैव प्रवृत्तानि, तथा व्यवहारो नाम विसंवादे सति राजकुलकरणे गत्वा निजनिजभाषालेखापनलक्षणः कार्यपरिच्छेदनार्थं वा पणमुक्तिलक्षणः स उभयरूपोऽपि तदा प्रवृत्तः, कालदोषतो लोकानां प्रायः स्वस्वभावापगमाद् ॥ अधुना नीतियुद्धरूपं द्वारद्वयमभिधित्सुराह—

नीई हक्काराई सत्तविहा अहव सामभेयाई । जुद्धाइं बाहुजुद्धाइयाइं वट्टाइयाणं च ॥ २१५ ॥

नीतिर्हक्कारादिलक्षणा सप्तविधा, तद्यथा–हक्कारो मक्कारो धिक्कारः परिभाषणा मण्डलीबन्धश्चारके प्रक्षेपो महापराधे च्छविच्छेद इति, एषा सप्तविधाऽपि नीतिस्तदा विमलवाहनकुलकरादारभ्य भरतकालं पर्यन्तं कृत्वा यथायोगं प्रवृत्ता, तथा च वक्ष्यति–'किञ्चिच्च (ञ्चीव) भरहकाले'इत्यादि, अथवा नीतिर्नाम सामभेदादिका चतुष्प्रकारा, तद्यथा—साम भेदो दण्ड उपप्रदानमिति, एषा चतुर्विधापि भगवत्काले समुत्पन्नेति, तथा युद्धानि नाम बाहुयुद्धादीनि, यदिवा वार्त्तिकादीनां यानि तान्युभयान्यपि तदा प्रवृत्तानि ॥ साम्प्रतमिषुशास्त्रोपासनारूपं द्वारद्वयमाह—

ईसत्थं धणुवेदो उवासणा मंतकम्ममाईया । गुरुगाईणं वा उवासणा पज्जुवासणया ॥ २१६ ॥

Jain Education Intl For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

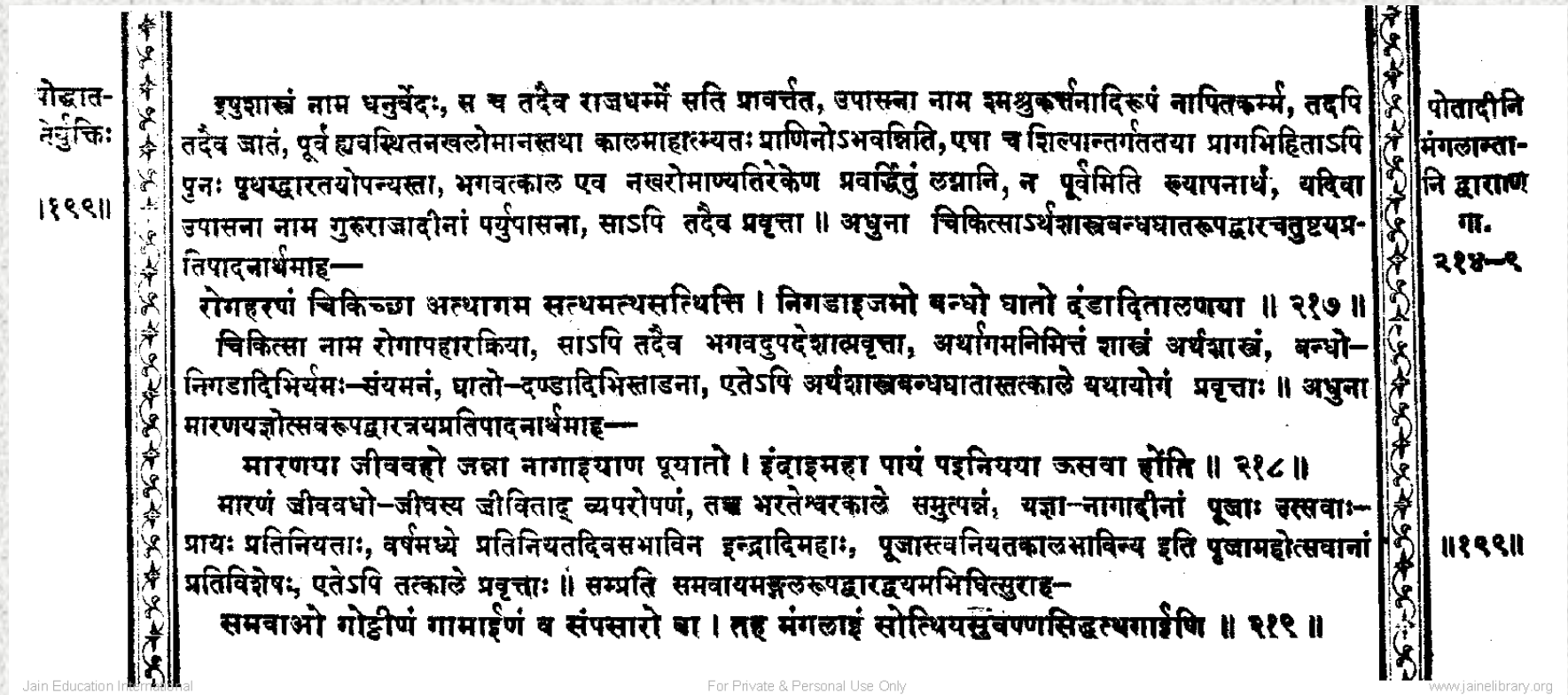

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

समवायो नाम गोष्ठिनां मेलापकः, यदिवा ग्रामादीनामादिशब्दात् खेटकर्बदनगरादिपरिग्रहः समू-एकीभावेन क्रिय-प्युद्दिश्य एकत्र मीलनं सम्प्रसारः-समवायः, किमुक्तं भवति ?-ग्रामादिजनानां किञ्चित्प्रयोजनमुद्दिश्य यदेकत्र मीलनं स वा समवाय इति, तथा मङ्गलानि नाम स्वस्तिकसुवर्णसिद्धार्थकादीनि तानि पूर्वं देवैर्भगवतो मङ्गलबुद्ध्या प्रयुक्तानि, ततो लोकेऽपि तथा प्रवृत्तानि ॥ सम्प्रति कौतुकादिद्वारपञ्चकमाह—

पुव्वं कयाइं पहुणो सुरेहिं रक्खादिकोउयाइं च । तह वत्थगंधमल्लालंकारा केसमूसाई ॥ २२० ॥
तं दट्ठूण पवत्तोऽलंकारेउं अणोऽवि सेसोऽवि ।

पूर्वं प्रभोः- भगवतः ऋषभस्वामिनः सुरैः कृतानि कौतुकानि-रक्षादीनि, ततो लोकेऽपि तानि जातानि, तथा वस्त्रं-चीनांशुकादिभेदभिन्नं गन्धः-कुष्ठपुटा दिलक्षणः माल्यं-पुष्पदाम, एतानि तदैव जातानि, अलङ्कारः-केशभूषादि तं चालङ्कारं भगवतो देवैः कृतं दृष्ट्वा अवशेषोऽपि स्वं स्वमलङ्कर्तुं प्रवृत्तः ॥ सम्प्रति चूलाद्वारमाह—

विहिणा चूलाकम्मं बालाणं चोलयं नाम ॥ २२१ ॥

चूडा नाम विधिना शुभनक्षत्रतिथिमुहूर्त्तादौ धवलमङ्गलेष्टदेवतापूजास्वजनभोजनादिलक्षणेन बालानां चूडाकर्म्म, तदपि तदा प्रवृत्तम् ॥ सम्प्रत्युपनयनद्वारमाह—

उवणयणं तु कलाणं गुरुमूले साधुणो ततो धम्मं । घेत्तुं हवंति सड्ढा केई दिक्खं पवज्जंति ॥ २२२ ॥

उपनयनं नाम तेषामेव बालानां कलानां ग्रहणाय गुरोः-कलाचार्यस्य मूले-समीपे नयनं. यदिदा धर्म्मश्रवणनिमित्तं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अथ चूडाकर्म, उपनयन, विवः आदि द्वाराणाम् वर्णनं

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥२००॥

साधोः सकाशं नयनमुपनयनं, तस्माच्च साधोर्धर्म्मं गृहीत्वा केचित् श्राद्धा भवन्त्यपरे लघुकर्म्माणो दीक्षां प्रपद्यन्ते, एतच्चोभयमपि तदा प्रवृत्तम् ॥ अधुना विवाहद्वारं दत्तिद्वारं चाह–

दट्ठुं कयं विवाहं जिणस्स लोगोऽवि काउमारद्धो । गुरुदत्तिया य कन्ना परिणिज्जंते ततो पायं ॥ २२३ ॥
दत्ती व दाणमुसभं दिंतं दट्ठुं जणंमिवि पवत्तं । जिणभिक्खादाणंपिय दट्ठुं भिक्खा पवत्ताओ ॥ २२४ ॥

जिनस्य–भगवत ऋषभस्वामिनो देवैः कृतं विवाहं दृष्ट्वा लोकोऽपि स्वापत्यानां विवाहं कर्तुमारब्धवान्, गतं विवाहद्वारम् । दत्तिद्वारमाह–भगवता युगलधर्म्मव्यवच्छेदाय भरतेन सह जाता ब्राह्मी बाहुबलिने दत्ता, बाहुबलिना सह जाता सुन्दरी भरतायेति दृष्ट्वा तत आरभ्य प्रायो लोकेऽपि कन्या पित्रादिना दत्ता सती परिणीयते इति प्रवृत्तम्, अथवा दत्तिर्नाम दानं, तच्च भगवन्तमृषभस्वामिनं सांवत्सरिकं दानं ददतं दृष्ट्वा लोकेऽपि प्रवृत्तं, यदिवा दत्तिर्नाम भिक्षादानं, तच्च जिनस्य भिक्षादानं प्रपौत्रेण कृतं दृष्ट्वा लोकेऽपि भिक्षा प्रवृत्ता, लोका अपि भिक्षां दातुं प्रवृत्ता इति भावः ॥ अधुना मृतकपूजाध्मापनास्तूपशब्दद्वाराण्याह—

मडयं मयस्स देहो तं मरुदेवीए पढमसिद्धोत्ति । देवेहि पुरा महियं झावणया अग्गिसक्कारो ॥ २२५ ॥
सो जिणदेहाईणं देवेहिं कतो चिता सथूभा य । सद्दो य रुण्णसद्दो लोगोवि ततो तहा पकतो ॥ २२६ ॥

मृतकं नाम मृतस्य देहस्तच्च मृतकं मरुदेव्याः प्रथमसिद्ध इतिकृत्वा देवैः पुरा महितं–पूजितं, तत आरभ्य लोकेऽपि मृतकपूजा प्रसिद्धिं गता, ध्मापना नामाग्निसंस्कारः, स च भगवतो निर्वाणप्राप्तस्यान्येषां च साधूनामिक्ष्वाकूणामितरेषां

स्तूपादीनि शब्दान्तानि द्वाराणि गा. २२०–२२६ ॥२००॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

च प्रथमं त्रिदशैः कृतः पश्चाल्लोकेऽपि सञ्जातः, तथा भगवद्देहादिदग्धस्थानेषु भरतेन स्तूपाः कृताः, ततो लोकेऽपि तत आरभ्य मृतकदाहस्थानेषु स्तूपाः प्रावर्त्तन्त, तथा शब्दो नाम रुदितशब्दः, स च भगवत्यपवर्गं गते भरतदुःखमसाधारणमवबुध्य तदपसरणाय शक्रेण कृतः, ततो लोकेऽपि ततः कालादारभ्य रुदितशब्दः प्रवृत्तः, तथा चाह-लोकोऽपि तथा-भरतवत् शक्रवद्वा रुदितशब्दं प्रकृतः-कर्त्तुमारब्धवान् ॥ सम्प्रति च्छेलापनकद्वारं पृच्छाद्वारं चाह—

छेलावणमुक्किट्ठाइ बालकीलावणं च सेंटाई । इंखिणियादिरुयं वा पुच्छा पुण किं कहिं कज्जं ? ॥ २२७ ॥
अहव निमित्ताईणं सुहसइयाइ सुहदुक्खपुच्छा वा । इचेवमाइयाए उप्पन्नं उसभकालम्मि ॥ २२८ ॥

छेलापनकमिति देशीवचनं, तच्चानेकार्थं, तथा चाह-'उक्किट्ठाइ'इत्यादि, उत्कृष्टिर्नाम हर्षवशादुत्कर्षेण नदनम्, आदिशब्दात् सिंहनादादिपरिग्रहः, यदिवा बालक्रीडापनं छेलापनकं, अथवा शेण्टितादि। तथा प्रच्छनं पृच्छा, सा इङ्खिणिकादिरुतलक्षणा, इंखिणिका हि कर्णमूले घण्टिकां चालयन्ति, ततो यक्षाः खल्वागम्य तासां कर्णेषु किमपि प्रष्टुर्विवक्षितं कथयन्ति, आदिशब्दात् इङ्खिणिकासदृशपरिग्रहः, अथवा किं कार्यं ? कथं वा कार्यमित्येवंलक्षणा या लोके प्रसिद्धा पृच्छा सा पृच्छना, यदिवा निमित्तादीनामादिशब्दात्स्वप्नफलादिपरिग्रहः पृच्छा-पृच्छना, अथवा सुखशयितादिरूपा सुखदुःखपृच्छना इत्येवं आदितया सर्वमुत्पन्नमृषभस्वामिकाले, उपलक्षणमेतत्, किञ्चिद्भरतकाले किञ्चित्कुलकरकाले च ॥ तथा चाह—

किंचिच भरहकाले कुलगरकालेऽवि किंचि उप्पन्नं । पहुणा उ देसियाइं सव्वकलासिप्पकम्माइं ॥ २२९ ॥

किञ्चित्-निगडादिभिर्घात इत्यादि भरतकाल उत्पन्नं, किञ्चित्-हक्कारादि कुलकरकालेऽप्युत्पन्नं, प्रभुणा तु-भगवता

Jain Education Internat For Private & Personal Use Only ainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥२०१॥

ऋषभस्वामिना सर्वो गणितप्रभृतयः कलाः सर्वाणि घटशिल्पप्रभृतीनि शिल्पानि सर्वाणि च कृष्यादीनि कर्म्माणि देशितानीति ॥

उसभचरियाहिगारे सव्वेसिं जिणवराण सामण्णं । संबोहणाइ वोत्तुं वोच्छं पत्तेयमुसभस्स ॥ २३० ॥

इह वक्तुमिदानीमधिकृतं भगवत ऋषभस्वामिनश्चरित्रं, तत्र च ऋषभचरिताधिकारे वक्ष्यमाणं सम्बोधनादि सर्वेषामपि जिनवराणां सामान्यमतस्तथैव सामान्येनोक्त्वा पश्चात् प्रत्येकम्–एकं प्रति प्रत्येकं, नात्र प्रतिशब्दो वीप्सायां, किन्त्वाभिमुख्ये, ततोऽयमर्थः–एकस्याभिमुख्येन, कस्यैकस्येत्यत आह–ऋषभस्य, शेषं चरित्रं वक्ष्ये ॥ तत्र सम्बोधनादिद्वारप्रतिपादनार्थं द्वारगाथात्रयमाह—

संबोहण १ परिचाए २, पत्तेयं उवहिम्मि य ३ । अन्नलिंगे ४ कुलिंगे य ५, गिहत्थायार ६ परीसहे ७ ॥ २३१ ॥
जीवोवलंभ ८ सुयलंभे ९, पच्चक्खाणे १० य संजमे ११ ।
छउमत्थ १२ तवोकम्मे १३, उप्पया नाण १४ संगहो १५ ॥ २३२ ॥
तित्थं १६ गणो १७ गणहरा १८, धम्मोवायस्स देसणा १९ ।
परियाय २० अंतकिरिया २१, कस्स केण तवेण वा ? ॥ २३३ ॥

सर्व एव भगवन्तस्तीर्थकृतः स्वयंबुद्धास्तथापि कल्प इतिकृत्वा लोकान्तिकदेवाः सर्वतीर्थकृतां सम्बोधनं कुर्वन्ति, ततः प्रथमं तत्सम्बोधनं वाच्यं, तदनन्तरं परित्यागः–किं भगवन्तश्चारित्रप्रतिपत्तौ परित्यजन्तीति, तथा प्रत्येकमिति कः

छेलापनपूच्छे संबोधनादिद्वारोद्देशगा. २२७–३३

॥२०१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अथ जिनेश्वर संबंधी 'संबोधन' आदि २१ द्वाराणाम् वर्णनं

कियत्परिवारो निष्क्रान्त इति वाच्यं, तथा 'उपधा'विति उपधिविषयो विधिर्वक्तव्यः, यथा कः केनोपधिरासेवितः ? को वा विनेयानामनुज्ञातः ? इति, इह यत्साधूनां लिङ्गं यच्च गृहस्थानां तद्भगवतां तीर्थकृतामन्यलिङ्गं, कुत्सितं लिंगं कुलिंगं तापसपरिव्राजकादिलिङ्गं, तत्र भगवन्तो नान्यलिङ्गे निष्क्रान्ताः, नापि कुलिङ्गे, किन्तु तीर्थकरलिङ्गे एवेति वक्तव्यं, तथा ग्रामाचारा:-विषयाः परीषहाः-क्षुत्पिपासादयः, ग्रामाचाराश्च परीषहाश्च ग्रामाचारपरीषहं तस्मिन् विधिर्वक्तव्यः, यथा कुमारप्रव्रजितैर्विषया न भुक्ताः, शेषैर्भुक्ताः, तथा परीषहाः सर्वैरेव निर्जिता इति, तथा जीवोपलम्भो-जीवग्रहणमुपलक्षणं जीवाजीवाद्युपलम्भो वक्तव्यः, तथा पूर्वभवे यस्य यावान् श्रुतलाभः स वक्तव्यः, प्रथमान्तस्याप्येकारान्तता सूत्रे प्राकृतत्वात्, तथा प्रत्याख्यानं महाव्रतरूपं वक्तव्यं, तस्य किं प्रमाणमासीदिति, तथा संयमः-सामायिकादिरूपो वक्तव्यः, कस्य किं सामायिकादि चारित्रमासीदिति, तथा छादयतीति छद्म-ज्ञानावरणीयादिघातिकर्म्मचतुष्टयं छद्मनि तिष्ठतीति छद्मस्थः, कः कियन्तं कालं छद्मस्थ आसीदिति वक्तव्यं, तथा किं कस्य तपःकर्मेति वक्तव्यं, तथा 'उप्पया नाणे'ति ज्ञानोत्पादो वक्तव्यः, कस्य कस्मिन्नहनि केवलज्ञानमुत्पन्नमिति, तथा सङ्घहो वक्तव्यः, कस्य कियान् शिष्यादिसङ्ग्रहः, तथा 'तीर्थमिति कथं कस्य कदा तीर्थमुत्पन्नमित्यादि वक्तव्यं, तीर्थं नाम चातुवर्णः श्रमणसङ्घः, गणः-एकवाचनाचारक्रियास्थानां समुदायो, न कुलसमुदायः, ते च ऋषभादीनां कस्य कियन्त इति वक्तव्यं, तथा गणधराः-सूत्रकर्तारः, ते च कस्य कियन्त इति वक्तव्यं, तथा दुर्गतौ प्रपतन्तमात्मानं धारयतीति धर्म्मः तस्योपायो-द्वादशाङ्गं प्रवचनमथवा पूर्वाणि देशयन्तीति देशकाः धर्म्मोपायस्य देशका गणधरा अथवा अन्येऽपि यस्य यावन्तश्चतुर्दशपूर्ववित्, तथा पर्याय इति कः

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥२०२॥

कस्य प्रव्रज्यादिपर्यायः इत्येतद्वक्तव्यं, तथा अन्ते क्रिया अन्तक्रिया–निर्वाणलक्षणा सा कस्य केन तपसा ?, वाशब्दात् कस्मिन् वा कियत्परिवारपरिवृतस्य चेति वक्तव्यम् ॥ सम्प्रति प्रथमद्वारप्रतिपादनार्थमाह—

सव्वेऽवि सयंबुद्धा लोगंतियबोहिया य जीयंति । सवेसिं परिचाओ संवच्छरियं महादाणं ॥ २३४ ॥
रज्जाइचाओवि य पत्तेयं को व कित्तियसमग्गो ? । को कस्सुवही को वाऽणुण्णाओ केण सीसाणं ? ॥ २३५ ॥

(ग्रन्थाग्रं ८०००) सर्व एव तीर्थकृतः स्वयंबुद्धा वर्त्तन्ते, तथापि लोकान्तिकदेवानामियं स्थितिर्यदुत स्वयंबुद्धानपि भगवतो बोधयन्ति, ततो जीतमिति–कल्प इतिकृत्वा लोकान्तिकदेवैर्बोधिताः सन्तो निष्क्रामन्ति। व्याख्यातं सम्बोधनाद्वारम्, अधुना परित्यागद्वारं व्याख्याति–सर्वेषां भगवतां परित्यागः सांवत्सरिकं महादानं वक्ष्यमाणलक्षणम् ॥

राज्यादित्यागोऽपि च परित्यागः, व्याख्यातं परित्यागद्वारं, प्रत्येकद्वारमाह—प्रत्येकमिति क एककः को वा कियत्समग्रो निष्क्रान्तः ?। उपधिद्वारमाह–कः कस्योपधिः ? को वा केनानुज्ञातः शिष्याणामुपधिरिति ? । इदं च गाथाद्वयमपि समासव्याख्यारूपं, न च समासेनोक्तं मन्दमतयोऽवबुध्यन्ते, ततः प्रपञ्चेन विवरीषुः प्रथमद्वारमाह—

सारस्सय १ माइच्चा २ वण्ही ३ वरुणा य ४ गद्दतोया य ५ ।
तुसिया ६ अव्वाबाहा ७ अग्गिच्चा चेव ८ रिट्ठा य ९ ॥ २३६ ॥

सारस्वता मकारोऽलाक्षणिकः १ आदित्याः २ वह्नयः ३ वरुणाः ४ गर्दतोयाः ५ चः समुच्चये तुषिता ६ अव्याबाधा ७ अग्नयः८एत एव संज्ञान्तरतो मरुतीऽप्यभिधीयन्ते, रिष्टाश्चेति 'तात्स्थ्यात्तद्व्यपदेशः' ब्रह्मलोकस्थरिष्टप्रस्तटाधारा रिष्टा इति,

संबोधन-द्वारं लोकान्तिका श्च गा. २३४–९

॥२०२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** [एकबार फ़िर याद कर लेते है की हारिभद्रिया वृत्ति और मलयगिरिया वृत्ति के सम्पादनमे किसी भी कारण से निर्युक्तिक्रम अलग अलग चल रहे है, यहां भाष्यगाथा की गिनती निर्युक्तिगाथामे हुइ है इसीलिए यहां गाथा २३६ है ,उस गाथा का क्रम हारिभद्रिया-वृत्तिमे २१४ है ।

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

एए देवनिकाया भयवं बोहिंति जिणवरिंदं तु । सव्वजगज्जीवहियं भयवं ! तित्थं पवत्तेहि ॥ २३७ ॥

एते देवनिकायाः–सारस्वतादयः स्वयं सम्बुद्धमपि भगवन्तं जिनवरेन्द्रं कल्प इतिकृत्वा बोधयन्ति, कथमित्याह–सर्वे च ते जगज्जीवाश्च सर्वजगज्जीवास्तेभ्यो हितं हे भगवन् ! तीर्थं प्रवर्त्तयस्वेति ॥ उक्तं सम्बोधनद्वारम्, इदानीं परित्यागद्वारमाह—

संवच्छरेण होही अभिनिक्खमणं तु जिणवरिंदाणं । ता अत्थसंपयाणं पवत्तए पुव्वसूरंमि ॥ २३८ ॥

संवत्सरेण जिनवरेन्द्राणामभिनिष्क्रमणं भविष्यति, ततोऽर्थसम्प्रदानम्–अर्थस्य सम्यक्–तीर्थप्रभावनाबुद्ध्या अनुकम्पाबुद्ध्या च, न तु कीर्त्तिबुद्ध्या, संप्रदानं जनेभ्यः प्रवर्त्तते, पूर्वसूर्ये–पूर्वाह्णे इत्यर्थः ॥ कियत् प्रतिदिवसं दीयते इत्याह—

एगा हिरण्णकोडी अट्ठेव अणूणगा सयसहस्सा । सूरोदयमाईयं दिज्जइ जा पायरासाओ ॥ २३९ ॥

एका हिरण्यस्य कोटी अष्टौ चान्यूनानि–परिपूर्णानि शतसहस्राणि–लक्षाणि इति प्रतिदिवसं दीयते, कथं दीयते इत्याह–सूर्योदय आदौ यस्य दानस्य तत् सूर्योदयादि, क्रियाविशेषणमेतत्, सूर्योदयादारभ्य दीयते इति भावः, कियन्तं कालं यावदित्याह–'प्रातराशा' प्रातः अशनमाशः प्रातराशः तस्मात्, तमभिव्याप्य, प्रातर्भोजनकालं यावदिति भावः । यथा दीयते तथा प्रतिपादयन्नाह—

सिंघाडगतिगचउक्कचच्चरचउम्मुहमहापहपहेसुं । दारेसु पुरवराणं रत्थामुहमज्झकारेसु ॥ २४० ॥

शृङ्गाटकं नाम शृङ्गाटकाकृतिपथयुक्तं, त्रिकोणं स्थानं वा, त्रिकं यत्र रथ्यात्रयं मिलति, चतुष्कं–चतुष्पथसमाहारः,

Jain Education Intern For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चत्वरं–बहुरथ्यापातस्थानं चतुर्मुखं–यस्माच्चतसृष्वपि दिक्षु पन्थानो निस्सरन्ति, महापथो–राजपथः, शेषः सामान्यः पन्थाः पथः, तत एतेषां द्वन्द्वः, तथा पुरवराणां द्वारेषु, प्रतोलीष्वित्यर्थः, तथा रथ्याणां मुखानि–प्रवेशा मध्यकारा-मध्या एव कारशब्दस्य स्वार्थिकत्वाद्रथ्यामुखमध्यकारास्तेषु । किमित्याह—

वरवरिया घोसिज्जइ किमिच्छियं दिज्जए बहुविहीयं । सुरअसुरदेवदाणवनरिंदमहियाण निक्खमणे ॥ २४१ ॥

वरं याचध्वं वरं याचध्वमित्येवं घोषणा समयपरिभाषया वरवरिकोच्यते, सा वरवरिका पूर्वं शृङ्गाटिकादिषु घोष्यते, ततः कः किमिच्छति–यो यदिच्छति तस्य तद्दानं समयपरिभाषयैव किमिच्छकमुच्यते, किमिच्छकं यथा भवति एवं दीयते, एकमपि वस्त्वङ्गीकृत्य एतत्परिसमाप्या भवति अतो बहवो विधयो–मुक्ताफलप्रदानादिलक्षणा यस्मिंस्तद्बहुविधिकं, क इत्याह–सुरैः–वैमानिकज्योतिष्कैःअसुरैः–भवनपतिव्यन्तरैः, देवदानवनरेन्द्रैरिति इन्द्रग्रहणं प्रत्येकमभिसम्बध्यते, देवेन्द्रैः–शक्रादिभिः दानवेन्द्रैः-चमरादिभिः नरेन्द्रैः-चक्रवर्त्तिप्रभृतिभिर्म्महितानां भगवतां तीर्थकृतां निष्क्रमणे इति ॥ साम्प्रतमेकै-केन तीर्थकृता कियद्द्रव्यजातं संवत्सरेण दत्तमित्येतत्प्रतिपादयन्नाह—

तिण्णेव य कोडिसया अट्ठासीई अ होंति कोडीओ । असियं च सयसहस्सा एयं संवच्छरे दिण्णं ॥ २४२ ॥

त्रीण्येव कोटिशतानि अष्टाशीतिश्च भवन्ति कोटयः अशीतिश्च शतसहस्राणि ३८८८०००००० एतत्–एतावत्प्रमाण-मेकैकेन तीर्थकृता संवत्सरे दत्तम्, एतच्च प्रतिदिनदेयं त्रिभिः षष्ट्यधिकैर्वासरशतैर्गुणयित्वा परिभावनीयम् ॥ प्रथमवरव-रिका समाप्ता । सम्प्रत्यधिकृतद्वारार्थानुपात्येव वस्तु प्रतिपादयन्नाह—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

वीरं अरिट्ठनेमिं पासं मल्लिं च वासुपुज्जं च । एए मोत्तूण जिणे अवसेसा आसि रायाणो ॥ २४३ ॥
रायकुलेसुऽवि जाया विसुद्धवंसेसु खत्तियकुलेसुं । न य इच्छियाभिसेया कुमारवासंमि पव्वइया ॥ २४४ ॥
संती कुंथू य अरो अरहंता चेव चक्कवट्टी य । अवसेसा तित्थयरा मंडलिया आसि रायाणो ॥ २४५ ॥

वीरं-महावीरमरिष्टनेमिं पार्श्वनाथं मल्लिं वासुपूज्यं च, एतान् सर्वसङ्ख्यया पञ्च जिनान्-तीर्थकृतो मुक्त्वा अवशेषास्तीर्थकृतः-ऋषभस्वामिप्रभृतय आसन् राजानः, एते हि महावीरप्रभृतयः पञ्च तीर्थकृतो राजकुलेष्वपि विशुद्धवंशेषु क्षत्रियकुलेषु, राजकुलं हि किञ्चिदक्षत्रियकुलमपि भवति, यथा नन्दराजकुलमत उक्तं क्षत्रियकुलेषु जाता अपि, न ईप्सिताभिषेका-अभिलषितराज्याभिषेकाः, किन्तु कुमारवास एव प्रव्रजिताः-प्रव्रज्यां प्रतिपेदिरे, येऽपि च राजान ऋषभस्वामिप्रभृतयस्तेष्वपि शान्तिः कुन्थुः अर एते त्रयोऽर्हन्तश्चक्रवर्त्तिनोऽभवन्, अवशेषाः पुनस्तीर्थकरा आसन् राजानो-माण्डलिकाः स्वस्वमण्डलमात्राधिपतयः, परित्यागद्वारानुपातिता तु गाथात्रयस्यैवं परिभावनीया-उक्तलक्षणं राज्यं परित्यज्य भगवन्तः प्रव्रजिता इति ॥ गतं परित्यागद्वारम्, अधुना प्रत्येकद्वारमाह—

एगो भयवं वीरो पासो मल्ली य तिहि तिहि सएहिं । भयवंपि वासुपुज्जो छहिं पुरिससएहिं निक्खंतो ॥२४६॥
उग्गाणं भोगाणं रायन्नाणं च खत्तियाणं च । चउहिं सहस्सेहुसभो सेसा उ सहस्सपरिवारा ॥ २४७ ॥

एको भगवान् वीरो-वर्द्धमानस्वामी प्रव्रजितः, पार्श्वनाथो भगवांश्च मल्लिश्चिभिः त्रिभिः शतैः सह, भगवानपि वासुपूज्यः षड्भिः पुरुषशतैः सह निष्क्रान्तः—प्रव्रजितः । तथा उग्राणां भोजानां राजन्यानां क्षत्रियाणां च, एतेषां विशेषः प्रागे-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः

॥ २०४ ॥

व चोपदर्शितः, सर्वसङ्ख्यया चतुर्भिः सहस्रैः सह भगवान् ऋषभो निष्क्रान्तः, शेषास्तु–अजितस्वामिप्रभृतयः सहस्रपरिवारा निष्क्रान्ताः ॥ सम्प्रति प्रसङ्गतोऽत्रैव द्वारे ये यस्मिन् वयसि निष्क्रान्ता इत्येतदभिधित्सुराह—

वीरो अरिट्ठनेमी पासो मल्ली य वासुपुज्जो य । पढमवए पव्वइया सेसा पुण मज्झिमवयंमि ॥ २४८ ॥

वीरो–महावीरः अरिष्टनेमिः पार्श्वनाथो मल्लिर्वासुपूज्य इत्येते पञ्च तीर्थकृतः प्रथमवयसि–कुमारत्वलक्षणे प्रव्रजिताः, शेषाः पुनः–ऋषभस्वामिप्रभृतयो मध्यमे वयसि–यौवनलक्षणे वर्त्तमानाः प्रव्रजिताः ॥ गतं प्रत्येकद्वारमधुनोपधिद्वारमाह–

सव्वेऽवि एगदूसेण निग्गया जिणवरा चउव्वीसं । न य नाम अन्नलिंगे न य गिहिलिंगे कुलिंगे वा ॥ २४९ ॥

सर्वेऽपि भगवन्तोऽतीता अपि जिनवराः चतुर्विंशतिः-चतुर्विंशतिसङ्ख्याः, एतेन सर्वास्वप्यवसर्पिणीषूत्सर्पिणीषु च प्रत्येकं भरतक्षेत्रे चतुर्विंशतिरेव तीर्थकरा अभूवन्निति ख्यापितम्, 'एगदूष्येण' एकेन वस्त्रेण निर्गता–अभिनिष्क्रान्ताः, तद्यदि भगवन्तोऽप्येकदूष्येण निर्गता इति सोपधयोऽभवन्, किं पुनस्तन्मतानुवर्तिनः शिष्या न सोपधयः, तत्र य उपधिरासेवितो भगवद्भिः स साक्षादेवोक्तः, यः पुनर्विनेयेभ्यः स्थविरकल्पिकादिभेदभिन्नेभ्योऽनुज्ञातः स खलु ग्रन्थान्तरादवसेयः ॥ गतमुपधिद्वारम्, इदानीं लिङ्गद्वारं–तत्र सर्व एव तीर्थकृतस्तीर्थकरलिङ्ग एव निष्क्रान्ता, न तु नाम अन्यलिङ्गे—गृहिसाधुलिङ्गे कुलिङ्गे वा, अन्यलिङ्गाद्यर्थः प्रागेवाभिहितः ॥ सम्प्रति यो येन तपसा निष्क्रान्तस्तदभिधित्सुराह—

सुमइत्थ निच्चभत्तेण निग्गतो वासुपुज्ज जिण चउत्थेण । पासो मल्लीवि य अट्ठमेण सेसा उ छट्ठेणं ॥ २५० ॥

सुमतिरत्र–अस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विंशतौ तीर्थकृत्सु मध्ये नित्यभक्तेन–अनवरतभक्तेन निर्गतः–निष्क्रान्तः, वासु-

कुमारजिनादि प्रत्ये कोपधित पोद्धाराणि गा. २४३–५१

॥ २०४ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्यो जिनश्चतुर्थेन, एकेनोपवासेनेत्यर्थः, पार्श्वनाथो मल्लिरपि चाष्टमेन–त्रिभिरुपवासैः, शेषास्तु ऋषभस्वामिप्रभृतयः षष्ठेन–द्वाभ्यामुपवासाभ्यां निष्क्रान्ताः ॥ साम्प्रतमस्मिन्नेव निर्गमप्रस्तावे यो यत्र नगरे यत्र चोद्यानादौ निष्क्रान्तस्तदेतदभिधित्सुराह—

उसभो य विणीयाए बारवईए अरिट्ठवरनेमी । अवसेसा तित्थयरा निक्खंता जम्मभूमीसु ॥ २५१ ॥

ऋषभः–ऋषभस्वामी भगवान् विनीतायां नगर्यां निष्क्रान्तः, द्वारवत्यां अरिष्टनेमिः, अवशेषा–अजितस्वामिप्रभृतयस्तीर्थकरा निष्क्रान्ता जन्मभूमिषु, यत्र जातास्तत्र निष्क्रान्ता इति भावः ॥

उसभो सिद्धत्थवणंमि वासुपुज्जो विहारगिहगंमि । धम्मो य वप्पगाए नीलगुहाए मुणी नाम ॥ २५२ ॥
आसमपयंमि पासो वीरजिणिंदो य नायसंडंमि । अवसेसा पवइया (निक्खंता) सहसंबवणंमि उज्जाणे ॥२५३॥

ऋषभः–ऋषभस्वामी सिद्धार्थवने उद्याने निष्क्रान्तः, वासुपूज्यो विहारगृहके–विहारगृहकाभिधाने उद्याने, धर्म्मो–धर्म्मस्वामी भगवान् वप्रगायां–वप्रगाभिधाने उद्याने, तथा च वक्ष्यति–'सेसाण केवलाइं जेसुज्जाणेसु पवइया' एवं नीलगुफायां–नीलगुफाभिधाने उद्याने मुनिनामा–मुनिसुव्रतनामा तीर्थकरो निष्क्रान्तः, तथा आश्रमपदे–आश्रमपदाभिधान उद्याने पार्श्वनाथो निष्क्रान्तः, वीरजिनेन्द्रो ज्ञातखण्डाभिधाने उद्याने, अवशेषाः–अजितस्वामिप्रभृतयस्तीर्थकराः सहस्राम्रवने निष्क्रान्ताः ॥ इदानीं प्रसङ्गत एव निर्गमनकालं प्रतिपादयन्नाह—

पासो अरिट्ठनेमी सेज्जंसो सुमति मल्लिनामो य । पुव्वण्हे निक्खंता सेसा पुण पच्छिमण्हंमि ॥ २५४ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥२०५॥

पार्श्वनाथोऽरिष्टनेमिः श्रेयांसः सुमतिर्मल्लिनामा च, एते पञ्च तीर्थकृतः पूर्वाह्णे निष्क्रान्ताः, शेषाः पुनः—ऋषभस्वामिप्रभृतयः पश्चिमाह्णे ॥ सम्प्रति ग्रामाचारद्वारप्रतिपादनार्थमाह—

गामायारा विसया निसेविया ते कुमारवज्जेहिं । गामागराइएसु य केसि (सु) विहारो भवे कस्स ? ॥ २५५ ॥

ग्रामाचारा नाम विषया उच्यन्ते, ते विषया निसेविता—आसेविताः कुमारवर्जैः—कुमारभाव एव ये प्रव्रज्यां गृहीतवन्तः तान् मुक्त्वा शेषैः सर्वैस्तीर्थकृद्भिः, किमुक्तं भवति ?—वासुपूज्यमल्लिस्वामिपार्श्वनाथभगवदरिष्टनेमिव्यतिरिक्तैः सर्वैस्तीर्थकृद्भिरासेविता विषयाः, न तु वासुपूज्यप्रभृतिभिः, तेषां कुमारभाव एव व्रतग्रहणाभ्युपगमादिति, अथवा ग्रामाचारा नाम ग्रामाकरादिषु विहारास्ते वक्तव्याः यथा कस्य भगवतः केषु ग्रामाकरादिषु विहार आसीदिति । एतदेवाह—

मगहारायगिहाइसु मुणओ खेत्तारिएसु विहरिंसु । उसभो नेमी पासो वीरो य अणारिएसुंपि ॥ २५६ ॥

मन्यन्ते स्म जगतः समस्तस्यापि त्रिकालावस्थामिति मुनयो—भगवन्तस्तीर्थकृतस्ते सर्वेऽपि मगधादिषु जनपदेषु राजगृहादिषु नगरेषु क्षेत्रार्येषु—आर्यक्षेत्रेषु विहृतवन्तः, इह आर्यक्षेत्रचिन्तायां शास्त्रान्तरेषु मगधादयो जनपदा राजगृहादीनि नगराण्युक्तानि इत्यत्रापि 'मगहारायगिहाइसु' इत्युक्तम्, अन्यथा ऋषभस्वामिन आदितीर्थकरत्वात् तदनुरोधेन नगरचिन्तायां विनीतादिष्वित्युच्येतेति, ऋषभस्वामी अरिष्टनेमिः पार्श्वनाथो वीरश्च भगवानित्येते चत्वारस्तीर्थकृतोऽनार्येष्वपि क्षेत्रेषु विहृतवन्तः ॥ गतं ग्रामाचारद्वारम्, इदानीं परीषहद्वारमाह—

उदिता परीसहा सिं पराइया ते य जिणवरिंदेहिं । नव जीवाइपयत्थे उवलंभेऊण निक्खंता ॥ २५७ ॥

निष्क्रमणोद्यान-कालग्रामाचाराः (विहाराः) गा. २५१-६

॥२०५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

उदिताः परीषहाः—शीतोष्णादयः एषां—भगवतां तीर्थकृतां, परं ते परीषहाः सर्वैरपि जिनवरेन्द्रैः पराजिताः। गतं परीषहद्वारम्॥ अधुना जीवोपलम्भद्वारमाह—'नव जीवाइ'इत्यादि, नव जीवादीन् आदिशब्दादजीवास्रवबन्धसंवरपुण्यपापनिर्जरामोक्षपरिग्रहः पदार्थानुपलभ्य सर्वे निष्क्रान्ताः॥ गतं जीवोपलम्भद्वारम्, इदानीं श्रुतलाभादिद्वाराणि प्रतिपादयति—

पढमस्स बारसंगं सेसाणिक्कारसंगसुयलंभो। पंच जमा पढमंतिमजिणाण सेसाण चत्तारि॥ २५८॥
पच्चक्खाणमिणं संजमो य पढमंतिमाण दुविगप्पो। सेसाणं सामइतो सत्तरसंगो अ सव्वेसिं॥ २५९॥

प्रथमस्य—भगवत ऋषभस्वामिनः पूर्वभवे श्रुतलाभः परिपूर्णं द्वादशाङ्गम्, अवशेषाणाम्—अजितस्वामिप्रभृतीनामेकादशाङ्गानि, यस्य च यावान् पूर्वभवे श्रुतलाभः तस्य तावान् तीर्थकरजन्मन्यपि अनुवर्त्तते, गतं श्रुतलाभद्वारम्॥ अधुना प्रत्याख्यानद्वारमाह—प्रथमजिनस्य—ऋषभस्वामिनोऽन्तिमजिनस्य—वर्द्धमानस्वामिन इदं प्रत्याख्यानं, यदुत पञ्च यमाः—प्राणातिपातनिवृत्त्यादीनि पञ्च महाव्रतानि, शेषाणाम्—अजितस्वामिप्रभृतीनां मध्यमानां द्वाविंशतितीर्थकृतां चत्वारो यमाः, मैथुनव्रतवर्जानि शेषाणि चत्वारि महाव्रतानीत्यर्थः, तेषां मैथुनस्य परिग्रहेऽन्तर्भावविवक्षणात्, नापरिगृहीता स्त्री परिभुज्यते इति न्यायात्, संयमोऽपि—सामायिकादिरूपः प्रथमान्तिमजिनयोर्द्वैविकल्पः, इत्वरं सामायिकं छेदोपस्थापनीयं चेत्यर्थः, शेषाणां—मध्यमानां द्वाविंशतितीर्थकृतां यावत्कथिकमेवैकं सामायिकं, न शेषं छेदोपस्थापनादि, तथाकल्पत्वात्, सप्तदशाङ्गः—सप्तदशभेदः पुनः, चः पुनरर्थे, सर्वेषां तीर्थकृतामभूत्, ते च सप्तदश भेदा अमी—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥२०६॥

"पञ्चास्रवाद्विरमणं पञ्चेन्द्रियनिग्रहः कषायजयः । दण्डत्रयविरतिश्चेति संयमः सप्तदशभेदः ॥ १ ॥" सम्प्रति छद्मस्थतपःकर्म्मप्रतिपादनार्थमाह—

वाससहस्सं बारस चोद्दस अट्ठार वीस वरिसाइं । मासा छन्नव तिण्णि य चउतिगदुगमेक्कगदुगं च ॥ २६० ॥
तियदुगएक्कग सोलस वासा तिण्णि य तहेवऽहोरत्तं । मासेक्कारस नवगं चउपण्णदिणाइं चुलसीइं ॥ २६१ ॥
तह बारस वरिसाइं जिणाण छउमत्थकालपरिमाणं । उग्गं च तवोकम्मं विसेसतो वद्धमाणस्स ॥ २६२ ॥

भगवत ऋषभस्वामिनः छद्मस्थकालो वर्षसहस्रम्, अजितस्वामिनो द्वादश वर्षाणि, सम्भवनाथस्य चतुर्दश वर्षाणि, अभिनन्दननाथस्याष्टादश, सुमतिस्वामिनो विंशतिवर्षाणि, पद्मप्रभस्य षण्मासाः, सुपार्श्वस्य नव, चन्द्रप्रभस्य त्रयः, सुविधिस्वामिनश्चत्वारः, शीतलस्य त्रयः, श्रेयांसस्य द्वौ, वासुपूज्यस्यैको, विमलनाथस्य द्वौ मासौ, अनन्तजिनस्य त्रीणि वर्षाणि, धर्म्मस्य द्वे वर्षे, शान्तिनाथस्यैकं वर्षं, कुन्थुनाथस्य षोडश वर्षाणि, अरनाथस्य त्रीण्यहोरात्राणि, मल्लिस्वामिन एकमहोरात्रं, सुव्रतस्वामिन एकादश मासाः, नमिनाथस्य मासनवकम्, अरिष्टनेमेश्चतुष्पञ्चाशद्दिनानि, भगवतः पार्श्वनाथस्य चतुरशीतिर्दिनानि, वर्द्धमानस्वामिनो द्वादश वर्षाणि, एतत् जिनानां-तीर्थकृतां छद्मस्थकालपरिमाणं, सर्वेषामपि च छद्मस्थकाले उग्रं तपःकर्म, विशेषतो वर्द्धमानस्वामिन उग्रमिति ॥ सम्प्रति ज्ञानोत्पादद्वारमाह—

फग्गुणबहुलेक्कारसि उत्तरसाढाहिं नाणमुसभस्स । पोसेक्कारसिसुद्धे रोहिणिजोगेसु अजियस्स ॥ २६३ ॥
कत्तियबहुले पंचमिमिगसिरजोएण संभवजिणस्स । पोसे सुद्धचउद्दसि अभीइ अभिनंदणजिणस्स ॥ २६४ ॥

परीषहजी-वोपलंभश्रु-तछद्मस्थ-त्वज्ञानका-लाः गा. २५७–७० ॥२०६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्ते सुद्धेक्कारसि महाहिं सुमइस्स नाणमुप्पन्नं । चेत्तस्स पुन्निमाए पउमाभजिणस्स चित्ताहिं ॥ २६५ ॥
फग्गुणबहुले छट्ठी विसाहजोगे सुपासनामस्स । फग्गुणबहुले सत्तमि अणुराह ससिप्पभजिणस्स ॥ २६६ ॥
कित्तियसुद्धे तइया मूले सुविहिस्स पुप्फदंतस्स । पोसे बहुलचउद्दसि पुव्वासाढाहिं सीयल[जिण]स्स ॥ २६७ ॥
पन्नरसि माहबहुले सेज्जंसजिणस्स सवणजोएण । सयभिसय वासुपुज्जे बीयाए माहसुद्धस्स ॥ २६८ ॥
पोसस्स सुद्धछट्ठी उत्तरभद्दवय विमलनामस्स । वइसाहबहुलचउद्दसि रेवइजोएण णंतस्स ॥ २६९ ॥
पोसस्स पुण्णिमाए नाणं धम्मस्स पुस्सजोएणं । पोसस्स सुद्धनवमी भरणीजोएण संतिस्स ॥ २७० ॥
चित्तस्स सुद्धतइया कत्तियजोएण नाण कुंथुस्स । कत्तियसुद्धे बारसि अरस्स नाणं तु रेवईहिं ॥ २७१ ॥
मगसिरसुद्धएक्कारसीएँ मल्लिस्स अस्सिणीजोए । फग्गुणबहुले बारसि सवणेणं सुव्वयजिणस्स ॥ २७२ ॥
मगसिरसुद्धेक्कारसि अस्सिणिजोएण नमिजिणिंदस्स । आसोयऽमावसाए नेमिजिणिंदस्स चित्ताहिं ॥ २७३ ॥
चित्ते बहुलचउत्थी विसाहजोएण पासनामस्स । वइसाहसुद्धदसमी हत्थुत्तरजोगि वीरस्स ॥ २७४ ॥
एता द्वादशापि गाथा निगदसिद्धाः ॥ सम्प्रति कस्य कस्मिन् दिवसभागे ज्ञानमुत्पन्नमिति प्रतिपादयति—
तेवीसाए नाणं उप्पन्नं जिणवराण पुव्वण्हे । वीरस्स पच्छिमण्हे पमाणपत्ताए चरमाए ॥ २७५ ॥
त्रयोविंशति(तेः) जिनवराणां तीर्थकृतां ज्ञानमुत्पन्नं पूर्वाह्णे, सूरोद्गमनमुहूर्त्ते इत्यर्थः, तथा चोक्तं चूर्णौ—"तेवीसाए तित्थगराणं सूरुग्गमणमुहुत्ते एगराइयाए पडिमाए नाणमुप्पन्न"मिति, वीरस्य भगवतः—अपश्चिमतीर्थकृतः पश्चिमाह्णे,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्रापि प्रमाणप्राप्तायां चरमायां पौरुष्यामिति, अन्ये त्वभिदधति–द्वाविंशतेः पूर्वाह्णे ज्ञानमुत्पन्नं मल्लिस्वामिमहावीरयोः पुनरपराह्णे इति ॥ साम्प्रतमधिकृतद्वार एव येषु क्षेत्रेषूत्पन्नं तदभिधानार्थमाह—

उसभस्स पुरिमताले वीरस्सुजुवालियानदीतीरे । सेसाण केवलाइं जेसुज्जाणेसु पव्वइया ॥ २७६ ॥

ऋषभस्य–भगवतः आदितीर्थकरस्य विनीतायाः प्रत्यासन्नं यत्पुरिमतालं नगरं तत्र ज्ञानमुत्पन्नं, तत्रापि शकटमुखे उद्याने न्यग्रोधपादपस्याधो निविष्टस्य सूर्योद्गमनवेलायां, वीरस्य भगवत ऋज्वालिकानदीतीरे, तत्र गृहपतिश्यामाकक्षले शालतरोरधःस्थितस्य, शेषाणां तु तीर्थकृतां केवलज्ञानानि येषूद्यानेषु प्रव्रजितास्तत्रोत्पन्नानि ॥ साम्प्रतं यस्य येन तपसा समुत्पन्नं तस्य तत्तपः प्रतिपादयन्नाह—

अट्ठमभत्तंमी पासोसहमल्लिरिट्ठनेमीणं । वसुपुज्जस्स चउत्थेण छट्ठभत्तेण सेसाणं ॥ २७७ ॥

पार्श्वनाथऋषभस्वामिमल्लिनाथारिष्टनेमीनामष्टमभक्तान्ते–उपवासत्रयपर्यन्ते केवलज्ञानमुदपादि, वासुपूज्यस्य पुनर्भक्तचतुर्थेन, शेषाणां षष्ठभक्तेन ॥ गतं ज्ञानोत्पादद्वारम्, सम्प्रति सङ्ग्रहद्वारं विवरीषुः प्रथमतो यतिसङ्ग्रहपरिमाणमाह—

चुलसीइं च सहस्सा एगं च दुवे य तिण्णि लक्खाइं । तिण्णि य वीसहियाइं तीसहियाइं च तिन्नेव ॥ २७८ ॥
तिन्नि य अट्ठाइज्जा दुवे य एगं च सयसहस्साइं । चुलसीइं च सहस्सा बिसत्तरिं अट्ठसट्ठिं च ॥ २७९ ॥
छावट्ठिं चोवट्ठिं बासट्ठिं सट्ठिमेव पन्नासा । चत्ता तीसा वीसा अट्ठारस सोलस सहस्सा ॥ २८० ॥
चोद्दस य सहस्साइं जिणाण जइसीससंगहपमाणं । अज्जासंगहमाणं उसभाईणं अतो वोच्छं ॥ २८१ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भगवत ऋषभस्वामिनश्चतुरशीतिसहस्राणि श्रमणानाम्, एकं लक्षमजितस्य द्वे लक्षे सम्भवनाथस्य त्रीणि लक्षाण्यभिनन्दनस्य सुमतेः त्रीणि लक्षाणि विंशतिसहस्राभ्यधिकानि पद्मप्रभस्य त्रीणि त्रिंशत्सहस्राधिकानि सुपार्श्वस्य त्रीणि लक्षाणि चन्द्रप्रभस्य अर्द्धतृतीयानि लक्षाणि सुविधेर्द्वे लक्षे शीतलस्य एकं लक्षं श्रेयांसस्य चतुरशीतिः श्रमणानां सहस्राणि वासुपूज्यस्य द्वासप्ततिः सहस्राणि विमलस्य अष्टषष्टिः सहस्राणि अनन्तजिनस्य षट्षष्टिः सहस्राणि धर्म्मनाथस्य चतुःषष्टिः सहस्राणि शान्तिनाथस्य द्वाषष्टिः सहस्राणि कुन्थुनाथस्य षष्टिः सहस्राणि अरनाथस्य पञ्चाशत्सहस्राणि मल्लिनाथस्य चत्वारिंशत्सहस्राणि मुनिसुव्रतस्वामिनस्त्रिंशत्सहस्राणि नमिस्वामिनो विंशतिसहस्राणि अरिष्टनेमेरष्टादश सहस्राणि पार्श्वनाथस्य षोडश सहस्राणि भगवतो महावीरस्य चतुर्दश सहस्राणि, एतद्यतिशिष्यसङ्ग्रहप्रमाणं जिनानाम्-ऋषभादीनां यथाक्रममवसातव्यं, तच्च तथैव भावितम्॥ अत ऊर्ध्वमार्यासङ्ग्रहप्रमाणमृषभादीनां जिनानां क्रमेण वक्ष्ये॥ प्रतिज्ञातमेव निर्वाहयति-

तिण्णेव य लक्खाइं तिन्नि य तीसाइं तिन्नि छत्तीसा। तीसा य छच्च पंच य तीसा चउरो य वीसाइं ॥२८२॥
चत्तारि य तीसाइं असीउत्तर तिण्णि तिण्णिमित्तो य। वीसुत्तरं छलहियं तिसहस्सऽहियं च लक्खं च ॥२८३॥
लक्खं अट्ठसयाणि य बासट्ठिसहस्स चउसय समग्गा। एगट्ठी छच्च सया सट्ठिसहस्सा सया छच्च ॥ २८४ ॥
सट्ठि पणपन्न पन्नेगचत्त चत्ता तहऽट्ठतीसं च। छत्तीसं च सहस्सा अज्जाणं संगहो एसो ॥ २८५ ॥

भगवत आदितीर्थकरस्यार्यिकाणां त्रीणि लक्षा अजितस्वामिनस्त्रीणि लक्षाणि त्रिंशानि-त्रिंशत्सहस्राभ्यधिकानि सम्भवनाथस्य त्रीणि लक्षाणि षट्त्रिंशत्सहस्राभ्यधिकानि अभिनन्दनस्य लक्षाणि षट् त्रिंशानि-त्रिंशत्सहस्राभ्यधिकानि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुमतिनाथस्य पञ्च लक्षाणि त्रिंशत्सहस्राधिकानि पद्मप्रभस्य चत्वारि लक्षाणि विंशतिसहस्राधिकानि सुपार्श्वस्य चत्वारि लक्षाणि त्रिंशत्सहस्राभ्यधिकानि चन्द्रप्रभस्वामिनस्त्रीणि लक्षाणि अशीतिसहस्रोत्तराणि सुविधिस्वामिनस्त्रीणि परिपूर्णानि लक्षाणि, 'तिन्निमित्तो य'इति त्रिलक्षमात्रमार्यासङ्ग्रह इति गम्यते इत्यर्थः, शीतलनाथस्य विंशत्युत्तरं—विंशतिसहस्राधिकं लक्षं श्रेयांसस्य षट्सहस्राधिकं लक्षं वासुपूज्यस्य त्रिसहस्राधिकं लक्षं विमलनाथस्य परिपूर्णं लक्षम् अनन्तजितो लक्षमेकमष्टौ च शतानि धर्म्मनाथस्य द्वाषष्टिसहस्राणि चतुःशताभ्यधिकानि शान्तिनाथस्य एकषष्टिः सहस्राणि षट् शतानि कुन्थुनाथस्य षष्टिः सहस्राणि षट् शतानि अरनाथस्य षष्टिः सहस्राणि मल्लिस्वामिनः पञ्चपञ्चाशत्सहस्राणि मुनिसुव्रतस्वामिनः पञ्चाशत्सहस्राणि नमिनाथस्य एकचत्वारिंशत्सहस्राणि अरिष्टनेमेश्चत्वारिंशत्सहस्राणि पार्श्वनाथस्याष्टात्रिंशत्सहस्राणि भगवतो वर्द्धमानस्वामिनः षट्त्रिंशत्सहस्राणि, एवं ऋषभादीनां जिनानां यथाक्रममार्यिकासङ्ग्रहः ॥

पढमाणुयोगसिद्धो पत्तेयं सावयाइयाणं च । नेओ सव्वजिणाणं सीसाणं संगहो कमसो ॥ २८६ ॥

श्रावकादीनामादिशब्दात् श्राविकाचतुर्दशपूर्वधरादिपरिग्रहः, शिष्याणां सङ्ग्रहः क्रमशो–यथाक्रमं सर्वजिनानां प्रथमानुयोगसिद्धः–प्रथमानुयोगप्रतीतो ज्ञेयः, तत्र ऋषभस्वामिअरिष्टनेमिमल्लीपार्श्वनाथवर्द्धमानस्वामिनां यथासम्प्रदायमुपदर्श्यते–भगवत आदितीर्थकृत ऋषभसेनप्रमुखाणि चतुरशीतिश्रमणसहस्राणि ब्राह्मीसुन्दरीप्रभृतीनि त्रीण्यार्यिकाणां लक्षाणि श्रेयांसप्रभृतीनि त्रीणि श्रमणोपासकलक्षाणि पञ्चसहस्राभ्यधिकानि सुभद्राप्रमुखानि पञ्च श्रमणोपासिकाशतसहस्राणि चतुष्पञ्चाशत्सहस्राभ्यधिकानि चत्वारिंशत्सहस्राणि सप्तशताभ्यधिकानि चतुर्दशपूर्विणां नव सहस्राण्यवधिज्ञानिनां

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केवलज्ञानिनां विंशतिसहस्राणि २००००, विंशतिसहस्राणि षट्शताभ्यधिकानि २०६०० वैक्रियलब्धिमतां, द्वादश सह स्राणि षट् शतानि पञ्चाशदधिकानि १२६५० विपुलमतीनां, द्वादश सहस्राणि षट् शतानि पञ्चाशदधिकानि १२६५० वादिनां, द्वाविंशतिसहस्राणि नव शतानि २२९०० अनुत्तरोपपातिनां, विंशतिः श्रमणसहस्राणि सिद्धानि २०००० चत्वा-रिंशदार्यिकासहस्राणि सिद्धानि ४०००० सर्वसङ्ख्यया षष्टिरन्तेवासिसहस्राणि सिद्धानि ६०००० । भगवतोऽरिष्टनेमेर्वरदत्त-प्रमुखाण्यष्टादश श्रमणसहस्राणि १८००० यक्षिणीप्रमुखाणि चत्वारिंशदार्यिकासहस्राणि ४०००० नन्दप्रमुखानां श्रम-णोपासकानामेकं शतसहस्रमेकोनसप्ततिश्च सहस्राणि १६९००० महासुव्रताप्रमुखाणां श्रमणोपासिकानां त्रीणि लक्षाणि षट्त्रिंशत्सहस्राणि ३३६०० चत्वारि शतानि ४०० चतुर्दशपूर्विणां पञ्चदश शतानि १५०० अवधिज्ञानिनां पञ्चदश शतानि १५०० केवलज्ञानिनां पञ्चदश शतानि वैक्रियलब्धिमतां १५०० दश शतानि १००० विपुलमतीनां अष्टादश शतानि १८०० वादिनां षोडश शतानि १६०० अनुत्तरोपपातिनां । भगवतः पार्श्वनाथस्य आर्यदिन्नप्रमुखाणि षोडश श्रमणसह-स्राणि १६००० पुष्पचूलाप्रमुखाण्यष्टात्रिंशदार्यिकासहस्राणि ३८००० सुनन्दाप्रमुखाणामेकं लक्षं चतुःषष्टिसहस्राणि श्रमणो-पासकानां १६४००० नन्दिनीप्रमुखाणां श्रमणोपासिकानां त्रीणि लक्षाणि सप्तविंशतिः सहस्राणि ३२७००० अर्द्धचतुर्थानि शतानि ३५० चतुर्दशपूर्विणां चतुर्दश शतानि १४०० अवधिज्ञानिनां दश शतानि केवलज्ञानिनामेकादश शतानि ११०० वैक्रियलब्धिमतामर्द्धाष्टमानि शतानि ७५० विपुलमतीनां षट् शतानि ६०० वादिनां द्वादश शतानि १२०० अनुत्तरोपपातिनां । श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य इन्द्रभूतिप्रमुखाणि चतुर्दश श्रमणसहस्राणि १४००० आर्यचन्दना-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रमुखाणि षट्त्रिंशदार्यिकासहस्राणि ३६००० शङ्खप्रमुखाणां श्रमणोपासकानामेकं लक्षं एकोनषष्टिः सहस्राणि १५९००० सुलसारेवतीप्रमुखाणां श्रमणोपासिकानां त्रीणि शतसहस्राणि अष्टादश सहस्राणि ३१८००० त्रीणि शतानि चतुर्दश-पूर्विणां ३०० त्रयोदश शतानि १३०० अवधिज्ञानिनां सप्त शतानि ७०० केवलज्ञानिनां सप्त शतानि ७०० वैक्रिय-लब्धिमतां पञ्च शतानि ५०० विपुलमतीनां चत्वारि शतानि ४०० वादिनामष्टौ शतानि ८०० अनुत्तरोपपातिनाम् ॥ गतं सङ्घहद्वारम्, अधुना तीर्थद्वारमाह—

तित्थं चाउव्वण्णो संघो सो पढमए समोसरणे । उप्पण्णो उ जिणाणं वीरजिणिंदस्स बीयंमि ॥ २८७ ॥

तीर्थं नाम प्रवचनं, तच्च निराधारं न भवतीति चतुर्वर्णः सङ्घ उच्यते, स जिनानाम्–ऋषभादीनां प्रथम एव समव-सरणे उत्पन्नः, वीरजिनेन्द्रस्य पुनर्द्वितीये समवसरणे, मध्यमायां पुरि, यत्र हि केवलज्ञानमुत्पन्नं तत्र तथाकल्पत्वात्सम-वसरणमभूत् यावता न तत्र सङ्घो जातः ॥ गतं तीर्थद्वारम्, अधुना गणद्वारमाह—

चुलसीइ पंचणउई बिउत्तरं सोलसुत्तरसयं च । सत्तहियं पणनउई तेणउइं अट्ठसीई य ॥ २८८ ॥
एक्कासीइ छावत्तरी य छावट्ठि सत्तवन्ना य । पन्ना तेयालीसा छत्तीसा चेव पणतीसा ॥ २८९ ॥
तेतीसऽट्ठावीसा अट्ठारस चेव तहय सत्तरस । एक्कारसदसनवगं गणाण माणं जिणिंदाणं ॥ २९० ॥

भगवत आदितीर्थकरस्य चतुरशीतिर्गणा, गणो नामेह एकवाचनाचारक्रियास्थानां समुदायो, न कुलसमुदाय इति पूर्वसूरयः, अजितस्वामिनः पञ्चनवतिर्गणाः सम्भवनाथस्य द्व्युत्तरं शतम् अभिनन्दनस्य षोडशोत्तरं शतं सुमतिनाथस्य

Jain Education Inte For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिपूर्णं शतं पद्मप्रभस्य सप्ताधिकं शतं सुपार्श्वस्य पञ्चनवतिः चन्द्रप्रभस्य त्रिनवतिः सुविधिस्वामिनोऽष्टाशीतिः शीतलस्य एकाशीतिः श्रेयांसस्य षट्सप्ततिः वासुपूज्यस्य षट्षष्टिः विमलस्य सप्तपञ्चाशत् अनन्तजितः पञ्चाशत् धर्म्मस्य त्रिचत्वारिंशत् शान्तिनाथस्य षट्त्रिंशत् कुन्थुनाथस्य पञ्चत्रिंशत् अरजिनस्य त्रयस्त्रिंशत् मल्लिस्वामिनोऽष्टाविंशतिः मुनिसुव्रतस्वामिनोऽष्टादश नमिनाथस्य सप्तदश अरिष्टनेमेरेकादश पार्श्वनाथस्य दश वर्द्धमानस्वामिनो नव, एतत् जिनेन्द्राणाम्–ऋषभादीनां जिनानां यथाक्रमं गणानां मानं–परिमाणं ॥ सम्प्रति गणधरप्रतिपादनार्थमाह—

एक्कारस उ गणहरा वीरजिणिंदस्स सेसयाणं तु । जावइया जस्स गणा तावइया गणधरा तस्स ॥ २९१ ॥

गणधरा नाम मूलसूत्रकर्त्तारः, ते च वीरजिनस्य एकादश, गणास्तु नव, द्वयोर्युगलयोरेकैकवाचनाचारक्रियास्थत्वात्, शेषाणां तु जिनवरेन्द्राणां यस्य यावन्तो गणास्तस्य तावन्तो गणधराः, प्रतिगणधरं भिन्नभिन्नवाचनाचारक्रियास्थत्वात् ॥ गतं गणधरद्वारम्, इदानीं धर्मोपायस्य देशका इत्येतद्व्याचिख्यासुराह—

धम्मोवाओ पवयणमहवा पुव्वाइं देसया तस्स । सव्वजिणाण गणहरा चोद्दसपुव्वी उ ते तस्स ॥ २९२ ॥

धर्म्मोपायो नाम प्रवचनं, तदन्तरेण धर्म्मस्यासम्भवात्, अथवा पूर्वाणि, तस्य–धर्म्मोपायस्य देशकाः सर्वजिनानां गणधराः, तेषां मूलसूत्रकर्तृत्वात्, अथवा ये यस्य तीर्थकृतश्चतुर्दशपूर्विणस्ते धर्मोपायस्य देशकाः, परिपूर्णश्रुततया तेषां यथावस्थितवस्तुदेशकत्वात् ॥

सामाइयाइया वा वयजीवनिकायभावणा पढमं । एसो धम्मोवादो जिणेहिं सव्वेहिं उवइट्ठो ॥ २९३ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

वाशब्दः प्रकारान्तरताद्योतनार्थः, अथवा या प्रथमं व्रतजीवनिकायभावना महाव्रतविषयषड्जीवनिकाययथावस्थितपरिज्ञानसम्यक्श्रद्धानसंरक्षणाध्यवसायरूपा भावना सामायिकादिका–रागद्वेषपरिहारेण समभावादिका एष धर्मोपायः, तमन्तरेण सम्यक्चारित्ररूपधर्म्मासम्भवात्, इत्थंभूतश्च धर्म्मोपायो जिनैः सर्वैरप्युपदिष्टः, ततो धर्म्मोपायस्य देशकास्त एव जिना इति ॥ उक्तं धर्म्मोपायदेशकद्वारम्, अधुना पर्यायद्वारमाह—

उसभस्स पुव्वलक्खं पुव्वंगूणमजियस्स तं चेव । चउरंगूणं लक्खं पुणो पुणो जाव सुविहित्ति ॥ २९४ ॥
पणुवीसं तु सहस्सा पुव्वाणं सीयलस्स परियायो । लक्खाइं एक्कवीसं सिज्जंसजिणस्स वासाणं ॥ २९५ ॥
चउप्पन्नं पन्नारस तत्तो अद्धट्ठमाइं लक्खाइं । अट्ठाइज्जाइं तत्तो वाससहस्साइं पणुवीसं ॥ २९६ ॥
तेवीसं च सहस्सा सयाणि अद्धट्ठमाणि य हवंति । एगवीसं च सहस्सा वाससऊणा य पणपन्नं ॥ २९७ ॥
अद्धट्ठमा सहस्सा अट्ठाइज्जाइ सत्त य सयाइं । सयरी विचित्तवासा दिक्खाकालो जिणिंदाणं ॥ २९८ ॥

ऋषभस्य भगवतः श्रमणपर्याय एकं पूर्वलक्षम्, अजितस्वामिनस्तदेव एकं पूर्वलक्षमेकेन पूर्वाङ्गेन न्यूनं, पूर्वाङ्गं नाम चतुरशीतिवर्षलक्षाणि, अत ऊर्द्धं चतुरङ्गोनं पूर्वलक्षं पुनः पुनस्तावद्वक्तव्यं यावत्सुविधिः, तद्यथा–सम्भवनाथस्य व्रतपर्यायः एकं पूर्वलक्षं चतुर्भिरङ्गैरूनं, अभिनन्दनस्य एकं पूर्वलक्षमष्टभिः पूर्वाङ्गैरूनं, सुमतिनाथस्य एकं पूर्वलक्षं द्वादशभिः पूर्वाङ्गैरूनं, पद्मप्रभस्य एकं पूर्वलक्षं षोडशभिः पूर्वाङ्गैर्हीनं, सुपार्श्वस्यैकं पूर्वलक्षं विंशत्या पूर्वाङ्गैर्हीनं, चन्द्रप्रभस्य एकं पूर्वलक्षं चतुर्विंशत्या पूर्वाङ्गैर्हीनं, सुविधिनाथस्य एकं पूर्वलक्षमष्टाविंशत्या पूर्वाङ्गैर्हीनम्, पञ्चविंशतिः पूर्वाणां

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

सहस्राणि शीतलस्य पर्यायो–व्रतपर्यायः श्रेयांसजिनस्य वर्षाणां लक्षाण्येकविंशतिः वासुपूज्यस्य चतुष्पञ्चाशद्वर्षलक्षाणि विमलनाथस्य पञ्चदश वर्षलक्षाणि ततोऽनन्तरमनन्तजितोऽर्द्धाष्टमानि–सार्द्धानि सप्त वर्षलक्षाणि व्रतपर्यायः धर्म्मनाथस्यार्द्धतृतीयानि वर्षशतसहस्राणि शान्तिनाथस्य पञ्चविंशतिर्वर्षसहस्राणि कुन्थुनाथस्य त्रयोविंशतिर्वर्षसहस्राणि शतानि चार्द्धाष्टमानि अरस्वामिन एकविंशतिर्वर्षसहस्राणि मल्लिनाथस्य वर्षशतोनानि पञ्चपञ्चाशद्वर्षसहस्राणि मुनिसुव्रतस्वामिनोऽर्द्धाष्टमानि वर्षसहस्राणि नमिनाथस्यार्द्धतृतीयानि वर्षशतानि (सहस्राणि) अरिष्टनेमेः सप्त शतानि पार्श्वनाथस्य सप्ततिर्वर्षाणां वर्द्धमानस्वामिनो द्वाचत्वारिंशत्, एष यथाक्रमं जिनेन्द्राणां—ऋषभादीनां दीक्षाकालो–व्रतपर्यायः ॥

साम्प्रतमस्मिन्नेव पर्यायद्वारे भगवतां वैविक्त्येन कुमारादिपर्यायान् प्रतिपादयन्नाह—

उसभस्स कुमारत्तं पुव्वाणं वीसई सयसहस्सा । तेवट्ठी रज्जंमि उ अणुपालेऊण निक्खंतो ॥ २९९ ॥
अजियस्स कुमारत्तं अट्ठारस पुवसयसहस्साइं । तेवण्णं रज्जंमी पुव्वंगं चेव बोद्धव्वं ॥ ३०० ॥
पन्नरस सयसहस्सा कुमारवासो उ संभवजिणस्स । चोयालीसं रज्जे चउरंगं चेव बोद्धव्वं ॥ ३०१ ॥
अद्धत्तेरस लक्खा पुव्वाणऽभिणंदणे कुमारत्तं । छत्तीसा अद्धं चिय अट्ठंगा चेव रज्जंमि ॥ ३०२ ॥
सुमइस्स कुमारत्तं हवंति दस पुवसयसहस्साइं । अउणत्तीसं रज्जे बारस अंगाइं बोद्धव्वा ॥ ३०३ ॥
पउमस्स कुमारत्तं पुव्वाणद्धट्ठमा सयसहस्सा । अद्धं च एक्कवीसा सोलस अंगा य रज्जंमि ॥ ३०४ ॥
पुवसयसहस्साइं पंच सुपासे कुमारवासो उ । चउद्दस पुण रज्जंमी वीसं अंगा य बोद्धव्वा ॥ ३०५ ॥

आ.सू. ३६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥२११॥

अट्ठाइज्जा लक्खा कुमारवासो उ सत्तिपहे होइ । अद्धं छविप रज्जे चउवीसंगा य बोद्धवा ॥ ३०६ ॥
पण्णं पुव्वसहस्सा कुमारवासो उ पुप्फदंतस्स । तावइयं रज्जंमी अट्ठावीसं च पुव्वंगा ॥ ३०७ ॥
पणुवीससहस्साइं पुव्वाणं सीयले कुमारत्तं । तावइयं परियाओ पन्नासं चेव रज्जंमि ॥ ३०८ ॥
वासाण कुमारत्तं एगवीसं लक्ख होइ सेज्जंसे । तावइयं परियायो बायालीसं च रज्जंमि ॥ ३०९ ॥
गिहवासे अट्ठारस वासाणं सयसहस्स नियमेणं । चउपन्न सयसहस्सा परियाओ होइ वसुपुज्जे ॥ ३१० ॥
पन्नरस सयसहस्सा कुमारवासो उ तीसई रज्जे । पन्नरस सयसहस्सा परियायो होइ विमलस्स ॥ ३११ ॥
अद्धट्ठमलक्खाइं वासाणमणंतई कुमारत्ते । तावइयं परियायो रज्जंमि य होंति पन्नरस ॥ ३१२ ॥
धम्मस्स कुमारत्तं वासाणऽड्ढाइयाइं लक्खाइं । तावइयं परियाओ रज्जे पुण होंति पंचेव ॥ ३१३ ॥
संतिस्स कुमारत्ते मंडलिचक्किपरियाय चउसुंपि । पत्तेयं पत्तेयं वाससहस्साइं पणवीसं ॥ ३१४ ॥
एमेव य कुंथुस्सवि चउसुवि ठाणेसु होंति पत्तेयं । तेवीससहस्साइं वरिसाणऽद्धट्ठम सया य ॥ ३१५ ॥
एमेव अरजिणिंदस्स चउसुवि ठाणेसु होंति पत्तेयं । एगवीस सहस्साइं वासाणं हुंति नायवा ॥ ३१६ ॥
मल्लिस्सवि वाससयं गिहवासे सेसयं तु परियायो । चउपण्णसहस्साइं नव चेव सयाइं पुण्णाइं ॥ ३१७ ॥
अद्धट्ठमा सहस्सा कुमारवासो उ सुव्वयजिणस्स । तावइयं परियाओ पन्नरस सहस्स रज्जंमि ॥ ३१८ ॥
नमिणो कुमारवासो वाससहस्साइं दोन्नि अद्धं च । तावइयं परियाओ पंच सहस्साइं रज्जंमि ॥ ३१९ ॥

जिनानां कुमारादि-पर्यायः गा. २९९-३२१ ॥२११॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

तिन्नेव य वाससया कुमारवासो अरिट्ठनेमिस्स । सत्त य वाससयाइं सामण्णे होइ परियाओ ॥ ३२० ॥
पासस्स कुमारत्तं तीसं परियाउ सत्तरी होइ । तीसा य वद्धमाणे बायालीसा य परियाओ ॥ ३२१ ॥

ऋषभस्य कुमारत्वं पूर्वाणाम्—उक्तस्वरूपाणां विंशतिः शतसहस्राणि—लक्षाणि, त्रिषष्टिं पूर्वलक्षाणि राज्येऽनुपाल्य-गमयित्वा पश्चान्निष्क्रान्तः, तत एकं पूर्वलक्षं शेषं व्रतपर्यायः । अजितस्य भगवतोऽष्टादश पूर्वशतसहस्राणि कुमारत्वं, त्रिपञ्चाशत्पूर्वशतसहस्राण्येकं च पूर्वाङ्गं बोद्धव्यं राज्ये, शेषमेकपूर्वाङ्गोनपूर्वलक्षं व्रतपर्यायः । सम्भवजिनस्य कुमारवासः पञ्चदश पूर्वाणां शतसहस्राणि चतुश्चत्वारिंशत्पूर्वशतसहस्राणि 'चउरंगं चेवे'ति चतुर्णामङ्गानां समाहारश्चतुरङ्गं, चत्वारि च पूर्वाङ्गानि इत्यर्थः, राज्ये बोद्धव्यानि, शेषमेकं पूर्वलक्षं चतुर्भिः पूर्वाङ्गैरूनं व्रतपर्यायः । अभिनन्दने—षष्ठीसप्तम्योरर्थ प्रत्यभेदात् अभिनन्दनस्य कुमारत्वमर्द्धत्रयोदशानि—सार्द्धानि द्वादश पूर्वाणां लक्षाणि, षट्त्रिंशत्पूर्वलक्षाणि एकं चार्द्धलक्ष-मष्टौ च पूर्वाङ्गाणि राज्ये, शेषमेकं पूर्वलक्षमष्टभिः पूर्वाङ्गैरूनं व्रतपर्यायः । सुमतेः कुमारत्वं दश पूर्वशतसहस्राणि, एकोनत्रिं-शत्पूर्वलक्षाणि द्वादश च पूर्वाङ्गानि भवन्ति बोद्धव्यानि राज्ये, शेषमेकं पूर्वलक्षं द्वादशभिः पूर्वाङ्गैरूनं व्रतपर्यायः । पद्मस्य-पद्मप्रभस्य कुमारत्वमर्द्धाष्टमानि पूर्वाणां शतसहस्राणि, एकविंशतिः पूर्वलक्षाणि अर्द्धं च पूर्वलक्षस्य तथा षोडश पूर्वाङ्गानि राज्ये, शेषं त्वेकं पूर्वलक्षं षोडशपूर्वाङ्गोनं व्रतपर्यायः । सुपार्श्वे षष्ठीसप्तम्योरभेदात् सुपार्श्वनाथस्य भगवतः पञ्च पूर्वश-तसहस्राणि कुमारत्वं, चतुर्दश पूर्वलक्षाणि विंशतिश्चाङ्गानि राज्ये बोद्धव्यानि, शेषं विंशत्या पूर्वाङ्गैरूनं पूर्वलक्षमेकं व्रत-पर्यायः ॥ शशिप्रभे—चन्द्रप्रभस्य अर्धतृतीयलक्षपूर्वाणि कुमारवासो भवति, अर्धं षडेव च पूर्वलक्षाणि चतुर्विंशतिरङ्गानि च

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥२१२॥

बोद्धव्यानि राज्ये, शेषं पुनरेकं पूर्वलक्षं चतुर्विंशतिपूर्वाङ्गहीनं व्रतपर्यायः, पञ्चाशत्पूर्वसहस्राणि कुमारवासः। पुष्पदन्तस्य—सुविधिस्वामिनः तावदेव—पञ्चाशदेव पूर्वसहस्राणीत्यर्थः अष्टाविंशतिश्च पूर्वाङ्गानि राज्ये, शेषमेकं पूर्वलक्षमष्टाविंशतिपूर्वाङ्गहीनं व्रतपर्यायः। पञ्चविंशतिः पूर्वाणां सहस्राणि शीतलस्य कुमारत्वं, तावदेव—पञ्चविंशतिः पूर्वसहस्राणि पर्यायो—व्रतपर्यायः, पञ्चाशत्पूर्वसहस्राणि राज्ये। श्रेयांसस्य कुमारत्वमेकविंशतिर्वर्षाणां लक्षाणि भवन्ति, तावदेव—एकविंशतिः वर्षाणां लक्षाणि व्रतपर्यायः, द्वाचत्वारिंशद्वर्षलक्षाणि राज्ये। वासुपूज्यस्य गृहवासे—कुमारत्वलक्षणे नियमेन वर्षाणामष्टादश शतसहस्राणि, व्रतपर्यायः पुनश्चतुष्पञ्चाशद्वर्षाणां शतसहस्राणि, राज्यानभ्युपगमाच्च राज्यपर्यायाभावः। विमलस्य कुमारवासः पञ्चदश वर्षाणां शतसहस्राणि, त्रिंशद्वर्षलक्षाणि राज्ये, पञ्चदश वर्षशतसहस्राणि पर्यायो—व्रतपर्याय इति। अनन्तजितः कुमारत्वे वर्षाणामर्द्धाष्टमानि लक्षाणि, तावदेव—अर्द्धाष्टमानि वर्षलक्षाणि पर्यायो—व्रतपर्यायः, पञ्चदश वर्षलक्षाणि राज्ये। धर्म्मस्य तीर्थकृतः कुमारत्वमर्द्धतृतीयानि वर्षाणां लक्षाणि, अर्द्धतृतीयान्येव च वर्षलक्षाणि व्रतपर्यायः, पञ्च वर्षलक्षाणि पुनर्भवन्ति राज्ये। शान्तेः—शान्तिनाथस्य चतुर्ष्वपि—कुमारत्वमण्डलिचक्रिपर्यायेषु—मण्डलिचक्रिग्रहणं भावप्रधानं कुमारत्वमण्डलित्वचक्रित्वव्रतपर्यायरूपेषु स्थानेषु प्रत्येकं २ वर्षसहस्राणि पञ्चविंशतिरवगन्तव्यानि, पञ्चविंशतिर्वर्षसहस्राणि कुमारत्वं, पञ्चविंशतिर्वर्षसहस्राणि मण्डलिकत्वं, पञ्चविंशतिर्वर्षसहस्राणि चक्रवर्त्तिपदं, पञ्चविंशतिर्वर्षसहस्राणि व्रतपर्यायः। एवमेव—शान्तिनाथस्येव कुन्थुनाथस्यापि चतुर्ष्वपि स्थानेषु—कुमारत्वमण्डलित्वचक्रित्वव्रतपर्यायरूपेषु प्रत्येकं भवन्ति त्रयोविंशतिर्वर्षसहस्राणि अर्द्धाष्टमानि च वर्षाणां शतानि। एवमेव—कुन्थुनाथस्येव अरजिनेन्द्रस्यापि

जिनानां कुमारादि-पर्यायः गा. २१९-३२१

॥२१२॥

Jain Education Intern... For Private & Personal Use Only ...jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

चतुर्ष्वपि स्थानेषु–कुमारत्वमण्डलित्वचक्रवर्त्तिपदव्रतपर्यायरूपेषु प्रत्येकमेकविंशतिर्वर्षाणां सहस्राणि भवन्ति ज्ञातव्यानि । मल्लिनाथस्यापि गृहवासे वर्षशतं, शेषं तु सर्वमायुर्व्रतपर्यायः, तत्कियदिति चेत् अत्त आह—चतुष्पञ्चाशद्वर्षाणां सहस्राणि नव च परिपूर्णानि शतानि । अर्द्धाष्टमानि वर्षाणां सहस्राणि कुमारवासः सुव्रतजिनस्य, तावदेव–अर्द्धाष्टमान्येव वर्षसहस्राणि पर्यायो–व्रतपर्यायः, पञ्चदश वर्षसहस्राणि राज्ये । नमेर्भगवतः कुमारवासो द्वे वर्षसहस्रे अर्द्धं च–पञ्च वर्षशतानीत्यर्थः, तावत्कं–अर्द्धतृतीयान्येव वर्षसहस्राणि व्रतपर्यायः, पञ्च वर्षसहस्राणि राज्ये । अरिष्टनेमेस्त्रीणि वर्षशतानि कुमारवासः, राज्यानभ्युपगमात् राज्यपर्यायाभावः, सप्त वर्षशतानि भवति श्रामण्यः पर्यायः । पार्श्वनाथस्य कुमारत्वं त्रिंशद्वर्षाणि, व्रतपर्यायः पुनर्भवति सप्ततिर्वर्षाणि, वर्द्धमाने–वर्द्धमानस्वामिनो गृहवासस्त्रिंशद्वर्षाणि, व्रतपर्यायः द्विचत्वारिंशद्वर्षाणि ॥ सम्प्रति केवलिपर्यायो वक्तव्यः, स च श्रामण्यपर्यायात् छद्मस्थपर्यायापगमे स्वयमेव ज्ञेय इति पूर्वोक्तमेव श्रामण्यपर्यायं स्मारयति—

उसभस्स पुव्वलक्खं पुव्वंगूणमजियस्स तं चेव । चउरंगूणं लक्खं पुणो पुणो जाव सुविहित्ति ॥ ३२२ ॥

अस्या व्याख्या पूर्ववत्,

सेसाणं परियातो कुमारवासेण सहियतो भणितो । पत्तेयंपिय पुव्वं सीसाणमणुग्गहट्ठाए ॥ ३२३ ॥

शेषाणां–शीतलस्वामिप्रभृतीनां पर्यायः पूर्वं कुमारवासेन सह भणितः, प्रत्येकमपि च, किमर्थमुभयथापि भणित इति चेत् अत आह—शिष्याणामनुग्रहाय, यतो मन्दमतीनामपि शिष्याणां बुद्धौ सम्यक् प्रतिस्फलति ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥२१३॥

छउमत्थकालमेत्तं सोहेउं सेसओ उ जिणकालो। सव्वाउयंपि एत्तो उसभाईणं निसामेह ॥ ३२४ ॥

यथोदितरूपात् श्रामण्यकालात् छद्मस्थकालमात्रं प्रागुक्तस्वरूपं शोधयित्वा-अपनीय शेषः श्रामण्यपर्यायकालः स ऋषभादीनां जिनकालोऽवसातव्यः, कुमारादिपर्यायकालमीलने च सर्वायुःकालपरिमाणं भवति, तत्साक्षान्निर्दिदिक्षुराह-'सव्वाउयंपी'त्यादि, अतः-कुमारादिपर्यायभणनानन्तरं सर्वायुरपि यथाक्रममृषभादीनां भण्यमानं निशमयत-आकर्णयत ॥ तदेवाह—

चउरासीई बिसत्तरि सट्ठी पण्णासमेव लक्खाइं। चत्ता तीसा वीसा दस दो एगं च पुव्वाणं ॥ ३२५ ॥
चउरासीई बिसत्तरी य सट्ठी य होइ वासाणं। तीसा य दस य एगं च एवमेए सयसहस्सा ॥ ३२६ ॥
पंचाणउइ सहस्सा चउरासीइं च पंचवण्णा य। तीसा य दस य एगं सयं च बावत्तरी चेव ॥ ३२७ ॥

भगवत आदितीर्थकरस्य सर्वायुश्चतुरशीतिः पूर्वाणां लक्षाणि अजितस्वामिनो द्वासप्ततिः पूर्वलक्षाणि सम्भवनाथस्य षष्टिः पूर्वलक्षाणि अभिनन्दनस्य पञ्चाशत्पूर्वलक्षाणि सुमतेश्चत्वारिंशत् पद्मप्रभस्य त्रिंशत् सुपार्श्वनाथस्य विंशतिः चन्द्रप्रभस्य दश पूर्वलक्षाणि सुविधेर्द्वे पूर्वलक्षे शीतलस्यैकं पूर्वलक्षं, श्रेयांसस्य चतुरशीतिर्वर्षशतसहस्राणि वासुपूज्यस्य द्विसप्ततिर्वर्षलक्षाणि विमलस्य षष्टिर्वर्षलक्षाणि अनन्तजितस्त्रिंशद्वर्षलक्षाणि धर्मस्य दश वर्षलक्षाणि शान्तिनाथस्यैकं वर्षलक्षं, कुन्थुनाथस्य पञ्चनवतिर्वर्षसहस्राणि अरनाथस्य चतुरशीतिर्वर्षसहस्राणि मल्लिनाथस्वामिनः पञ्चपञ्चाशद्वर्षसहस्राणि मुनिसुव्रतस्य त्रिंशद्वर्षसहस्राणि नमिनाथस्य दश वर्षसहस्राणि अरिष्टनेमेरेकं वर्षसहस्रं, पार्श्वनाथस्यैकं वर्षशतं वर्द्धमानस्वामिनो द्वास-

जिनानां श्रामण्यपर्यायादि गा. ३२२-७

॥२१३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

सतिर्वर्षाणि ॥ गतं पर्यायद्वारम्, अधुना अन्तक्रियाद्वारावसरः, स चान्तक्रिया निर्वाणलक्षणा, सा कस्य केन तपसा क्व वा जाता कियत्परिवृतस्य चेत्येतदभिधित्सुराह—

निव्वाणमंतकिरिया सा चोद्दसमेण पढमनाहस्स । सेसाण मासिएणं वीरजिणिंदस्स छट्ठेणं ॥ ३२८ ॥

सा च निर्वाणलक्षणा अन्तक्रिया प्रथमनाथस्य—आदितीर्थकृतश्चतुर्दशकेन—षड्विधपवासैरभूत्, शेषाणाम्—अजितस्वामिप्रभृतीनां पार्श्वनाथपर्यन्तानां द्वाविंशतेस्तीर्थकृतां मासिकेन तपसा, मासोपवासेनेत्यर्थः, अन्तक्रियाऽभवत्, भगवतो वीरजिनेन्द्रस्य पुनः षष्ठेन—द्वाभ्यामुपवासाभ्याम् ॥

अट्ठावय—चंपु—ऊर्जंत—पावा—सम्मेयसेलसिहरेसु । उसभ वसुपुज्ज नेमी वीरो सेसा य सिद्धिगया ॥ ३२९ ॥

अष्टापदचम्पोर्जयन्तपापासम्मेतशैलशिखरेषु यथाक्रममृषभो वासुपूज्योऽरिष्टनेमिर्वीरो भगवान् शेषाश्च तीर्थकृतः सिद्धिं गताः, अष्टापदे ऋषभस्वामी सिद्धिमगमत्, चम्पायां वासुपूज्यः उर्जयन्तेऽरिष्टनेमिः भगवान् महावीरः पापायां शेषा अजितस्वामिप्रभृतयः सम्मेतशैलशिखरे इति ॥

एगो भयवं वीरो तेत्तीसाए सह निवुओ पासो । छत्तीसेहिं पंचहिं सएहिं नेमी उ सिद्धिगतो ॥ ३३० ॥

पंचहिं समणसएहिं मल्ली संती उ नवसएहिं तु । अट्ठसएणं धम्मो सएहिं छहिं वासुपुज्जजिणो ॥ ३३१ ॥

सत्तसहस्साणंतइजिणस्स विमलस्स छस्सहस्साइं । पंच सयाइं सुपासे पउमाभे तिण्णि अट्ठ सया ॥ ३३२ ॥

दसहिं सहस्सेहुसभे सेसा उ सहस्सपरिवुडा सिद्धा । कालाइ जं न भणियं पढमणुयोगाओ तं नेयं ॥ ३३३ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

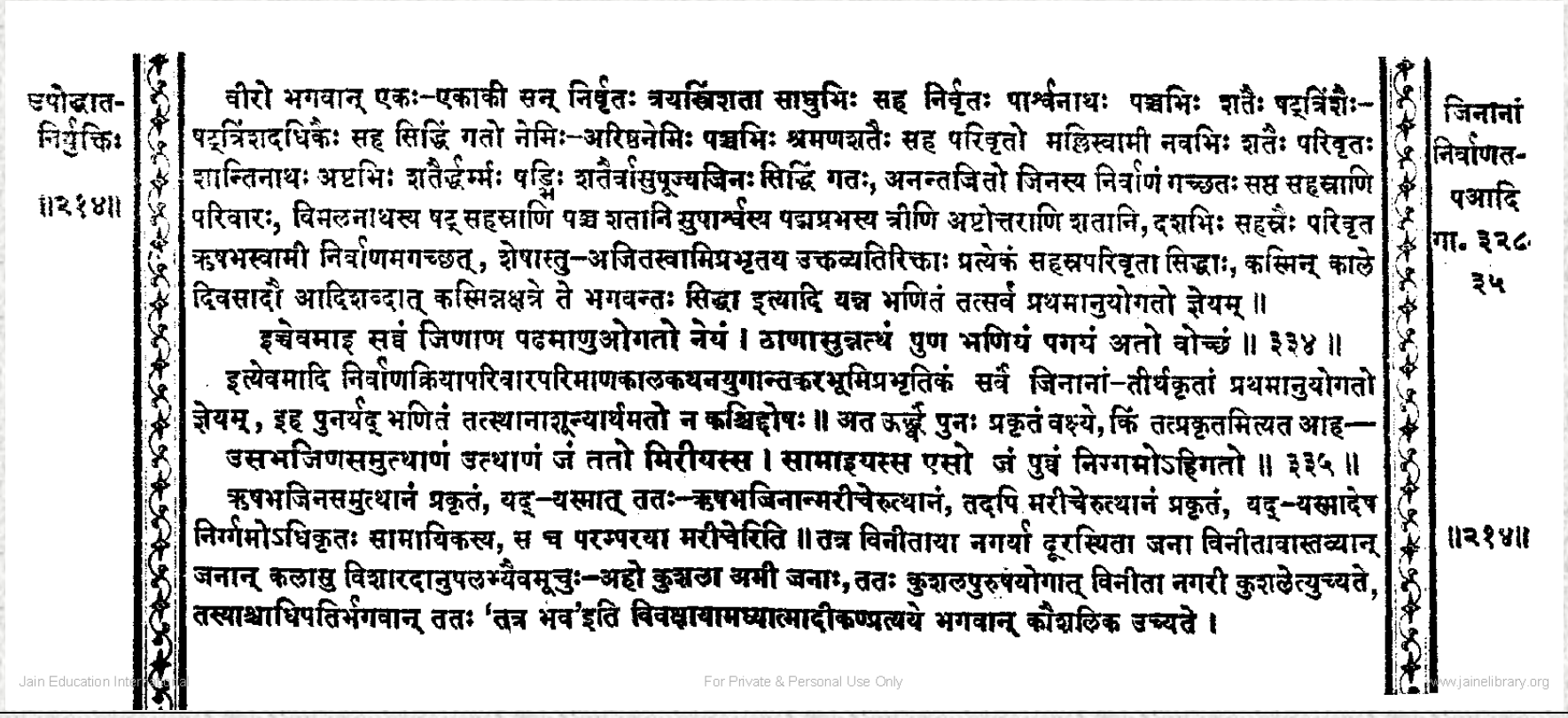

उपोद्घात-निर्युक्तिः

॥२१४॥

वीरो भगवान् एकः–एकाकी सन् निर्वृतः त्रयस्त्रिंशता साधुभिः सह निर्वृतः पार्श्वनाथः पञ्चभिः शतैः षट्त्रिंशैः–षट्त्रिंशदधिकैः सह सिद्धिं गतो नेमिः–अरिष्टनेमिः पञ्चभिः श्रमणशतैः सह परिवृतो मल्लिस्वामी नवभिः शतैः परिवृतः शान्तिनाथः अष्टभिः शतैर्द्धर्म्मः षड्भिः शतैर्वासुपूज्यजिनः सिद्धिं गतः, अनन्तजितो जिनस्य निर्वाणं गच्छतः सप्त सहस्राणि परिवारः, विमलनाथस्य षट् सहस्राणि पञ्च शतानि सुपार्श्वस्य पद्मप्रभस्य त्रीणि अष्टोत्तराणि शतानि, दशभिः सहस्रैः परिवृत ऋषभस्वामी निर्वाणमगच्छत्, शेषास्तु–अजितस्वामिप्रभृतय उक्तव्यतिरिक्ताः प्रत्येकं सहस्रपरिवृता सिद्धाः, कस्मिन् काले दिवसादौ आदिशब्दात् कस्मिन्नक्षत्रे ते भगवन्तः सिद्धा इत्यादि यन्न भणितं तत्सर्वं प्रथमानुयोगतो ज्ञेयम् ॥

इच्चेवमाइ सव्वं जिणाण पढमाणुओगतो नेयं । ठाणासुन्नत्थं पुण भणियं पगयं अतो वोच्छं ॥ ३३४ ॥

इत्येवमादि निर्वाणक्रियापरिवारपरिमाणकालकथनयुगान्तकरभूमिप्रभृतिकं सर्वं जिनानां–तीर्थकृतां प्रथमानुयोगतो ज्ञेयम्, इह पुनर्यद् भणितं तत्स्थानाशून्यार्थमतो न कश्चिद्दोषः ॥ अत ऊर्ध्वं पुनः प्रकृतं वक्ष्ये, किं तत्प्रकृतमित्यत आह—

उसभजिणसमुत्थाणं उत्थाणं जं ततो मिरीयस्स । सामाइयस्स एसो जं पुव्वं निग्गमोऽहिगतो ॥ ३३५ ॥

ऋषभजिनसमुत्थानं प्रकृतं, यद्–यस्मात् ततः–ऋषभजिनान्मरीचेरुत्थानं, तदपि मरीचेरुत्थानं प्रकृतं, यद्–यस्मादेष निर्गमोऽधिकृतः सामायिकस्य, स च परम्परया मरीचेरिति ॥ तत्र विनीताया नगर्या दूरस्थिता जना विनीतावास्तव्यान् जनान् कलासु विशारदानुपलभ्यैवमूचुः–अहो कुशला अमी जनाः, ततः कुशलपुरुषयोगात् विनीता नगरी कुशलेत्युच्यते, तस्याश्चाधिपतिर्भगवान् ततः 'तत्र भव'इति विवक्षायामण्प्रत्यादीकण्प्रत्यये भगवान् कौशलिक उच्यते ।

जिनानां निर्वाणत-पआदि गा. ३२८-३५

॥२१४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

से य उसभे कोसलिए पढमराया पढमभिक्खायरिए पढमतित्थयरे वीसं पुव्वसयसहस्साइं कुमारवासे वसित्ता तेवट्ठिं पुव्वसयसहस्साइं रज्जमणुपालेमाणे लेहाइयातो सउणरुतपज्जवसाणातो बावत्तरिं कलातो चोवट्ठिं महिलागुणे सिप्पाणमेगं सयं एए तिन्नि पयाहियट्ठाए उवदिसइ, उवदिसित्ता पुत्तसयं रज्जसए अभिसिंचइ, ततो लोगंतिएहिं देवेहिं जीयमितिकट्टु संबोहिए संवच्छरियं दाणं दाऊण भरहं विणीयाए, बाहुबलिं बहलीए, कच्छमहाकच्छा चउसहस्सपरिवारा भयवया सह अणुपव्वइया, अन्ने भणंति–एएवि कच्छमहाकच्छे रज्जे ठवेइत्ति, ठवित्ता चेत्तबहुलट्ठमीए दिवसस्स पच्छिमे भागे सुदंसणाए सिबियाए सदेवमणुयासुराए परिसाए समणुगम्ममाणे विणीयाए रायहाणीए मज्झंमज्झेण निग्गच्छमाणे जेणेव सिद्धत्थवणे जेणेव असोगवरपायवे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता असोगवरपायवस्स हेट्ठा सीयं ठावेत्ता भयवया सयमेव कतो चउमुट्ठिओ लोचो, पंचममुट्ठिग्गहणे हि भगवतो कणगावदाते सरीरे अंजणरेहाउ व रेहंतीओ सक्को उवलभिऊणं भणियाइतो–भयवं! एयातो एवमेव चिट्ठंतु, तहेव ठियातो, तेण भगवतो चउमुट्ठिओ लोओ, लोयं काऊण छट्ठेण भत्तेण अपाणएणं आसाढानक्खत्तेणं उग्गाणं भोगाणं रायण्णाणं खत्तियाणं चउहिं सहस्सेहिं सद्धिं, तेसिं पंचमुट्ठितो लोचो आसि, एगं देवदूसमादाय पव्वइतो, सव्वतित्थयरावि य णं सामाइयं करेमाणा एवं भणंति—करेमि सामाइयं सव्वं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवाए तिविहं तिविहेणं जाव वोसिरामि, भदंत ! इति न भणंति, तथाकल्पत्वाद्, अत ऊर्ध्वमेतदेवोपसंहरन्नाहेत्यादि वक्तव्यम्। एवं भगवं कयसामाइओ नाणाभिग्गहं परमं घोरं घेत्तूण वोसट्ठचत्तदेहो विहरइ, भगवं अरहा उसभे कोसलिए साहियं संवच्छरं चीवरधारी होत्था, एवं जाव विहरइ, ताहे पुव्वभणि-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** भगवन्त 'ऋषभ'स्य कथानकं एवं तन्मध्ये 'नमि-विनमि' अधिकार: वर्णयते

उपोद्घात-निर्युक्तिः

॥ २१५ ॥

यप्पगारेण दुवे कच्छमहाकच्छाण पुत्ता नमिविनमिणो उवट्ठिया, भयवं विण्णवंति, जहा–भयवं ! अम्हं तुम्हेहिं संविभागो ण केणइ वत्थुणा कतोत्ति, ततो ते सन्नद्धबद्धकवया करवालवग्गहत्था ओलग्गंति, विण्णवंति य तिसंझं—ताय ! तुब्भेहिं सबेसिं भोगा दिन्ना ता अम्हवि देह, एवं तिसंझं विण्णवंताणमोलग्गंताण य कालो वच्चइ, अन्नया धरणो नागकुमारिंदो भयवतो वंदतो आगतो, इमेहि य विन्नवियं, ततो सो ते तहा जायमाणे भणइ–भो ! सुणह, भयवं चत्तसंगो गयरोसतोसो ससरीरेवि निम्ममतो अकिंचणो परमजोगी निरुद्धासवो कमलपत्तनिरुवलेवचित्तो, मा एयं जायह, अहं तु भगवतो भत्तीए मा तुब्भं सामिसेवा अफला होउत्तिकाउं पढियसिद्धाइं अडयालीसं विज्जासहस्साइं देमि, ताण इमातो चत्तारि महाविज्जातो, तंजहा–गोरी गंधारी रोहिणी पन्नत्ती, तं गच्छह तुब्भे विज्जारिद्धीए सजणं जणवयं उवलोभेऊण दाहिणिल्लाए उत्तरिल्लाए य विज्जाहरसेढीए गगणवल्लहपामोक्खे रहनेउरचक्कवालपामोक्खे य पण्णासं सट्ठिं च विज्जाहरनगरे निवेसिऊणं विहरह, तेऽवि तं सबमाणत्तियं पडिच्छिउं लद्धपसाया कामियं पुप्फगविमाणं विउविऊणं भगवं तित्थयरं नागरायं च वंदिऊण पुप्फगविमाणमारुढा कच्छमहाकच्छाणं भगवप्पसायं उवदंसेमाणा विणीयनगरिमतिगम्म भरहस्स रण्णो तमत्थं निवेइत्ता सयणं परियणं च गहाय वेयड्ढे उत्तरसेढीए विनमी सट्ठिं नगराइं गगणवल्लभप्पमुहाइं निवेसेइ, नमी दाहिणसेढीए रहनेउरचक्कवालाईणि पन्नासं नगराणि निवेसेइ, जे य जतो जणवयातो नीया मणुया तेसिं तन्नामा वियड्ढे जणवया जाया, विज्जाहराणं च एगेगस्स अट्ठट्ठ निकाया, सबे मिलिया सोलस, ते य इमे–गोरीणं विज्जाणं मणुया गोरिया १ मणूणं मणूया २ गंधारीणं गंधारा ३ माणवीणं माणवा ४ केसिगाणं केसिगा ५ भूमितुंडिगाणं भूमितुंडिगा ६

नमिविनम्यधिकारः

॥ २१५ ॥

Jain Education Int... For Private & Personal Use Only ...www.jainelibrary.org

* * * * ७ मूलवीरियाणं मूलवीरिया ८ संबुक्काणं संबुक्का ९ कालीणं कालीया १० समकीणं समका ११ मायंगीण मायंगा १२ पवईणं पवया १३ वंसालयाणं वंसालया १४ पंसुमूलियाणं पंसुमूलिया १५ रुक्खमूलियाणं रुक्खमूलिया १६, एवं ते नमिविनमी सोलस विज्जाहरनिकाए विभइऊणं देवा इव विज्जाबलेण गगणचारिणो सयणपरियणसहिया मणुयदेवभोए भुंजंति, पुरेसु भगवतो उसभसामिस्स रज्जमणुपालेमाणस्स वयपडिमा ठविया विज्जाहिवइणो य धरणस्स नागरायस्स। एतदेवोपसंहरन्नाह—

चेत्तबहुलट्ठमीए चउहिं सहस्सेहिं सो उ अवरण्हे। सीया सुदंसणाए सिद्धत्थवणम्मि छट्ठेणं ॥ ३३६ ॥

चैत्रमासे बहुलपक्षेऽष्टम्यां चतुर्भिः सहस्रैः समन्वितः सन्नपराह्णे शिबिकायां सुदर्शनायां व्यवस्थितः सिद्धार्थवने षष्ठेन भक्तेन निष्क्रान्तः, अलङ्कारं परित्यज्य चतुर्मुष्टिकं लोचं कृत्वेति शेषः ॥ चतुर्भिः सहस्रैः समन्वित इत्युक्तम्, तत्र तेषां दीक्षां किं भगवान् दत्तवान् उत नेति, तत्राह—

चउरो साहस्सीओ लोयं काऊण अप्पणा चेव। जं एस जहा काही तं तह अम्हेवि काहामो ॥ ३३७ ॥

चत्वारि सहस्राणि, सूत्रे स्त्रीत्वं प्राकृतत्वात्, लोचमात्मनैव पञ्चमुष्टिकं कृत्वा इत्थं प्रतिज्ञां कृतवन्तो—यत्क्रियानुष्ठानमेष भगवान् यथा—येन प्रकारेण करिष्यति तत्तथा 'अम्हेवि' वयमपि करिष्याम इति, भगवानपि भुवनगुरुत्वात् स्वयमेव सामायिकं प्रतिपद्य विजहार ॥ तथा चाह—

उसभो वरवसभगई घेत्तूण अभिग्गहं परमघोरं। वोसट्ठचत्तदेहो विहरइ गामाणुगामं तु ॥ ३३८ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

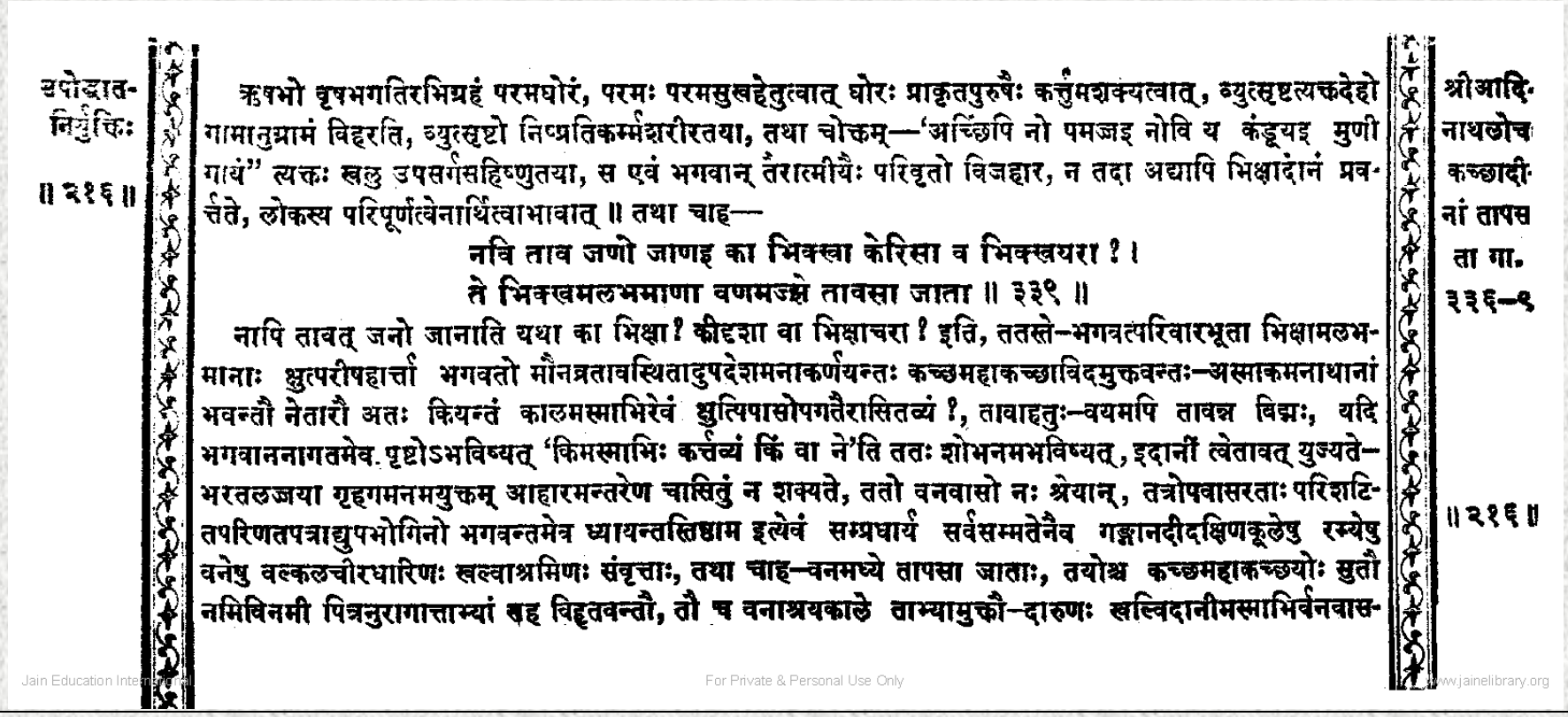

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥ २१६ ॥

ऋषभो वृषभगतिरभिग्रहं परमघोरं, परमः परमसुखहेतुत्वात् घोरः प्राकृतपुरुषैः कर्त्तुमशक्यत्वात्, व्युत्सृष्टत्यक्तदेहो गामानुग्रामं विहरति, व्युत्सृष्टो निष्प्रतिकर्म्मशरीरतया, तथा चोक्तम्—'अच्छिपि नो पमज्जइ नोवि य कंडूयइ मुणी गायं" त्यक्तः खलु उपसर्गसहिष्णुतया, स एवं भगवान् तैरात्मीयैः परिवृतो विजहार, न तदा अद्यापि भिक्षादानं प्रवर्त्तते, लोकस्य परिपूर्णत्वेनार्थित्वाभावात् ॥ तथा चाह—

नवि ताव जणो जाणइ का भिक्खा केरिसा व भिक्खयरा ? ।
ते भिक्खमलभमाणा वणमज्झे तावसा जाता ॥ ३३९ ॥

नापि तावत् जनो जानाति यथा का भिक्षा? कीदृशा वा भिक्षाचरा ? इति, ततस्ते–भगवत्परिवारभूता भिक्षामलभमानाः क्षुत्परीषहार्त्ता भगवतो मौनव्रतावस्थितादुपदेशमनाकर्णयन्तः कच्छमहाकच्छाविदमुक्तवन्तः–अस्माकमनाथानां भवन्तौ नेतारौ अतः कियन्तं कालमस्माभिरेवं क्षुत्पिपासोपगतैरासितव्यं ?, तावाहतुः–वयमपि तावन्न विद्मः, यदि भगवाननागतमेव पृष्टोऽभविष्यत् 'किमस्माभिः कर्त्तव्यं किं वा ने'ति ततः शोभनमभविष्यत्, इदानीं त्वेतावत् युज्यते–भरतलज्जया गृहगमनमयुक्तम् आहारमन्तरेण चास्तितुं न शक्यते, ततो वनवासो नः श्रेयान्, तत्रोपवासरताः परिशटितपरिणतपत्राद्युपभोगिनो भगवन्तमेव ध्यायन्तस्तिष्ठाम इत्येवं सम्प्रधार्य सर्वसम्मतेनैव गङ्गानदीदक्षिणकूलेषु रम्येषु वनेषु वल्कलचीरधारिणः खल्वाश्रमिणः संवृत्ताः, तथा चाह–वनमध्ये तापसा जाताः, तयोश्च कच्छमहाकच्छयोः सुतौ नमिविनमी पित्रनुरागात्ताभ्यां सह विहृतवन्तौ, तौ च वनाश्रयकाले ताभ्यामुक्तौ–दारुणः खल्विदानीमस्माभिर्वनवास-

श्रीआदिनाथलोच कच्छादीनां तापसता गा. ३३६–९

॥ २१६ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र यत् निर्युक्ति-गाथा ३३९ रुपेण लिखितं तत् हारिभद्रिया वृत्तौ भाष्यगाथा ३१ रूपेण उल्लिखितं

विधिरङ्गीकृतः, तद्यात यूयं स्वगृहाणि यदिवा भगवन्तमेव उपसर्पत, स चानुकम्पया अभिलषितफलदो भविष्यति, तावपि च पित्रोः प्रणामं कृत्वा पित्रादेशं तथैव कृतवन्तौ, भगवत्समीपमागत्य च प्रतिमास्थिते भगवति जलाशयेभ्यो नलिनीपत्रेषूदकमानीय सर्वतो जलप्रवर्षणं कृत्वा आजानूच्छ्रयप्रमाणं सुगन्धिकुसुमप्रकरं च कृत्वा अवनतोत्तमाङ्गौ क्षितिनिहितजानुकरतलौ प्रतिदिवसं त्रिसन्ध्यं राज्यसंविभागप्रदानेन भगवन्तं विज्ञप्य पुनस्तदुभयपार्श्वे खड्गव्यग्रहस्तौ तस्थतुः, तथा चाह—

नमिविनमीण जायण नागिंदो वेज्जदाण वेयड्ढे । उत्तरदाहिणसेढी सट्ठी पन्नास नगराइं ॥ ३४० ॥

नमिविनम्योर्याचना, नागेन्द्रो भगवद्वन्दनायागतः, तेन विद्यादानमनुष्ठितं, वैताढ्ये पर्वते उत्तरदक्षिणश्रेण्योर्यथाक्रमं षष्टिपञ्चाशन्नगराणि निवेशितानि इति ॥ भावार्थः कथानकादवसेयः, तच्चेदम्—एवं भयवं कयसामाइओ जाव नागरायस्स ।

भयवमदीणमणसो संवच्छरमणसिओ विहरमाणो । कन्नाहि निमंतिज्जइ वत्थाभरणासणेहिं च ॥ ३४१ ॥

भगवानपि अदीनमनाः—निष्प्रकम्पितचित्तः संवत्सरं—वर्षं न अशितोऽनशितो विहरन्, भिक्षाप्रदानानभिज्ञेन लोकेनाभ्यर्हितत्वात् कन्याभिर्निमन्त्र्यते वस्त्राणि—पट्टदेवाङ्गादीनि आभरणानि—कटककेयूरादीनि आसनानि—सिंहासनानि तैश्च निमन्त्र्यते, वर्त्तमाननिर्देशप्रयोजनं प्राग्वत् ॥ अथैवं विहरता भगवता कियत्कालेन भिक्षा लब्धेत्यत आह—

संवच्छरेण भिक्खा लद्धा उसभेण लोगनाहेण । सेसेहिं बीयदिवसे लद्धाओ पढमभिक्खाओ ॥ ३४२ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

संवत्सरेण भिक्षा ऋषभेन लोकनाथेन–प्रथमतीर्थकृता लब्धा, शेषैः–अजितजिनादिभिर्द्वितीयदिवसे प्रथमभिक्षा लब्धा ॥ सम्प्रति यद्यस्य पारणकमासीत्तदभिधित्सुराह—

उसभस्स उ पारणए इक्खुरसो आसि लोगनाहस्स । सेसाणं परमन्नं अमयरसरसोवमं आसि ॥ ३४३ ॥

ऋषभस्य लोकनाथस्य पारणके इक्षुरस आसीत्, शेषाणामजितस्वाम्यादीनां परमान्नं—पायसम् अमृतरसेन रसस्योपमा यत्र तदमृतरसरसोपममासीत् ॥ तीर्थकृतां प्रथमपारणके यद्वृत्तं तदभिधित्सुराह—

घुट्ठं च अहोदाणं दिव्वाणि य आहयाणि तूराणि । देवा य संनिवइया वसुहारा चेव वुट्ठा य ॥ ३४४ ॥

देवैराकाशस्थितैर्घुष्टं यथा–अहो दानमिति, अहोशब्दो विस्मये, अहो दानमहो दानम्, अस्यायमर्थः–एवं दीयते, एवं हि दत्तं भवतीति, तथा दिव्यानि तूराणि त्रिदशैराहतानि, देवाश्च तदैव सन्निपतिताः, वसुधारानिपातार्थमाकाशे जृम्भका देवाः समागताः, ततो वसुधारा वृष्टा, द्रव्यवृष्टिरभूदित्यर्थः ॥ एवं सामान्येन पारणककालभाव्युक्तम्, इदानीं यत्र यथा च यदादितीर्थकरस्य पारणकमासीत्तदभिधित्सुराह—

गयपुर सेज्जस खोयरसदाण वसुहार पीढ गुरुपूया । तक्खसिलायलगमणं बाहुबलिनिवेयणं चेव ॥ ३४५ ॥

अस्या भावार्थः कथानकादवसेयः, तच्चेदम्—कुरुजणवए गयपुरं नाम नगरं, तत्थ बाहुबलिपुत्तो सोमप्पभो राया, तस्स पुत्तो सेज्जंसो जुवराया, सो सुमिणे मंदरं पवयं सामवण्णयं पासइ, ततो अणेण अमयकलसेण अभिसित्तो अब्भहियं सोभितुमाढत्तो, नगरसेट्ठी सुबुद्धी नाम, सो सुमिणे पासइ–सूरस्स रस्सिसहस्सं ठाणातो चलितं, नवरि सेज्जंसेण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** भगवन्त 'ऋषभ'स्य प्रथम भिक्षाप्राप्तेः वर्णनं तथा श्रेयांस सह पूर्व भावानां संबंधस्य कथनं

हुक्खुत्तं, ततो सो सूरो अहिययरतेयसंपन्नो जातो, राइणा एक्को पुरिसो महप्पमाणो महया रिउबलेण जुज्झंतो दिट्ठो, सेज्जंसेण साहज्जं दिण्णं, ततो तेण तब्बलं भग्गंति, ततो अत्थाणीए तिण्णिवि एगतो मिलिया परोप्परं सुमिणे साहंति, न उण जाणंति–किं भविस्सइत्ति ?, नवरं राया भणइ–कुमारस्स महंतो कोऽवि लाभो भविस्सइत्ति भणिऊण अत्थतो अत्थाणातो, सेज्जंसोऽवि गतो नियभवणं, सेट्ठीवि, भगवंपि अणाउलो संवच्छरखमणंसि अडमाणो सेयंसभवणमइगतो, सो य सेज्जंसो पासायतलगतो तं आगच्छमाणं पप्पियामहं पासमाणो चिंतेइ–कत्थ मया एरिसं नेवत्थं दिट्ठपुव्वं जारिसं पप्पियामहस्स ?, एवं मग्गणं करेमाणस्स तयावरणकम्मक्खतोवसमेण जाइस्सरणं जायं, सो य पुव्वभवे सामिस्स सारही आसि, तेण तत्थ वइरसेणतित्थयरो तित्थयरलिंगेण दिट्ठो, वइरनाभे य पव्वयंते सोऽवि अणु पव्वइतो, तेण सुयं–जं एस भरहे पढमतित्थयरो भविस्सइत्ति, एसो सो भयवंति ससंभंतो उट्ठितो, एयस्स परिचत्तसव्वसंगस्स भत्तपाणं दायव्वं, एवं जाव चिंतइ ताव भवणंगणे पासइ खोयरसघडे पुरिसोवणीए, ततो परमहरिसोववेए अहयसुमहग्घदूसरयणसुसंवुडे सरसगोसीसचंदणाणुलित्तगत्ते आविद्धमणिसुवण्णकुंडलुज्जोइयाणणे मउडदित्तसिरए कप्परुक्खे इव अलंकियविभूसिए जयजयसद्दकयालोए अणेगपरिवारसंवुडे उट्ठित्ता पाउयातो मुयइ मुइत्ता एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ करेत्ता अंजलिमउलियहत्थे भयवंतं सत्तट्ठ पयाइं अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता भवणंगणातो सयं चेव खोयरसघडगं घेत्तूणं दव्वसुद्धेणं दायगसुद्धेणं पडिगाहगसुद्धेणं तिकरणसुद्धेणं दाणेणं सामिं पडिलाभिस्सामित्ति तुट्ठे, भयवंतमुवट्ठितो–भयवं कप्पइत्ति ?, ततो भगवया पाणी पसारितो, सव्वो निसट्ठो पाणीसु, अच्छिद्दपाणी भयवं, उवरिं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥२१८॥

सिहा पवड्ढा, न य छड्डिज्जइ, भगवतो एसा लद्धी, सो भगवया पारिओ, एवं सो पडिलाभेमाणे तुट्ठे पडिलाभिएऽवि तुट्ठे, तए णं तत्थ पंच दिव्वाणि पाउब्भूयाणि, तंजहा–वसुधारा वुट्ठा चेलुक्खेवे कए पहयातो देवदुंदुहीतो गंधोदकदसद्धवण्ण-कुसुमवासे निवइए आगासे अहो दाणं अहो दाणंति घुट्ठं, ततो तं चेव देवसंनिवायं पासिऊण सव्वो लोगो सेज्जंसघरमुव-गतो, ते य तावसा अण्णे य रायाणो आगया, ते सवे परेण कोऊहलेण पुच्छंति सेज्जंसं कुमारं–किमेयंति ?, ताहे सो ते पण्णवेइ–एवं भिक्खा दिज्जइ, एएसिं दिन्ने सोग्गई गम्मइ, ततो ते सवे भणंति–कहं तुमे विन्नायं जहा एवं भगवतो परमगुरुस्स भिक्खा दिज्जइत्ति ?, सेज्जंसो भणइ–जाईसरणेण, अहं सामिणा सह अट्ठ भवग्गहणाणि अहेसि, ततो ते संजायकोउहल्ला भणंति–साह अट्ठसु भवग्गहणेसु को को तुमं सामिणा सह आसि ?, ततो तेसिं पुच्छंताणं अप्पणो सामिस्स अट्ठभवसंबद्धं कहं कहेइ, ताणि य अट्ठ भवग्गहणाणि वसुदेवहिंडीए, तहावि ठाणासुन्नत्थं संखेवतो भण्णइ— सेज्जंसो भणइ–इओ य छट्ठभवे उत्तरकुराए अहं मिहुणइत्थिया भयवं मिहुणपुरिसो आसि, ततो वयं तंमि देवलोकभूए दसविहकप्परुक्खप्पभावसंपज्जमाणभोगोवभोगा कइयाए उत्तरकुरुद्दहतीरदेसे असोगपायवछायाए वेरुलियमणिसिलायले णवणीयसरिसफासे सुहनिसण्णा अच्छामो, देवो य तंमि हरए मज्जिउं उप्पइतो गगणदेसेण, ततो तेण नियगप्पभाए पभासियातो दस दिसातो, ततो सो मिहुणपुरिसो तं तारिसं पस्समाणो किंचि चिंतेऊण मोहं उवगतो, कहमवि लद्ध-सण्णो भणइ–हा सयंपभे ! कत्थासि ?, देहि मे पडिवयणं, तं च तस्स सोऊण इत्थियावि–कत्थ मन्ने मए सयंपभाभिहाणं अणुभूयपुवंति चिंतेमाणी तहेव मोहमुवगया, पच्चागयचेयण्णा भणइ–अहो अज्ज ! अहं सयंपभा जीसे तुब्भेहिं नामं

श्रेयांसम-वाष्टकसं-बंधः ॥२१८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गहियंति, ततो पुरिसो परं तुट्ठिमुवहंतो भणइ—अज्जे ! कहेहि कहं तुमं सयंपभा ?, ततो सा भणइ–कहेमि जं सुयमणुभूयं च—अत्थि ईसाणो कप्पो, तस्स मज्झदेसातो उत्तरपुरत्थिमे दिसीभागे सिरिप्पभं नाम विमाणं, तत्थ ललियंगतो नाम देवो अहिवई, तस्स सयंपभा अग्गमहिसी बहुमया आसि, सा अहं, तस्स य देवस्स तीए सह दिव्वविसयसुहसागरगयस्स बहुकालो दिवसो इव गतो, कयाइ चिंतावरो पवायमल्लदामो अहोदिट्ठी झायमाणो मए सपरिसाए विण्णवितो—देव ! कीस विमणो दीससि ? को ते माणसो संतावो ?, ततो सो देवो भणइ—मए पुव्वभवे तवो थेवो कतो, ततो अहं तुब्भेहिं विप्पजुज्जिहामित्ति परो संतावो, ततो अम्हेहिं पुणरवि पुच्छितो–कहेह कहं तुब्भेहिं थोवो तवो कतो ?, ततो भणति—जंबुद्दीवे दीवे अवरविदेहे गंधिलावइविजए गंधमायणवक्खारगिरिवरासण्णवेयड्ढपव्वए गंधारा नाम जणवओ, तत्थ समिद्धजणासेवियं गंधसमिद्धं नाम नयरं, तत्थ राया जणवयहितो सयबलस्स रण्णो नत्तुतो अइबलस्स सुतो महाबलो नाम, सो अहं पिउपियामहपरंपरागयं रज्जसिरिं अणुभवामि, मम य बालमित्तो खत्तियकुमारो सयंबुद्धो नाम, सो य जिणसासणभावियमई, विइतो संभिन्नसोतो, सो पुण मंती बहुसु कज्जेसु पुच्छणिज्जो, परं नाहियवाई, एवं तेहिं समं रज्जमणुपालेमाणो समइच्छिए बहुंमि काले कयावि गीयपडिरती नच्चमाणिं नट्टियं पस्सामि, सयंबुद्धेण विण्णवितो–देव ! सव्वं गीयं विलवियं सव्वं नट्टं विडंबणा सव्वाणि आभरणाणि भारा दुहावहा कामा, ता परलोगहिए चित्तं निवेसियव्वं, असासयं जीवियं अहितो विसयपडिबंधो, ततो मए भणियं—कहं गीयसवणमेयं विलावो ? कहं नयणब्भुदयं नट्टं विडंबणा ? कहं वा देहविभूसणाणि आभरणाणि भारा ? लोगसारभूया पीइकरा कामा कहं दुहावहा ?, ततो संभंतेण सयंबुद्धेण भणियं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुणह सामी ! पसन्नचित्ता जहा गीयं विलावो, जहा काइवि इत्थिया पविसियपइगा पइणो सुमरमाणी तस्स समाग-
ममभिलसंती भत्तुणो गुणे विकप्पेमाणी पदोसे पच्चूसे य विलवमाणी चिट्ठइ, जहा वा कोऽवि भिच्चो पहुस्स कुवियस्स
पसायणानिमित्तं दासभावे अप्पाणं ठवेऊण पणतो जाणि वयणाणि भासइ ताणि विलावो, तहा इत्थी पुरिसो वा सरा-
गमणो गीयसवणाभिलासी कुवियपसायणानिमित्तं वा जातो कायमणवाइयातो किरियातो पउंजइ ताओ कुसलनिब-
द्धाओ गीयंति पवुच्चइ, तं पुण सामी चिंतेउ–किं विलावपक्खे वट्टइ नवा ? इति, नट्टं जहा विडंबणा तथा भन्नइ—इत्थी
पुरिसो वा जक्खाइट्ठो पीयमज्जो वा जातो कायविक्खेवकिरियातो दंसेइ सा विडंबणा, एवं जाव इत्थी पुरिसो वा पहुणो
परितोसणनिमित्तं विउसजणनिबद्धविधिमणुसरंतो जं पाणिपायसिरनयणाधरादी विक्खिवति सा परमत्थतो विडंबणा,
इयाणिं आभरणाणि भारो भाविज्जइ–कोइ पुरिसो सामिणो नियोगेण पेडागयाणि मउडाईणि आभरणाणि पवहेज्ज, जहा सो
अवस्सं भारेण पीडिज्जइ, एवं जो परविम्हयनिमित्तं ताणि चेव आभरणाणि जोग्गेसु सरीरठाणेसु सन्निवेसियाणि वहइ
सोऽवि भारेण पीडिज्जइ, नवरं सो रागेण भारं न गणइ, कामा पुण एवं दुहावहा–जहा सद्दमुच्छितो मिगो रूवमुच्छितो
पयंगो गंधमुच्छितो महुयरो रसमुच्छितो मच्छो फरिसमुच्छितो गइंदो वहबंधणमारणाणि पावइ, एवं जीवावि सो-
इंदियाइवसगया सद्दाइसंरक्खणपरा तदुवरोधकारिसु पडिणीएसु कलुसहियया इहलोगेवि मारणादीणि पावेंति, परलोगे
नरगाइदुक्खभायणं, ततो दुहावहा कामा। एवं भणंतो सयंबुद्धो मए भणितो–नूणं तुमं मम अहितो सि जो मं संसइय-
परलोयसुहेणं लोभंतो संपइसुहं च निंदंतो दुहे पाडेतुमिच्छसि, ततो संभिन्नसोएण भणितो–सामि ! सयंबुद्धो जहा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जंबुको मच्छकंखी मंसपेसिं चइत्ताणं मच्छं पइ धावितो मच्छो जले निमग्गो मंसपेसी सउणियाए गहियत्ति निरासो जातो तहा संदिद्धपरलोयसुहासाए दिट्ठं सुहं परिच्चयंतो उभयोवि चुको सोइहिइ, सयंबुद्धो भणइ—जं तुमं तुच्छसुहमोहितो भणसि को तं सचेयणो पमाणं करेइ ?, जो कुसलजणपसंसियं रयणं मुहागयं कायमणिए पसत्तो न इच्छइ तं केरिसं मन्नसि ?, तं संभिन्नसोय ! धीरा सरीरविभवाईणमणिच्चयाइ जाणिऊणं कामभोगे परिच्चज्ज तवसि संजमे य निव्वाणसुहकारणे जुत्तंति, संभिन्नसोयो भणइ–सयंबुद्ध ! मरणं होहित्ति किं सक्का पढममेव सुसाणे ठाएउं ?, नूणं तुमं टिट्टिभीसरिसो, जहा टिट्टिभी गगणपडणसंकिया धरेउकामा उद्धपाया सुवइ तहा तुमं मरणं किर होहित्ति अइपयत्तकारी संपयकालियं सुहं परिच्चाय अणागयकालियं सुहं पत्थेसि, नणु पत्ते मरणसमए परलोगहियमायरिस्सामो, सयंबुद्धेण भणियं—मुद्ध ! जुद्धे संपलग्गे कुंजरतुरगदमणं कज्जसाहगं न हवइ, न वा गेहे पलित्ते कूवखणणं कज्जकरं, जइ पुण दमणं खणणं वा पुव्वकयं होंतं तो परबलमहणं जलणविज्झावणं च सुहेण होंतं, एवं जो अणागयमेव परलोगहिए न उज्जमइ सो उक्कमंतेसु पाणेसु परमदुक्खाभिभूतो किह परलोगमणुट्ठेहिति ?, एत्थ सुणेहि वियक्खणकहियं उवएसं–कोइ किल हत्थी जरापरिणतो गिम्हकाले किंचि गिरिनइं समुत्तरंतो विसमे तीरे पडितो, सो सरीरगरुयत्तणेण दुब्बलत्तेण य उट्ठेउमसत्तो तत्थेव कालगतो, से अपाणदेसो सियालेण परिक्खइतो, तेण मग्गेण एगो वायसो अतिगतो मंसं उदगं च उवजीवंतो चिट्ठइ, उण्हेण य डज्झमाणे कलेवरे सो पएसो संकुचितो, वायसो तुट्ठो, अहो निरावाहं जायं, पाउसकाले य तं गयकलेवरं गिरिनइपूरेण वुज्झमाणं महानइसोयपडियं समुद्दमतिगयं, तत्थ मच्छमगरेहिं छिन्नं, ततो जलपूरियातो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

गयकलेवरातो वायसो निग्गतो, तीरं अपस्समाणो तत्थेव निहणमुवगतो, जइ पुण अणागयमेव निग्गतो होंतो तो दीहकालं सच्छंदप्पयारं विविहाणि य मंसोदगाणि य आहारेंतो, एयस्स दिट्ठंतस्स अयमुवसंहारो–जहा वायसो तहा संसारिणो सत्ता, जहा हत्थिकलेवरप्पवेसो तहा मणुस्सवोंदिलाभो, जहा कलेवरब्भंतरे मंसमुदगं च तहा विसयसंपत्ती, जहा मग्गनिरोधो तहा तब्भवपडिबंधो, जहा उदकसोयविच्छोभो तहा मरणकालो, जहा विवरा निग्गमो तहा परभवसंकमो, तं जाणाहि संभिन्नसोय ! जो तुच्छए निस्सारे थोवकालिए कामभोए परिच्चइऊणं तवसंजमुज्जोगं करेइ सो सुगइगतो न सोइहि, जो पुण विसएसु गिद्धो मरणसमयमुदिक्खइ सो सरीरभेए अगहियपाहेयो चिरं दुही होहिइ, तं मा जंबुक इव तुच्छकप्पणामेत्तसुहपडिबद्धो विउलकालियं सुहमवमन्नसु, संभिन्नसोएण भणियं–को सो जंबुकदिट्ठंतो ?, सयंबुद्धेण भणियं–सुणाहि, कोइ किर वणयरो वणे संचरमाणो विसमे पएसे ठितो, दिट्ठो एगो गइंदो, सो एगेण कंडेण आहतो, निट्ठुरं मम्मप्पदेसलग्गकंडप्पहारेण पडितो, पडंतेण एगो महाकाओ सप्पो अक्कमितो अद्धनिग्गतो अच्छइ, ततो पडियं गयं जाणिऊण सजीवं धणुमवकिरिय परसुं गहाय दंतमोत्तियहेउं गइंदं संलियमाणो तेण सप्पेण खइतो तत्थेव पडितो मतो, ततो एगेण जंबुगेण परिब्भमंतेण सो हत्थी सो य मणुस्सो दिट्ठो, भीरुत्तणेण य अवसरितो, मंसलोलुयाए पुणो पुणो अल्लियइ, ततो निज्जीवंति निस्संसयं मुणिऊण तुट्ठो अवलोएइ चिंतेइ य—हत्थी जावज्जीवयं भत्तं मणुस्सो सप्पो य कंचि कालं होहिइ, जीवाबंधणं ताव खाएमित्ति तुट्ठो मंदबुद्धी, धणुकोडीए छिन्नपडिबंधाए तालुदेसे भिन्नो मतो, जइ सो पुण अप्पसारं तुच्छंति जीवाबंधणं परिहरिऊण हत्थीमणुस्सोरगकलेवरेसु लग्गंतो तो ताणि य अण्णाणि चिरं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

सायंतो, एवं तुमंपि जाणाहि–जो माणुससोक्खपडिबद्धो परलोगसाहणनिरवेक्खो सो जंबुको इव विणस्सिहिइ, जंपि सामि ! तुब्भे भणह—संदिद्धो परलोको इति, तंपि न जुत्तं, जतो तुब्भे मए सह कुमारकाले नंदणुज्जाणमुवगया, तत्थ एगो देवो आगासातो ओवइओ, तं दट्ठूण अम्हे अवसरिया, देवो य दिव्वाए गतीए खणेण अम्ह समीवं पत्तो, भणिया य अम्हे तेणं–अहो महाबल ! अहं तव पियामहो सयबलो रज्जसिरिं पयहिऊण चिण्णव्वतो लंतगे कप्पे अहिवई जातो, ता तुब्भेवि मा पमायह, भावह अप्पाणं जिणवयणेणं, ततो सुगइगामिणो भविस्सह, एवं वोत्तूण देवो गतो, तं जइ सामि ! तुब्भे सुमरह तत्तो अत्थि परलोगोत्ति सद्दहह, मया भणियं–सुमरामि सयंबुद्ध ! पियामहभणियं, ततो लद्धावगासो सयंबुद्धो भणइ—सुणह सामि! पुव्ववुत्तंतं–तुब्भं पुव्वजो कुरुचंदो नाम राया आसि, तस्स य देवी कुरुमई, हरिचंदो कुमारो, सो य राया नत्थिकवाई वहूणं सत्ताणं वहाय समुट्ठितो निस्सीलो निव्वतो, एवं तस्स बहू कालोऽतीतो, मरणकाले अस्सायवेयणीयबहुलयाए नरगपडिरूवगो पोग्गलपरिणामो संवुत्तो, गीयं सुइमहुरं अकोसंति मन्नइ, मणोहराणि रूवाणि विकृतानि पासति, खीरं खंडसक्करोवणीयं पूइं मन्नइ, चंदणाणुलेवणं मुम्मुरं वेएइ, हंसतूलमहुफासं कंटकिसाहासंचयं पडिसेवइ, तस्स तहाविहमसुभकम्मोदयातो विवरीयभावं जाणिऊण कुरुमई देवी हरिचंदेण सह पच्छन्नं पडियरइ, एवं सो कुरुचंदो राया परमदुक्खितो कालगतो, तस्स नीहरणं काऊण सज्जणवयं गंधसमिद्धं नाएण पालेइ, पिउणो य तहाभूयं मरणमणुचिंतयस्स एवं मती समुप्पन्ना–अत्थि सुकयदुक्कयफलंति, ततो अणेण एगो खत्तियकुमारो बालवयंसो सुबुद्धी संदिट्ठो–भद्द ! तुमं पंडियजणोवइट्ठं धम्मकहं पइदिणं मे कहेसु, एसा चेव ते से ३त्ति, ततो सो एवं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निउत्तो जं जं धम्मसंतियं वयणं सुणेइ तं तं राइणो निवेएइ, राया सद्दहइ तहेव पडिवज्जइ, कयाइं च नगरस्स नाइदूरे तहारूवस्स साहुणो केवलनाणुप्पत्तिमहिमं काउं देवा उवागया, एयं सुबुद्धिणा खत्तियकुमारेण जाणिऊण हरिचंदस्स रण्णो निवेइयं, सोऽवि देवागमणविम्हितो तुरियं पवरतुरगारूढो साहुसमीवमागतो, वंदिऊण विणएण निसण्णो केवलिमुहविणिग्गयं वयणामयं सुणेइ, सोऊण संसारमोक्खसरूवं अत्थि परभवसंकमोत्ति निस्संकियं जायं हियए, पुच्छइ—भयवं ! मम पिया कं गइं गतो ?, ततो भगवया भणियं—हरिचंद ! तव पिया अनिवारियपावासवो बहूणं सत्ताणं पीडाकरो पावकम्मगरुयताए इह य विवरीयविसयोवलंभणं पाविऊण अहे सत्तमपुढवीए नेरइओ जातो, सो तत्थ परमनिव्विसहं निरुवमं निप्पडियारं दुक्खमणुभवइ, ततो कम्मविवागं पिउणो सोऊण हरियंदो राया संसारभयभीतो वंदिऊण केवलनाणिं सनगरमइगतो, ततो पुत्तस्स रायसिरिं समप्पेऊण सुबुद्धिं संदिसइ—तुमं मम पुत्तस्स उवएसं देज्जासित्ति, तेण विण्णवितो—सामि ! अहं केवलिणो वयणं सोऊण सह तुब्भेहिं न करेमि तवं तो मए न सुयं परमत्थतो केवलिवयणं, तम्हा अहंपि तुब्भेहिं समं पवइस्सामि, जं पुण उवदेसो दायव्वोत्ति संदिसह तं मम पुत्तो काहिइ, ततो राया पुत्तं संदिसइ—तुमे सुबुद्धिसुयोवएसो कायव्वो, ततो पलित्तगिरिकंदरातो सीहो इव राया विणिग्गतो पवइतो केवलिसमीवे सह सुबुद्धिणा, ततो परमसंवेगो सज्झायपसत्थचिंतणपरो परिक्खवियकिलेसजालो समुप्पन्नकेवलनाणदंसणो परिनिव्वुतो, तस्स हरिचंदस्स रायरिसिणो वंसे संखाईएसु नरवईसु धम्मपरायणेसु अतिक्कंतेसु तुब्भे संपयं सामी !, अहं पुण सुबुद्धिवंसे, तं एस अम्हं नियोगो बहुसुपुरिसपरंपरगतो धम्मदेसणाहिगारो, जं पुण एत्थ मया अकांडे विण्ण-

॥२२१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

विया तं कारणं सुणह–अज्ज अहं नंदणवणं गतो आसि, तत्थ मए दुवे चारणसमणा दिट्ठा–आइच्चजसे अमिततेओ य, ते य वंदिऊण पुच्छिया–भयवं ! महाबलस्स रण्णो केवइयमाउयं चिट्ठइ ?, तेहिं कहियं–मासो सेसो, ततो संभंतो आगतो, एस परमत्थो । ततो जं जाणह सेयं तमकालहीणं करेहत्ति, एवं सयंबुद्धवयणं सोऊण अहं धम्माभिमुहो जाओ, आउपरिक्खयसवणेण य आमट्ठियभायणमिव सलिलपूरिज्जमाणमवसण्णहियओ भीतो सहसा उट्ठितो कयंजली सयंबुद्धं सरणमुवगतो, वयंस ! किमियाणिं माससेसजीवितो परलोगहियं करिस्सामि ?, तेण समासासितो–सामि ! दिवसोऽवि बहुओ परिचत्तसव्वसावज्जस्स, किमंग पुण मासो ?, ततो तस्स वयणेण पुत्तसंकामियपयापालणवावारो गतो सिद्धाययणं, कतो भत्तपरिच्चातो सयंबुद्धोवदिट्ठजिणमहिमासंपायणनिरतो सुमणसो संथारगसमणो जातो, निरंतरं च संसारस्स अणिच्चयवेरग्गजणणिं धम्मकहं च सुणमाणो समाहिपत्तो कालगतो इहागतो, एवं मए थोवो तवो चिण्णोत्ति । एयं च अज्ज मम सपरिवाराए ललियंगएण देवेण कहियं, इत्थंतरे ईसाणदेवरायसमीवातो दढधम्मो नाम देवो आगतो भणइ–अहो ललियंगय ! ईसाणदेवराया नंदीसरदीवं जिणमहिमं काउं वच्चइत्ति गच्छामि अहंपित्ति सो गतो, ततो अज्ज ललियंगदेवसहिताण इंदाणत्तीए अवस्सगमणं होहित्ति इयाणिं चेव वच्चामित्ति गयामो खणेण नंदीसरदीवं, कया जिणाययणेसु महिमा, ततो तिरियलोए सासयचेइयाण पूयं तित्थयरवंदणं च कुणमाणो चुतो ललियंगतो, ततो अहं परमसोगग्गिडज्झमाणविवसा सपरिवारा गया सिरिप्पभं विमाणं, ततो सयंबुद्धदेवो आगतो परिगलमाणसरीरसोभं मं दट्ठूण भणइ–सयंपभे ! पच्चासन्नो ते चवणकालो तो जिणमहिमं करेहि जेण भवंतरेऽवि बोहिलाभो भवइत्ति, ततोऽहं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तस्स वयणेण पुणरवि नंदिस्सरदीवे समयक्खेत्ते य कयजिणवंदणपूया चुता समाणा जंबुद्दीवे दीवे पुव्वविदेहे पुक्खलावइविजए पुंडरिगिणीए नगरीए वइरसेणचक्कवट्टिस्स गुणवतीए देवीए दुहिया सिरिमई नाम जाया, धाईजणपरिग्गहिया सुहेण वड्ढिया कलातो गहियातो, अन्नया कयाइ पदोसे सव्वतोभद्दं पासायमधिरूढा पस्सामि नगरबाहिं देवसंपायं, ततो मए देवजाई सुमरिया, सुमरिऊण य दुक्खेणाहया, परिचारिगाहिं जलकणगसित्ता पच्चागयचेयणा चिंतेमि–कत्थ मे पियो ललियंगतो देवोत्ति ?, तेण य विणा किं जणेण आभट्ठेणंति मूकत्तणं पवण्णा, परियणो भणइ–इमीसे वाया जंभगेहिं निरुद्धा, ततो तिगिच्छेहिं होममंतरक्खाविहाणेहिं कतो महंतो पयत्तो, अहंपि मूकत्तणं न मुयामि, परिचारियाणं पुण लिहिऊणमाणत्तिं देमि, अन्नया पमयवणगयं ममं पंडिया नाम अम्मधाई विरहे भणइ–अहं ते धाई तो मे कहेहि सब्भूयं, ततो मया भणियं–अम्मो ! अत्थि कारणं जेणाहं मूयत्तणं पवण्णा, ततो सा तुट्ठा भणइ–पुत्ति ! साहसु मे कारणं, ततो जहा भण्णसि तहा चेट्ठिस्सामि, ततो मया भणिया–सुणाहि–अत्थि धायईसंडे दीवे पुव्वविदेहे मंगलावइविजए नंदिग्गामो नाम संनिवेसो, तत्थ अहं इतो तइयभवे दरिद्दकुले सुलक्खणसुमंगलाईणं छण्हं भगिणीणं कणिट्ठा जाया, न कयं च मे अम्मापिऊहिं नामं, ततो निन्नामियत्ति पसिद्धिं गया, सकम्मपडिबद्धा य जीवामि, अन्नया कयाइ ऊसवे इब्भगडिभाणि नाणाविहभक्खहत्थगयाणि सगिहेहिंतो निग्गयाणि पासेमि, ताणि दट्ठूण मए माया जाइया–अम्मो ! देहि मे भोयगं अन्नं वा भक्खं जेण डिंभेहिं समं रमामित्ति, तीए रुट्ठाए आहया निच्छूढा य गिहातो, कतो ते इहं भक्खा ?, वच्चसु अंबरतिलकं पव्वयं तत्थ फलाणि खायसु मरसु वत्ति, ततो रोयंती निग्गया दिट्ठो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मया जणो अंबरतिलगाभिमुहं वच्चंतो, गया तेण सहिया, दिट्ठो मया सिहरकेरेहिं गगणतलमिव मिणिउं समुज्जुतो अंबरतिलको नाम पवतो, तत्थ जणो फलाणि गेण्हइ, मएवि य पक्कपडियाणि सादूणि फलाणि भक्खियाणि, रमणिज्जयाए य गिरिवरस्स सह जणेण संचरमाणी सद्दं सुइमणोहरं सुणामि, सद्दमणुसरंती गया कंचि पदेसं, दिट्ठा जुगंधरा नाम आयरिया विविहनियमधरा चउद्दसपुव्वी चउणाणोवगया, तत्थ बहवो समागया देवा मणुया य, ते तेसिं बंधमोक्खविहाणं कहेंति, अहंपि पाएसु णिवडिऊणं एगदेसे निसण्णा धम्मकहं सुणामि, पुच्छिया मए—भयवं ! अत्थि मम समो कोऽवि दुक्खिओ जीवो जीवलोगे ?, ततो तेहिं भगवंतेहिं भणियं—निन्नामिगे ! तुहं सद्दा सुहासुहा सुइपहमागच्छंति, रूवाणिवि सुंदरमंगुलाणि पाससि, गंधे सुभासुभे अग्घायसि, रसेवि मणुण्णामणुण्णे आसाएसि, फासेवि इट्ठाणिट्ठे पडिसंवेदेसि, अत्थि य ते सीउण्हछुहाणं पडियारो, निद्दं सुहागयं सोवेसि, तमसि जोइपगासेण कज्जं कुणसि, नरए पुण नेरइयाणं निच्चमसुभा सद्दरूवरसगंधफासा निप्पडियाराणि य परमदारुणाणि सीउण्हाणि तहा छुहापिवासातो य, न य खणंपि निद्दासुहं तेसिं, ते य निच्चंधयारेसु नरगेसु चिट्ठमाणा दुक्खसयाणि विवसा अणुहवमाणा बहुं कालं गमंति, तिरियावि सपक्खपरपक्खजणियाणि दुक्खाणि सीउण्हखुहापिवासादीयाणि य अणुहवंति, तव पुण साहारणं सुहदुक्खं, केवलमन्नेसिं रिद्धिं पस्समाणा दुहियमप्पाणं तक्केसि, ततो मए पणयाए जह भणह तहत्ति पडिस्सुयं, तत्थ य धम्मं सोऊण केइ पव्वइया केइ गिहिवासजोग्गाइं सीलवयाइं पडिवन्ना, ततो मए विन्नवियं—भयवं ! जस्स नियमस्स पालणेऽहं समत्था तं मे उवइसह, ततो मे तेहिं पंच अणुव्वयाइं उवदिट्ठाणि, परितुट्ठा, वंदिऊण जणेण सह नंदिग्गाममागता, पालेमि ताणि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥२२३॥

अणुव्वयाणि, परिपालयंती चउत्थछट्ठट्ठमेहिं खमामि, एवं काले गते कयभत्तपच्चक्खाणा रातो देवं परमदंसणीयं पस्सामि, सो भणइ—निन्नामिगे! चिंतेहि होमि एयस्स भारियत्ति ततो मे देवी भविस्ससि, मया सह दिवे भोगे भुंजेसि, एवं वोत्तूण अदंसणं गतो, अहमवि परितोसविसप्पमाणहियया देवदंसणेण लभिज्ज देवत्तंति चिंतेऊण समाहीए कालगया, ईसाणे कप्पे सिरिप्पभविमाणे ललियंगस्स देवस्स अग्गमहिसी सयंपभा नाम जाया ओहिणाणोवयोगविण्णाय-देवभवकारणा, जहा—एस ललियंगो अहुणोववन्नो समाणो नियपरियणं परिभाविन्तो देवीसु मज्झे सयंपभाए देवीए अज्झोववन्नो, सा आउक्खए चुया, ततो देवो पलविउमाढत्तो, सयंबुद्धो य महाबले कालगए गहियसामण्णो चिरकालं संजमं परिपालिऊण समाहिपत्तो कालगतो इहेव ईसाणे कप्पे इंदसामाणितो जातो, तेण विलवंतो संबोहितो, भणितो य—जहा धायइसंडे दीवे अवरविदेहे नंदिग्गामे निन्नामिगा कयभत्तपच्चक्खाणा चिट्ठइ, तं नियदंसणेण पलोभेहि जेण कयनियाणा ते अग्गमहिसी सयंपभा जायइ, ततो अणेण नियदंसणेण पलोभिया कयनियाणा इहमागयत्ति, सहरिसं सह ललियंगएण अच्छामि, अन्नया य सव्वसंपत्तीए कारणं भगवंतो जुगंधरायरियत्ति मुणिऊण ते वंदिउमवइन्ना, ते तंसमयं तहेव अंबरतिलके पव्वए मणोरमे उज्जाणे सगणा समोसरिआ, ततोऽहं परितोसविसप्पियमुही तिगुणपयाहिणपुव्वं नमिऊण निवेइअं नाम, नट्ठोवहारेण महिऊण गया सविमाणं, दिवे कामभोगे ललियंगएण सहिया निरुस्सुका बहुकालं अणुहवामि, देवो य सो ललियंगतो आउक्खएण चुतो, अम्मो न याणामि कत्थ गतो?, अहमवि तस्स वियोगदुहिया चुता समाणी इहमागया, देवुज्जोयदरिसणेण समुप्पन्नजाइसरणा तं देवं मणसा परिवहंती मूअत्तणं पवन्ना, किं तेण विणा कएण

श्रेयांसपूर्व-भवेषु नि-र्नामिका-स्वयंप्रभा-भवौ ॥२२३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संलावेणत्ति?, एस परमत्थो, तं सोऊण अम्मधाई ममं भणति—पुत्ति ! सुट्ठु ते कहियं, एयं पुण पुव्वभवचरियं पडिलिहिज्जउ, ततोऽहं हेडावेहामि, सो य ललियंगतो जइ मणुस्सेसु आयातो होहिइ तो सचरियं दट्ठूण जाइं सुमरिहिइ, तेण य सह निव्वुया विसयसुहमणुभवेसु, ततो सज्जितो पडो, ततो विविहवण्णाहिं वट्टिगाहिं दोहिंवि जणीहिं पढमं तत्थ नंदिग्गामो लिहितो, ततो अंबरतिलगगिरिवरसंसियकुसुमियासोअतरुतलसन्निसन्ना गुरवो देवमेहुणगं च वंदणागयं ईसाणो कप्पो सिरिप्पभं विमाणं सदेवमिहुणं महाबलो राया सयंबुद्धसंभिन्नसोयसहितो निन्नामिया य तवसोसियसरीरा सवत्थ ललियंगयसयंपभाणं नामाणि लिहियाणि, ततो निप्फन्ने पडे धाती पट्टगं गहेऊण धायइसंडदीवं वच्चामित्ति गयणेण उप्पइया, खणेण य नियत्ता, पुच्छिया मया—कीस अम्मो ! लहुं नियत्तासि, सा भणइ—पुत्ति ! सुण कारणं, इह अम्ह सामिणो तव पिउणो वरिसवद्धावणनिमित्तं विजयवासिणो बहुगा रायाणो समागया तं जइ इहेव तव हिययदइतो होहिइ तो लभेयेति चिंतिऊण नियत्ता, जइ पुण न होहिइ तो परिमग्गणं करेस्सामित्ति चिन्तिऊणाऽऽगया, मया भणिया—सुट्ठु कयंति, ततो बीयदिवसे पडं गहाय अवरण्हे आगया, पसन्नमुही भणइ—पुत्ति ! निव्वुया होहि, दिट्ठो मया ते ललियंगतो, पुच्छिया मया—अम्मो ! साहसु कहंति?, सा भणति—पुत्ति ! मया रायमग्गे पसारितो पडो, तं पडं केइ आलिक्खकुसला आगमं पमाणं करेंता पसंसंति, जे अकुसला ते वण्णरूवाईणि पसंसंति, तत्थ दुम्मरिसणरायसुतो दुद्दंतो कुमारो सपरिवारो आगतो, सो मुहुत्तमेत्तं पासिऊण मुच्छितो पडितो, खणेण आसत्थो, मणुस्सेहिं पुच्छितो—सामि ! किं मुच्छितो?, सो भणइ—नियचरियं पडयलिहियं दट्ठूण जाती मए सुमरिया, अहं ललियंगतो देवो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आसि, सयंपभा मे देवी, मया पुच्छितो—पुत्त ! साहसु को एसो संनिवेसो ?, भणइ—पुंडरिगिणी नगरी, पवयं मेरुं कहइ, अणगारो कोऽवि एस साहू, वीसरियं से नामं, कप्पं सोहम्मं साहइ, महाबलं राया कोऽवि एसो मंतिसहितोत्ति जंपइ, निन्नामिगं कावि एसा तवस्सिणी, न याणं से नामंति, ततो विप्पावगो एसोत्ति मुणिऊण मया भणितो—पुत्त ! संवदति सव्वं, जं पुण वीसरियं तेण किं ?, सच्चं तुमं ललियंगतो, सा पुण ते सयंपभा धायइसंडे दीवे नंदिग्गामे कम्मदोसेण पंगुलिया जाया, सुमरिया नियजाती, ततो तीए आगमकुसलाए तव मग्गणहेउं नियचरियं लिहियं, मम य धायइसंडं गयाए पडो समप्पिओ, कहिओ नियवुत्तंतो, ततो मए तीसे अणुकंपाए तव परिमग्गणं कयं, ता पुत्त ! एहि नेमि धायइसंडं, संतोसेहि नियदंसणेणं पंगुलियं, एवं भणिए उवहसितो मित्तेहिं—गम्मउ भो सिज्झउ त पंगुलिया, ततो सो अहोगीवं काऊण अवक्कंतो, मुहुत्तमेत्तेण लोहग्गलाउ धणो नाम कुमारो लंघणपवणादिसु अतीव समत्थोत्ति संजायवइरजंघोत्तिबीयाभिहाणो आगतो, पडं दट्ठूण मं भणइ—केणेयं लिहियं चित्तं ?, मया भणियं—किंनिमित्तं पुच्छसि ?, सो भणइ—मम एयं चरियं, अहं ललियंगतो नामासि, सयंपभा मे देवी, असंसयं तीए लिहियं. जइ वा अन्नेणवि तीए उवएसेणंति तक्केमि, ततो मए पुच्छितो—जइ ते चरियं साहसु को एस संनिवेसो ?, सो भणइ—नंदिग्गामो, एसो पव्वतो ?, अंबरतिलको, जुगंधरा आयरिया, एसा समणकिलंता निन्नामिया, महब्बलो राया सयंबुद्धसंभिन्नसोएहिं सह लिहितो, एस ईसाणो कप्पो, सिरिप्पभं विमाणं, एवं सव्वं सपच्चयं कहियं, ततो मए भणितो—जा एसा सिरिमती कुमारी तुज्झ पिउच्छाए दुहिया सा सयंपभा, तेण रण्णो निवेएमि जेण सा ते भवइ, एवं सोऊण सो सुमणसो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गतो, ततोऽहं कयकज्जा आगया, ता गच्छामि पुत्ति ! रण्णो निवेएमि जेण ते पियसंगमो भवइ, गया रायसमीवं, सद्दाविया अहं रण्णा, माउसहिया गया रायसमीवं, राया पकहितो-वसुमइ ! जो सिरिमईए ललियंगतो देवो आसि तं जहा अहं जाणं न तहा सिरिमई, अत्थि अवरविदेहे सलिलावइविजए वीयसोगा नाम नगरी, जियसत्तू राया, तस्स मणोहरी केकई य दुवे देवीओ, तासिं जहक्कमं अयलो बिभीसणो य पुत्ता बलदेववासुदेवा, पिउंमि उवरते विजयद्धं भुंजंति, मणोहरी बलदेवमाया कंमि काले पुत्तमापुच्छति-अयल ! अणुभूया मे भत्तुणो सिरी पुण्णसिरी य, संपइ पव्वयामि, करेमि परलोगहियं, विसज्जेहि मंति, सो नेहेण न विसज्जेइ, निब्बंधे कए भणइ-अम्मो ! जइ ते निच्छतो ता देवलोगं गया मं वसणपडिअं पडिवोहिज्जासि, तीए पडिवन्नं, पवइया, परमधिइबलेण अहीयाणि एक्कारस अंगाणि, वरिसकोडी तवमणुचरिऊण अपडिवइयवेरग्गा समाहीए कालगया लंतगे कप्पे देवो जातो, तं ताव मं जाण, बलदेववासुदेवा य बहुकालं समुदिता भोगे भुंजंति, कयाइ निग्गया अणुजत्तं, आसेहिं अवहिया, अडविं पवेसिया, दूरं गंतूण आसा विवन्ना, बिभीसणो कालगतो, अयलो नेहेण तं जाणइ परिस्समेण मुच्छितो एसो, नेमि सीयलाणि वणगहणाणि, अहं च लंतगकप्पगतो पुत्तसिणेहेण संगारं सुमरिऊण खणेणागतो, बिभीसणरूवं विउविऊण अयलो भणितो-भाय ! अहं विज्जाहरेहिं समं जुज्झिउं गतो, ते य मए पसाहिया, तुज्झे पुण अंतरं जाणिऊणं केणवि मम रूवेण मोहिया, ता छड्डेहि एयं कलेवरं, सक्कारेसु अग्गिणा, ततो सक्कारेऊण सनगरमागया, पूइज्जमाणा जणेण सगिहं पविट्ठा एक्कासणनिसण्णा ठिया, ततो मया मणोहरीरूवं दंसियं, संभंतो अयलो भणइ—अम्मो ! तुब्भेत्थ कत्तोत्ति ?, ततो मए पवज्जा-

Jain Education Intern For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः

॥२२५॥

कालो संगारो य कहितो, बिभीसणमरणं च, अहं लंतगातो इहागतो तव पडिवोहणनिमित्तं, अणिच्चं मणुयरिद्धिं जाणिऊण करेहि परलोगहियं, एवं वोत्तूण गतोऽहं सगं कप्पं, अयलोऽवि पुत्तसंकामियरज्जसिरी निविण्णकामभोगो पवइतो, तवमणुचरिऊण ललियंगतो देवो जातो, अहं तु पुण तं सदेवीगं जाहे जाहे सुमरामि ताहे ताहे लंतगं कप्पं, तंमि सो सागरोवमस्स सत्त नवभागे देवसुहं भोत्तूण चुतो तत्थऽन्नो उववन्नो, तंपि ललियंगयं एस मे पुत्तो चेवेति मन्नेमि, एएण कमेण गया सत्तरस ललियंगया, जो सो पुण सिरिमईए भत्ता ललियंगतो सो अट्ठारसमो, एसोऽवि मण पुत्तसिणेहेण बहुसो लंतगं कप्पं नीतो, तं जाणामि सिरिमईए भत्ता ललियंगतो जातो वइरजंघोत्ति, आणत्तो कंचुकी सद्दावेह वइरजंघं, सद्दावितो आगतो, दिट्ठो मया परितोसवियसियच्छीए अच्छेरयब्भूतो, पणतो, राइणा भणितो–पुत्त ! वइरजंघ ! पुव्वभवसयंपभं जाण सिरिमइंति, अवलोइया तेण अहं कलहंसेणेव कमलिणी, विहिणा पाणिं गाहितो, दिण्णं ताएण विपुलं धणं परिचारिगातो य, विसज्जियाणि अम्हे, गयाणि लोहग्गलं, भुंजामो निरुवसग्गं भोगे, वइरसेणोऽवि राया लोगंतियदेवपडिबोहितो संवच्छरियं दाणं दाऊण पोक्खलपालस्स नियपुत्तस्स रज्जं दाऊण नियगसुएहिं नरवईहिं सहितो पवइतो, उप्पण्णकेवलणाणो धम्मं दिसइ, ममवि कालेण पुत्तो जातो, सो सुहेण वड्ढितो, कयाइ पोक्खलपालस्स केइ सामंता विसंवइया, ततो तेण अम्हं पेसियं–एउ वइरजंघो सिरिमई य, अम्हे पुत्तं नगरे ठवेऊणं विउलेण खंधावारेण पत्थिया, सरवणस्स मज्झेणं जामो, जणेण पंथो पडिसिद्धो, जहा दिट्ठीविसो सरवणे सप्पो चिट्ठइ, तो न जाइ तेण पहेण गंतुन्ति, ततो तं सरवणं परिहरंता कमेण पत्ता पुंडरिगिणिं, सुयं च तेहिं सामंतेहिं वइरजंघागमणं, ततो ते संकिया सेवामागया,

श्रीवज्रसेनोक्तो बिभीषणाचलसंबन्धः

॥२२५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अम्हेवि पोक्खलपालेण रण्णा पूइऊण विसज्जिया, पत्थिया सनगरं, भणइ य जणो—सरवणुज्जाणमज्झेण गंतवं जतो तत्थट्ठियस्स साहुणो केवलनाणमुप्पन्नं, ततो देवा ओवइया, देवुज्जोएण पडिहयं विसं, सप्पो निव्विसो जातो, ततो अम्हे कमेण पत्ता सरवणं, तत्थ आवासिया, दिट्ठा नियभायरो मए सागरसेणमुणिसेणा समणा, वंदिया भत्तिबहुमाणेणं, पडिलाभिया असणपाणखाइमसाइमेण, ततो अम्हे तेसिं गुणे अणुमोयंता कया अम्हेऽवि निस्संगा सामन्ने विहरिस्सामोत्ति विरागमग्गमोतिण्णा, पत्ता कमेण सनगरं, पुत्तेण अम्हं विरहकाले भिच्चवग्गो दाणमाणेहिं रंजितो, वासघरे विसधूमो पउंजितो, अम्हेऽवि विसज्जियपरियणा वासहरं रयणीए पविट्ठा, धूमदूसियधातू कालगया इहागया उत्तरकुरा-एत्ति तं जाणामि—अज्ज ! जा निन्नामिगा जा सयंपभा जा सिरिमई सा अहं, जो सो महब्बलो राया जो य ललियंगतो देवो जो य वइरजंघो राया ते तुब्भे, एवं जीसे नामं गहियं साऽहं सयंपभा, ततो सामिणा भणियं—अज्ज ! देवुज्जोएण जाइं संभरिऊण मए एवं चिंतियं—देवभवे वट्टामि, ततो सयंपभा आभट्ठा, तं सच्चमेयं कहियंति परितुट्ठमाणसाणि पुव्वभवसुमरणपज्जलियसिणेहाणि तिण्णि पलितोवमाइं जीविऊणं कालगयाणि सोहम्मे कप्पे देवा जाया, तत्थवि वराणे पीती आसि, पलितोवमठिइं पालेऊण चुया वच्छावइविजए पहंकराए नगरीए सामी सुविहिविज्जस्स पुत्तो केसवो नाम जातो, अहं पुण सेट्ठिसुतो, तत्थवि णो अधिगो सिणेहो, तत्थेव नगरे रायसुतो मंतिसुओ सेट्ठिसुतो सत्थवाहसुतो य तेहिंवि सह मेत्ती जाया, कयाइ साहू महप्पा किमिकुट्ठेण गहितो पडियरिओ, एयं जहा पुव्वं जाव समाहीए कालगया, अच्चुए कप्पे इंदसमाणा देवा जाया, ततो ठिइक्खए चुता केसवो वइरसेणस्स रण्णो मंगलावईए देवीए धारिणिवीयना-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माए पुत्तो जातो वयरनामो, रायसुयाइकमेण कणगनाभरुप्पनाभपीठमहापीठा जाया, कणगनाभरुप्पनाभो बीयनामेण बाहुसुबाहू, अहं पुण नगरे तत्थेव रायसुतो जातो, बालो चेव वइरनाभं समल्लीणो सारही सुजसो नाम, वइरनाभेण सममणुपबइतो, भगवया य वइरसेणेण वइरनाभो भरहे पढमतित्थयरो उसभो नाम आदिट्ठो कणगनाभो चक्कवट्टी भरहो इति, सेसं जहा पुव्वं जाव सबट्ठे देवा जाया, ततो चुया इहागया, मया य वइरसेणतित्थयरो एरिसेण नेवत्थेण दिट्ठोत्ति पपियामहलिंगदरिसणे पोराणीतो जाईतो सरियातो, विन्नायं च–अन्नपाणाइं दायवं तवस्सीणं, तेसिं च तिण्णिवि सुविणाणमेतदेव फलं जं भयवतो भिक्खा दिन्ना, एयं च कहं सोऊण नरवइमाईहिं पहट्ठमाणसेहिं सेज्जंसो पूजितो, गया नियनियट्ठाणं, सेज्जंसोवि जत्थ ठितो भयवं पडिलाभितो ताणि पयाणि पाएहिं मा अक्कमिहामित्ति भत्तीए तत्थ रयणामयं पीढं करेइ, तिसंझं च पूएइ, पबदिवसे विसेसेण पूइऊण भुंजइ, लोगो पुच्छइ–किमेयं ?, सेज्जंसो भणइ—आइतित्थयरमंडलं, ततो लोगेणवि जत्थ जत्थ भयवं ठितो तत्थ तत्थ पीढं कयं, कालेण य आइच्चपीढं जायं । गाथाक्षरगमनिका क्रियाध्याहारतः कार्या, यथा गजपुरं नगरमासीत्, तत्र श्रेयांसः सोमयशसो राज्ञः पुत्रः, तेनेक्षुरसदानं भगवते प्रदत्तं, तत्रार्द्धत्रयोदशहिरण्यकोटी वसुधारा निपतिता, 'पीढ'मिति यत्र भगवता पारितं तत्र तत्पादयोर्मा कश्चिदाक्रमणं कार्षीदिति श्रेयांसेन भक्त्या रत्नमयं पीठं कारितं, गुरुपूजेति तदर्चनं कृतवान्, अत्रान्तरे भगवतस्तक्षशिलातले गमनं बभूव, भगवत्प्रवृत्तिनियुक्तपुरुषैस्तु बाहुबलिनिवेदनं कृतम्, एतच्चाग्रे भावयिष्यते, तदेवं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

भगवतः ऋत्वादितीर्थकरस्य पारणकविधिरुक्तः, सम्प्रति भगवतः प्रसंगतः शेषतीर्थकराणामजितस्वाम्यादीनां च येषु स्थानेषु प्रथमपारणकान्यासन् तान्यभिधित्सुराह—

हत्थिणउरं अयोज्झा सावत्थी चेव तह य साएयं। विजयपुर बम्हथलयं पाडलिसंडं पउमसंडं ॥ ३२३ ॥
सेयपुरं रिट्ठपुरं सिद्धत्थपुरं महापुरं चेव। धन्नकर वद्धमाणं सोमणसं मंदिरं चेव ॥ ३२४ ॥
चक्कपुरं रायपुरं मिहिला रायगिहमेव बोद्धवं। वीरपुरं बारवई कोवकडं कोल्लपग्गामो ॥ ३२५ ॥

भगवत ऋषभस्वामिनः प्रथममिक्षास्थानं हस्तिनागपुरम्, अजितस्वामिनोऽयोध्या सम्भवनाथस्य श्रावस्ती अभिनन्दतस्य साकेतं सुमतिनाथस्य विजयपुरं पद्मप्रभस्य ब्रह्मस्थलं सुपार्श्वस्य पाटलिखण्डं चन्द्रप्रभस्वामिनः पद्मखण्डं सुविधिस्वामिनः श्रेयःपुरं शीतलस्य रिष्टपुरं श्रेयांसस्य सिद्धार्थपुरं वासुपूज्यस्य महापुरं विमलस्य धान्यकरं, अनन्तजितो वर्द्धमानं धर्म्मस्य सौमनसं शान्तिनाथस्य मन्दिरपुरं कुन्थुनाथस्य चक्रपुरम् अरनाथस्य राजपुरं मल्लिस्वामिनो मिथिला मुनिसुव्रतस्वामिनो राजगृहं नमिनाथस्य वीरपुरम् अरिष्टनेमेर्द्वारवती पार्श्वनाथस्य कोपकडं वर्द्धमानस्वामिनः कोल्लाकग्रामः ॥

एएसु पढमभिक्खा लद्धातो जिणवरेहिं सवेहिं। दिण्णाओ जेहिं पढमं तेसिं नामाणि वोच्छामि ॥ ३२६ ॥

एतेषु-हस्तिनागपुरादिषु स्थानेषु यथाक्रममृषभादिभिः सर्वैश्चतुर्विंशत्याऽपि प्रथममिक्षा लब्धा, अधुना पुनर्यैर्भिक्षा प्रथमं भगवद्भ्यः प्रदत्ता तेषां नामानि यथाक्रमं वक्ष्ये। प्रतिज्ञातं निर्वाहयति—

सेज्जंस बंभदत्ते सुरेंददत्ते य इंददत्ते य। पउमे य सोमदेवे महिंद तह सोमदत्ते य ॥ ३२७ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र मूल संपादने गाथा क्रमांकने किञ्चित् स्खलना संभाव्यते, [*** गाथा का सळंग क्रमांक ३४६ आना चाहिये, मगर यहा फ़िर् से गाथा ३२३ लिखा है, जो क्रमांक इस प्रत के पृष्ठ २१३/१ पर पहेले हि हो चुका है ***]

पुस्से पुणवसू पुण नंद सुनंदे जए य विजए य । तत्तो य धम्मसीहे सुमित्त तह वग्गसीहे य ॥ ३२८ ॥
अपराजिय वीससेणे वीसइमे होइ बंभदत्ते य । दिण्णे वरदिण्णे पुण धन्ने बहुले य बोद्धव्वे ॥ ३२९ ॥

भगवते ऋषभस्वामिने प्रथमभिक्षां श्रेयांसः–श्रेयांसनामा दत्तवान्, अजितस्वामिने ब्रह्मदत्तः सम्भवनाथाय सुरेन्द्रदत्तः अभिनन्दनाय इन्द्रदत्तः सुमतिनाथाय पद्मनामा पद्मप्रभाय सोमदेवः सुपार्श्वाय महेन्द्रः चन्द्रप्रभस्वामिने सोमदत्तः सुविधिनाथाय पुष्यः शीतलनाथाय पुनर्वसुः श्रेयांसाय नन्दः वासुपूज्याय सुनन्दः विमलाय जयः अनन्तजिते विजयः धर्मनाथाय धर्म्मसिंहः शान्तिनाथाय सुमित्रः कुन्थुनाथाय व्याघ्रसिंहः अरनाथायापराजितः मल्लिस्वामिने विश्वक्सेनः, विंशतितमो भवति ब्रह्मदत्तः, किमुक्तं भवति ?–मुनिसुव्रतस्वामिने ब्रह्मदत्तः प्रथमभिक्षां दत्तवान्, नमिस्वामिने दिन्नः अरिष्टनेमये वरदिन्नः पार्श्वनाथाय धन्यः वर्द्धमानस्वामिने बहुलः ।

एए कयंजलिउडा भत्तीबहुमाणसुक्कलेसागा । तक्कालपहट्ठमणा पडिलाभेंसु जिणवरिंदे ॥ ३३० ॥

एते श्रेयांसप्रभृतयः कृताञ्जलिपुटाः भक्तिः–उचितप्रतिपत्त्या विनयकरणं बहुमानः—आन्तरः प्रीतिविशेषस्ताभ्यां शुक्ला–अतीव शोभना लेश्या–परिणामविशेषो येषां ते भक्तिबहुमानशुक्ललेश्याकाः तत्कालं–तस्मिन् प्रथमभिक्षादानकाले प्रहृष्टमनसो यथाक्रममृषभादीन् जिनवरेन्द्रान् प्रतिलाभितवन्तः ॥

सव्वेहिंपि जिणेहिं जहियं लद्धाउ पढमभिक्खाउ । तहियं वसुहारातो वुट्ठाओ पुप्फवुट्ठीतो ॥ ३३१ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** जिनेश्वराणां प्रथम भिक्षादाता एवं भिक्षास्थान

सर्वैरपि जिनैः ऋषभादिभिर्यत्र प्रथमभिक्षा लब्धास्तत्र वसुधारा–हिरण्यप्रपातरूपा वृष्टा पुष्पवृष्टयश्च वृष्टाः। साम्प्रतं वसुधाराया जघन्यत उत्कर्षतश्च परिणाममाह–

अद्धत्तेरसकोडी उक्कोसा तत्थ होइ वसुहारा। अद्धतेरसलक्खा जहन्निया होइ वसुहारा॥ ३३२॥

अर्द्ध त्रयोदशं यासां ता अर्द्धत्रयोदशाः, सार्द्धा द्वादश इत्यर्थः, हिरण्यानां कोटय उत्कृष्टाः तत्र–प्रथमपारणकस्थाने भवति वसुधारा, अर्द्धत्रयोदशानां हिरण्यानां लक्षाणि जघन्या भवति वसुधारा। अथ यैः प्रथमा भिक्षा भगवद्भ्यो दत्ताः ते किंभूता अभवन्नित्याह–

सव्वेसिंपि जिणाणं जेहि उ दिन्नाउ पढमभिक्खाओ। ते पयणुपेज्जदोसा दिव्ववरपरक्कमा जाया॥ ३३३॥

केई तेणेव भवेण निव्वुया सव्वकम्मउम्मुक्का। केई तइयभवेणं सिज्झिस्संती जिणसगासे॥ ३३४॥

अक्षरगमनिका तु क्रियाध्याहारतः कार्या, यथा गजपुरं नाम नगरमासीत्, श्रेयांसस्तत्र, तेनेक्षुरसदानं भगवन्तमधिकृत्य प्रवर्त्तितं, तत्रार्द्धत्रयोदशहिरण्यकोटीपरिमाणा वसुधारा निपतिता, 'पीठ'मिति श्रेयांसेन यत्र भगवता पारितं तत्र तत्पादयोर्मा कश्चिदाक्रमणं करिष्यतीति भक्त्या रत्नमयं पीठं कारितं, गुरुपूजेति तदर्च्चनं चक्रे, अत्रान्तरे भगवतः तक्षशिलातलगमनं बभूव, भगवतः प्रवृत्तिनियुक्तपुरुषैर्बाहुबलिनिवेदनं कृतमित्यक्षरगमनिका, एवमन्यासामपि सङ्ग्रहगाथानां स्वबुद्ध्या गमनिका कार्येति गाथार्थः॥ इदानीं कथानकशेषं–बाहुबलिना चिंतियं–कल्ले सविड्ढीए वंदिस्सामित्ति,

१ प्राक् कृताऽपि विंशत्यधिकत्रिंशत्तमगाथाया व्याख्याऽत्रोपनिबद्धा, विस्मरणशीलानामुपकाराय, मूलटीकायां त्वत्रैवाक्षरगमनिका।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥ २२८ ॥

निग्गओ पभाए, सामी गतो विहरमाणो, अदिट्ठे अद्धितिं काऊण जहिं भगवं वुत्थो तत्थ धम्मचक्कं चिंधं कारियं, तं सवरयणामयं जोयणपरिमंडलं पंचजोयणूसियदंडं, सामीवि बहलीयडंबइल्लाजोणगविसयादिएसुं निरुवसग्गं विहरंतो विणीयनयरीए उज्जाणत्थाणं पुरिमतालं नगरं संपत्तो, तत्थ य उत्तरपुरच्छिमे दिसीभागे सगडमुहं नाम उज्जाणं, तंमि निग्गोहपायवस्स हेट्ठा अट्ठमेणं भत्तेणं पुव्वण्हदेसकाले फग्गुणबहुलेक्कारसीए उत्तरासाढानक्खत्ते पवज्जादिवसातो आरब्भ वाससहस्संमि अतीते भगवतो तिहुयणेक्कबंधवस्स दिवमणंतं केवलनाणमुप्पन्नंति। अमुमेवार्थमुपसंहरन् गाथापञ्चकमाह—

कल्लं सविड्ढीए पूएमऽहऽद्दट्ठु धम्मचक्कं तु। विहरइ सहस्समेगं छउमत्थो भारहे वासे ॥ ३३५ ॥
बहलीअडंबइल्लाजोणगविसओ सुवन्नभूमी अ। आहिंडिया भगवया उसभेण तवं चरंतेण ॥ ३३६ ॥
बहली य जोणगा पल्लगा य जे भगवया समणुसिट्ठा। अन्ने अ मिच्छजाई ते तइआ भद्दगा जाया ॥ ३३७ ॥
तित्थयराणं पढमो उसभसिरी विहरिओ निरुवसग्गं। अट्ठावओ नगवरो अग्गा भूमी जिणवरस्स ॥ ३३८ ॥
छउमत्थप्परिआओ वाससहस्सं तओ पुरिमताले। निग्गोहस्स य हिट्ठा उप्पन्नं केवलं नाणं ॥ ३३९ ॥
फग्गुणबहुले इक्कारसीइ अह अट्ठमेण भत्तेण। उप्पन्नंमि अणंते महव्वया पंच पन्नवए ॥ ३४० ॥

आसां भावार्थः सुगम एव, नवरमनुरूपक्रियाध्याहारः कार्यः, यथा 'कल्लं' प्रत्यूषसि सर्वर्ध्या पूजयामि भगवन्तमादि-

वसुधारा-दि दातृग-त्यादि धर्म चक्कं

॥ २२८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

कर्त्तारं 'अह' मित्यात्मनिर्देशः, अदृष्ट्वा भगवन्तं धर्म्मचक्रं तु चकारेत्यादिगाथाषट्कार्थः । महाव्रतानि पञ्च प्रज्ञापयतीत्युक्तं, तानि तु त्रिदशकृतसमवसरणावस्थित एव, तथा चाह—

उप्पन्नंमि अणंते नाणे जरमरणविप्पमुक्कस्स । तो देवदाणविन्दा करिंति महिमं जिणिंदस्स ॥ ३४१ ॥

गमनिका—उत्पन्ने-घातिकर्म्मचतुष्टयक्षयजाते सञ्जाते अनन्ते ज्ञाने, केवल इत्यर्थः, जरा-वयोहानिलक्षणा मरणं-प्रतीतं जरामरणाभ्यां विप्रमुक्त इति समासः तस्य, विप्रमुक्तवद्विप्रमुक्त इति, ततो देवदानवेन्द्राः कुर्वन्ति महिमां-ज्ञानपूजां जिनवरेन्द्रस्य, देवेन्द्रग्रहणात् वैमानिकज्योतिष्कपरिग्रहः, दानवेन्द्रग्रहणात् भवनवासिव्यन्तरग्रहणं, सर्वतीर्थकराणां च देवाः अवस्थितानि नखलोमानि कुर्वन्ति, भगवतस्तु कनकावदाते शरीरे जटा एवाञ्जनरेखा इव राजन्त्य उपलभ्य धृता इति गाथाक्षरार्थः ॥ (ग्रंथाग्रं ९०००) इदानीमुक्तानुक्तार्थसङ्ग्रहपरां सङ्ग्रहगाथामाह—

उज्जाणपुरिमतालें पुरी विणीआइ तत्थ नाणवरं । चक्कुप्पया य भरहे निवेअणं चेव दुण्हंपि ॥ ३४२ ॥

गमनिका-उद्यानं च तत्पुरिमतालं च उद्यानपुरिमतालं तस्मिन्, पुर्यां विनीतायां, तत्र ज्ञानवरं भगवत उत्पन्नमिति वाक्यशेषः, तथा तस्मिन्नेवाहनि भरतनृपतेरायुधशालायां चक्रोत्पादश्च बभूव, 'भरहे निवेयणं चेव दोण्हंपि'त्ति भरताय निवेदनं च द्वयोरपि-ज्ञानरत्नचक्ररत्नयोः तन्नियुक्तपुरुषैः कृतमित्यध्याहार इति गाथार्थः, अत्रान्तरे भरतश्चिन्तयामास-पूजा तावद् द्वयोरपि कार्या, कस्य प्रथमं कर्त्तुं युज्यते ?, किं चक्ररत्नस्य उत तातस्येति, तत्र—

तायम्मि पूइए चक्क पूइअं पूअणारिहो ताओ । इहलोइअं तु चक्कं परलोअसुहावहो ताओ ॥ ३४३ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** भगवन्त ऋषभस्य केवलज्ञानोत्पत्ति एवं मरुदेवा-माताया: मोक्ष-गमनं

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥२२९॥

गमनिका–तातेत्रैलोक्यगुरौ पूजिते सति चक्रं पूजितमेव, तत्पूजानिबन्धनत्वाच्चक्रस्य, तथा पूजामर्हतीति पूजार्हस्तातो वर्त्तते, देवेन्द्रादिनुतत्वात्, तथा इहलौकिकं चक्रं, तुरेवकारार्थः, स चावधारणे, किमवधारयति ?–ऐहिकमेव चक्रं, सांसारिकसुखहेतुत्वात्, परलोकसुखावहस्तातः, शिवसुखहेतुत्वादिति गाथार्थः ॥ तस्मात्तिष्ठतु तावच्चक्रं, तातस्य पूजां कर्त्तुं युज्यत इति सम्प्रधार्य तत्पूजाकरणसन्देशव्यापृतो बभूव । इदानीं कथानकम्–भरहो सविड्ढीए भगवंतं वंदिउं पयट्टो, मरुदेवी सामिणी य भगवंते पवइए भरहरज्जसिरिं पासिऊण भणियाइया–मम पुत्तस्स एरिसी रज्जसिरी आसि, संपयं सो खुहापिवासापरिगओ नग्गओ हिंडइत्ति उवेयं करियाइया, भरहस्स तित्थगरविभूइं वन्नेंतस्सवि न पत्तिच्चियाइया, पुत्तसोगेण य से किल झामलं चक्खुं जायं रुयंतीए, तो भरहेण गच्छंतेण विन्नत्ता–अम्मो ! एहि जेण भगवओ विभूतिं दंसेमि, ताहे भरहो (तं) हत्थिखंधे पुरओ काऊण निग्गओ, समोसरणदेसे य गयणतलं सुरसमूहेण विमाणारूढेणोवरंतेण वीरायंतधयवडं पहयदेवदुंदुहिनिनायापूरियदिसामंडलं पासिऊण भरहो भणियाइओ—पिच्छ जइ एरिसी रिद्धी मम कोडिसयसहस्सभागेणवि, ततो तीए भगवओ छत्ताइच्छत्तं पासंतीए चेव केवलमुप्पण्णं, अन्ने भणंति–भगवओ धम्मकहासद्दं सुणेंतीए, तक्कालं च तीए खुट्टमाउयं, ततो सिद्धा, इह भरहोसप्पिणीए पढमसिद्धोत्तिकाऊण देवेहिं पूजा कया, सरीरं च खीरोए छूढं, भगवं च समोसरणमज्झत्थो सदेवमणुयासुराए धम्मं कहेइ, तत्थ उसभसेणो नाम भरहपुत्तो पुव्वभवबद्धगणहरनामगुत्तो जायसंवेगो पवइओ, बंभी य पवइया, भरहो सावगो जाओ, सुंदरी पवयंती भरहेण इत्थीरयणं भविस्सइत्ति निरुद्धा साविया जाया, एस चउव्विहो समणसंघो, ते य तापसा भग-

केवलं भरतपूजा मरुदेवीकेवलमोक्षौ ॥२२९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

वओ नाणमुप्पण्णंति कच्छसुकच्छवज्जा भगवओ सगासमागंतूण भवणवतिवाणमंतरजोइसियवेमाणियदेवागिण्णं परिसं दट्ठूण भगवओ सगासे पवइया, एत्थ समोसरणे मिरिचिमाइया बहवे कुमारा पवइया ॥ साम्प्रतमभिहितार्थसङ्ग्रहपरमिदं गाथाचतुष्टयमाह—

सह मरुदेवीइ निग्गओ कहणं पवज्ज उसभसेणस्स । बंभीमरीइदिक्खा सुंदरिओरोह सुअदिक्खा ॥३४४॥
पंच य पुत्तसयाइं भरहस्स य सत्त नत्तुअसयाइं । सयराहं पवइआ तम्मि कुमारा समोसरणे ॥ ३४५ ॥
भवणवई वाणमंतर जोइसवासी विमाणवासी अ । सविड्ढीई सपरिसा कासी नाणुप्पयामहिमं ॥ ३४६ ॥
दट्ठूण कीरमाणिं महिमं देवेहिं खत्तिओ मरिई । सम्मत्तलद्धबुद्धी धम्मं सोऊण पवइओ ॥ ३४७ ॥

कथनं धर्म्मकथा परिगृह्यते, मरुदेव्यै भगवद्विभूतिकथनं वा कथा, नप्तृशतानीति–पौत्रकशतानि, तथा 'सयराह'मिति देशीवचनं युगपदर्थाभिधायकं त्वरिताभिधायकं वेति, मरीचिरिति जातमात्रो मरीचीन् मुक्तवानित्यतो मरीचिमान् मरीचिः, अभेदोपचारान्मतुप्लोपाद्वेति, अस्य च प्रकृतोपयोगित्वात् कुमारसामान्याभिधाने सत्यपि भेदेनोपन्यासः, सम्यक्त्वेन लब्धा—प्राप्ता बुद्धिर्यस्य स तथाविधः, शेषं सुगममिति गाथाचतुष्टयार्थः ॥ कथानकम्—भरहोऽवि भगवतो पूयं काऊण चक्करयणस्स अट्ठाहियामहिमं किरियाइओ, निवत्ताए अट्ठाहियाए तं चक्करयणं पुवाभिमुहं पहावियं, भरहो सव्वबलेण तमणुगच्छियाइओ, तं जोयणं गंतूण ठियं, ततो सा जोयणसंखा जाया, पुव्वेण य मागहतित्थं पाविऊण अट्ठमभत्तोसितो रहेण समुद्दमवगाहित्ता चक्कणाभिं जाव ततो नामंकं सरं विसाज्जेयाइओ, सो दुवालस जोयणाणि गंतूण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अथ भरतस्य दिग्विजय यात्रार्थे गमनं वर्णयते

मागहतित्थकुमारस्स भवणे पडिओ, सो तं दट्ठूण परिकुविओ भणइ—केस णं एत्थ अपत्थियपत्थिए ?, अह नामयं पासति, नायं जहा उप्पन्नो चक्कवट्टित्ति सरं चूडामणिं च घित्तूण उवट्ठिओ भणति—अहं ते पुव्विल्लो अंतेपालो, ताहे तस्स अट्ठाहियमहामहिमं करेइ। एवं एएण कमेण दाहिणेण वरदामं, अवरेण पभासं, ताहे सिंधूदेविं ओयवेइ, ततो वेयड्ढगिरिकुमारं देवं, तओ तिमिसगुहाए कयमालयं, तओ सुसेणो अद्धबलेण दाहिणिल्लसिंधुनिक्खुडं ओयवेइ, ततो सुसेणो तिमिसगुहं समुग्घाडेइ, ततो तिमिसगुहाए मणिरयणेण उज्जोयं काऊण उभओ पासिं पंचधणुसयायामविक्खंभाणि एगुणपन्नासं मंडलाणि आलिहमाणे उज्जोयकरणेण उम्मग्गनिमुग्गाओ य संकमेण उत्तरिऊण निग्गओ तिमिसगुहाओ, आवडियं विलाएहिं समं जुद्धं, ते पराजिया मेहमुहे नाम कुमारे देवए आराहिंति, ते सत्तरत्तं वासं वासंति, भरहोऽवि चम्मरयणे खंधावारं ठवेऊण उवरिं छत्तरयणं ठावेइ, मणिरयणं छत्तरयणवत्थिभाए ठवेइ, ततो पभिइ लोगेण अंडसंभवं जगं पणीयंति तं बम्हाण्डपुराणं, तत्थ पुव्वण्हे साली वुप्पइ अवरण्हे जेम्मति, एवं सत्त दिवसे अच्छति, तओ मेहमुहा आभिओगिएहिं धाडिया, विलाया तेसिं वयणेण उवणया भरहस्स, तओ चुल्लहिमवंतगिरिकुमारं देवं ओयवेइ, तत्थ बावत्तरि जोयणाणि सरो उवरिंहुत्तो वच्चति, ततो उसहकूडे नामयं लिहइ, ततो सुसेणो उत्तरियं सिंधुनिक्खुडं ओयवेइ, ततो भरहो गंगं ओयवेइ, पच्छा सेणावती उत्तरिल्लं गंगानिक्खुडं ओयवेइ, भरहो गंगाए सद्धिं वाससहस्सं भोगे भुंजइ, ततो वेयड्ढपवए णमिविणमीहिं समं बारस संवच्छराणि जुद्धं, ते पराजिया समाणा विणमी इत्थिरयणं णमी रयणाणि गहाय उवट्ठिया, पच्छा खंडगप्पवायगुहाए नट्टमालयं देवं ओयवेइ, ततो खंडगप्पवायगुहाए नीति, गंगाकूले

Jain Education Inter For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

नव निहओ त्रवागच्छंति, पच्छा दक्खिणिल्लं गंगानिक्खुडं सेणावई ओयवेइ, ताहे तेण कमेण सट्ठीए वाससहस्सेहिं भारहं वासं अभिजिणिऊण अतिगओ विणीयं रायहाणिंति, बारस वासाणि महारायाभिसेओ, जाहे बारस वासाणि महाराया-भिसेओ वत्तो राइणो विसज्जिया ताहे नियगवग्गं सरिउमारद्धो, ताहे दाइज्जंति सवे निएल्लया, एवं परिवाडीए सुंदरी दाइया, सा पण्डुलुगितमुही जाया, सा य जद्दिवसं रुद्धा तद्दिवसमारब्भ आयंबिलाणि करेंति, तं पासित्ता रुट्ठो ते कुडुंबिए भणइ—किं मम नत्थि भोयणं? जं एसा एरिसी रूवेण जाया?, वेज्जा वा नत्थि, तेहिं सिट्ठं—जहा आयंबि-लाणि करेइ, ताहे तस्स तस्सोवरिं पयणुओ रागो जाओ, सा य भणिया—जइ रुच्चति तो मए समं भोगे भुंजाहि, णवि तो पवयाहित्ति, ताहे पाएसु पडिया विसज्जिया पवइया। अन्नया भरहो तेसिं भाउयाणं दूयं पट्ठवेइ, जहा–मम रज्जं आयाणह, ते भणंति–अम्हवि रज्जं ताएण दिण्णं, तुज्झवि, एतु ताव ताओ पुच्छिज्जिहिति, जं भणिहिति तं करीहामो, तेणं समएणं भयवं अट्ठावयमागओ विहरमाणो, एत्थ सवे समोसरिया कुमारा, ताहे भणंति–तुब्भेहिं दिणातिं रज्जाइं हरति माया, तो किं करेमो?, किं जुज्झामो उदाहु आयाणामो?, ताहे सामी भोगेसु नियत्तावेमाणो तेसिं धम्मं कहेइ, न मुत्तिसरिसं सुहमत्थि, ताहे इंगालदाहकदिट्ठंतं कहेइ, जहा एगो इंगालदाहओ एगं भाणं पाणियस्स भरेऊणं गओ, तं तेण उदगं निट्ठवियं, उवरिं आइच्चो पासे अग्गी पुणो परिस्समो दारुगाणि कुट्टिंतस्स, घरं गतो पाणियं पाउं मुच्छितो सुमिणं पासइ, एवं असब्भावपट्ठवणाए कूवतलागनदिदहसमुद्दा य सवे पीया, न य छिज्जइ तण्हा, ताहे एगंमि जिन्नकूवे तणपूलियं गहाय उस्सिंचइ, जं पडियसेसं तं जीहाए लिहइ, एवं तुब्भेहिंवि अणुत्तरा सवलोगे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥२३१॥

सद्फरिसा सद्बुसिद्धे अणुभूया तहवि तत्तिं न गया, एवं वेयालियं नाम अज्झयणं भासइ–'संबुज्झह किन्न बुज्झह,' एवं अट्ठाणउईवित्तेहिं अट्ठाणउई कुमारा पवइयत्ति, कोइ पढमिल्लुएण संबुद्धो कोइ बितिएण कोइ ततिएण, जाहे ते पवइया ताहे तेसिं रज्जाणि तेसिं पुत्ताणं दिन्नाइं ॥ अमुमेवार्थमुपसंहरन्नाह—

मागहमाई विजयो सुंदरि पवज्ज बारसऽभिसेओ। आणवण भाउआणं समुसरणे पुच्छ दिट्ठंतो ॥ ३४८ ॥

गमनिका—मागधमादौ यस्य स मागधादिः, कोऽसौ ?—विजयो, भरतेन कृत इति, पुनरागतेन सुन्दर्यवरोध-स्थिता दृष्टा, क्षीणत्वान्मुक्ता चेति, द्वादश वर्षाण्यभिषेकः कृतो भरतस्य, आज्ञापनं भ्रातॄणां चकार, तेऽपि च सम-वसरणे भगवन्तं पृष्टवन्तः, भगवता चाङ्गारदाहकदृष्टान्तो गदित इति गाथाक्षरार्थः। इदानीं कथानकशेषं–कुमारेसु पवइएसु भरहेण बाहुबलिणो दूओ पेसिओ, सो ते पवइए सोउं आसुरुत्तो, ते बाला तुमए पव्वाविया, अहं पुण जुद्धस-मत्थो, ता एहि, किं वा ममंमि अजिते भरहे तुमे जियंति ?, ततो सव्वबलेण दोवि मिलिया देसंते, बाहुबलिणा भणियं– किं अणवराहिणा लोगेण मारिएणं ?, तुमं च अहं च दुवेऽवि जुज्झामो, एवं होउत्ति, तेसिं पढमं दिट्ठीजुद्धं जायं, तत्थ भरहो पराजिओ, पच्छा वायाए, तत्थवि भरहो पराजिओ, एवं बाहायुद्धेण पराजिओ, मुट्ठिजुद्धेण पराजिओ, दंडजु-ज्झेऽवि जिप्पमाणो भरहो चिंतियाइओ–किं एसेव चक्की ? जेणाहं दुब्बलोत्ति, तस्सेवं चिंतंतस्स देवयाए आउहं दिन्नं चक्क-रयणं, ताहे सो तेण गहिएणं पहाविओ, इओ बाहुबलिएण दिट्ठो गहियदिव्वचक्करयणो आगच्छंतो, सगवं चिंतियं चऽणेणं– समप्पेएणं भंजामि एयं ?, किं पुण तुच्छाण कामभोगाण कारणा ?, भट्टनियपइण्णं च एयं ममं वावाइउं न जुत्तं, सोहणं

सुन्दर्या अष्टानवते-र्भ्रातॄणां च दीक्षा

॥२३१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

मे भाउगेहिं अणुट्ठियं, अहमवि तमणुट्ठामित्ति चिंतिऊण भणियं चउणेण–धिसि धिसि पुरिसत्तणं ते अहम्मजुज्झपवत्तस्स, अलं मे भोगेहिं, गेण्हाहि रज्जं, पवयामित्ति मुक्कदंडो पवइओ, भरहेण बाहुबलिस्स पुत्तो रज्जे ठविओ, बाहुबली दिचिंतेइ–तायसमीवे भाउणो मे लहुतरा समुप्पण्णणाणातिसया ते किह निरतिसओ पेच्छामि ?, एत्थेव ताव अच्छामि जाव केवलनाणं समुप्पज्जति, एवं सो पडिमं ठिओ ठिओ माणपवयसिहरे, जाणइ सामी तहवि न पट्ठवेइ, अमूढलक्खा तित्थयरा, ताहे संवच्छरं अच्छइ काउस्सग्गेण, वल्लीवियाणेणं वेढिओ पाया य वम्मीयनिग्गएहिं भुयंगेहिं, पुण्णे य संवच्छरे भगवं बंभिसुंदरीओ पट्ठवेइ, पुव्विं नेव पट्ठविया जेण तया सम्मं न पडिवज्जइत्ति, ताहिं सो मग्गंतीहिं वल्लीतणवेढिओ दिट्ठो परुढेणं महल्लेणं गव्वेणंति, तं दट्ठूण वंदिओ, इमं च भणिओ–न किर हत्थीविलग्गस्स केवलनाणं समुप्पज्जइत्ति भणिऊणं गयाओ, ताहे चिंतियाइओ–कहिं एत्थ हत्थी ?, ताओ य अलियं न भणन्ति, ततो चिंतेतेण णायं–जहा माणहत्थित्ति, को य मम माणो?, वच्चामि भगवंतं वंदामि ते य साहुणोत्ति, पादे उक्खित्ते केवलनाणं समुप्पण्णं, ताहे गंतूण केवलीपरिसाए ठिओ । ताहे भरहोवि रज्जं भुंजइ, मिरीइवि सामाइयादि एक्कारस अंगाणि अहिज्जितो ॥ साम्प्रतमभिहितार्थोपसंहारायेदं गाथासप्तकमाह—

बाहुबलिकोवकरणं निवेअणं चक्कि देवया कहणं । नाहम्मेणं जुज्झे दिक्खा पडिमा पइन्ना य ॥ ३४९ ॥
पढमं दिट्ठीजुद्धं वायाजुद्धं तहेव बाहाहिं । मुट्ठीहि अ दंडेहि अ सव्वत्थवि जिप्पए भरहो ॥ ३२ भा. ॥
सो एव जिप्पमाणो विहुरो अह नरवई विचिंतेइ । किं मन्ने एस चक्की ? जह दाणिं दुब्बलो अहयं ! ॥३३भा. ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** मूल संपादने अत्र भाष्य गाथा ३२ लिखितं, हारिभद्रिया वृत्तौ अपि भाष्य गाथा क्रम ३२ एव अलिखित. मलयगिरिजी-वृतौ भाष्य-गाथा क्रम ५-३१ . न दृश्यते. ता: गाथा: निर्युक्तिरुपेण प्रदर्शिता: |

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥२३२॥

संवच्छरेण घूअं अमूढलक्खो उ पेसए अरहा । हत्थीओओ अरत्ति अ वुत्ते चिंता पए नाणं ॥ ३४ भा. ॥
उप्पन्ननाणरयणो तित्थपइण्णो जिणस्स पयमूले । गंतुं तित्थं नमिउं केवलिपरिसाइ आसीणो ॥ ३५ भा. ॥
काऊण एगछत्तं, भरहोऽवि अ भुंजए विउलभोए । मरिईवि सामिपासे विहरइ तवसंजमसमग्गो ॥ ३६भा. ॥
सामाइअमाईअं इक्कारसमा उ जाव अंगाओ । उज्जुत्तो भत्तिगओ अहिज्जिओ सो गुरुसगासे ॥ ३७ भा. ॥

आसामभिहितार्थानामसम्मोहार्थमक्षरगमनिका प्रदर्श्यते, भरतसंदेशाकर्णने सति बाहुबलिनः कोपकरणं, तन्निवेदनं चक्रवर्त्तिभरताय दूतेन कृतं, 'देवय'त्ति युद्धे जीयमानेन भरतेन किमयं चक्रवर्त्ती न त्वहमिति चिन्तिते देवता आगतेति, 'कहणं'ति बाहुबलिना परिणामदारुणान् भोगान् पर्यालोच्य कथनं कृतम्–अलं मे राज्येनेति, तथा चाह–नाधर्म्मेण युध्य इति, दीक्षा तेन गृहीता, अनुत्पन्नज्ञानः कथमहं ज्यायान् लघीयसो द्रक्ष्यामीत्यभिसन्धाय प्रतिमा अङ्गीकृता, प्रतिज्ञा च कृता–नास्मादनुत्पन्नज्ञानो यास्यामीति निर्युक्तिगाथा । शेषास्तु भाष्यगाथाः, तयोश्च भरतबाहुबलिनोः प्रथमं दृष्टियुद्धं पुनर्वाग्युद्धं तथैव बाहुभ्यां मुष्टिभिश्च दण्डैश्च, सर्वत्रापि—सर्वेषु युद्धेषु जीयते भरतः, स एवं जीयमानो विधुरोऽथ नरपतिर्विचिन्तितवान्–किं मन्ये एष चक्रवर्त्ती ? यत इदानीं दुर्बलोऽहमिति, कायोत्सर्गावस्थिते भगवति बाहुबलिनि संवत्सरेण घूतां अमूढलक्षस्तु प्रेषितवानर्हन्–आदितीर्थकरः, हस्तिनः अवतरत इति चोक्ते चिन्ता तस्य जाता, यामीति सम्प्रधार्य 'पद' इति पदोत्क्षेपे ज्ञानमुत्पन्नमिति । उत्पन्नज्ञानरत्नस्तीर्णप्रतिज्ञो जिनस्य पादमूले गत्वा केवलिपर्षदं गत्वा तीर्थनत्वां आसीनः । अत्रान्तरे कृत्वा एकच्छत्रं, भुवनमिति वाक्यशेषः, भरतोऽपि च भुङ्क्ते विपुलभोगान्,

बाहुबलिनो दीक्षा केवलं च

॥२३२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अथ बाहुबले: दीक्षा एवं केवलज्ञान-अधिकार:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

मरीचिरपि स्वामिपार्श्वे विहरति तपःसंयमसमग्रः, स च सामायिकादिकं एकादशमङ्गं यावत् उद्युक्तः क्रियायां भक्तिगतो भगवति श्रुते वा अधीतवान् स गुरुसकाश इत्युपन्यस्तगाथार्थः ॥

अह अन्नया कयाइ गिम्हे उण्हेण परिगयसरीरो । अण्हाणएण चइओ इमं कुलिंगं विचिंतेइ ॥ ३५० ॥

गमनिका–'अथे'त्यानन्तर्ये कदाचिद्–एकस्मिन् काले ग्रीष्मे उष्णेन परिगतशरीरः अस्नानेनेति–अस्नानपरीषहेण त्याजितः संयमात् एतत्कुलिङ्गं–वक्ष्यमाणं विचिन्तयतीति गाथार्थः ॥

मेरुगिरीसमभारे न हुवि समत्थो मुहुत्तमवि वोढुं । सामन्नए गुणे गुणरहिओ संसारमणुकंखी ॥ ३५१ ॥

गाथागमनिका–मेरुगिरिसमो भारो येषां ते तथाविधास्तान् नैव समर्थो मुहूर्त्तमपि वोढुं, कान् ?–श्रमणानामेते श्रामणाः, के ते ?–गुणाः–विशिष्टक्षान्त्यादयस्तान्, कुतो ?, यतो घृत्यादिगुणरहितोऽहं संसारानुकाङ्क्षीति गाथार्थः ॥ ततश्च किं मम युज्यते ?, गृहस्थत्वं तावदनुचितं, श्रमणगुणानुपालनमप्यशक्यम्,

एवमणुचिंतयंतस्स तस्स निअगा मई समुप्पन्ना । लद्धो मए उवाओ जाया मे सासया बुद्धी ॥ ३५२ ॥

'एव'मुक्तेन प्रकारेणानुचिन्तयतस्तस्य निजा मतिः समुत्पन्ना, न परोपदेशेन, स ह्येवं चिन्तयामास–लब्धो मया वर्त्तमानकालोचितः खलूपायो, जाता मम शाश्वता बुद्धिः, 'शाश्वते' त्याकालिकी, प्रायो निरवद्यजीविकाहेतुत्वादिति गाथार्थः ॥ यदुक्तमिदं कुलिङ्गं अचिन्तयत् तत्प्रदर्शनायाह—

समणा तिदंडविरया भगवंतो निहुअसंकुइअअंगा । अजिइंदिअदंडस्स उ होउ तिदंडं मई चिंधं ॥ ३५३ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अथ मरिचे: परिव्राजकत्व-अधिकार: विस्तार्यते

गाथागमनिका–श्रमणा मनोवाक्कायलक्षणत्रिदण्डविरताः ऐश्वर्यादिभगयोगाद्भगवन्तः निभृतानि–अन्तःकरणान्यशुभव्यापारपरित्यागात् सङ्कुचितानि–अशुभकायव्यापारपरित्यागादङ्गानि येषां ते तथोच्यन्ते, अहं तु नैवंविधो, यतः 'अजितेन्द्रिये'त्यादि न जितानि इन्द्रियाणि–चक्षुरादीनि दण्डाश्च–मनोवाक्कायलक्षणा येन स तथोच्यते, तस्याजितेन्द्रियदण्डस्य तु त्रिदण्डं मम चिन्हं अविस्मरणार्थमिति गाथार्थः ॥ तथा—

लोइंदियमुंडा संजया उ अहयं खुरेण ससिहो अ । थूलगपाणिवहाओ वेरमणं मे सया होउ ॥ ३५४ ॥

गाथागमनिका–मुण्डो हि द्विधा भवति—द्रव्यतो भावतश्च, तत्रैते श्रमणा द्रव्यभावमुण्डाः, कथं ? लोचेनेन्द्रियैश्च मुण्डाः संयतास्तु, अहं पुनर्नेन्द्रियमुण्डः यतः अतोऽलं द्रव्यमुण्डतया, तस्मादहं क्षुरेण मुण्डः सशिखश्च भवामि, तथा सर्वप्राणिवधविरताः श्रमणा वर्त्तन्ते, अहं तु नैवंविधो यतः अतः स्थूलप्राणातिपाताद्विरमणं मे सदा भवत्विति गाथार्थः ।

निक्किंचणा य समणा अकिंचणा मज्झ किंचणं होउ । सीलसुगंधा समणा अहयं सीलेण दुग्गंधो ॥ ३५५ ॥

गाथागमनिका–निर्गतं किञ्चनं–हिरण्यादि येभ्यस्ते निष्किञ्चनाश्च श्रमणाः, तथाऽविद्यमानं किञ्चन–अल्पमपि येषां तेषां अकिञ्चना जिनकल्पिकादयः, अहं तु नैवंविधो यतोऽतो मार्गाविस्मृत्यर्थं मम किञ्चनं भवतु, पवित्रिकादि, तथा शीलेन शोभनो गन्धो येषां ते तथाविधाः श्रमणाः अहं तु शीलेन दुर्गन्धः अतो गन्धचन्दनग्रहणं मे युक्तमिति गाथार्थः ॥ तथा–

ववगयमोहा समणा मोहच्छन्नस्स छत्तयं होउ । अणुवाणहा य समणा मज्झं तु उवाणहे हुन्तु ॥ ३५६ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

गाथागमनिका–व्यपगतो मोहो येषां ते व्यपगतमोहाः श्रमणाः, अहं तु नेत्थं यतः अतो मोहाच्छादितस्य छत्रकं भवतु, अनुपानत्काश्च श्रमणाः मम चोपानहौ भवत इति गाथार्थः ॥ तथा—

सुक्कंबरा य समणा निरंबरा मज्झ धाउरत्ताइं । हुंतु इमे वत्थाइं अरिहो मि कसायकलुसमई ॥ ३५७ ॥

गाथागमनिका–शुक्लान्यम्बराणि येषां ते शुक्लाम्बराः श्रमणाः, तथा निर्गतमम्बरं येषां ते निरम्बराः–जिनकल्पिकादयः, 'मज्झं'ति मम च, एते श्रमणा इत्यनेन तत्कालोत्पन्नतापसश्रमणव्युदासः, धातुरक्तानि भवन्तु मम वस्त्राणि, किमिति ?, अर्होऽस्मि योग्योऽस्मि तेषामेव, कषायैः कलुषा मतिर्यस्य सोऽहं कषायकलुषमतिरिति गाथार्थः ॥

वज्जंतऽवज्जभीरू बहुजीवसमाउलं जलारंभं । होउ मम परिमिएणं जलेण ण्हाणं च पिअणं च ॥ ३५८ ॥

गाथागमनिका–वर्जयन्त्यवद्यभीरवो बहुजीवसमाकुलं जलारम्भं, तत्रैव वनस्पतेरवस्थानात्, अवद्यं–पापं, अहं तु नेत्थं यतः अतो भवतु मे परिमितेन जलेन स्नानं च पानं चेति गाथार्थः ॥

एवं सो रुइयमई निअगमइविगप्पिअं इमं लिंगं । तद्धिअहेउसुजुत्तं पारिव्वज्जं तओ कासी ॥ ३५९ ॥

स्थूलमृषावादादिनिवृत्तः, एवमसौ रुचिता मतिर्यस्य असौ रुचितमतिः, अतो निजमत्या विकल्पितं निजमतिविकल्पितम्, इदं लिङ्गं विशिष्टं, तस्य हितास्तद्धिताः तद्धिताश्च हेतवश्चेति समासः तैः सुष्ठु युक्तं श्लिष्टमित्यर्थः परिव्राजानामिदं पारिव्राज्यं प्रवर्त्तयति, शास्त्रकारवचनात् वर्त्तमाननिर्देशोऽप्यविरुद्ध एव, पाठान्तरं वा 'पारिव्वज्जं ततो कासित्ति' पारिव्राज्यं ततः कृतवानिति गाथार्थः ॥ भगवता च सह विजहार, तं च साधुमध्ये विजातीयं दृष्ट्वा कौतुकालोकः पृष्टवान्, तथा चाह–

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

अह तं पागडरूवं दट्ठुं पुच्छेइ बहुजणो धम्मं । कहइ जईणं तो सो विआलणे तस्स परिकहणा ॥ ३८८ ॥

अथ तं प्रकटरूपं विजातीयत्वात् दृष्ट्वा पृच्छति बहुर्जनो धर्म्मं, कथयति यतीनां सम्बन्धिभूतं क्षान्त्यादिलक्षणं ततोऽसाविति, लोका भणन्ति–वद्यर्यं श्रेष्ठो भवता किं नाङ्गीकृत इति विचारणे, तस्य परिः–समन्तात् कथना परिकथना–श्रमणाः त्रिदण्डविरता इत्यादिलक्षणा, पृच्छतीति त्रिकालगोचरसूत्रप्रदर्शनार्थत्वादेवं निर्देशः, पाठान्तरं वा 'अह तं पागडरूवं दट्ठुं पुच्छिसु बहुजणो धम्मं । कहती सुजतीणं सो वियालणे तस्स परिकहणा ॥ प्रवर्त्तत इति गाथार्थः,

धम्मकहाअक्खित्ते उवट्ठिए देइ भगवओ सीसे । गामनगरागराई विहरइ सो सामिणा सद्धिं ॥ ३९० ॥

धर्म्मकथाक्षिप्तान् उपस्थितान् ददाति भगवतः शिष्यान्, ग्रामनगरादीन् विहरति स स्वामिना सार्द्धं, भावार्थः सुगमः ॥ इत्थं निर्देशप्रयोजनं पूर्ववद्, अन्यकारवचनत्वाद्वा अदोष इति गाथार्थः ॥ अन्यदा भगवान् विहरमाणो अष्टापदमनुप्राप्तवान्, तत्र च समवसृतः, भरतोऽपि भ्रातृप्रव्रज्याकर्णनात् सञ्जातमनस्तापोऽधृतिं चक्रे, कदाचिद्भोगादीन् दीयमानान् पुनरपि गृह्णन्तीत्यालोच्च भगवत्समीपं चागम्य निमन्त्रयंश्च तान् भोगैर्निराकृतश्चिन्तयामास-एतेषामेवेदानीं परित्यक्तसङ्गानां आहारदानेऽपि तावद्धर्म्मानुष्ठानं करोमीति पञ्चभिः शकटशतैर्विचित्रमाहारमानाय्योपनिमन्त्र्याधाकर्म्माहृतं च न कल्पते यतीनामिति प्रतिषिद्धेऽकृतकारितेनान्येन निमन्त्रितवान्, राजपिण्डोऽप्यकल्पनीय इति प्रतिषिद्धः, सर्वप्रकारैरहं भगवता परित्यक्त इति सुतरामुन्माथितो बभूव, तमुन्माथितं विज्ञाय देवराट्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** मूल संपादने अत्र गाथा-क्रमांक ३८८ इति मुद्रितं, तत् किञ्चित् मुद्रण स्खलना संभाव्यते | क्रमानुसार अत्र गाथा-क्रम ३६० वर्तते, हारिभद्र्य वृत्तौ '३६०' एव अलिखित |

तच्छोकोपशान्तये भगवन्तमवग्रहं पप्रच्छ–कतिविधः अवग्रह इति, भगवानाह–पञ्चविधोऽवग्रहः, तद्यथा–देवेन्द्रावग्रहो राजावग्रहो गृहपत्यवग्रहः सागारिकावग्रहः साधर्म्मिकावग्रहश्च, तत्र देवेन्द्रः–सौधर्म्माधिपतिः, राजा भरताधिपो गृह्यते, गृहपतिः–माण्डलिको राजा, सागारिकः–शय्यातरः, साधर्म्मिकः संयत इति, एतेषां चोत्तरोत्तरेण पूर्वः पूर्वो बाधितो द्रष्टव्य इति, यथा राजावग्रहेण देवेन्द्रावग्रहो बाधित इत्यादि प्ररूपिते देवराडाह–भगवन्! य एते श्रमणा मदीयावग्रहे विचरन्ति तेषां मयाऽवग्रहोऽनुज्ञात इत्येवमभिधायाभिवन्द्य च भगवन्तं तस्थौ, भरतोऽचिन्तयद्–अहमपि स्वकीयमवग्रहमनुजानामीत्येतावताऽपि नः कृतार्थता भवतु, भगवत्समीपेऽनुज्ञातावग्रहः शक्रं पृष्टवान्–भक्तपानमिदमानीतम्, अनेन किं कार्यमिति, देवराडाह–गुणोत्तरान् पूजयस्व, सोऽचिन्तयत्–के मम साधुव्यतिरेकेण जात्यादिभिरुत्तराः?, पर्यालोचयता ज्ञातं–श्रावका विरताविरतत्वाद् गुणोत्तराः, तेभ्यो दत्तमिति, पुनर्भरतो देवेन्द्ररूपं भास्वरमाकृतिमत् दृष्ट्वा पृष्टवान्–किं यूयमेवंभूतेन रूपेण देवलोके तिष्ठतेति? उत नेति, देवराट् आह–नेति, तन्मानुषैर्द्रष्टुमपि न पार्यते, भास्वरत्वात्, पुनरप्याह भरतः–तस्याकृतिमात्रेणास्माकं कौतुकं तन्निदर्श्यतां, देवराज आह–त्वमुत्तमपुरुष इतिकृत्वैकमङ्गावयवं दर्शयामीत्यभिधाय योग्यालङ्कारविभूषितामङ्गुलीमत्यन्तभास्वरामदर्शयत्, दृष्ट्वा च तां भरतोऽतीव मुमुदे, शक्राङ्गुलीं च स्थापयित्वा महिमाष्टाह्निकां चक्रे, ततः प्रभृति शक्रोत्सवः प्रवृत्त इति, भरतश्च श्रावकानाह्वयोक्तवान्–भवद्भिः प्रतिदिनं मदीयं भोक्तव्यं १ कृष्यादि च न कार्यं २ स्वाध्यायपरैरासितव्यं ३ भुक्ते च मदीयगृहद्वारासन्नव्यवस्थितैर्वक्तव्यम्–जितो भवान् वर्द्धते भयं तस्मान्मा हन मा हनेति ४, ते तथैव कृतवन्तः, भरतश्च रतिसा-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गरावगाढत्वात् प्रमत्तत्वात् तच्छब्दाकर्णनोत्तरकालमेव केनाहं जित इति ?, आ ज्ञातं–कषायैः, तेभ्य एव वर्द्धते भय-मित्यालोचनापूर्वकं संवेगं यातवानिति, अत्रान्तरे लोकबाहुल्यात् सूपकाराः पाकं कर्त्तुमशक्नुवन्तो भरताय निवेदि-तवन्तः–नेह ज्ञायते कः श्रावकः ? को वा नेतीति, लोकस्य प्रचुरत्वात्, आह भरतः–पृच्छापूर्वकं देयमिति, ततस्तान् पृष्टवन्तस्ते–को भवान्?, श्रावकः, श्रावकाणां कति व्रतानि ?, स आह–श्रावकाणां न सन्ति व्रतानि, किन्तु अस्माकं पञ्चाणुव्रतानि, कति ? शिक्षाव्रतानि, ते उक्तवन्तः–सप्त शिक्षाव्रतानि, य एवंभूतास्ते राज्ञो निवेदिताः, स च काकणी-रत्नेन तान् लाञ्छितवान्, पुनः षण्मासेन योग्या भवन्ति तानपि लाञ्छितवान्, षण्मासकालाननुयोगं कृतवान्, एवं ब्राह्मणाः सञ्जाता इति, ते च स्वसुतान् साधुभ्यो दत्तवन्तः, ते च प्रव्रज्यां चक्रुः, परीषहभीरवस्तु श्रावका एवासन्निति । इयं च भरतराज्यस्थितिः, आदित्ययशसस्तु काकणीरत्नं नासीत्, सुवर्णमयानि यज्ञोपवीतानि कृतवान्, महायशःप्रभृतयस्तु केचन रूप्यमयानि केचन विचित्रपट्टसूत्रमयानीत्येवं यज्ञोपवीतप्रसिद्धिः॥ अमुमेवार्थं समोसरणेत्यादिगाथया प्रतिपादयति—

समुसरण भत्त उग्गह अंगुलि झय सक्क सावया अहिया ।
जेया वद्धइ काकिणिलंछण अणुसज्जणा अट्ठ ॥ ३६२ ॥

समवसरणं भगवतोऽष्टापदे स्वल्वासीत्, भक्तं भरतेनानीतं, तदग्रहणोन्माथिते सति भरते देवेशो भगवन्तमवग्रहं पृष्टवान्, भगवांश्च तस्मै प्रतिपादितवान्, 'अंगुलिय'त्ति भरतनृपतिना देवलोकनिवासिरूपपृच्छायां कृतायामिन्द्रेणा-ङ्गुलिर्दर्शिता, तत एवारभ्य ध्वजोत्सवः प्रवृत्तः, 'सक्क'त्ति भरतनृपतिना किमनेनाहारेण कार्यमिति पृष्टः शक्रोऽभिहित-

Jain Education Inter For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

वान्–त्वदधिकेभ्यो दीयतामिति, पर्यालोचयता ज्ञातं–श्रावका अधिका इति, 'जेया वड्ढई'ति प्राकृतशैल्या जितो भवान् वर्द्धते भयं भुक्तोत्तरकालं च ते उक्तवन्तः, 'कागणिलंछणत्ति' प्रचुरत्वात् काकणीरत्नेन लाञ्छनं–चिह्नं तेषां कृतमासीत्, 'अणुसज्जणा अट्ठ'त्ति अष्टौ पुरुषान् यावदयं धर्म्मः प्रवृत्तः, अष्टौ वा तीर्थकरान् यावदिति गाथार्थः ॥ तत ऊर्ध्वं मिथ्यात्वमुपगता इति ।

राया आइच्चजसे महाजसे अइबले अ बलभद्दे । बलविरिअ कत्तविरिए जलविरिए दंडविरिए अ ॥ ३६३ ॥

भावार्थः सुगम एव, इति गाथार्थः ॥

एएहिं अद्धभरहं सयलं भुत्तं सिरेण धरिओ अ । पवरो जिणिंदमउडो सेसेहिं न चाइओ वोढुं ॥ ३६४ ॥

एभिरर्द्धभरतं सकलं भुक्तं, शिरसा धृतश्च, कोऽसावित्याह–प्रवरो जिनेन्द्रमुकुटो देवेन्द्रोपनीतः, शेषैर्नरपतिभिर्न शक्तिो वोढुं, महाप्रमाणत्वादिति गाथार्थः ॥

अस्सावगपडिसेहो छट्ठे छट्ठे अ मासि अणुओगो । कालेण य मिच्छत्तं जिणंतरे साहुवुच्छेओ ॥ ३६५ ॥

अश्रावकाणां प्रतिषेधः कृतः, ऊर्ध्वमपि षष्ठे षष्ठे मासेऽनुयोगो बभूव, अनुयोगः—परीक्षा, कालेन गच्छता मिथ्यात्वमुपगताः, कदा ?, नवमजिनान्तरे, किमिति ?, यतस्तत्र साधुव्यवच्छेद आसीदिति गाथार्थः ॥ साम्प्रतमनुक्तार्थप्रतिपादनपरां सङ्ग्रहगाथामाह—

दाणं च माहणाणं देए कासी अ पुच्छ निव्वाणं । कुंडा थूभ जिणघरे कविलो भरहस्स दिक्खा य ॥ ३६६ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥२३६॥

दानं च माहनानां लोको दातुं प्रवृत्तो, भरतपूजितत्वात्, 'वेदे काही यत्ति' आर्यान् वेदान् कृतवांश्च भरत एव, तत्स्वाध्यायनिमित्तमिति, तीर्थकरस्तुतिरूपान् श्रावकधर्म्मप्रतिपादकांश्च, अनार्यास्तु पश्चात्सुलसयाज्ञवल्क्यादिभिः कृता इति, 'पुच्छ'त्ति भरतो भगवन्तमष्टापदसमसृतमेवं पृष्टवान्–यादृग्भूता यूयमेवंविधाः तीर्थकृतः कियन्तः खल्विह भविष्यन्तीत्यादि, 'निवाण'त्ति भगवानष्टापदे निर्वाणं प्राप्तो, देवैरग्निकुण्डानि कृतानि, स्तूपाः कृताः, जिनगृहं भरतश्चकार, कपिलो मरीचिसकाशे निष्क्रान्तः, भरतस्य दीक्षा च संवृत्तेति समुदायार्थः ॥ अवयवार्थ उच्यते–आद्यावयवद्वयं व्याख्यातमेव, पृच्छावयवार्थं पुणरवियेत्यादिनाऽऽह—

पुणरवि अ समोसरणे पुच्छीअ जिणं तु चक्किणो भरहे। अप्पुट्ठो अ दसारे तित्थयरो को इहं भरहे?॥ ३६७॥

पुनरपि च समवसरणे पृष्टवांश्च जिनं तु चक्रवर्त्तिनं भरतः, चक्रवर्त्तिन इत्युपलक्षणं तीर्थकृतश्चेति, भरतविशेषणं वा, चक्री भारतांस्तीर्थकरादीन् पृष्टवान्, पाठान्तरं वा 'पुच्छी य जिणे य चक्किणो भरहे' पृष्टवान् जिनांश्चक्रवर्त्तिनश्च भरतः, चशब्दस्य व्यवहितः सम्बन्धः, भगवानपि तान् कथितवान्, तथा अपृष्टश्च दशारान्, तथा तीर्थकरः क इह भरतेऽस्यां परिषदीति पृष्टवान्, भगवानपि मरीचिं कथितवानिति गाथाक्षरार्थः ॥ तथा चाह निर्युक्तिकारः—

जिण–चक्कि–दसाराणं वण्ण–पमाणाइं नामगुत्ताइं। आउपुरमाइ पिअरो परिआय गइं च साहीअ ॥ ३६८॥

जिनचक्रिदशाराणां– जिनचक्रवर्त्तिवासुदेवानामित्यर्थः वर्णप्रमाणानि, तथा नामगोत्राणि, तथा आयुःपुराणि माता-

वेदोत्पतिः चक्रयादीनां पृच्छा ॥२३६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

पितरौ यथासम्भवं पर्यायं गतिं च, चशब्दाज्जिनानामन्तराणि च पृष्टवानिति द्वारगाथासमासार्थः, अवयवार्थं तु वक्ष्यामः ॥
तत्र प्रश्नावयवमधिकृत्य तावदाह भाष्यकारः—
जारिसया लोअगुरू भरहे वासम्मि केवली तुम्हे। एरिसया कइ अन्ने ताया! होहिंति तित्थयरा ? ॥३८ भा.॥
यादृशा लोकगुरवो भारते वर्षे केवलिनो यूयमीदृशाः कियन्तोऽन्येऽत्रैव तात ! भविष्यन्ति तीर्थकरा इति गाथार्थः ॥
अह भणइ जिणवरिंदो भरहे वासम्मि जारिसो उ अहं। एरिसया तेवीसं अन्ने होहिंति तित्थयरा ॥ ३६९ ॥
निगदसिद्धा ॥ ते चैते—

होहिइ अजिओ संभव अभिनंदण सुमइ सुप्पह सुपासो।
ससि पुप्फदंत सीअल सिज्जंसो वासुपुज्जो अ ॥ ३७० ॥

विमलमणंतइ धम्मो सन्ती कुंथू अरो अ मल्ली अ। मुणिसुव्वय नमि नेमी पासो तह वद्धमाणो अ ॥ ३७१ ॥
भावार्थः सुगम एव ।
अह भणइ नरवरिंदो भरहे वासम्मि जारिसो उ अहं। तारिसया कइ अन्ने ताया होहिंति रायाणो ? ॥३७२॥
अथ भणति नरवरेन्द्रो भरतः—भारते वर्षे यादृशस्त्वहं तादृशाः कत्यन्ये तात ! भविष्यन्ति राजान इति गाथार्थः ॥
अह भणइ जिणवरिंदो जारिसओ तं नरिंदसद्दूलो। तारिसया उ इगारस अन्ने होहिंति रायाणो ॥ ३७३ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अथ भावि तीर्थंकर-आदीनां वर्णनं क्रियते

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥६३७॥

अथ भणति जिनवरेन्द्रो यादृशस्त्वं नरेन्द्रशार्दूलः, शार्दूलः-सिंहपर्यायः, ईदृशा एकादश अन्ये भविष्यन्ति राजानः ॥ ते चैते—

होही सगरो मघवं सणंकुमारो य रायसद्दूलो। संती कुंथू य अरो हवइ सुभूमो य कोरवो ॥ ३७४ ॥
नवमो य महापउमो हरिसेणो चेव रायसद्दूलो। जयनामो अ नरवई बारसमो बंभदत्तो अ ॥ ३७५ ॥

गाथाद्वयं निगदसिद्धमेव॥ यदुक्तमपृष्टश्च दशारान् कथितवान्, तदभिधित्सयाऽऽह भाष्यकारः—

होहिंति वासुदेवा नव अन्ने नील-पीअकोसिज्जा। हलमुसलचक्कजोही सतालगरुलज्झया दो दो ॥ ३९ भा. ॥

भविष्यन्ति वासुदेवा नव, नव बलदेवाश्चानुक्ता अप्यत्र तत्सहचरत्वात् द्रष्टव्याः, यतो वक्ष्यति 'सतालगरुलद्धया दो दो', ते च सर्वे बलदेवा वासुदेवा यथासङ्ख्यं नीलानि पीतानि च कौशेयानि वस्त्राणि येषां ते तथाविधाः, यथासङ्ख्यमेव हलमुशलचक्रयोधिनः, हलमुशलयोधिनो बलदेवाः, चक्रयोधिनो वासुदेवा इति, सह तालगरुडध्वजाभ्यां वर्त्तन्त इति सतालगरुडध्वजाः, एते च भवन्तो युगपद् द्वौ द्वौ भविष्यतः बलदेववासुदेवाविति गाथार्थः ॥ वासुदेवानामभिधानप्रतिपादनायाह—

तिविट्ठो य दुविट्ठो य सयंभु पुरिसुत्तमे पुरिससीहे। तह पुरिसपुंडरीए दत्ते नारायणे कण्हे ॥ ४० भा. ॥

निगदसिद्धा ॥ अधुना बलदेवानामभिधानप्रतिपादनायाह—

अयले विजए भद्दे, सुप्पभे य सुदंसणे। आणंदे नंदणे पउमे, रामे यावि अपच्छिमे ॥ ४१ भा. ॥

जिनचक्रि-वासुदेवब-लदेवादि-निर्देशः

॥२३७॥

Jain Education Inter... For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निगदसिद्धा ॥ वासुदेवशत्रुप्रतिपादनायाह—

आसग्गीवे तारय मेरय मधुकेढवे निसुंभे य । बलि पल्हाए तह रावणे य नवमे जरासिंधू ॥ ४२ भा. ॥

निगदसिद्धा एव ॥

एए खलु पडिसत्तू कित्तीपुरिसाण वासुदेवाणं । सव्वेऽवि चक्कजोही सव्वेऽवि हया सचक्केहिं ॥ ४३ भा. ॥

गमनिका–एते खलु प्रतिशत्रवः, एत एव, खलुशब्दस्यावधारणार्थत्वात्, नान्ये, कीर्त्तिपुरुषाणां–वासुदेवानां, सर्वे च चक्रयोधिनः, सर्वे च हताः स्वचक्रैरिति, यतस्तान्येव चक्राणि वासुदेवव्यापत्तये क्षिप्तानि तैः पुण्योदयाद्वासुदेवं प्रणम्य तानेव व्यापादयन्तीति गाथार्थः ॥ एवं तावत्प्रागुपन्यस्तगाथायां वर्णादिद्वारोपन्यासं परित्यज्य असम्मोहार्थमुत्क्रमेण जिनादीनां नामद्वारमुक्तम्, पारभविकं चैषां वर्णनाममातापितृपुरादिकं प्रथमानुयोगतोऽवसेयम्, इह विस्तरभयान्नोक्तमिति । साम्प्रतं तीर्थकरवर्णप्रतिपादनायाह—

पउमाभ वासुपुज्जो रत्ता ससिपुप्फदंत ससिगोरा । सुव्वयनेमी काला पासो मल्ली पियंगाभा ॥ ३७६ ॥

वरकणगतवियगोरा सोलस तित्थंकरा मुणेयव्वा । एसो वण्णविभागो चउवीसाए जिणवराणं ॥ ३७७ ॥

गाथाद्वयं सूत्रसिद्धम् ॥ साम्प्रतं तीर्थकराणामेव प्रमाणाभिधित्सयाह—

पंचेव अद्धपंचम चत्तारऽद्धट्ठ तह तिगं चेव । अड्ढाइज्जा दुन्नि य दिवड्ढमेगं धणुसयं च ॥ ३७८ ॥

नउइ असीइ सत्तरि सट्ठी पन्नास होइ नायव्वा । पणयाल चत्त पणतीस तीस पणवीस वीसा य ॥३७९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥२३८॥

पन्नरस दस घणूणि य नव पासो सत्तरयणिओ वीरो। नामा पुवुत्ता खलु तित्थयराणं मुणेयव्वा ॥ ३८० ॥
एतास्तिस्रोऽपि पाठसिद्धा एव ॥ साम्प्रतं भगवतामेव गोत्राणि प्रतिपादयन्नाह—
मुणिसुव्वओ य अरिहा अरिट्ठनेमी य गोयमसगुत्ता। सेसा तित्थयरा खलु कासवगुत्ता मुणेयव्वा ॥ ३८१ ॥
निगदसिद्धा ॥ आयुष्कानि प्राक् प्रतिपादितान्येवेति न तन्यन्ते, भगवतामेव पुरप्रतिपादनाय गाथात्रितयमाह—
इक्खागभूमी उज्झा सावत्थी विणीअ कोसलपुरं च। कोसंबी वाणारसि चंदाणण तह य कायंदी ॥ ३८२ ॥
भद्दिलपुरं सीहपुरं चंपा कंपिल्ल उज्झ रयणपुरं। तिन्नेव गयपुरम्मी मिहिला तह चेव रायगिहं ॥ ३८३ ॥
मिहिला सोरियनयरं वाणारसि तह य होइ कुंडपुरं। उसभाईण जिणाणं जम्मणभूमी जहासंखं ॥ ३८४ ॥
निगदसिद्धाः ॥ भगवतामेव मातृप्रतिपादनायाह—
परुदेवि विजया सेणा सिद्धत्था मंगला सुसीमा य। पुहवी लक्खण रामा नंदा विण्हू जया सामा ॥ ३८५ ॥
सु जसा सुव्वय अइरा, सिरिदेवी य पभावई। पउमावई य वप्पा, सिव वम्मा तिसलया इअ ॥ ३८६ ॥
गाथाद्वयं निगदसिद्धमेव ॥ भगवतामेव पितृप्रतिपादनायाह—
नाभी जिअसत्तू अ, जिआरी संवरे इअ। मेहे धरे पइट्ठे अ, महासेणे अ खत्तिए ॥ ३८७ ॥
सूरे सुदंसणे कुंभे सुमित्त विजए समुद्दविजए अ। राया य अस्ससेणे सिद्धत्थेवि अ खत्तिए ॥ ३८८ ॥
निगदसिद्धा ॥ पर्यायो—गृहस्थादिपर्यायो भगवतामुक्त एव तथैव द्रष्टव्यः। साम्प्रतं भगवतामेव गतिप्रतिपादनायाह—

जिनानां वर्णप्रमाणगोत्रपुरमातापितरः ॥२३८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वेऽवि गया मुक्खं जाइ-जरा-मरणबंधणविमुक्का । तित्थयरा भगवंतो सासयसुक्खं निराबाहं ॥ ३८९ ॥
निगदसिद्धा ॥ एवं तावत् तीर्थकरानङ्गीकृत्य प्रतिद्वारगाथा व्याख्याता, इदानीं चक्रवर्त्तिनोऽङ्गीकृत्य व्याख्यायते, एतेषामपि पूर्वभववक्तव्यतानिबद्धं च्यवनादि प्रथमानुयोगादवसेयम्, साम्प्रतं चक्रवर्त्तिवर्णप्रमाणप्रतिपादनायाह—
सव्वेऽवि एगवन्ना निम्मलकणगप्पभा मुणेअव्वा । छक्खंडभरहसामी तेसि पमाणं अओ पुच्छं ॥ ३९१ ॥
पंचसय अद्धपंचम बायालीसा य अद्धधणुअं च । इगुआलधणुस्सद्धं च चउत्थे पंचमे सत्त ॥ ३९२ ॥
पणतीसा तीसा पुण अट्ठावीसा य वीसइ धणूणि । पन्नरस बारसेव य अपच्छिमो सत्त य धणूणि ॥३९३॥
निगदसिद्धाः ॥ नामानि प्राक् प्रतिपादितान्येव, साम्प्रतं चक्रवर्त्तिगोत्रप्रतिपादनायाह—
कासवगुत्ता सव्वे चउदसरयणाहिवा समक्खाया । देविंदवंदिएहिं जिणेहिं जिअरागदोसेहिं ॥ ३९४ ॥
सूत्रसिद्धा ॥ साम्प्रतं चक्रवर्त्त्यायुष्कप्रतिपादनायाह—
चउरासीई बावत्तरी अ पुव्वाण सयसहस्साइं । पंच य तिन्नि य एगं च सयसहस्सा उ वासाणं ॥ ३९५ ॥
पंचाणउइ सहस्सा चउरासीई अ अट्ठमे सट्ठी । तीसा य दस य तिन्नि य अपच्छिमे सत्त वाससया ॥३९६॥
गाथाद्वयं पठितसिद्धम् ॥ इदानीं चक्रवर्त्तिनां पुरप्रतिपादनायाह—
जम्मण विणीअ उज्झा सावत्थी पंच हत्थिणपुरम्मि । वाराणसि कंपिल्ले रायगिहे चेव कंपिल्ले ॥ ३९७ ॥
निगदसिद्धा एव ॥ साम्प्रतं चक्रवर्तिगोत्रप्रतिपादनायाह—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुमंगला जसवई भद्दा सहदेवि अइर सिरिदेवी । तारा जाला मेरा य वप्पगा तहय चुल्लणी अ ॥ ३९८ ॥
निगदसिद्धा ॥ साम्प्रतं चक्रवर्त्तिपितृप्रतिपादनायाह—
उसभे सुमित्तविजए समुद्दविजए अ अस्ससेणे य । तह वीससेण सूरे सुदंसणे कत्तविरिए अ ॥ ३९९ ॥
पउमुत्तरे महाहरी विजए राया तहेव बंभे य । ओसप्पिणी इमीसे पिउनामा चक्कवट्टीणं ॥ ४०० ॥
गाथाद्वयं निगदसिद्धं ॥ पर्यायः केषाञ्चित्प्रथमानुयोगतोऽवसेयः, केषांचित्प्रव्रज्याऽभावान्न विद्यते एवेति ॥ साम्प्रतं चक्रवर्त्तिगतिप्रतिपादनायाह—
अट्ठेव गया मुक्खं सुहुमो बंभो य सत्तमिं पुढविं । मघवं–सणंकुमारा सणंकुमारं गया कप्पं ॥ ४०१ ॥
निगदसिद्धा ॥ एवं तावच्चक्रवर्त्तिनोऽप्यधिकृत्य व्याख्याता प्रतिद्वारगाथा, इदानीं वासुदेवबलदेवाङ्गीकरणतो व्याख्यायते, एतेषामपि च पूर्वभववक्तव्यतानिबद्धं च्यवनादि प्रथमानुयोगत एवावसेयं, साम्प्रतं वासुदेवादीनां वर्णप्रमाणप्रतिपादनायाह—
वण्णेण वासुदेवा सव्वे नीला बला य सुक्किलया । एएसि देहमाणं वुच्छामि अहाणुपुव्वीए ॥ ४०२ ॥
पढमो धणूणऽसीई सत्तरि सट्ठी य पन्न पणयाला । अडणत्तीसं च धणू छव्वीसा सोलस दसेव ॥ ४०३ ॥
गाथाद्वयं निगदसिद्धम् ॥ नामानि प्रागभिहितान्येव, साम्प्रतं वासुदेवानां गोत्रप्रतिपादनायाह—
बलदेव–वासुदेवा अट्ठेव हवंति गोअमसगुत्ता । नारायण–पउमा पुण कासवगुत्ता मुणेअव्वा ॥ ४०४ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

निगदसिद्धा ॥ वासुदेवबलदेवानां यथोपन्यासमायुःप्रतिपादनायाह—

चउरासीइ बिसत्तरि सट्ठी तीसा य दस य लक्खाइं । पन्नट्ठिसहस्साइं छप्पन्ना बारसेगं च ॥ ४०५ ॥
पंचासीई पन्नत्तरी अ पन्नट्ठि पंचवन्ना य । सत्तरस सयसहस्सा पंचमए आउअं होइ ॥ ४०६ ॥
पंचासीइ सहस्सा पन्नट्ठी चेव तह य पन्नरस । बारस सयाइँ आउं बलदेवाणं जहासंखं ॥ ४०७ ॥

निगदसिद्धाः ॥ साम्प्रतममीषामेव पुराणि प्रतिपाद्यन्ते, तत्र

पोअण बारवइतिगं अस्सपुरं तह य होइ चक्कपुरं । वाणारसि रायगिहं अपच्छिमो जाउ मद्दुराए ॥ ४०८ ॥

निगदसिद्धा ॥ एतेषां मातृपितृप्रतिपादनायाह—

मिगावई उमा चेव, पुहवी सीआ य अम्मया । लच्छिमई सेसमई, केगई देवई इअ ॥ ४०९ ॥
भद्दा सुभद्द सुप्पभ सुदंसणा विजय वेजयंती अ । तह य जयंती अपराजिआ य तह रोहिणी चेव ॥ ४१० ॥
हवइ पयावइ बंभो रुद्दो सोमो सिवो महसिवो य । अग्गिसीहे अ दसरहे नवमे भणिए अ वसुदेवे ॥ ४११ ॥

निगदसिद्धाः ॥ एतेषामेव पर्यायवक्तव्यतामभिधित्सुराह—

परिआओ पव्वज्जाऽभावाओ नत्थि वासुदेवाणं । होइ बलाणं सो पुण पढमणुओगाओ नायव्वो ॥ ४१२ ॥

निगदसिद्धैव ॥ एतेषामेव गतिप्रतिपादनायाह—

एगो अ सत्तमाए पंच य छट्ठीइ पंचमी एगो । एगो अ चउत्थीए कण्हो पुण तच्चपुढवीए ॥ ४१३ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गाथागमनिका-एकश्च सप्तम्यां पञ्च च षष्ठ्यां पञ्चम्यामेकः एकश्चतुर्थ्यां, कृष्णः पुनस्तृतीयपृथिव्यां, यास्यति गतो वेति सर्वत्र क्रियाध्याहारः कार्यः, भावार्थः स्पष्ट एव ॥ बलदेवगतिप्रतिपिपादयिषयाऽऽह—

अट्ठंतकडा रामा एगो पुण बंभलोगकप्पम्मि । उववन्नो तत्थ भोए भुत्तुं अयरोवमा दस उ ॥ ४१४ ॥

गमनिका-अष्टान्तकृतो रामाः, 'अन्तकृत' इति ज्ञानावरणीयादिकर्म्मान्तकृतः, सिद्धिं गता इत्यर्थः, एकः पुनः ब्रह्मलोककल्पे उत्पत्स्यते, उत्पन्नो वेति क्रिया, ततश्च ब्रह्मलोकात् च्युत्वा सेत्स्यति-मोक्षं यास्यति, भारते वर्ष इति गाथार्थः॥ आह-किमिति सर्वे वासुदेवाः खल्वधोगामिनो रामाश्चोर्ध्वगामिन इत्याह—

अनियाणकडा रामा सव्वेऽवि य केसवा नियाणकडा । उड्ढंगामी रामा केसव सव्वे अहोगामी ॥ ४१५ ॥

गमनिका-अनिदानकृतो रामाः, सर्वेऽपि च केशवा निदानकृतः, ऊर्ध्वगामिनो रामाः, केशवाः सर्वे अधोगामिनः, भावार्थः सुगमः, नवरं प्राकृतशैल्या पूर्वापरनिपाते अनिदानकृतो रामा इति, अन्यथाऽकृतनिदाना रामा इति द्रष्टव्यम्, केशवास्तु कृतनिदाना इति गाथार्थः॥ एवं तावदधिकृतद्वारगाथा 'जिणचक्किदसाराण'मित्यादिलक्षणा प्रपञ्चतो व्याख्यातेः

१ 'तत्तो य चइत्ताणं सिज्झिस्सइ भारहे वासे' इति कस्याप्यादर्शस्य पाठमपेक्ष्य व्याख्येयम्, मुद्रित आवश्यके तु 'उववन्नु ततो चइउं सिज्झिस्सइ भारहे वासे' इति व्याख्यातः पाठः, पाठान्तरं तु "उववन्नु तत्थ भोए भोत्तुं अयरोवमा दस उ ॥ तत्तो अ चइत्ताणं इहेव उस्सप्पिणीइ भरहंमि । भवसिद्धिया य भयवं सिज्सिस्सइ कण्हतित्थंमि ॥ १ ॥" इति सार्धगाथारूपम् तत्रैव ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ति, साम्प्रतं यश्चक्रवर्त्ती वासुदेवो वा यस्मिन् जिने जिनान्तरे वाऽऽसीत् तत्प्रतिपाद्यत इत्यनेन सम्बन्धेन जिनान्तरागमनं, तत्रापि तावत् प्रसङ्गत एव कालतो जिनान्तराणि निर्दिश्यन्ते—

उसभो वरवसभगती ततियसमापच्छिमंमि कालंमि । उप्पन्नो पढमजिणो भरहपिया भारहे वासे ॥ १ ॥
पन्नासा लक्खेहिं कोडीणं सागराण उसभाओ । उप्पन्नो अजियजिणो ततिओ तीसाए लक्खेहिं ॥ २ ॥
जिणवसभसंभवाओ दसहिं लक्खेहिं अयरकोडीणं । अभिणंदणो उ भगवं एवइकालेण उप्पन्नो ॥ ३ ॥
अभिनंदणाउ सुमती नवहिं उ लक्खेहिं अयरकोडीणं । उप्पन्नो सुहपुण्णो सुप्पभनामस्स वोच्छामि ॥ ४ ॥
णउती य सहस्सेहि उ कोडीणं सागराण पुण्णाणं । सुमतिजिणाओ पउमो एवति कालेण उप्पन्नो ॥ ५ ॥
पउमप्पभनामाओ नवहिं सहस्सेहिं अयरकोडीणं । कालेणेवइएणं सुपासनामो समुप्पन्नो ॥ ६ ॥
कोडीसएहिं नवहि उ सुपासनामो जिणो समुप्पन्नो । चंदप्पभो पभाए पभासयंतो उ तेलोक्कं ॥ ७ ॥
णउतीय वि कोडीहिं ससीउ सुविही जिणो समुप्पन्नो । सुविहिजिणाओ नवहि उ कोडीहिं सीयलो जाओ ॥८॥
सीयलजिणाओ भगवं सेज्जंसो सागराण कोडीए । सागरसयऊणाए वरिसेहि तहा इमेहिं तु ॥ ९ ॥
छवीसाए सहस्सेहिं चेव छावट्ठिसयसहस्सेहिं । एतेहिं ऊणिया खलु कोडी मग्गिल्लिया होइ ॥ १० ॥
चउप्पण्णा अयराणं सेज्जंसाओ जिणो उ वसुपुज्जो । वसुपुज्जाओ विमलो तीसहिं अयरेहिं उप्पन्नो ॥ ११ ॥
विमलजिणा उप्पन्नो नवहिं अयरेहिं णंतइजिणोऽवि । चउसागरनामेहिं अणंतईओ जिणो धम्मो ॥ १२ ॥

आ.सू. ४१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

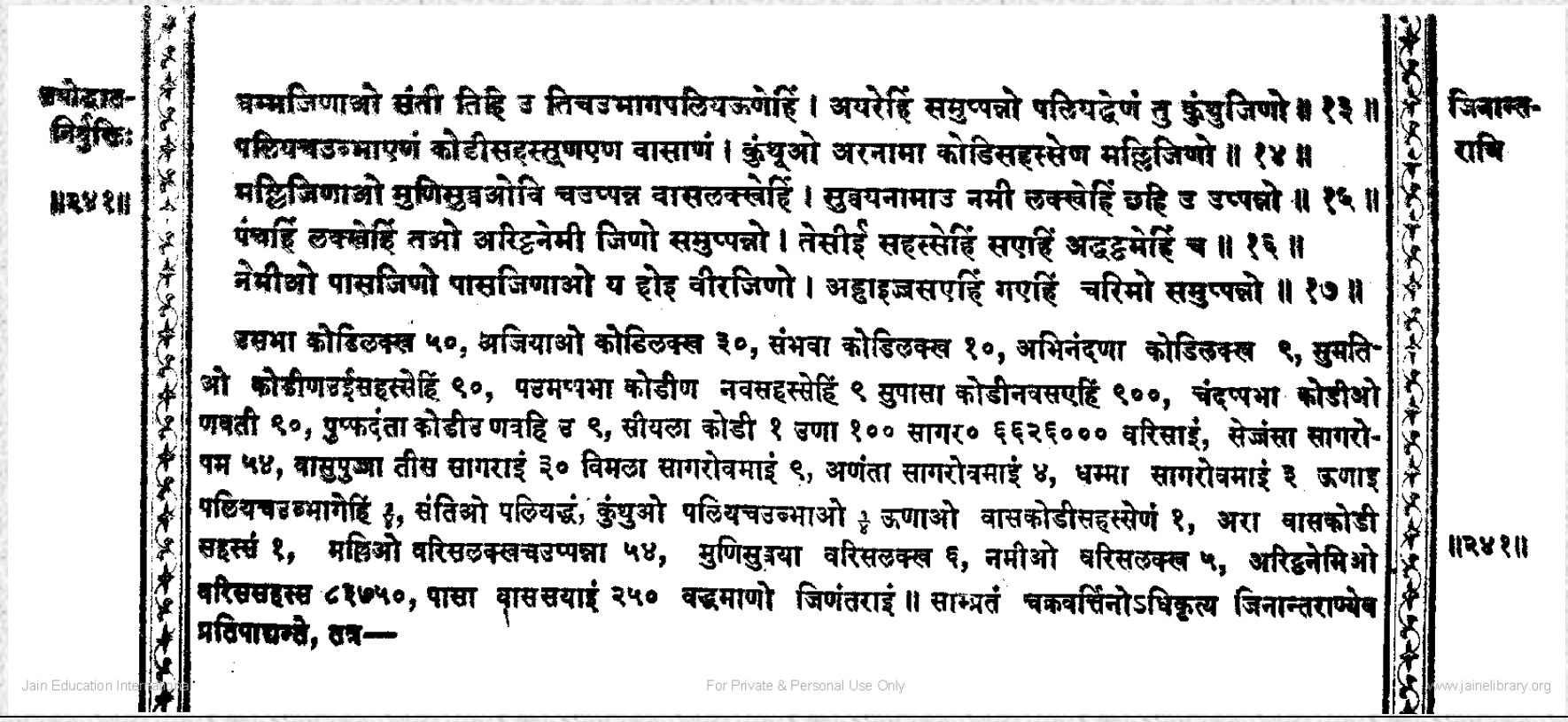

आवश्यक-निर्युक्तिः ॥२४१॥

धम्मजिणाओ संती तिहि उ तिचउभागपलियऊणेहिं । अयरेहिं समुप्पन्नो पलियद्धेणं तु कुंथुजिणो ॥ १३ ॥
पलियचउब्भाएणं कोडीसहस्सूणएण वासाणं । कुंथूओ अरनामा कोडिसहस्सेण मल्लिजिणो ॥ १४ ॥
मल्लिजिणाओ मुणिसुव्वओवि चउप्पन्न वाससलक्खेहिं । सुव्वयनामाउ नमी लक्खेहिं छहि उ उप्पन्नो ॥ १५ ॥
पंचहिं लक्खेहिं तओ अरिट्ठनेमी जिणो समुप्पन्नो । तेसीईं सहस्सेहिं सएहिं अद्धट्ठमेहिं च ॥ १६ ॥
नेमीओ पासजिणो पासजिणाओ य होइ वीरजिणो । अड्ढाइज्जसएहिं गएहिं चरिमो समुप्पन्नो ॥ १७ ॥

उसभा कोडिलक्ख ५०, अजियाओ कोडिलक्ख ३०, संभवा कोडिलक्ख १०, अभिनंदणा कोडिलक्ख ९, सुमतिओ कोडीणउईसहस्सेहिं ९०, पउमप्पभा कोडीण नवसहस्सेहिं ९ सुपासा कोडीनवसएहिं ९००, चंदप्पभा कोडीओ णवती ९०, पुप्फदंता कोडीउ णवहि उ ९, सीयला कोडी १ ऊणा १०० सागर० ६६२६००० वरिसाइं, सेजंसा सागरोपम ५४, वासुपुज्जा तीस सागराइं ३० विमला सागरोवमाइं ९, अणंता सागरोवमाइं ४, धम्मा सागरोवमाइं ३ ऊणाइ पलियचउब्भागेहिं ¼, संतिओ पलियद्धं, कुंथुओ पलियचउब्भाओ ¾ ऊणाओ वासकोडीसहस्सेणं १, अरा वासकोडी सहस्सं १, मल्लिओ वरिसलक्खचउप्पन्ना ५४, मुणिसुव्वया वरिसलक्ख ६, नमीओ वरिसलक्ख ५, अरिट्ठनेमिओ वरिससहस्स ८३७५०, पासा वाससयाइं २५० वद्धमाणो जिणंतराइं ॥ साम्प्रतं चक्रवर्त्तिनोऽधिकृत्य जिनान्तराण्येव प्रतिपाद्यन्ते, तत्र—

जिनान्तराणि ॥२४१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

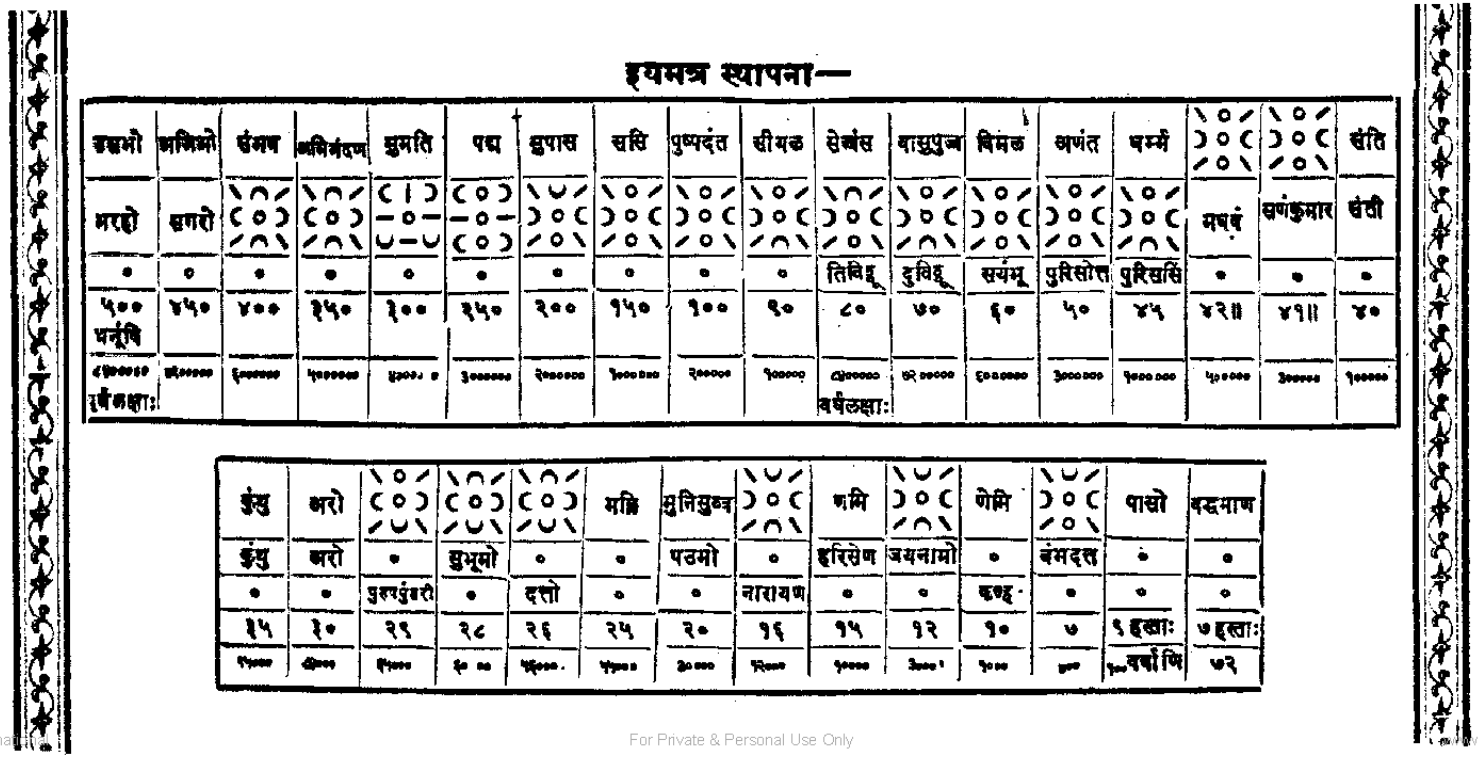

इयमत्र स्थापना—

उसभो	अजिओ	संभव	अभिनंदण	सुमति	पद्म	सुपास	ससि	पुप्पदंत	सीयल	सेज्जंस	वासुपुज्ज	विमल	अणंत	धम्मं			संति
भरहो	सगरो														मघवं	सणंकुमार	संती
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	तिविट्ठ	दुविट्ठ	सयंभू	पुरिसोत्त	पुरिससि	०	०	०
५०० धनूंषि	४५०	४००	३५०	३००	२५०	२००	१५०	१००	९०	८०	७०	६०	५०	४५	४२॥	४१॥	४०
पूर्वलक्षा:										वर्षलक्षा:							

कुंथु	अरो				मल्लि	मुनिसुव्व		नमि		णेमि		पासो	वद्धमाण
कुंथु	अरो	०	सुभूमो	०	०	पउमो	०	हरिसेण	जयनामो	०	बंभदत्त	०	०
०	०	पुप्पवुंडरी	०	दत्तो	०	०	नारायण	०	०	कण्ह	०	०	०
३५	३०	२९	२८	२६	२५	२०	१९	१५	१२	१०	७	९ हत्था:	७ हत्था:
												वर्षाणि	७२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥२४२॥

उसभे भरहो अजिए सगरो मघवं सणंकुमारो अ । धम्मस्स य संतिस्स य जिणंतरे चक्कवट्टिदुगं ॥ ४१६ ॥
संती कुंथू अ अरो अरिहंता चेव चक्कवट्टीआ । अरमल्लिअंतरे पुण हवइ सुभूमो अ कोरव्वो ॥ ४१७ ॥
मुणिसुव्वए नमिम्मि य हुंति दुवे पउमनाभ-हरिसेणा । नमि-नेमिसु जयनामा अरिट्ठ-पासंतरे बंभो॥४१८॥
इह चासम्मोहार्थं सर्वेषामेव चक्रवर्त्तिवासुदेवानां यो यस्मिन् कालेऽन्तरे वा चक्रवर्त्ती वासुदेवो वा भविष्यति बभूव वा तस्यानन्तरव्यावर्णितप्रमाणायुःसमन्वितस्य सुखपरिज्ञानार्थमयं प्रतिपादनोपायः—
बत्तीसं घरयाइं काउं तिरियायताहिं रेहाहिं । उड्ढाययाहिं काउं पंच घराइं तओ पढमे ॥ १ ॥
पन्नरस जिण निरंतर सुन्नदुगं तिजिण सुन्नयतिगं च ।
दो जिण सुन्न जिणिंदो सुन्न जिणो सुन्न दोण्णि जिणा ॥ २ ॥
बितीयपंतिठवणा—दो चक्कि सुन्न तेरस पण चक्की सुन्न चक्कि दो सुन्ना ।
चक्की सुन्न दु चक्की सुन्नं चक्की दु सुन्नं च ॥ ३ ॥
ततियपंतिठवणा—दस सुन्न पंच केसव पण सुन्नं केसि सुन्न केसी य ।
दो सुन्न केसवोऽविय सुन्नदुगं केसव तिसुन्नं ॥ ४ ॥
प्रमाणान्यायूंषि चामीषां प्रतिपादितान्येव, तानि पुनर्यथाक्रममूर्ध्वायतरेखाऽधो गृहद्वये स्थापनीयानीति । तत्रेयं स्थापना साम्प्रतं प्रदर्श्यते ॥ उक्तसम्बन्धगाथात्रयगमनिका—ऋषभे तीर्थकरे भरतश्चक्रवर्त्ती, तथा अजिते तीर्थकरे सगरश्चक्र-

जिनचक्रिदशारान्तराणि ॥२४२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अथ चक्रवर्ती, वासुदेव, बलदेव-आदीनां संक्षिप्त परिचय

वर्त्ती भविष्यति, एवं तीर्थकरोक्तानुवादः, सर्वत्र भविष्यत्कालानुरूपः क्रियाध्याहारः कार्यः, त्रिकालगोचरसूत्रप्रदर्शनार्थो वा भूतेनापि न दुष्यति, तथा चावोचत्-'मघंवसणंकुमारा सणंकुमारं गया कप्प'मित्यादि, एवं सर्वत्र संयोज्यमिति, मघवा सनत्कुमारश्च एतच्चक्रवर्त्तिद्वयं धर्म्मश्च शान्तिश्च अनयोरन्तरं जिनान्तरं तस्मिन् जिनान्तरे उक्तलक्षणं चक्रवर्त्तिद्वयं भविष्यत्यभवद्वेति गाथार्थः । द्वितीयगाथागमनिका-शान्तिः कुन्थुश्च अरः एते त्रयोऽप्यशोकाद्यष्टमहाप्रातिहार्यादिरूपां पूजामर्हंतीत्यर्हन्तश्चैव चक्रवर्त्तिनश्च, तथा अरमल्लयन्तरे तु भवति सुभूमश्च कौरव्यः, तुशब्दोऽन्तरविशेषणे, नान्तरमात्रे, किन्तु पुरुषपुण्डरीकदत्तवासुदेवद्वयमध्य इति गाथार्थः । तृतीयगाथागमनिका-मुनिसुव्रते तीर्थकरे नमौ च भवतः द्वौ, कौ द्वौ ?—पद्मनामहरिसेनौ, 'नमिनेमिसु जयणामो अरिट्ठपासंतरे बंभो'त्ति नमिश्च नेमिश्च नमिनेमी, अन्तरग्रहणमभिसम्बध्यते, ततश्च नमिनेम्यन्तरे जयनामा अभवत्, अरिष्टग्रहणादरिष्टनेमिः पार्श्वेति पार्श्वस्वामी, अनयोरन्तरे ब्रह्मदत्तो भविष्यत्यभवद्वेति गाथार्थः ॥ इदानीं वासुदेवो यो यत्तीर्थकरकालेऽन्तरे वा खल्वासीदसौ प्रतिपाद्यते—

पंचऽरहंते वंदंति केसवा पंच आणुपुव्वीए । सिज्जंस तिविट्ठाई धम्म पुरिससीहपेरंता ॥ ४१९ ॥
अरमल्लिअंतरे दुन्नि केसवा पुरिस-पुंडरिअदत्ता । मुणिसुव्वय-नमिअंतरे नारायण कण्ह नेमिम्मि ॥४२०॥

गमनिका-पञ्चार्हतो वन्दन्ते केशवाः, एतदुक्तं भवति—पञ्च केशवा अर्हतो वन्दन्ते, वन्दन्त इत्येतेषां सम्यक्त्वख्यापनार्थमिति, कियन्तोऽर्हन्तः ? किमेकः द्वौ वा त्रयो वा, नेत्याह-पञ्च, पञ्चेति पञ्चैव, किं यथाकथञ्चिदित्याह-'आनुपूर्व्या' परिपाट्या, 'सेज्जंस तिविट्ठाइ धम्म पुरिससीहपेरंता' श्रेयांसादीन् तिपृष्ठादयः धर्म्मपर्यन्तान् पुरुषसिंहपर्यन्ता इति,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वन्दंत इति शास्त्रकारवचनत्वाद्वर्त्तमाननिर्देशः, पाठान्तरं वा 'पंचऽरहंते वंदिंसु केसवे'त्यादि, गाथार्थः । द्वितीयगाथागमनिका–अरश्च मल्लिश्च अरमल्ली तयोरन्तरम्—अपान्तरालं तस्मिन् द्वौ केशवौ भविष्यतः, कौ द्वावित्याह—पुरुषपुण्डरीकदत्तौ, 'मुणिसुव्वयणमिअंतरे नारायणो' मुनिसुव्रतश्च नमिश्च मुनिसुव्रतनमी तयोरन्तरं २ तस्मिन् नारायणो नाम वासुदेवो भविष्यत्यभवद्वा, तथा 'कण्हो य नेमिम्मि'त्ति कृष्णाभिधानश्च नवमो वासुदेवो नेमितीर्थकरे भविष्यति बभूव वेति गाथार्थः । एवं तावच्चक्रवर्त्तिनो वासुदेवाश्च यो यज्जिनकालेऽन्तरे वा स उक्तः, साम्प्रतं चक्रवर्त्तिवासुदेवान्तराणि प्रतिपादयन्नाह—

चक्किदुगं हरिपणगं पणगं चक्कीण केसवो चक्की । केसव चक्की केशव दु चक्कि केसी अ चक्की अ ॥ ४२१ ॥

गमनिका—प्रथममुक्तलक्षणकाले चक्रवर्त्तिद्वयं भविष्यत्यभवद्वा, ततस्त्रिपृष्ठादिहरिपञ्चकं, पुनः पञ्चकं मघवादीनां चक्रवर्त्तिनां, पुनः पुरुषपुण्डरीकः केशवः, सुभूमाभिधानश्चक्रवर्त्ती, पुनर्दत्ताभिधानः केशवः, पुनः पद्मनामा चक्रवर्त्त्येव, पुनर्नारायणाभिधानः केशवः, पुनः हरिसेनजयनामानौ द्वौ चक्रवर्त्तिनौ, पुनः कृष्णनामा केशवः, पुनः ब्रह्मदत्ताभिधानश्चक्रवर्त्तीति, क्रियायोगः सर्वत्र प्रथमपदवद् वक्तव्य इति गाथार्थः ॥ उक्तमानुषङ्गिकं प्रकृतं प्रस्तुमः, तत्र यदुक्तम्—'तित्थगरो को इहं भरहे'त्ति, तद् व्याचिख्यासयाऽऽह—

अह भणइ नरवरिंदो ताय ! इमीसित्तिआइ परिसाए ।
अन्नोऽवि कोऽवि होही भरहे वासम्मि तित्थयरो ? ॥ ४४ ॥ (मू० भा०)

Jain Education Inter... For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गमनिका–अत्रान्तरे अथ भणति नरवरेन्द्रः–तात ! अस्याः एतावत्याः परिषदः अन्योऽपि कश्चिद्भविष्यति तीर्थकरः अस्मिन् भारते वर्षे, भावार्थस्तु सुगम एवेति गाथार्थः ॥

तत्थ मरीई नामा आइपरिव्वायगो उसभनत्ता । सज्झायज्झाणजुओ एगंते झायइ महप्पा ॥ ४२२ ॥

तत्र भगवतः प्रत्यासन्ने भूभागे मरीचिनामा आदौ परिव्राजकः आदिपरिव्राजकः प्रवर्त्तकत्वात्, ऋषभनप्ता पौत्रक इत्यर्थः, स्वाध्याय एव ध्यानं २ तेन युक्तः एकान्ते ध्यायति महात्मेति गाथार्थः ॥

तं दाएइ जिणिंदो एव नरिंदेण पुच्छिओ संतो । धम्मवरचक्कवट्टी अपच्छिमो वीरनामुत्ति ॥ ४२३ ॥

गमनिका–भरतपृष्ठो भगवान् 'तं' मरीचिं दर्शयति जिनेन्द्रः एवं नरेन्द्रेण पृष्टः सन्, धर्म्मवरचक्रवर्त्ती अपश्चिमो वीरनामा भविष्यतीति गाथार्थः ॥

तथा—आइगरु दसाराणं तिविट्ठु नामेण पोअणाहिवई । पियमित्तचक्कवट्टी मूआइ विदेहवासम्मि ॥ ४२४ ॥

गमनिका–आदिकरो दसाराणं (दशाराणां) त्रिपृष्ठनामा पोतना नाम नगरी तस्या अधिपतिर्भविष्यतीति क्रिया, तथा प्रियमित्रनामा चक्रवर्त्ती मूकायां नगर्यां 'विदेहवासंमि'त्ति महाविदेहे भविष्यतीति गाथार्थः ॥

तं वयणं सोऊणं राया अंचिअतणूरुहसरीरो । अभिवंदिऊण पिअरं मरीइमभिवंदओ जाइ ॥ ४२५ ॥

गमनिका–तद्वचनं तीर्थकरवदनविनिर्गतं श्रुत्वा राजा अञ्चितानि तनूरुहाणि शरीरे यस्य स तथाविधः, अभिवन्द्य पितरं तीर्थकरं मरीचिं अभिवन्दको याति, पाठान्तरं वा 'मिरीइं अभिवंदिउं जाइ'त्ति, मरीचिं याति, किमर्थम् ?—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'अभिवंदिउं' अभिवन्दनायेत्यर्थः, यातीति वर्त्तमानकालनिर्देशस्त्रिकालगोचरसूत्रप्रदर्शनार्थ इति गाथार्थः ॥

सो विणएण उवगओ काऊण पयाहिणं च तिक्खुत्तो। वंदइ अभित्थुणंतो इमाहिं महुराहिं वग्गूहिं ॥४२६॥

स भरतः विनयेन करणभूतेन मरीचिसकाशमुपगतः सन् कृत्वा प्रदक्षिणां च 'तिक्खुत्तो'त्ति त्रिकृत्वः, तिस्रो वारा इत्यर्थः, वन्दते, अभिष्टुतवान्, एताभिर्मधुराभिर्वल्गुभिर्वाग्भिरिति गाथार्थः ॥

लाभा हु ते सुलद्धा जंऽसि तुमं धम्मचक्कवट्टीणं। होहिसि दसचउदसमो अपच्छिमो वीरनामुत्ति ॥४२७॥

'लाभा' अभ्युदयप्राप्तिविशेषाः, हुकारो निपातः स चैवकारार्थः तस्य च व्यवहितः सम्बन्धः, 'ते' तव सुलब्धा एव, यस्मात् त्वं धर्म्मचक्रवर्त्तिनां भविष्यसि दशचतुर्दशः, चतुर्विंशतितम इत्यर्थः, अपश्चिमो वीरनामेति गाथार्थः ॥ तथा आइगरो दसाराणं (४२४) गाथा पूर्ववत् नेया। एकान्तसम्यग्दर्शनानुरञ्जितहृदयो भावितीर्थकरभक्त्या च तमभिवन्दनायोद्यतो भरत एवाह—

नावि अ ते पारिवज्जं वंदामि अहं इमं च ते जम्मं। जं होहिसि तित्थयरो अपच्छिमो तेण वंदामि ॥४२८॥

गमनिका—नापि च परिव्राजामिदं पारिव्राज्यं वंदामि अहं, इदं च ते जन्म, किन्तु यद् भविष्यसि तीर्थकरः अपश्चिमस्तेन वंदामीति गाथार्थः ॥

एव णहं थोऊणं काऊण पयाहिणं च तिक्खुत्तो। आपुच्छिऊण पियरं विणीअणगरिं अह पविट्ठो ॥ ४२९ ॥

Jain Education Int... For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गमनिका–एवं स्तुत्वा, णमिति निपातः पूरणार्थो वर्त्तते, कृत्वा प्रदक्षिणां च त्रिकृत्वः, आपृच्छ्य पितरं–ऋषभदेवं विनीतनगरीम्–अयोध्यामथ–अनन्तरं प्रविष्टो भरत इति गाथार्थः ॥ अत्रान्तरे—

तवयणं सोऊणं तिवइं अप्फोडिऊण तिक्खुत्तो । अब्भहिअजायहरिसो तत्थ मरीई इमं भणइ ॥ ४३० ॥

गमनिका–तस्य भरतस्य वचनं तद्वचनं श्रुत्वा, तत्र मरीचिः इदं भणतीति योगः, कथमित्यत आह–त्रिपदीं दत्त्वा रङ्गमध्यगतमल्लवत्, तथा आस्फोट्य त्रिकृत्वः, तिस्रो वारा इत्यर्थः, किंविशिष्टः संस्तत आह–अभ्यधिको जातो हर्षो यस्येति समासः, तत्र स्थाने मरीचिरिदं–वक्ष्यमाणं भणति, वर्त्तमाननिर्देशप्रयोजनं प्राग्वदिति गाथार्थः ॥

जइ वासुदेव पढमो मूआइ विदेह चक्कवट्टित्तं । चरिमो तित्थयराणं होउ अलं इत्तिअं मज्झ ॥ ४३१ ॥

गमनिका–यदि वासुदेवः प्रथमोऽहं, मूकायां विदेहे चक्रवर्त्तित्वं प्राप्स्यामि,तथा चरमः–पश्चिमः तीर्थकराणां भविष्यामि, एवं तर्हि भवतु एतावन्मम, एतावतैव कृतार्थ इत्यर्थः, अलं पर्याप्तमन्येनेति,पाठान्तरं वा 'अहो मए एत्तियं लद्धं'ति गाथार्थः ॥

अहयं च दसाराणं पिया य मे चक्कवट्टिवंसस्स । अज्जो तित्थयराणं अहो कुलं उत्तमं मज्झ ॥ ४३२ ॥

गमनिका–अहमेव, चशब्दस्यैवकारार्थत्वात्, किं ?—दसाराणं, प्रथमो भविष्यामीति वाक्यशेषः, पिता च 'मे' मम चक्रवर्त्तिवंशस्य, प्रथम इति क्रियाध्याहारः, तथा 'आर्यकः' पितामहः स तीर्थकराणां प्रथमः, यत एवमत अहो–विस्मये कुलमुत्तमं ममेति गाथार्थः ॥ पृच्छाद्वारं गतम्, इदानीं निर्वाणद्वारावयवार्थाभिधित्सयाऽऽह—

अह भगवं भवमहणो पुव्वाणमणूणयं सयसहस्सं । अणुपुवि विहरिऊणं पत्तो अट्ठावयं सेलं ॥ ४३३ ॥

Jain Education Inter For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** मरिचे: 'गोत्र-मद-उत्पत्ति' प्रसंग वर्णयते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

॥ २४५ ॥

गमनिका–अथ भगवान् भवमथनः पूर्वाणामन्यूनं शतसहस्रं आनुपूर्व्या विहृत्य प्राप्तोऽष्टापदं शैलं, भावार्थः सुगम एवेति गाथार्थः ॥

अट्ठावयम्मि सेले चउदसभत्तेण सो महरिसीणं । दसहिं सहस्सेहिं समं निव्वाणमणुत्तरं पत्तो ॥ ४३४ ॥

गमनिका–अष्टापदशैले चतुर्दशभक्तेन स महर्षीणां दशभिः सहस्रैः समं निर्वाणमनुत्तरं प्राप्तः, अस्या अपि भावार्थः सुगम एव, नवरं चतुर्दशभक्तं–षट्रात्रोपवासः ॥ भगवन्तं चाष्टापदप्राप्तमपवर्गजिगमिषुं श्रुत्वा भरतो दुःखसन्तप्तमानसः पञ्चभिरेवाष्टापदं ययौ, देवा अपि भगवन्तं मोक्षजिगमिषुं ज्ञात्वाऽष्टापदशैलं दिव्यविमानारूढाः खल्वागतवन्तः, उक्तं च भगवति मोक्षगमनायोद्यते, "जाव य देवावासो जाव य अट्ठावओ नगवरिंदो । देवेहि य देवीहि य अविरहियं संचरंतेहिं ॥ १ ॥" तत्र भगवान् त्रिदशनरेन्द्रैः स्तूयमानो मोक्षं गत इति गाथार्थः ॥ साम्प्रतं निर्वाणगमनविधिप्रतिपादनाय एतां द्वारगाथामाह—

निव्वाणं चिइगागिई जिणस्स इक्खाग–सेसगाणं च । सक्कहा थूभ जिणघरे जायग तेणाऽहिअग्गित्ति ॥ ४३५ ॥

व्याख्या—निर्वाणमिति भगवान् दशसहस्रपरिवारो निर्वाणं प्राप्तः, अत्रान्तरे च देवाः सर्व एवाष्टापदमागताः, 'चितकाकृति'रिति ते तिस्रश्चिताः वृत्तत्र्यस्रचतुरस्राकृतीः कृतवन्त इति, एकां पूर्वेण अपरां दक्षिणेन तृतीयामपरेणेति, तत्र च पूर्वा तीर्थकृतः दक्षिणा इक्ष्वाकूणां अपरा शेषाणामिति, ततः अग्निकुमारा वदनैः खल्वग्निं प्रक्षिप्तवन्तः, तत एव निबन्धनाल्लोके 'अग्निमुखा वै देवा' इति प्रसिद्धं, वायुकुमारास्तु वातं मुक्तवन्त इति, मांसशोणिते च ध्यामिते सति मेघकु-

॥ २४५ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अथभगवन्त ऋषभस्य निर्वाण तथा भरतस्य केवलज्ञानस्य कथनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्तिः

माराः सुरभिणा क्षीरोदजलेन निर्वापितवन्तः, 'सकथे'ति सकथा हनुमोच्यते, तत्र दक्षिणां हनुमां भगवतः सम्बन्धिनीं शक्रो जग्राह, वामामीशानः, अधस्त्यदक्षिणां पुनश्चमरः, अधस्त्योत्तरां तु बलिः, शेषास्तु त्रिदशाः शेषाङ्गानि गृहीतवन्तः, नरेश्वरादयस्तु भस्म गृहीतवन्तः, शेषा लोकास्तु तद्रसमना पौण्ड्रकाणि चक्रुः, तत एव च प्रसिद्धिमुपगतानि, 'स्तूपानि जिनगृहं चे'ति भरतो भगवन्तमुद्दिश्य वर्द्धकीरत्नेन योजनायामं त्रिगव्यूतोच्छ्रितं सिंहनिषद्यायतनं कारितवान्, निजवर्ण-प्रमाणयुक्ताश्चतुर्विंशतिं जीवाभिगमोक्तपरिवारयुक्ताः तीर्थकरप्रतिमाः तथा भ्रातृशतप्रतिमा आत्मप्रतिमां च स्तूपशतं च, मा कश्चिदाक्रमणं करिष्यतीति, तत्रैकं भगवतः शेषानेकोनशतस्य भ्रातॄणामिति, तथा लोहमयान् यन्त्रपुरुषांस्तद्द्वारपालांश्च चकार, दण्डकरत्नेनाष्टापदं च सर्वत्र छिन्नवान्, योजने योजने तु अष्टौ पदानि च कृतवान्, सगरसुतैस्तु वंशानुरागाद्यथा परिखां कृत्वा गङ्गाऽवतारिता तथा ग्रन्थान्तरतो विज्ञेयमिति । याचकास्तेनाहिताग्नयः इत्यस्य व्याख्या—देवैर्भगवत्सक-थादौ गृहीते सति श्रावका देवानतिशयभक्त्या याचितवन्तः, देवा अपि तेषां प्रचुरत्वान्महता यत्नेन याचनाभिद्रुता आहुः—अहो ! याचका इति, तत एव याचका रूढाः, ततः अग्निं गृहीत्वा स्वगृहेषु स्थापितवन्तस्तेन कारणेनाहिताग्नयः इति तत एव च प्रसिद्धाः, तेषां चाग्नीनां परस्परतः कुण्डसङ्क्रान्तावयं विधिः—भगवतः सम्बन्धिभूतः (अग्निः) सर्वकुण्डेषु सञ्चरति, इक्ष्वाकुकुण्डाग्निः शेषकुण्डाग्नौ सञ्चरति, न भगवत्कुण्डाग्नाविति, शेषानगारकुण्डाग्निस्तु नान्यत्र सङ्क्रमत इति गाथार्थः ॥ साम्प्रतमभिहितद्वारगाथायाः द्वारद्वयव्याचिख्यासया मूलभाष्यकार आह—

थूभसय भाउआणं चउवीसं चेव जिणघरे कासी। सव्वजिणाणं पडिमा वण्णपमाणेहिं निअएहिं ॥४५॥ (मू. भा.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥ २४६ ॥

स्तूपशतं भ्रातॄणां भरतः कारितवानिति, तथा चतुर्विंशतिश्चैव जिनगृहे–जिनायतने 'कासि'त्ति कृतवान्, का इत्याह—सर्वजिनानां प्रतिमाः, वर्णप्रमाणैर्निजैः, आत्मीयैरिति गाथार्थः ॥ साम्प्रतं भरतवक्तव्यतानिबद्धां सङ्ग्रहगाथां प्रतिपादयन्नाह—

आयंसघरपवेसो भरहे पडणं च अंगुलीअस्स । सेसाणं उम्मुअणं संवेगो नाण दिक्खा य ॥ ४३६ ॥

अस्या भावार्थः कथानकादवसेयः, तच्चेदम्–भगवतो निव्वाणं गयस्स आययणं कारावियं, भरहो अवज्झमागओ, कालेण य अप्पसोगो जाओ, ताहे पुणरवि भोगे भुंजिउं पवत्तो, एवं तस्स पंच पुव्वसयसहस्सा अतिक्कंता भोगे भुंजंतस्स, अह अन्नया कयाइ सव्वालंकारभूसिओ आदंसघरमतिगतो, तत्थ य सव्वंगिओ पुरिसो दीसइ, तस्स एवं पेच्छमाणस्स अंगुलेज्जयं पडियं, तं च तेण न नायं पडियं, एवं तस्स पलोयंतस्स जाहे अंगुली दिट्ठिमि पडिया ताहे असोभंतिया दिट्ठा, ततो कडगंपि अवणेइ, एवं एक्केक्कमवणेंतेण सव्वमाभरणमवणीयं, ताहे अप्पाणं उच्चियपउमं व पउमसरमसोभंतं पेच्छिय संवेगावण्णो परिचिंतिउं पयत्तो–आगंतुगदव्वेहिं विभूसियं मे सरीरगंति, न सहावसुंदरं, एवं चिंतेंतस्स अपुव्वकरणज्झाणमुवट्ठियस्स केवलनाणं समुप्पज्जंति । सक्के देविंदे देवराया आगओ भणति–दव्वलिंगं पडिवज्ज जाहे निक्खमणमहिमं करेमि, ततो तेण पंचमुट्ठिओ लोओ कओ, देवरायाए रओहरणपडिग्गहादि उवकरणमुवणीयं, दसहिं रायसहस्सेहिं समं पव्वइओ, सेसा णव चक्किणो सहस्सपरिवारा निक्खंता, सक्केणं वंदिओ, ताहे भगवं पुव्वसयसहस्सं केवलिपरियागं पाउणित्ता परिनिव्वुडो । य,–आइच्चजसो सक्केणाभिसित्तो, एवमइ पुरिसजुगाणि अभिसित्तानि, इक्को भावार्थः,

भरतस्य कैवल्यम् ॥ २४६ ॥

Jain Education Inter... For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

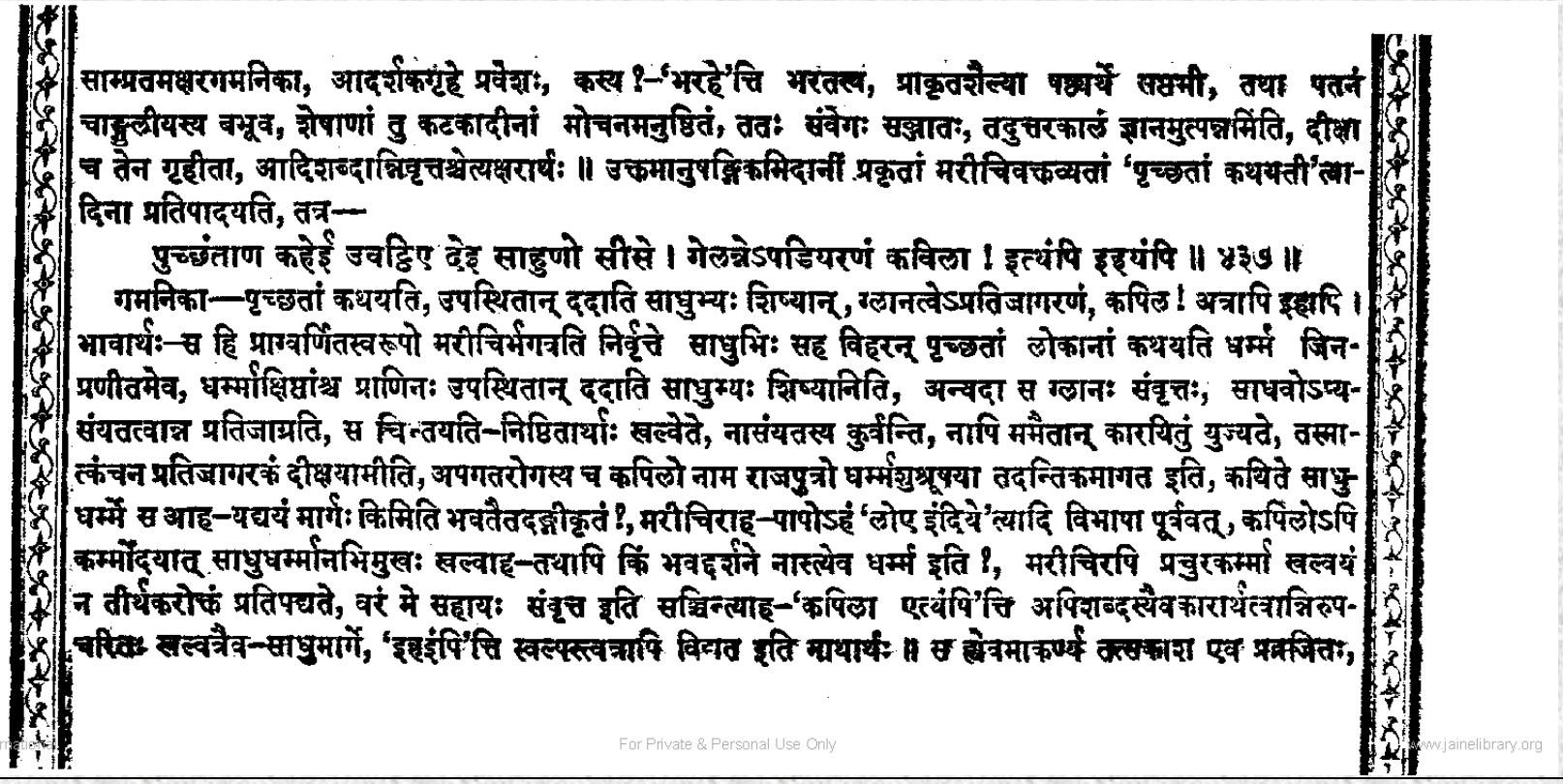

साम्प्रतमक्षरगमनिका, आदर्शकगृहे प्रवेशः, कस्य ?-'भरहे'त्ति भरतस्य, प्राकृतशैल्या षष्ठ्यर्थे सप्तमी, तथा पतनं चाङ्गुलीयस्य बभूव, शेषाणां तु कटकादीनां मोचनमनुष्ठितं, ततः संवेगः सञ्जातः, तदुत्तरकालं ज्ञानमुत्पन्नमिति, दीक्षा च तेन गृहीता, आदिशब्दान्निवृत्तश्चेत्यक्षरार्थः ॥ उक्तमानुषङ्गिकमिदानीं प्रकृतां मरीचिवक्तव्यतां 'पृच्छतां कथयती'त्यादिना प्रतिपादयति, तत्र—

पुच्छंताण कहेई उवट्ठिए देइ साहुणो सीसे । गेलन्नेऽपडियरणं कविला ! इत्थंपि इहयंपि ॥ ४३७ ॥

गमनिका—पृच्छतां कथयति, उपस्थितान् ददाति साधुभ्यः शिष्यान्, ग्लानत्वेऽप्रतिजागरणं, कपिल ! अत्रापि इहापि । भावार्थः—स हि प्राग्वर्णितस्वरूपो मरीचिर्भगवति निर्वृत्ते साधुभिः सह विहरन् पृच्छतां लोकानां कथयति धर्मं जिनप्रणीतमेव, धर्माक्षिप्तांश्च प्राणिनः उपस्थितान् ददाति साधुभ्यः शिष्यानिति, अन्यदा स ग्लानः संवृत्तः, साधवोऽप्यसंयतत्वान्न प्रतिजाग्रति, स चिन्तयति-निष्ठितार्थाः खल्वेते, नासंयतस्य कुर्वन्ति, नापि ममैतान् कारयितुं युज्यते, तस्मात्कंचन प्रतिजागरकं दीक्षयामीति, अपगतरोगस्य च कपिलो नाम राजपुत्रो धर्मशुश्रूषया तदन्तिकमागत इति, कथिते साधुधर्मे स आह-यद्ययं मार्गः किमिति भवतैतदङ्गीकृतं ?, मरीचिराह-पापोऽहं 'लोए इंदिये'त्यादि विभाषा पूर्ववत्, कपिलोऽपि कर्मोदयात् साधुधर्मानभिमुखः खल्वाह-तथापि किं भवदर्शने नास्त्येव धर्म इति ?, मरीचिरपि प्रचुरकर्मा खल्वयं न तीर्थकरोक्तं प्रतिपद्यते, वरं मे सहायः संवृत्त इति सञ्चिन्त्याह-'कपिला एत्थंपि'त्ति अपिशब्दस्यैवकारार्थत्वान्निरुपचरिता खल्वत्रैव-साधुमार्गे, 'इहइंपि'त्ति स्वल्पस्त्वत्रापि विद्यत इति गाथार्थः ॥ स ह्येवमाकर्ण्य तत्सकाश एव प्रव्रजितः,

आ.सू ४२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥२४७॥

मरीचिनाऽप्यनेन दुर्वचनेन संसारोऽभिनिर्वर्त्तितः, त्रिपदीकाले च नीचैर्गोत्रकर्म्म बद्धमिति, अमुमेवार्थं प्रतिपादयन्नाह-

दुब्भासिएण इक्केण मरीई दुक्खसागरं पत्तो । भमिओ कोडाकोडिं सागरसरिनामधिज्जाणं ॥ ४३८ ॥
तंमूलं संसारो नीआगुत्तं च कासि तिवइम्मि । अपडिक्कंतो बंभे कविलो अंतद्धिओ कहए ॥ ४३९ ॥

प्रथमगाथागमनिका—दुर्भाषितेन एकेन उत्कलक्षणेन मरीचिर्दुःखसागरं प्राप्तः, भ्रान्तः कोटीकोटीनां, केषामित्याह-'सागरसरिनामधेज्जाणं'ति सागरसदृशनामधेयानां, सागरोपमाणामिति गाथार्धः ॥ द्वितीयगाथागमनिका-'तन्मूलं' दुर्भाषितमूलं संसारः सञ्जातः, तथा स एव नीचैर्गोत्रं च 'कृतवान्' निष्पादितवान् त्रिपद्यां-प्राग्वर्णितस्वरूपायामिति, 'अपडिक्कंतो बंभे'त्ति स मरीचिश्चतुरशीतिपूर्वशतसहस्राणि सर्वायुष्कमनुपाल्य तस्मात् दुर्भाषितादू गर्वाच्चाप्रतिक्रान्तः-अनिवृत्तः ब्रह्मलोके दशसागरोपमस्थितिर्देवः सञ्जात इति ॥ कपिलोऽपि ग्रन्थार्थपरिज्ञानशून्य एव तद्दर्शितक्रियारतो विजहार, आसुरिनामा च शिष्योऽनेन प्रव्राजित इति, तस्य स्वमाचारमात्रं दिदेश, एवमन्यानपि शिष्यान् स गृहीत्वा शिष्यप्रवचनानुरागतत्परो मृत्वा ब्रह्मलोक एवोत्पन्नः, स ह्युत्पत्तिसमनन्तरमेवावधिं प्रयुक्तवान्, किं मया हुतं वेष्टं वा दानं वा दत्तं येनैषा दिव्या देवर्द्धिः प्राप्तेति, स्वं पूर्वभवं विज्ञाय चिन्तयामास-मम शिष्यो न किञ्चिद्वेत्ति, तत्तस्योपदिशामि तत्त्वमिति, तस्मै आकाशस्थपञ्चवर्णमण्डलकस्थः तत्त्वं जगाद, आह च-'कपिलो अंतद्धिओ कहए' कपिलः अन्तर्हितः कथितवान्, किं ?, अव्यक्ताद् व्यक्तं प्रभवति, ततः सृष्टितत्त्वं जातं, तथा चाहुस्तन्मतानुसारिणः-"प्रकृते-

मरीचि-वृत्तांतं

॥२४७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** मरिचे: शेष वृतान्त तथा भगवन्त महावीरस्य अन्य भवानां वर्णनं

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्तिः

महांस्ततोऽहङ्कारस्तस्माद् गणश्च षोडशकः । तस्मादपि षोडशकात् पञ्चभ्यः पञ्च भूतानि ॥ १ ॥" त्यादि, अलं विस्तरेण, प्रकृतं प्रस्तुम इति गाथार्थः ॥

इक्खागेसु मरीई चउरासीई अ बंभलोअम्मि । कोसिअ कुल्लागम्मी असीइमाउं च संसारो ॥ ४४० ॥

गमनिका–इक्ष्वाकुषु मरीचिरासीत्, चतुरशीतिं च पूर्वशतसहस्राण्यायुष्कं पालयित्वा 'बंभलोयंमि' ब्रह्मलोके कल्पे देवः संवृत्तः, ततश्चायुष्कक्षयात् च्युत्वा 'कोसिय कोल्लाएसु'(यंमी) त्ति कोल्लाकसन्निवेशे कौशिको नाम ब्राह्मणो बभूव, 'असीतिमाउं च संसार'त्ति स च तत्राशीतिपूर्वशतसहस्राण्यायुष्कमनुपाल्य 'संसार'त्ति तिर्यग्नरनारकामरभवानुभूतिलक्षणे संसारे पर्यटित इति गाथार्थः ॥ संसारे कियन्तमपि कालमटित्वा स्थूणायां नगर्यां जात इति, अमुमेवार्थं 'थूणा ये'त्यादिना प्रतिपादयति–

थूणाई पूसमित्तो आउं बावत्तरिं च सोहम्मे । चेइअ अग्गिज्जोओ चोवट्ठी चेव ईसाणे ॥ ४४१ ॥

स्थूणायां नगर्यां पुष्पमित्रो नाम ब्राह्मणः सञ्जातः, 'आउं बावत्तरिं च सोहम्मे'त्ति तस्यायुष्कं द्विसप्ततिपूर्वशतसहस्राण्यासीत्, परिव्राजकदर्शने च प्रव्रज्यां गृहीत्वा तां पालयित्वा कियन्तमपि कालं स्थित्वा सौधर्म्मे कल्पेऽजघन्योत्कृष्टस्थितिः समुत्पन्न इति । 'चेइय अग्गिज्जोतो चोयट्ठीसाणकप्पंमि'(चेव ईसाणे)त्ति सौधर्म्माच्युतः चैत्यसन्निवेशे अग्निद्योतो ब्राह्मणः सञ्जातः, तत्र चतुःषष्टिपूर्वशतसहस्राण्यायुष्कमासीत्, परिव्राट् सञ्जातो, मृत्वा चेशाने देवोऽजघन्योत्कृष्टस्थितिः संवृत्त इति गाथार्थः ॥

मंदिरे अग्गिभूई छप्पन्नाउं सणंकुमारम्मि । सेअवि भारद्दाओ चोआलीसं च माहिंदे ॥ ४४२ ॥

गमनिका–ईशानाच्युतो 'मन्दिर' इति मन्दिरसन्निवेशे अग्निभूतिनामा ब्राह्मणो बभूव, तत्र षट्पञ्चाशत् पूर्वशत-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सहस्राणि जीवितमासीत्, परिव्राजकश्च बभूव, मृत्वा 'सणंकुमारंमि'त्ति सनत्कुमारे कल्पे विमध्यस्थितिर्देवः समुत्पन्न इति, 'सेतवि भारद्दाए चोयालीसं च माहिंदि'त्ति सनत्कुमाराच्युतः श्वेताम्ब्यां नगर्यां भारद्वाजो नाम ब्राह्मण उत्पन्न इति, तत्र च चतुश्चत्वारिंशत्पूर्वशतसहस्राणि जीवितमासीत्, परिव्राजकश्चाभवत्, मृत्वा च माहेन्द्रे कल्पेऽजघन्योत्कृष्ट-स्थितिर्देवो बभूवेति गाथार्थः ॥

संसरिय थावरो रायगिहे चउतीस बंभलोगम्मि । छस्सुवि पारिवज्जं भमिओ तत्तो अ संसारे ॥ ४४३ ॥

गमनिका—माहेन्द्राच्युतः संसृत्य कियन्तमपि कालं संसारे स्थावरो नाम ब्राह्मणो राजगृहे समुत्पन्न इति, तत्र च चतुस्त्रिंशत्पूर्वशतसहस्राण्यायुष्कं, परिव्राजक आसीत्, मृत्वा ब्रह्मलोकेऽजघन्योत्कृष्टस्थितिर्देवः सञ्जातः, एवं षट्स्वपि वारासु परिव्राजकत्वमधिकृत्य दिवमवाप्तवान्, 'भमिओ तत्तो य संसारे' ततः ब्रह्मलोकाच्युत्वा भ्रान्तः संसारे प्रभूतं कालमिति गाथार्थः ॥

रायगिह विस्सनंदी विसाहभूई अ तस्स जुवराया । जुवरण्णो विस्सभूई विसाहनंदी अ इअरस्स ॥ ४४४ ॥
रायगिह विस्सभूई विसाहभूइस्सुअ खत्तिए कोडी । वाससहस्सं दिक्खा संभूअजइस्स पासम्मि ॥ ४४५ ॥

भावार्थः खल्वस्य गाथाद्वयस्य कथानकादवसेयः, तच्चेदम्—रायगिहे नगरे विस्सनंदी राया, तस्स भाया विसाहभूती, सो य जुवराया, तस्स जुवरण्णो धारिणीए देवीए विस्सभूती नाम पुत्तो जातो, रण्णोऽवि पुत्तो विसाहनंदित्ति, तस्स विस्सभूतिस्स वासकोडी आउं, तत्थ पुप्फकरंडकं नाम उज्जाणं, तत्थ सो विस्सभूती अंतेउरवरगतो सच्छंदसुहं पवियरइ,

Jain Education Inter For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

ततो जा सा विसाहनंदिस्स माया तीसे दासचेडीओ पुप्फकरंडए उज्जाणे पत्ताणि पुप्फाणि य आ(वि)णेंति, पेच्छंति य विस्सभूतिं कीडंतं, तासिं अमरिसो जाओ, ताहे साहंति जहा एवं कुमारो ललइ, किं अम्ह रज्जेण वा बलेण वा ?, जइ विसाहनंदी न भुंजइ एवंविहे भोए, अम्ह नामं चेव, रज्जं पुण जुवरन्नो पुत्तस्स जस्सेरिसं ललियं, सा तासिं अंतिए सोउं देवी ईसाए कोवघरं पविट्ठा, जइ ताव रायाणए जीवंतए एसा अवत्था ?, जाहे राया मतो भविस्सइ ताहे इत्थ अम्हे को गणेहित्ति ?, राया गमेइ, सा पसायं न गिण्हइ, किं मे रज्जेणं तुमे वत्ति ?, पच्छा तेण अमच्चस्स सिट्ठं, ताहे अमच्चोऽवि तं गमेति, तहवि न ठाइ, ताहे सो अमच्चो भणइ रायं–मा देवीए वयणातिक्कमो कीरउ, मा मारेहिति अप्पाणं, राया भणति–को उवाओ होज्जा ?, ण य अम्हं वंसे अन्नंमि अतिगते उज्जाणे अण्णो अतीति, तत्थ वसंतमासं ठिओ मत्तगेसु अच्छइ, अमच्चो भणइ–उवाओ कज्जउ, जहा अमुगो पच्चंतराया ओवट्टो, अणज्जंता पुरिसा कूडलेहे उवणेंतु, एवमेतेण कयकेण ते कूडलेहा रन्ना उवट्ठविया, ताहे राया जत्तं गिण्हेइ, तं विस्सभूतिणा सुयं, ताहे भणति–मए जीवमाणे तुब्भे किं निग्गच्छह ?, ताहे सो गओ, ताहे चेव इमो अइयओ, सो गओ तं पच्चंतं जाव न किंचि पेच्छइ उडुमरेंतं, ताहे आहिंडित्ता जाहे नत्थि कोइ अतिक्कमइ ताहे पुणरवि पुप्फकरंडयं उज्जाणमागओ, तत्थ दारवाला दंडगहिअग्गहत्था भणंति–मा अईह सामी !, किं निमित्तं ?, एत्थ विसाहनंदी कुमारो रमइ, ततो एवं सोऊणं कुविओ विस्सभूती, तेण नायं–कयकेण अहं निग्गच्छाविओत्ति, तत्थ कविट्ठलता अणेगफलभरसमोसया, सा मुट्ठिप्पहारेण आहया, ताहे तेहिं कविट्ठेहिं भूमी अच्छुया, ते भणति–एवं अहं तुज्झं सीसाणि पाडितो जइ अहं महल्लपिउणो गोस्वं न करेंतो, अहं भे डम्भेण नीणिओ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तम्हा अलाहि भोगेहिं, तओ निग्गओ, भोगा अवमाणमूलत्ति अज्जसंभूयाणं थेराणं अंतिए पवइओ, तं पवइयं सोउं ताहे राया संतेउरपरियणो जुवराया य निग्गओ, ते तं खमावेंति,णेव तेसिं सो पसत्तिं गेण्हइ, ततो बहूहिं छट्ठट्ठमादिएहिं अप्पाणं भावेमाणो विहरति, एवं सो विहरमाणो महुरनगरिं गओ।

इओ य विसाहनंदी कुमारो तत्थ महुराए पिउच्छाए रन्नो अग्गमहिसीए धूया लद्धेल्लिया, तत्थ गतो, तत्थ से रायमग्गे आवासो दिन्नो, सो य विस्सभूती अणगारो मासखमणपारणगे हिंडंतो तं पएसमागतो जत्थ ठाणे विसाहनंदीकुमारो अच्छइ, ताहे तस्स पुरिसेहिं कुमारो भण्णइ–सामि ! तुब्भे एयं न याणह ?, सो भणति–न याणामि, तेहिं भण्णइ–एस सो विस्सभूतीकुमारो, ततो तस्स तं दट्ठूण रोसो जाओ, इत्थंतरे सूइयाए गावीए पणोल्लिओ पडिओ, ताहे तेहिं उक्कुट्ठिकलयलो कओ, इमं चऽणेहिं भणियं–तं बलं तुज्झ कविट्ठपाडणं च कहिं गयं ?, ताहे तेण तत्तो पलोइयं, दिट्ठो यऽणेण सो पावो, ताहे अमरिसेणं तं गाविं अग्गसिंगेहिं गहाय उड्ढमुव्वहइ, सुदुब्बलस्सावि सिंधस्स किं सियालेहिं बलं लंघिज्जइ ?, ताहे चेव नियत्तो, इमो दुरप्पा अज्जवि मम रोसं वहइ, ताहे सो नियाणं करेइ–'जइ इमस्स तवनियमबंभचेरस्स फलमत्थि तो आगमेस्साणं अपरिमियबलो भवामि' तत्थ सो अणालोइयपडिक्कंतो महासुक्के उववण्णो, तत्थुक्कोसट्ठितीओ देवो जातो, ततो चइऊण पोयणपुरे नगरे पुत्तो पयावइस्स मिगावईए देवीए कुच्छिंसि उववण्णो, तस्स कहं पयावती नामं ?, तस्स पुव्विं रिउपडिसत्तुत्तिनामं होत्था, तस्स य भद्दाए देवीए अयले नामं कुमारे होत्था, तस्स य अयलस्स भगिणी मियावती नाम दारिया, अतीव रूववती, सा य उम्मुक्कबालभावा सव्वालंकारविभूसिया पिउपायवंदिया गया, तेण सा

Jain Education Inte For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उच्छंगे निवेसिया, सो तीसे रूवे जोवणे य अंगफासे य मुच्छिओ, तं विसज्जेत्ता पउरजणवयं वाहरइ, ताहे भणइ–जं एत्थ रयणं उप्पज्जइ तं कस्स ?, ते भणंति–तुब्भं, एवं तिन्नि वारा साहिते सा चेडी उवट्ठि(ट्ठवि)या, ताहे लज्जिया निग्गया, तेसिं सवेसिं कूवमाणाणं गंधव्वेण विवाहेण सयमेव विवाहिया, उप्पाइयाऽणेणं भारिया सा, भद्दा पुत्तेण अयलेण समं दक्खिणापहे माहिस्सिरिं पुरिं निवेसेइ, महंतीए इसरीएत्ति माहेस्सरी, अयले मायं ठवेऊण पिउमूलमागओ, ताहे लोएण पयावती नामं कयं, पया अणेण पडिवण्णा पयावतित्ति, वेदेऽप्युक्तम्–"प्रजापतिः स्वां दुहितरमकामयत" ताहे महासुक्काओ चइऊणं तीए मियावतीए कुच्छिंसि उववण्णो, सत्त सुविणा दिट्ठा, सुमिणपाढगेहिं पढमवासुदेवो आइट्ठो, कालेण जातो, तिण्णि य से पिट्ठिकरंडका तेण से तिविट्ठू नामं कयं, मायाए पडिमक्खिओ उण्हतेल्लेणंति, जोवणगमणुप्पत्तो। इओ य महामंडलिओ आसग्गीवो राया, सो निमित्तियं पुच्छइ–कतो मम भयंति ?, तेण भणियं–जो चंडमेहदूयं आधरिसेहित्ति, अवरं ते य महाबलवगं सीहं मारेहिति, ततो ते भयंति, तेण सुयं, जहा पयावतिपुत्ता महाबलवगा, ताहे तत्थ दूयं पेसेइ, तत्थ य अंतेपुरे पेच्छणयं वट्टइ, तत्थ य दूओ पविट्ठो, राया उट्ठिओ, पेच्छणयं भग्गं, कुमारा पेच्छणगेण अक्खित्ता भणंति–को एस ?, तेहिं भणियं–जहा आसग्गीवरण्णो दूओ, ते भणंति–जाहे स वच्चेज्जा ताहे कहेज्जह, सो राइणा पूइऊण विसज्जिओ, पधाविओ अप्पणो विसयस्स, कहियं कुमाराणं, तेहिं गंतूण अद्धप्पहे हओ, तस्स जे सहाया ते सवेवि दिसोदिसिं पलाया, रण्णा सुयं–जहा आहरिसिओ दूओ, संभंतेणं नियत्तिओ, ताहे रण्णा बिउणतिउणं दाऊण मा हु रण्णो साहिज्जसु जं कुमारेहिं कयं, तेण भणियं–न साहेमि, ताहे जे ते पुरओ गया तेहिं सिट्ठं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपोद्घात-निर्युक्तिः ॥२५०॥

जहा आधरिसिओ दूओ, ताहे सो राया कुविओ, तेण दूएण नायं–जहा रन्नो पुवं कहिएलयं, जहावत्तं सिट्ठं, ततो अस्स-गीवेण अन्नो दूओ पेसिओ, वच्च पयावइं गंतूण भणाहि–मम सालिं रक्खाहि कसिज्जमाणं, गतो दूओ, रन्ना कुमारा उवलद्धा–किह अकाले मच्चू खवलिओ ?, तेण अम्ह अवारए चेव जत्ता आणत्ता, राया पहाविओ, ते भणंति–अम्हे वच्चामो, ते रुंभंता मड्डाए गता, गंतूणं खेत्तए भणंति–किह अन्ने रायाणो रक्खियाइया ?, ते भणंति–आसहत्थिरहपुरिसपा-गारं काऊणं, केच्चिरं ?, जाव करिसणं पविट्ठं, तिवट्ठ भणति–को एच्चिरमच्छइ ?, मम तं पएसं दरिसेह, तेहिं कहियं–एयाए गुहाए, ताहे कुमारो रहेण तं गुहं पविट्ठो, लोगेण दोहिवि पासेहिं कलयलो कओ, सीहोऽविय असंभंतो निग्गओ, कुमारो चिंतेइ–एस पादेहिं अहं रधेण, विसरिसं जुद्धं, असिखेडगहत्थो रहाओ उइन्नो, ताहे पुणोऽवि चिंतेइ–एस दाढाणखायुधो अहमसिखेडगेण, एवमवि असमंजसं, तंपिऽणेण असिखेडगं छड्डियं, सीहस्स अमरिसो जाओ–एगं ता रहेण गुहमतिगतो एगागी, बितियं भूमिं ओइण्णो, ततियं आयुधाणि विमुक्काणि, अज्ज णं विणिवाएमित्ति महया अव-तालिएणं वयणे उक्कंदं काऊण संपत्तो,ताहे कुमारेण एगेण हत्थेण उवरिल्लो उट्ठो एगेणं हेट्ठिल्लो गहिओ, तओ तेण जुन्न-पडगोविव दुहा काऊण मुक्को, ताहे लोगेण कलयलो कओ, अहासन्निहियाए देवयाए आभरणवत्थकुसुमवरिसं वरिसियं, ताहे सीहो तेण अमरिसेण फुरफुरेंतो अच्छइ, एवं नाम अहं कुमारएण जुद्धेण मारिओत्ति, तं च किर कालं भगवओ गोयमसामी रहसारही आसि, तेण भण्णति–मा तुमं अमरिसं वहाहि, एस नरसीहो तुमं मियाधिराओ, ता जति सीहो सीहेण मारिओ को एत्थ अवमाणो ?, ताणि सो वयणाणि मधुमिव पिबति, सो मरित्ता नरए उववण्णो, सो कुमारो

महावीर-भवाः ॥२५०॥

Jain Education Internat For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्तिः

तं चम्मं गहाय नगरस्स पहाविओ, ते य गामेल्लए भणइ–गच्छह भो! तस्स घोडयग्गीवस्स कहेह, जहा अच्छसु वीसत्थो, तेहिं गंतूण सिट्ठं, रुट्ठो, दूयं विसज्जेइ–एए पुत्ते तुमं मम ओलग्गाए पट्ठवेहि, तुमं महल्लो, जाहे पेच्छामि सक्कारेमि रज्जाणि य देमि, तेण भणियं–अच्छंतु कुमारा, सयं चेव णं ओलग्गामित्ति, ताहे सो भणति–किं न पेसेसि?, पेसेहि आउ जुज्झसज्जो निग्गच्छेति, सो दूओ तेहिं आधरिसित्ता धाडिओ, ताहे सो आसग्गीवो सबबलेण उवट्ठिओ, इयरेऽवि देसंते ठिया, सुबहुं कालं जुज्झिऊण हयगयरहनरादिक्खयं च पिच्छिऊण कुमारेण दूओ पेसिओ, जहाऽहं च तुमं च दोन्निवि जुद्धं संपलग्गामो, किं च बहुएण अकारिजणेण मारिएण?, एवं होउत्ति, बिइयदिवसे रहेहिं संपलग्गा, जाहे आउहाणि खीणाणि ताहे चक्कं मुयइ, तं तिविट्ठुस्स तुंबगउरे पडियं, तेणेव सीसं छिन्नं, देवेहिं च घुट्ठं जहेस तिविट्ठू पढमो वासुदेवो उप्पन्नोत्ति, ता सबे रायाणो पणिवायमुवगया, ओवतियं अद्धभरहं, कोडियसिला दंडबाहाहिं धारिया, एयं रहावत्तपबयसमीवे जुद्धमासि, एवं परिहायमाणे बले कण्हेण किर जण्णुगाणि जाव किहवि पाविया, तिविट्ठू चुलसीतिं वाससयसहस्साइं सबाउयं पालइत्ता कालमासे कालं काऊण सत्तमाए पुढवीए अप्पतिट्ठाणे नरए तेत्तीसं सागरोबमट्ठितीओ नेरइओ उयउन्नो : अयमासां भावार्थः, अक्षरार्थस्त्वभिधीयते–राजगृहे नगरे विश्वनन्दिनाम राजा अभूत्, विशाखभूतिश्च तस्य युवराजः, तस्य धारिणीदेव्या विश्वभूतिनाम पुत्र आसीत्, विशाखनन्दिश्चेतरस्य, राज्ञ इत्यर्थः, तत्रेत्थमधिकृतो मरीचिजीवः 'रायगिहे विस्सभूइत्ति' राजगृहे नगरे विश्वभूतिर्नाम विशाखभूतिसुतः क्षत्रियोऽभवत्, तत्र च वर्षकोटी आयुष्कमासीत्, तस्मिंश्च भवे वर्षसहस्रं दीक्षा–प्रव्रज्या कृता, सम्भूतयतेः पार्श्वे ॥ तत्रैव—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुत्तासिओ महुराए सनिआणो मासिएण भत्तेण । महसुक्के उववन्नो तओ चुओ पोअणपुरम्मि ॥ ४४६ ॥
पुत्तो पयावइस्सा मिगावई[देवि]कुच्छिसंभवो भयवं । नामेण तिविट्ठुत्ति आई आसी दसाराणं ॥ ४४७ ॥

गाहागमनिका–पारणकप्रविष्टो गोत्रासितो मथुरायां निदानं चकार, मृत्वा च सनिदानोऽनालोचितापतिक्रान्तः अन्ते मासिकेन भक्तेन महाशुक्रे कल्पे उपपन्न उत्कृष्टस्थितिर्देव इति, ततो महाशुक्रात् च्युतः, पोत्तनपुरे नगरे पुत्रः प्रजापते राज्ञः मृगावतीदेवीकुक्षिसम्भूतो, नाम्ना त्रिपृष्ठः, आदिः–प्रथम आसीत् दसाराणां ॥ तत्र वासुदेवत्वं च चतुरशीति–(ग्रंथाग्रं० ९६००) वर्षशतसहस्राणि पालयित्वा अधः सप्तमनरकपृथिव्यामप्रतिष्ठाने नरके त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमस्थितिर्नारकः सञ्जात इति, अमुमेवार्थं प्रतिपादयन्नाह—

चुलसीइमप्पइट्ठे सीहो नरएसु तिरिअमणुएसु । पियमित्तचक्कवट्टी मुआ विदेहाइ चुलसीइ ॥ ४४८ ॥

गाहागमनिका–चतुरशीतिवर्षशतसहस्राणि वासुदेवभवे खल्वायुष्कमासीत्, तमनुभूय अप्रतिष्ठाने नरके समुत्पन्नः, तस्मादप्युद्धृत्य सिंहो बभूव, मृत्वा च पुनरपि नरक एवोत्पन्न इति, 'तिरियमणुएसु'त्ति पुनः कतिचिद्भवग्रहणानि तिर्यङ्मनुष्येषूत्पद्य 'पियमित्तचक्कवट्टी मुआ विदेहाए चुलसीति'त्ति अपरविदेहे मूकायां राजधान्यां धनञ्जयनृपतेर्धारणिदेव्याः प्रियमित्राभिधानश्चक्रवर्त्ती समुत्पन्नः, तत्र चतुरशीतिपूर्वसहस्राण्यायुष्कमासीदिति गाथार्थः ॥

पुत्ता धणंजयस्सा पुट्ठिल परियाउ कोडि सवट्ठे । नंदण छत्तग्गाए पणवीसाउं सयसहस्सा ॥ ४४९ ॥

तत्रासौ प्रियमित्रः पुत्रो धनञ्जयस्य धारणिदेव्याश्च भूत्वा चक्रवर्त्तिभोगान् भुक्त्वा कथञ्चित् सञ्जातसंवेगः सन् पोट्टिल'इति प्रौष्टिलाचार्यसमीपे प्रव्रजितः, 'परियाओ कोडि सवट्ठे'त्ति प्रव्रज्यापर्यायो वर्षकोटिर्बभूव, मृत्वा महा-

Jain Education Inte For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शुक्रे कल्पे सर्वार्थविमाने सप्तदशसागरोपमस्थितिर्देवोऽभवत्, 'णंदण छत्तग्गाए पणवीसाउं सयसहस्से'ति सर्वार्थसिद्धाच्च्युत्वा छत्रायां नगर्यां जितशत्रुनृपतेर्भद्रादेव्या नन्दनो नामकुमार उत्पन्न इति, पञ्चविंशतिवर्षशतसहस्राण्यायुष्कमासीदिति गाथार्थः ॥ तत्र च बाल एव राज्यं चकार, चतुर्विंशतिवर्षशतसहस्राणि राज्यं कृत्वा ततः—

पव्वज्ज पुट्ठिले सयसहस्स सव्वत्थ मासभत्तेणं । पुप्फुत्तरे उववन्नो तओ चुओ माहणकुलम्मि ॥ ४५० ॥

गाहागमनिका–राज्यं विहाय प्रव्रज्यां कृतवान् 'पोट्ठेल'त्ति प्रोष्टिलाचार्यान्तिके, 'सयसहस्स'त्ति वर्षशतसहस्रं यावदिति, कथं ?– 'सर्वत्र मासभक्तेने'ति अनवरतमासोपवासेनेति, अस्मिन् भवे विंशतिभिः कारणैस्तीर्थकरनामगोत्रं कर्म्म निकाचयित्वा मासिकया सँलेखनयाऽऽत्मानं क्षपयित्वा षष्टिं भक्तानि विहाय आलोचितप्रतिक्रान्तो मृत्वा 'पुप्फुत्तरे उववन्नो' त्ति प्राणतकल्पेषु पुष्पोत्तरावतंसके विंशतिसागरोपमस्थितिर्देव उत्पन्न इति, 'ततो चुतो माहणकुलंमि'त्ति ततः–पुष्पोत्तरात् च्युतो ब्राह्मणकुण्डग्रामे नगरे सोमिलस्य ब्राह्मणस्य देवानन्दायाः पत्न्याः कुक्षौ समुत्पन्न इति गाथार्थः ॥ कानि पुनस्तानि विंशतिकारणानि यैस्तीर्थकरनामगोत्रं कर्म्म तेनोपनिबद्धमित्यत आह—

अरिहंता० ॥ ४५१ ॥ दंसण० ॥ ४५२ ॥ अप्पुव्व० ॥ ४५३ ॥ पढम० ॥ ४५४ ॥ तंच० ॥४५५॥ नियमा० ॥४५६॥

एता ऋषभदेवाधिकारे व्याख्यातत्वान्न विव्रियन्ते ॥

माहणकुंडग्गामे कोडालसगुत्तमाहणो अत्थि । तस्स घरे उववन्नो देवाणंदाइ कुच्छिंसि ॥ ४५७ ॥

अस्या व्याख्या–पुष्पोत्तराच्च्युतो ब्राह्मणकुण्डग्रामे नगरे कोडालसगोत्रो ब्राह्मणः सोमिलाभिधानोऽस्ति, तस्य गृहे उत्पन्नः देवानन्दायाः कुक्षाविति गाथार्थः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओं नमो वीतरागाय.

साम्प्रतं वर्द्धमानस्वामिवक्तव्यतानिबद्धां द्वारगाथामाह—

सुमिणऽवहार १ मभिग्गह २ जम्मण ३ मभिसेय ४ वुद्धि ५ सरणं ६ च ।
भेसण ७ विवाह ८ ऽवचे ९ दाणे १० संबोह ११ निक्खमणे १२ ॥ ४५८ ॥

प्रथमं स्वप्ना वक्तव्याः, यान् तीर्थकरजनन्यः पश्यन्ति, यथा च देवानन्दया प्रविशन्तो निष्कामन्तश्च दृष्टाः, त्रिशलया च प्रविशन्त इति, 'अवहार'त्ति अपहरणमपहारः स वक्तव्यो, यथा भगवान् अपहृत इति, 'अभिग्गहो'त्ति अभिग्रहो वक्तव्यो, यथा भगवता गर्भस्थेन गृहीतः, 'जम्मण'त्ति जन्मविधिर्वक्तव्यः, 'अभिसेय'त्ति अभिषेको वाच्यः, यथा विबुधनाथाः कुर्वन्ति, 'वुद्धि'त्ति वृद्धिर्वक्तव्या भगवतो, यथाऽसौ वृद्धिं जगाम, 'सरणं'ति जातिस्मरणं वक्तव्यं, 'भेसण'त्ति यथा देवेन भेषितस्तथा वक्तव्यं, तथा विवाहविधिर्वाच्यः, 'अवच्च'त्ति अपत्यं वक्तव्यं, 'दाण'त्ति निष्क्रमणकाले दानं वक्तव्यं, 'संबोह'त्ति सम्बोधनविधिर्वक्तव्यो, यथा लोकान्तिकैः सम्बोधितः, 'णिक्खमणे'त्ति निष्क्रमणे च यो विधिरसौ वक्तव्यः ॥ अवयवार्थं तु भाष्यकार एव वक्ष्यति, तत्र स्वप्नद्वारमभिधीयते—"भयवं तिनाणोवगए चुए, सो चइस्सामित्ति जाणइ, चयमाणे न जाणइ, समयस्य छद्मस्थोपयोगाविषयत्वात्, चुएमित्ति जाणइ, जंरयणिं देवाणंदाए कुच्छिंसि गब्भत्ताए उववन्ने तं रयणिं सा सयणिज्जंसि सुत्तजागरा इमे चोद्दस महासुमिणे पासइ, तथा चाह—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अथ भगवन्त महावीरस्य वक्तव्यता संबंधेः स्वप्न, अपहार, अभिग्रह आदि द्वादश-द्वाराणाम् वर्णनं क्रियते|

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

गय १ वसह २ सीह ३ अभिसेय ४ दाम ५ ससि ६ दिणयरं ७ झयं ८ कुंभं ९।
पउमसर १० सागर ११ विमाणभवण १२ रयणुच्चय १३ सिहिं १४ च ४६ ॥ भा०

गजं वृषभं सिहं अभिषेकं, स चाभिषेकः श्रियः परिगृह्यते, दाम–पुष्पदाम रत्नविचित्रं, शशिनं दिनकरं ध्वजं कुम्भं पद्मसरः, पद्मभूषितं सरः पद्मसर इति समासः, सागरं च, तथा विमानं च तद्भवनं च विमानभवनं, वैमानिक–देवनिवास इत्यर्थः, अथवा सर्वतीर्थकरविषया सामान्येयं गाथा, ततोऽयमर्थः–वैमानिकप्रच्युतमातरो विमानं पश्यन्ति, अधोलोकोद्भूतमातरो भवनं, न तूभयमिति ॥

एए चोद्दस सुमिणे पासइ सा माहणी सुहपसुत्ता। जंरयणिं उववन्नो कुच्छिंसि महायसो वीरो ॥४७॥ भा०

एतान् चतुर्दश महास्वप्नान् पश्यति सा ब्राह्मणी सुखप्रसुप्ता यस्यां रजन्यामुपपन्नः कुक्षौ महायशा वीरः, पश्यतीति वर्त्तमाननिर्देशः पूर्ववत्, पाठान्तरं वा 'एए चोद्दस सुमिणे पेच्छिय सा माहणी', ततश्च दृष्टवतीति गाथार्थः ॥ तए णं सा पासित्ता पडिबुद्धा हट्ठतुट्ठा उसभदत्तस्स माहणस्स कहेइ, से य एवं वयासी–उराला णं तुमे देवाणुप्पिए! सुमिणा दिट्ठा, तं अत्थलाभो देवाणुप्पिए! भोगलाभो देवाणुप्पिए! पुत्तलाभो देवाणुप्पिए! सोक्खलाभो देवाणुप्पिए!, एवं खलु तुमं देवाणुप्पिए! नवण्हं मासाणं अद्धट्ठमाणं राइंदियाणं वइक्कंताणं सुकुमालपाणिपायं अहीणपडिपुण्णपंचेंदियसरीरं सवलक्खणोववेयं दारयं पयाहिसि, से य उम्मुक्कबालभावे सवविज्ञाठाणपरिनिट्ठिए भविस्सइ, तए णं सा देवानंदा एयमट्ठं सोच्चा हट्ठतुट्ठा एवं वयासी–एवमेयं देवाणुप्पिया! अवितहमेयं देवाणुप्पिया! असंदिद्धमेयं देवाणुप्पिया! इच्छियं तुम्भे वयह इति। गतं स्वप्नद्वारम्,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

अधुनाऽपहारद्वारमभिधीयते–'तेणं कालेणं तेणं समएणं सक्के नामं देविंदे देवराया वज्जपाणी सोहम्मे कप्पे सोहम्मवडिंसए विमाणे सभाए सुहम्माए सक्कंसि सीहासणंसि सुहनिसन्ने दिवाइं भोगाइं भुंजमाणे इमं जंबुद्दीवं दीवं कहंचि आभोएइ, तत्थ समणं भयवं महावीरं देवाणंदाए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंतं पासित्ता हट्ठतुट्ठे हरिसवसविसप्पमाणहियए सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठेत्ता पायपीढातो पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता नाणामणिरयणमंडियातो पाउयातो ओमुयइ, ओमुइत्ता एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ, करित्ता तित्थयराभिमुहे सत्तट्ठ पयाइं अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता वामं जाणुं अंचेइ, उत्पाटयतीत्यर्थः, दाहिणं जाणुं धरणितलंसि निहट्टु तिक्खुत्तो मुद्धाणं धरणितलंसि निवाडेइ, निवाडित्ता पच्चुन्नमइ, ततो करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी–नमोत्थु णं अरहंताणं भगवंताणं आइगराणं जाव सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपत्ताणं, नमोत्थु णं समणस्स भगवतो महावीरस्स (आइगरस्स) तित्थगरस्स जाव सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपाविउकामस्स, वंदामि णं भगवंतं तत्थ गयं इहगतेत्तिकट्टु वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे संनिसण्णे। तए णं सक्कस्स देविंदस्स देवरन्नो अयमेयारूवे संकप्पे समुप्पज्जित्था–उप्पण्णे खलु समणे भयवं महावीरे देवाणंदाए माहणीए कुच्छिंसि, तन्न एयं भूयं वा भवइ वा भविस्सइ वा जण्णं अरहंता वा चक्कवट्टी वा बलदेवा वा वासुदेवा वा अंतकुलेसु वा पंतकुलेसु वा तुच्छकुलेसु वा दरिद्दकुलेसु वा भिक्खागकुलेसु वा आयाइंसु वा आयायंति वा आयाइस्संति वा, एवं खलु अरहंता वा जाव वासुदेवा उग्गकुलेसु वा भोगकुलेसु वा रायन्नकुलेसु वा इक्खागुकुलेसु वा अन्नयरेसु वा तहप्पगारेसु विसुद्धजाइएसु कुलेसु महंतं रज्जसिरिं कारेमाणेसु गब्भं वक्कमिंसु वा वक्कमंति वा वक्कमिस्संति वा,

Jain Education Inter... For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

अत्थि पुण एस भावे लोगच्छेरयभूए अणंताहिं उस्सप्पिणिओसप्पिणीहिं वइक्कंताहिं समुप्पज्जइ, जहा नीयागोयस्स कम्मस्स उदएणं अरहंता वा चक्कवट्टी वा बलदेवा वा वासुदेवा वा अंतकुलेसु जाव भिक्खागकुलेसु वा आयाइंसु वा आयायंति वा आयाइस्संति वा, नो चेव णं जोणीतो निक्खमिंसु वा निक्खमंति वा निक्खमिस्संति वा, तं जीयमेयं तीतपच्चुप्पन्नअणागयाणं सक्काणं देविंदाणं देवराईणं अरहंते भगवंते तहप्पगारेहिंतो अंताइकुलेहिंतो तहप्पगारेसु उग्गकुलेसु जाव विसुद्धजाइकुलेसु साहरावेत्तए, तं सेयं खलु समणं भयवं महावीरं चरमतित्थयरं माहणकुंडग्गामातो नगरातो खत्तियकुंडग्गामे नयरे सिद्धत्थस्स खत्तियस्स कासवगोत्तस्स भारियाए तिसलाए खत्तियाणीए वासिट्ठगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरावेत्तए, जेऽवियणं से तिसलाए गब्भे तं देवानंदाए कुच्छिंसि, एवं संपेहित्ता हरिणेगमेसिं पायत्ताणियाहिवइं देवं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी–एवं खलु समणं भयवं महावीरं देवानंदाकुच्छीतो तिसलाए कुच्छिंसि साहरह, तए णं से हरिणेगमेसी पायत्ताणीयाहिवई एयमट्ठं हट्ठतुट्ठे विणएणं सम्मं पडिसुणित्ता उत्तरपुरच्छिमं दिसिभागमवक्कम्म एक्कंपि दोच्चंपि वेउव्वियसमुग्घाएण समोहणित्ता उत्तरवेउव्वियं रूवं विउव्वइ, विउव्वित्ता तुरियाए गईए जेणेव देवाणंदा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता आलोए भगवतो महावीरस्स पणामं करेइ, करित्ता अणुजाणउ मं भयवंतिकट्टु देवाणंदाए सपरियणाए ओसोयणिं दलेइ २ त्ता दिव्वेण पभावेणं करयलपुडेहिं अबाबाहं गेण्हइ गेण्हेत्ता बासीईए राइंदिएसु वइक्कंतेसु तेसीइमे राइंदिए वट्टमाणे जे से वासाणं तच्चे मासे पंचमे पक्खे आसोयबहुलतेरसी तंमि देवाणंदाए माहणीए कुच्छीतो तिसलाए खत्तियाणीए कुच्छिंसि अबाबाहं साहरइ, जे से तिसलाए गब्भे तं देवाणंदाए कुच्छिंसि साहरइ, साहरइत्ता सट्ठाणे गतो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सक्कस्स कहेइ। भयवंपि तिनाणोवगए साहरिज्जिसामीति जाणइ, साहरिज्जमाणे जाणइ, संहरणस्यानेकसामायिकतया छद्मस्थोपयोगविषयत्वात्, साहरिएमित्ति जाणइ, जंरयणिं च णं भयवं देवाणंदाए कुच्छीतो तिसलाए कुच्छिंसि साहरिए तंरयणिं सा देवाणंदा ते सुमिणे तिसलाए हडे पासित्ताणं पडिबुद्धा, तिसलावि य णं मणोरमंसि सयणिज्जंसि सुत्तजागरा ते चोद्दस महासुमिणे पासित्ताणं पडिबुद्धा, ततो सिद्धत्थस्स साहइ, सोऽवि साभाविएणं बुद्धिपगरिसेणं तेसिं सुमिणाणं अत्थं परिभावइत्ता एवं वयासी–उराला णं तुमए देवाणुप्पिए! सुमिणा दिट्ठा, तं अम्हं कुलकरं कित्तिकरं सुकुमालपाणि-पायं अहीणपडिपुन्नपंचिंदियसरीरं दारगं पयाहिसि, ततो तिसला एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा तं वयणं सम्मं पडिसुणइ, तए णं सिद्धत्थे खत्तिए पच्चूसकालसमए सुमिणपाढए सद्दावित्ता आपुच्छइत्ति, तेवि सुमिणसत्थत्थं परिभाविऊण भणंति–चाउरंतचक्कवट्टी राया वा भविस्सइ, जिणे वा तेलोक्कनायए धम्मवरचक्कवट्टी वा ॥ अमुमेवार्थं सङ्कृह्याह—

अह दिवसे बासीइ वसइ तहिं माहणीइ कुच्छिंसि। चिंतेइ सुहम्मवई साहरिउं जे जिणं कालो ॥ ४८ ॥ भा०

अथ दिवसान् व्यशीतिं वसति तस्यां ब्राह्मण्याः कुक्षौ, 'अथ' अनन्तरमेतावत्सु दिवसेष्वतिक्रान्तेषु चिन्तयति सौधर्म्मपतिः संहर्त्तुं, जे इति निपातः पादपूरणार्थः, तथा चाह वररुचिः स्वप्राकृतलक्षणे–'इजेराः पादपूरणे' इति, जिनं कालो वर्त्तते ॥ किमिति संह्रियते इत्याह—

अरहंत चक्कवट्टी बलदेवा चेव वासुदेवा य। एए उत्तिमपुरिसा न हु तुच्छकुलेसु जायन्ति ॥ ४९ ॥ भा०

सुगमा। नवरं तुच्छकुलेषु–असारकुलेषु ॥ पुनः केषु कुलेषु जायन्त इत्याह—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उग्गकुलभोगखत्तियकुलेसु इक्खागनायकोरवे । हरिवंसे य विसाले जायंति तहिं पुरिससीहा ॥ ५० ॥ भा०

उग्रकुलेषु भोगकुलेषु क्षत्रियकुलेषु इक्ष्वाकुकुलेषु ज्ञातकुलेषु कौरव्यकुलेषु हरिवंशे च विशाले आयान्ति–आगच्छन्ति उत्पद्यन्ते तत्र–उग्रकुलादौ पुरुषसिंहाः–तीर्थकरादयः ॥ यस्मादेवं तस्माद्भुवनगुरुभक्त्या चोदितो देवराजो हरिणेगमेषिमभिहितवान्–एष भरतक्षेत्रचरमतीर्थकृत् प्रागुपात्तकर्मशेषपरिणतिवशात्तुच्छकुले जातस्तदयमितः संहृत्य क्षत्रिये स्थाप्यतामिति, स हि तदादेशात्तथैव चक्रे ॥ अमुमेवार्थं भाष्यकार एवाह—

अह भणइ णेगमेसिं देविंदो एस इत्थ तित्थयरो । लोगुत्तमो महप्पा उववन्नो माहणकुलम्मि ॥ ५१ ॥ भा०

अथानन्तरं भणति 'णेगमेसिं' हरिणेगमेषिं देवेन्द्रः–'एषः' भगवान् 'अत्र' ब्राह्मणकुले लोकोत्तमो महात्मा उत्पन्नः ॥ इदं चासाधु, ततश्चेदं कुरु—

खत्तियकुंडग्गामे सिद्धत्थो नाम खत्तिओ अत्थि । सिद्धत्थभारियाए साहर तिसलाए कुच्छिंसि ॥ ५२ ॥ भा०

क्षत्रियकुण्डग्रामे सिद्धार्थो नाम क्षत्रियोऽस्ति, तत्र सिद्धार्थभार्यायाः संहर त्रिशलायाः कुक्षौ ॥

बाढंति भाणिऊणं वासारत्तस्स पंचमे पक्खे । साहरइ पुव्वरत्ते हत्थुत्तरतेरसीदिवसे ॥ ५३ ॥ भा०

स हरिणैगमैषिः बाढमित्यभिधाय–अत्यर्थं करोम्यादेशं, शिरसि स्वाम्यादेशः इति उक्त्वा, वर्षारात्रस्य पञ्चमे पक्षे मासद्वये अतिक्रान्ते (संहरति) अश्वयुग्बहुलत्रयोदश्यां पूर्वरात्रे–प्रथमप्रहरद्वयान्ते हस्तोत्तरायाम्–उत्तरायामुत्तरफाल्गुनीनक्षत्रे त्रयोदशीदिवसे ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गय सीह वसह अभिसेय दाम ससि दिणयरं झयं कुंभं। पउमसर सागर विमाणभवण रयणुचय सिहिं च ॥५४॥
एए चोद्दस सुमिणे पासइ सा माहणी पडिनियत्ते। जंरयणिं अवहरितो कुच्छीउ महायसो वीरो ॥५५॥भा०॥

इदं गाथाद्वयं पूर्ववत्, नवरं इदं नानात्वं–पश्यति सा ब्राह्मणी प्रतिनिवृत्तान् यस्यां रजन्यामपहृतः कुक्षितो महायशा वीरः ॥

गयसीहवसहअभिसेयदामससिदिणयरं झयं कुंभं। पउमसर सागर विमाणभवण रयणुचय सिहिं च ॥५६॥
एए चोद्दस सुमिणे पासइ सा तिसलया सुहपसुत्ता। जंरयणिं साहरिओ कुच्छिंसि महायसो वीरो ॥५७॥

गाथाद्वयमपि सुगमं, गतमपहारद्वारम्, अधुनाऽभिग्रहद्वारम्–ततो णं सा तिसला ण्हाया कयकोउयमंगलोवयारा तं गब्भं नातिउण्हेहिं नाइसीएहिं नातितित्तेहिं नातिकडुएहिं नातिकसाएहिं नातिअंबिलेहिं नाइमहुरेहिं जं तस्स गब्भस्स हियं पत्थं तं देसे काले य आहारमाहारेमाणी विवित्तमउएसु सयणासणेसु सुहंसुहेण चिट्ठइ, जंरयणिं भयवं तिसलाए गब्भे साहरिते तं रयणिं सक्कवयणेणं तिरियजंभगा देवा विविहाइं मणिनिहाणाइं सिद्धत्थरायभवणंसि साहरंति, तं च नायकुलं हिरण्णेणं सुवण्णेणं धन्नेणं रज्जेणं बलेणं वाहणेणं कोट्ठागारेणं पुरेणं अंतेउरेणं जणवयपुत्तेहिं पसूहिं सावइज्जेण य अतीव २ अभिवड्ढइ, सिद्धत्थरायस्सविय सामंतरायाणो सवे वसमागया, तते णं भगवतो अम्मापिऊणमयमेयारूवे संकप्पे जाते–जप्पभिइं च णं अम्हं एस दारए कुच्छिंसि समागए तप्पभिइं च णं अम्हे हिरण्णेण वड्ढामो जाव सावइज्जेण वड्ढामो, तं जया णं अम्हं एस दारए जाते भविस्सइ तया एयस्स एयाणुरूवं गोण्णं नामधेज्जं करिस्सामो वद्धमाण इति, एवं ते मणोरहसहस्साइं

Jain Education Inter
For Private & Personal Use Only
www.jainelibrary.org

पकरेंति । भयवंपि माऊए अणुकंपाए निच्चलं अच्छइ, तए णं सा तिसला किं मे गब्भे हडे ? किं मे गब्भे मए ? जं एस मे गब्भे पुविं एजइ इयाणिं नो एजइत्तिकट्टु ओहयमणसंकप्पा चिंतासोगसागरसंपविट्ठा करयलपल्हत्थियमुही अट्टज्झाणोवगया भूमिगयदिट्ठीया झियाइ, तंपि य सिद्धत्थरायभवणं उवरयमुइंगतंतीतलतालनाडइज्जं जायं, ततो भगवया चिंतितं–किं मुइंगादिसद्दो न सुम्मइ ?, ततो ओहिणा नायवुत्तंतेण अंगुट्ठेगदेसो चालिओ, ततो सा तिसला हट्ठतुट्ठा जाया, सिद्धत्थरायभवणंपि पमुइयपक्कीलियं विहरइ, ततो भयवं चिंतेइ–ममं गब्भत्थेऽवि माउपितूणमेवं पडिबंधो तो जइ उम्मुक्कबालभावो देवदाणवपरियरिओ पव्वज्जं गिण्हिस्सामि ततो महंतमट्टज्झाणमेयासिं भविस्सइत्ति चिंतिऊण माउपिऊणमणुकंपाए सत्तमे मासे गब्भत्थो चेव अभिग्गहं गेण्हइ–'जाव एयाणि जीवंति ताव नाहं समणो भवामि' ॥ एतदेवाह— तिहिं नाणेहिं समग्गो देवीतिसलाए सो य कुच्छिंसि । अह वसइ सन्निगब्भो छम्मासे अद्धमासं च ॥ ५८ ॥ अह सत्तमम्मि मासे गब्भत्थो चेवऽभिग्गहं गेण्हे । नाहं समणो होहं अम्मापियरंमि जीवंते ॥ ५९ ॥ भा० ॥

'अथ' अपहारानन्तरं वसति, संज्ञी चासौ गर्भश्च संज्ञिगर्भः, क्व ?–देव्यास्त्रिशलायाः, स च कुक्षौ, आह–सर्वोऽपि गर्भस्थः संज्ञ्येव भवति, ततो विशेषणमिदमनर्थकं, न, दृष्टिवादोपदेशेन संज्ञित्वविशेषणात्, स च ज्ञानद्वयवानपि भवति तत आह–त्रिभिर्ज्ञानैः–मतिश्रुतावधिरूपैः समग्रः, कियन्तं कालं यावद्वसतीत्यत आह–षण्मासान् अर्द्धमासं च । अथ गर्भादारभ्य सप्तमे मासे तयोर्मातापित्रोर्गर्भप्रयत्नकरणेनात्यन्तं स्नेहमवबुध्य अहो ममोपर्यतीवानयोः स्नेहो, यद्यहमनयोर्जीवतोः प्रव्रज्यां गृह्णामि नूनं न भवत एवैतावित्यतो गर्भस्थ एवाभिग्रहं गृह्णाति, ज्ञानत्रयोपेतत्वात्, किंविशिष्टमित्याह–

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

नाहं श्रमणो भविष्यामि मातापित्रोर्जीवतोरिति ॥ गतमभिग्रहद्वारं, साम्प्रतं जन्मद्वारम्–तेणं कालेणं तेणं समएणं नवण्हं मासाणं अद्धट्ठमाणं राइंदियाणं वइक्कंताणं चेत्तसुद्धतेरसीदिवसे निप्फण्णसस्साए मेइणीए पमुइयपक्कीलिएसु जणवएसु सोमासु विसुद्धासु दिसासु अणुकूलंसि मारुयंसि पवायंसि अड्ढरत्तकालसमए हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेण आरोगा अरोगं दारयं पसूया, तंरयणिं च णं बहूहिं देवेहिं देवीहिं ओवयमाणेहिं उप्पयमाणेहिं एगालोए देवुज्जोए जाए, बहवे य वेसमणवयण-चोइया तिरियजंभगा देवा सिद्धत्थरायभवणंसि हिरण्णवासं सुवण्णवासं रयणवासं आभरणवासं पत्तवासं पुप्फवासं गंधवासं चुण्णवासं वासंति ॥ अमुमेवार्थमाह—

दोण्हं वरमहिलाणं गब्भे वसिऊण गब्भसुकुमालो । नवमासे पडिपुन्ने सत्त य दिवसे समइरेगे ॥६०॥ भा० ॥

द्वयोर्वरमहिलयोर्गर्भे उषित्वा गर्भे सुकुमारो गर्भसुकुमारः, प्रायोऽप्राप्तदुःख इत्यर्थः, कियन्तं कालं यावदित्याह–नव मासान् परिपूर्णान् सप्त दिवसान् सातिरेकान्–समधिकान् ॥

अह चेत्तसुद्धपक्खस्स तेरसी पुवरत्तकालम्मि । हत्थुत्तराहिं जातो कुंडग्गामे महावीरो ॥ ६१ ॥ भा० ॥

अथानन्तरं चैत्रस्य शुद्धपक्षस्य त्रयोदश्यां पूर्वरात्रकाले, प्रथमप्रहरद्वयान्ते इत्यर्थः, हस्तोत्तरासु जातः, हस्त उत्तरा यासां ता हस्तोत्तराः, उत्तरफाल्गुन्य इत्यर्थः, कुण्डग्रामे महावीरः जातः, जातकर्मादि दिक्कुमार्यादिनिर्वर्त्तितं पूर्ववदवसेयम् ॥ तथापि किञ्चित्प्रतिपादयन्नाह—

आभरणरयणवासं वुट्ठं तित्थंकरंमि जायंमि । सक्कोऽवि देवराया उवागतो आगया निहओ ॥ ६२ ॥ भा० ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

आभरणानि–कटककेयूरादीनि रत्नानि–इन्द्रनीलादीनि तद्वर्षं वृष्टं तीर्थकरे जाते, शक्रश्च देवराजस्तत्रैवोपागतः, तथा आगता महापद्मादयो निधयः ॥

तुट्ठातो देवीतो देवा आणंदिया सपरिसागा । भयवंमि वद्धमाणे तेलुक्कसुहावहे जाए ॥ ६३ ॥ भा० ॥

तुष्टा देव्यो देवा आनन्दिताः, सह पर्षदो यैर्येषां वा ते सपर्षत्काः, भगवति वर्द्धमाने त्रैलोक्यसुखावहे जाते सति ॥ गतं जन्मद्वारम्, अधुनाऽभिषेकद्वारं, तच्च ऋषभस्वामिवक्तव्यावनीयं, तथापि किञ्चित्प्रतिपादयति,

भवणवइवाणमंतरजोइसवासी विमाणवासी य । सविहीए सपरिसा चउविहा आगया देवा ॥ ६४ ॥ भा० ॥

भवनपतयश्च व्यन्तराश्च ज्योतिर्वासिनश्चेति द्वन्द्वः, तथा विमानवासिनश्च च सर्वेर्द्धा सपर्षदश्चागताश्चतुर्विधा देवाः ।

देवेहिं संपरिवुडो देविंदो गिण्हिऊण तित्थयरं । नेऊण मंदरगिरिं अभिसेअं तत्थ से कासी ॥ ६५ ॥ भा० ॥

देवैः संपरिवृतो देवेन्द्रो गृहीत्वा तीर्थकरं नीत्वा मन्दरगिरिं तत्राभिषेकं 'से' तस्य भगवतोऽकार्षीत् ॥

काऊण य अभिसेयं देविंदो देवदाणवेहिं समं । जणणीए अप्पइत्ता जम्मणमहिमं च कासीय ॥६६॥ भा० ॥

देवेन्द्रो देवदानवैः सार्द्धं, देवग्रहणाज्ज्योतिष्कवैमानिकपरिग्रहः, दानवग्रहणाद् भवनपतिव्यन्तरग्रहणम्, अभिषेकं कृत्वा ततो जनन्याः समर्प्य जन्ममहिमां नन्दीश्वरे स्वर्गे च कृतवान् ॥ साम्प्रतं यदिन्द्रादयो भुवननाथेभ्यो भक्त्या प्रयच्छन्ति तत्प्रदर्शयन्नाह—

खोमं कुंडलजुयलं सिरिदामं चेव देइ सक्को से । मणिकणगरयणवासं उवच्छुभे जंभगा देवा ॥ ६७ ॥ भा० ॥

Jain Education Intern... For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षौमं–देवदूष्यं कुण्डलयुगलं–कर्णाभरणं श्रीदाम अनेकरत्नखचितं दर्शनसुभगं ददाति शक्रः 'से' तस्मै भगवते, मणयः–चन्द्रकान्ताद्याः कनकं प्रतीतं रत्नानि–कर्केतनादीनि तद्वर्षमुपक्षिपन्ति जृम्भकाः व्यन्तरविशेषा देवाः ॥ एतदेवाह–वेसमणवयणसंचोइया उ ते तिरियजंभगा देवा । कोडिग्गसो हिरण्णं रयणाणि य तत्थ उवणेंति ॥६८॥ भा०॥

वैश्रमणवचनसञ्चोदितास्ते तिर्यग्लोके जृम्भकाः तिर्यग्जृम्भका देवाः कोट्यग्रशः–कोटीपरिमाणेन हिरण्यमघटितं (स्वर्णं) रत्नानि–इन्द्रनीलादीनि तत्रोपनयन्ति ॥ सिद्धत्थोऽवि राया भयवंमि तिहुयणनाहे जाते कोडुंबियपुरिसे सद्दावित्ता दसदेवसियं ठस्सुकं उक्करं अदेज्जं अमेज्जं अभडप्पवेसं सव्वत्थ सियपडागातिपडागं नाडगसहस्ससंकुलं महइमहोरसवं निवत्तावेइ, तते णं अम्मापियरो दारगस्स तइयदिवसे चंदसूरदंसणं करेंति, छट्ठदिवसे जागरियं करेंति, एक्कारसमे दिवसे अइक्कंते निवत्ते असुइजायकम्मकरणे संपत्ते बारसमे दिवसे विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावित्ता मित्तनाइसयणपरिजणं नायए य खत्तिए य भोयणवेलाए आमंतित्ता भोयणमंडवंसि तेहिं सद्धिं सुहासणवरगया विउलं असणं जाव साइमं परिभुंजेमाणा विहरंति, तए णं भुत्तुत्तरकालं ते विउलेण वत्थगंधमल्लालंकारेणं सक्कारेंति संमाणेंति सक्कारित्ता सम्माणित्ता एवं वयासी–पुव्विंपिय णं देवाणुप्पिया ! अम्हं एयारूवे संकप्पे समुप्पन्ने–जप्पभिइं च णं अम्हं एस दारए कुच्छिंसि समुप्पन्ने तप्पभिइं च णं अम्हे हिरण्णेणं वड्ढामो जाव एयस्स एयाणुरूवं गोण्णं नामधेज्जं करेस्सामो वद्धमाण इति, तं होउ णं अज्ज मणोहरसंपत्ती कुमारे नामेणं वद्धमाण इति नामधेज्जं करेंति । गतमभिषेकद्वारम्, अधुना वृद्धिद्वारं प्रतिपादयति–

Jain Education Inter For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

अह वड्ढइ सो भयवं दिवभोगचुओ अणुवमसिरीओ । दासीदासपरिवुडो परिकिण्णो पीढमद्देहिं ॥६९॥

अथ वर्द्धते भगवान् देवलोकाच्युतः अनुपमश्रीको दासीदासपरिवृतः, तथा परिकीर्णो व्याप्तः, पीठं मर्दयित्वा ये प्रत्यासन्ना उपविशन्ति ते पीठमर्दा–महानृपतिसुतास्तैः ॥

असियसिरओ सुनयणो बिंबोट्ठो धवलदंतपंतीओ । वरपउमगब्भगोरो फुल्लुप्पलगंधनीसासो ॥ ७० ॥ भा० ॥

इयं गाथा ऋषभदेवाधिकार इव व्याख्येया ॥ गतं वृद्धिद्वारम्, सम्प्रति जातिस्मरणद्वारमाह—

जाईसरो उ भयवं अप्परिवडिएहिं तिहि उ नाणेहिं । कंतीए बुद्धीए य अब्भहिओ तेहिं मणुएहिं ॥७१॥ भा०

इयमपि गाथा पूर्ववत् । उक्तं जातिस्मरणद्वारम्, अधुना भीषणद्वारम्–तए णं एवं वड्ढमाणे भयवं अट्टत्रासे जाते, सया भद्दए विणीए सूरे धीरे महापरक्कमे, तेणं कालेणं तेणं समएणं सक्के देविंदे देवराया ओहिणा भयवंतमालोइय पणमिय भयवतो सत्तगुणुक्कित्तणं करेइ–अहो भयवं बाले अबालभावे अबालपरक्कमे अवुड्ढे वुड्ढसीले महावीरे, न सक्को देवेण वा दाणवेण वा भेसेतुं परक्कमेण वा पराजिणित्तुं छलेण वा छलितुं, तत्थ एगो देवो सक्कस्स एयमट्ठम-सद्दहंतो जेणेव भयवं महावीरे तेणेव उवागतो, भयवं च पमयवणे चेडरूवेहिं समं सुंकलिखेड्डएण अभिरमइ, तत्थ तेसु रुक्खेसु मज्झे जो विवक्खियं रुक्खं पढमं विलग्गइ छिवइ वा सो चेडरूवाणि वहेइ, सो य देवो आगंतूण हेट्ठ-तो रुक्खस्स सामिभेसणट्ठं एगं महं उग्गविसं महाकायं अंजणपुंजनियरप्पगासं वियडफडाडोवकरणदच्छं चंडतिव्वरोसं दिव्वं दिट्ठीविससप्परूवं विउव्वित्ता अच्छइ, सामिणा अमूढेण वामहत्थेण सत्ततले उड्ढमुच्छूढो, ताहे देवो चिंतेइ -एत्थ ताव न

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छलितो, अह पुणरवि सामी तेंदूसगेण अभिरमइ, सो य देवो चेडरूवं विउविऊण सामिणा समं अभिरमइ, तत्थ सामिणा सो जितो, तस्स उवरिं सामी विलग्गो, तते णं से देवे सामिभेसणट्ठं एगं महं तालपिसायरूवं विउव्वित्ता पवहिउं पयत्तो, सोऽवि सामिणा दट्ठूण अभीएण (तहा) तलप्पहारेण आहतो जहा तत्थेव निवुड्डो, ताहे भीतो देवो चिंतेइ-एत्थवि न तिण्णो छलिउंति, पच्छा सामिं वंदित्ता गतो ॥ अमुमेवार्थमाह—

अह ऊणअट्ठवासस्स भयवतो सुरवराण मज्झंमि। संतगुणुक्कित्तणयं करेइ सक्को सुहम्माए ॥ ७२ ॥ भा० ॥

बालो अबालभावो अबालपरक्कमो महावीरो। नहु सक्को भेसेउं देवेहिं सइंदएहिंपि ॥ ७३ ॥ भा०॥

अथानन्तरमूनाष्टवर्षस्य भगवतः सुरवराणां मध्ये सन्तश्च ते गुणाश्च सद्भुणास्तेषामुत्कीर्त्तनं-संशब्दनं करोति शक्रो-देवराजः सभायां व्यवस्थितः, किम्भूतमित्याह- बालः अबालभावः-अबालस्वरूपः, भावशब्दः स्वरूपवाची, तथा न बालपराक्रमोऽबालपराक्रमः, पराक्रमः-चेष्टा, वीरः-कषायादिशत्रुजयं प्रति विक्रान्तो, महांश्चासौ वीरश्च महावीरः, 'नहु' नैव शक्यते भीषयितुं देवैः सेन्द्रैरपि ॥

तं वयणं सोऊणं अह एगो सुरो असद्दहंतो य। एइ जिणसंनिगासं तुरियं सो भेसणट्ठाए ॥ ७४ ॥ भा० ॥

तत् सद्भुणोत्कीर्त्तनरूपं शक्रवचनं श्रुत्वाऽथानन्तरमेकः सुरो-देवोऽश्रद्दधान 'एति' आगच्छति 'जिनसकाशं' जिनसमीपं 'तुरियं सो भेसणट्ठाए' त्वरितं-शीघ्रं 'स' विवक्षितो 'भीषणार्थं' भीषणनिमित्तं ॥ स चागत्येदं चक्रे—

सप्पं च तरुवरम्मी १ काउं तिंदूसणएण डिंभं च २। पट्ठीए मुट्ठीए इतो वंदिय वीरं पडिनियत्तो ॥७५॥ भा० ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

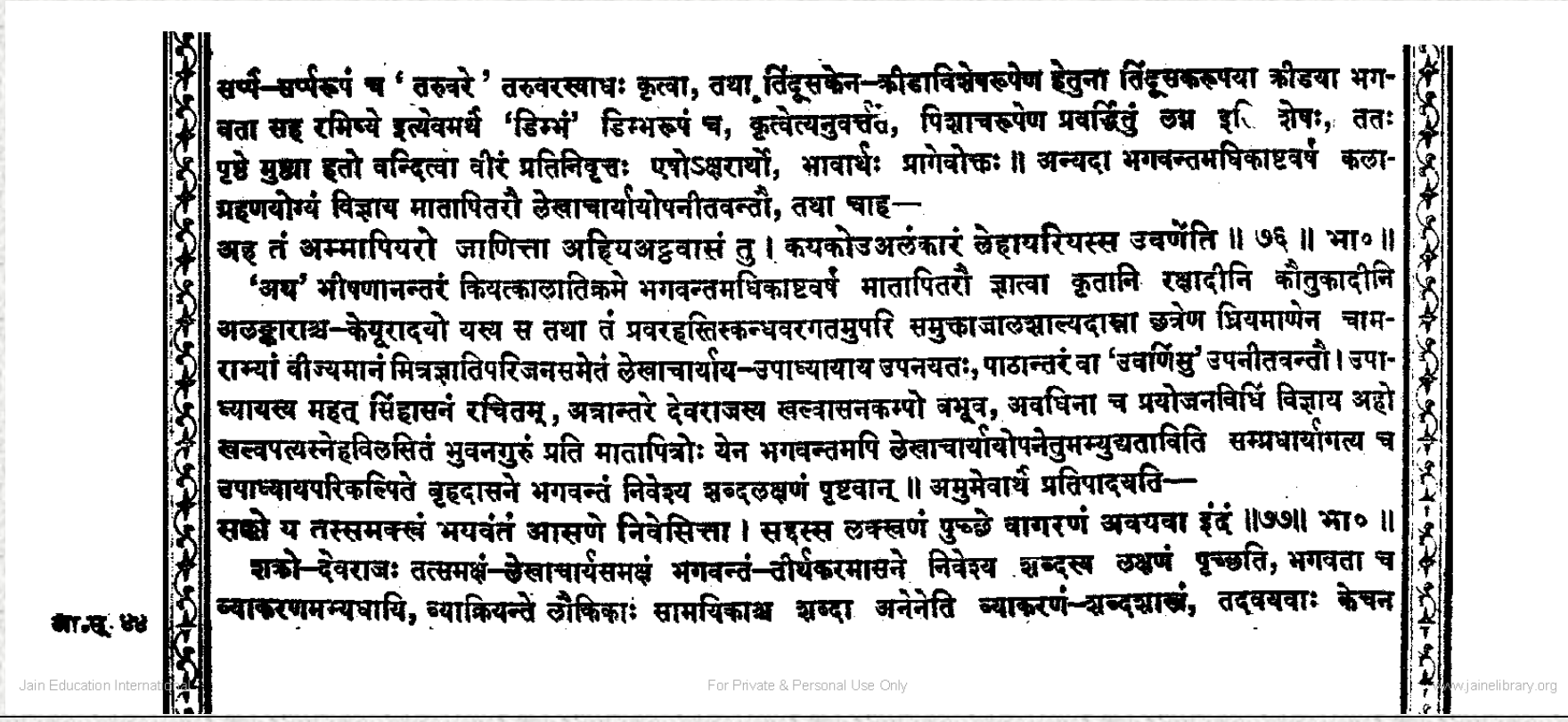

सर्प्प–सर्परूपं च 'तरुवरे' तरुवरस्याधः कृत्वा, तथा तिंदूसकेन–क्रीडाविशेषरूपेण हेतुना तिंदूसकरूपया क्रीडया भगवता सह रमिष्ये इत्येवमर्थं 'डिम्भं' डिम्भरूपं च, कृत्वेत्यनुवर्त्तते, पिशाचरूपेण प्रवर्द्धितुं लग्न इति शेषः, ततः पृष्ठे मुष्ट्या हतो वन्दित्वा वीरं प्रतिनिवृत्तः एतोऽक्षरार्थो, भावार्थः प्रागेवोक्तः ॥ अन्यदा भगवन्तमधिकाष्टवर्षं कलाग्रहणयोग्यं विज्ञाय मातापितरौ लेखाचार्यायोपनीतवन्तौ, तथा चाह—

अह तं अम्मापियरो जाणित्ता अहियअट्ठवासं तु । कयकोउअलंकारं लेहायरियस्स उवणेंति ॥ ७६ ॥ भा० ॥

'अथ' भीषणानन्तरं कियत्कालातिक्रमे भगवन्तमधिकाष्टवर्षं मातापितरौ ज्ञात्वा कृतानि रक्षादीनि कौतुकादीनि अलङ्काराश्च–केयूरादयो यस्य स तथा तं प्रवरहस्तिस्कन्धवरगतमुपरि समुक्काजालश्छात्यदाक्षा छत्रेण ध्रियमाणेन चामराभ्यां वीज्यमानं मित्रज्ञातिपरिजनसमेतं लेखाचार्याय–उपाध्यायाय उपनयतः, पाठान्तरं वा 'उवणिंसु' उपनीतवन्तौ। उपाध्यायस्य महत् सिंहासनं रचितम्, अत्रान्तरे देवराजस्य खल्वासनकम्पो बभूव, अवधिना च प्रयोजनविधिं विज्ञाय अहो खल्वपत्यस्नेहविलसितं भुवनगुरुं प्रति मातापित्रोः येन भगवन्तमपि लेखाचार्यायोपनेतुमभ्युद्यताविति सम्प्रधार्यागत्य च उपाध्यायपरिकल्पिते बृहदासने भगवन्तं निवेश्य शब्दलक्षणं पृष्टवान् ॥ अमुमेवार्थं प्रतिपादयति—

सक्को य तस्समक्खं भयवंतं आसणे निवेसित्ता । सद्दस्स लक्खणं पुच्छे वागरणं अवयवा इंदं ॥७७॥ भा० ॥

शक्रो–देवराजः तत्समक्षं–लेखाचार्यसमक्षं भगवन्तं–तीर्थकरमासने निवेश्य शब्दस्य लक्षणं पृच्छति, भगवता च व्याकरणमभ्यधायि, व्याक्रियन्ते लौकिकाः सामयिकाश्च शब्दा अनेनेति व्याकरणं–शब्दशास्त्रं, तदवयवाः केचन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपाध्यायेन गृहीतास्ते च सन्दर्भिताः, तत ऐन्द्रं व्याकरणं सञ्जातं, लोकश्च सर्वोऽपि विस्मयमुपागतः, शक्रेण च कथितं यथा भगवान् सर्वं जानाति, त्रिज्ञानोपेतत्वात् ॥ सम्प्रति विवाहद्वारमाह—

उम्मुक्कबालभावो कमेण अह जुव्वणं समणुपत्तो । भोगसमत्थं नाउं अम्मापियरो उ वीरस्स ॥ ७८ ॥ भा० ॥

क्रमेण उक्तप्रकारेण उन्मुक्तो बालभावो येन स उन्मुक्तबालभावः, 'अथ' अनन्तरं यौवनं वयोविशेषलक्षणं सम्यक् बालादिभावात्पश्चात् प्राप्तः समनुप्राप्तः, अत्रान्तरे भुज्यन्ते इति भोगाः–शब्दादयस्तेषु समर्थो भोगसमर्थस्तं भगवन्तं ज्ञात्वा, कौ ज्ञात्वेत्यत आह–मातापितरौ, भगवतो वीरस्य,

तिहिरिक्खंमि पसत्थे महंतसामंतकुलपसूयाए । कारेंति पाणिगहणं जसोयवररायकण्णाए ॥ ७९ ॥ भा० ॥

तिथिश्च ऋक्षं च तिथिऋक्षं, ऋक्षं–नक्षत्रं, तस्मिन् तिथिऋक्षे, प्रशस्ते–शोभने, महच्च तत् सामन्तकुलं तस्मिन् प्रसूतेति समासः, तस्याः कस्या इत्याह–यशोदा चासौ वरराजकन्या च यशोदवरराजकन्या तस्याः, पाणिग्रहणं मातापितरौ भगवन्तं कारयतः, अत्र महासामन्तकुलप्रसूताया इत्यनेनान्वयमहत्त्वमाह, वरराजकन्याया इत्यनेन तत्कालराजसंपद्युक्तत्वमाह ॥ गतं विवाहद्वारम्, अधुना अपत्यद्वारमाह—

पंचविहे माणुस्से भोगे भोत्तूण सह जसोदाए । तेयसिरिं व सुरूवं जणइ घ पियदंसणं धूयं ॥ ८० ॥ भा० ॥

पञ्चविधान्–पञ्चप्रकारान् मनुष्याणामेते मानुषास्तान् भोगान्–शब्दादीन् भुक्त्वा सह यशोदया भार्यया तेजसः श्रीः तेजःश्रीस्तामिव–तेजःश्रियमिव सुरूपं जनयति प्रियदर्शनां–प्रियदर्शनाभिधां धूतां–दुहितरम् । पाठान्तरं–'जणिंसु

Jain Education Inter For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पियदंसणं धूयं' वत्र जनितवानित्यर्थः, गतमपत्यद्वारम् ॥ एवं भगवान् वर्धमानोऽष्टाविंशतिवर्षो जातः, अत्रान्तरे भगवतो मातापितरौ कालगतौ, भगवानपि तीर्णप्रतिज्ञः प्रव्रज्याग्रहणाहितमतिर्नन्दिवर्द्धनपुरस्सरं स्वजनमापृच्छति स्म, स पुनराह—भगवन्! मा क्षारं क्षते निक्षिप, कियन्तमपि कालं प्रतीक्षस्व, भगवानाह—कियन्तं ?, स्वजन आह—वर्षद्वयं, भगवानाह—यद्येवं तर्हि भोजनादौ मम व्यापारो न वोढव्यः, एवं प्रतिपन्ने समधिकं वर्षद्वयं प्रासुकैषणीयाहारः शीतोदकमप्यपिबन् तस्थौ, न च प्राशुकेनापि जलेन सर्वस्नानं कृतवान्, केवलं लोकस्थित्या हस्तपादमुखमात्रप्रक्षालनं प्राशुकेन जलेन चकार, निष्क्रमणमहोत्सवे तु सचित्तोदकेन स्नातवान्, ब्रह्मचर्यं च सुविशुद्धं ततः प्रभृति यावज्जीवं परिपालितवान्, इह यदा भगवान् जातस्तदैवं लोके प्रसिद्धिरभूत्, यथा—एष चतुर्दश-स्वप्नसूचितो जात इति चक्रवर्त्ती भविष्यति, तत. एनां प्रसिद्धिमाकर्ण्य स्वस्वमातापितरैः श्रेणिकचण्डप्रद्योतादयो भगवत्पर्युपासनाय कुमारभूपाः प्रेषिताः, सम्प्रति तु भगवति घोरानुष्ठानमनुष्ठातुं प्रवृत्ते न एष चक्रवर्त्ती भविष्यतीति स्वं स्वं स्थानं प्रति गताः, भगवानपि तथा तिष्ठन् संवत्सरातिक्रमे महादानं दत्तवान्, लोकान्तिकैश्च प्रतिवोधितः, ततः पूर्णा-वधिः प्रव्रजितः ॥ अमुमेवार्थं लेशतः प्रतिपादयति निर्युक्तिकृत्—

हत्थुत्तरजोगेणं कुंडग्गामंमि खत्तिओ जचो । वज्जरिसभसंघयणो भवियजणविवोहतो वीरो ॥ ४५९ ॥
सो देवपरिग्गहिओ तीसं वासाइं वसइ गिहवासे । अम्मापिईहिं भगवं देवत्तगएहिं पव्वइतो ॥ ४६० ॥

हस्तोत्तरायोगेन—उत्तराफाल्गुनीयोगेन कुंडनगरग्रामे जात्यः—उत्कृष्टः क्षत्रियो वज्रर्षभसंहननो भव्यजनविबोधको

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

वीरो भगवान् मातापितृभ्यां देवत्वगताभ्यां प्रव्रजितः, अथ स कियन्तं कालं सर्वसङ्कलनया गृहवासे वसति?, तत आह–स त्रिंशद्वर्षाणि वसति गृहवासे, किं सामान्येन स्वजनमात्रपरिवृत एव?, नेत्याह—देवपरिगृहीतः ॥ सम्प्रति भाष्यकारो दानद्वारं सम्बोधनद्वारं निष्क्रमणद्वारं च व्याख्यातुकामः प्रथमतो दानद्वारं व्याख्यानयति—

संवच्छरेण होहिइ अभिणिक्खमणं तु जिणवरिंदाणं । तो अत्थसंपयाणं पवत्तए पुव्वसूरम्मि ॥ ८१ ॥ भा० ॥
एगा हिरण्णकोडी अट्ठेव अणूणगा सयसहस्सा । सूरोदयमाईयं दिज्जइ जा पायरासो उ ॥ ८२ ॥ भा० ॥
संघाडगतियचउक्कचच्चरचउम्मुहमहापहपहेसु । दारेसु पुरवराणं रत्थामुहमज्झकारेसु ॥ ८३ ॥ भा० ॥
वरवरिया घोसिज्जइ किमिच्छियं दिज्जइ बहुविहीयं । सुरअसुरदेवदाणवनरिंदमहियाण निक्खमणे ॥८४॥भा०
तिन्नेव य कोडिसया अट्ठासीई य होंति कोडीओ । असियं च सयसहस्सा एयं संवच्छरे दिन्नं ॥ ८५ ॥ भा० ॥

इदं च गाथापञ्चकमृषभदेवाधिकार एव व्याख्यातमिति न भूयो व्याख्यायते । गतं दानद्वारम् ॥ अधुना सम्बोधनद्वारम्, तत्र यदा भगवान् निष्क्रमिष्यामीति मनः सम्प्रधारयति तदा ये लोकान्तिका देवाः सारस्वतादयो ब्रह्मलोके कल्पे रिष्ठे विमानप्रस्तटे स्वकीये स्वकीये विमाने स्वकीये स्वकीये प्रासादावतंसके प्रत्येकं चतुर्भिः सामानिकसहस्रैस्तिसृभिः पर्षद्भिः सप्तभिरनीकैः सप्तभिरनीकाधिपतिभिः षोडशभिरात्मरक्षकदेवसहस्रैरन्यैश्च स्वस्वविमानवास्तव्यैर्देवैर्देवीभिश्च सम्परिवृता दिव्यान् भोगान् भुञ्जमा(ज्ञा)ना आसते, तेषामासनानि प्रचलन्ति, ततोऽवधिं प्रयुञ्जते, प्रयुज्य चाभोगयन्ति, ततो जानन्ति यथा–स्वामी निष्क्रमिष्यामीति मनः सम्प्रधारितवान्, ततश्चिन्तयन्ति–कल्प एष लोकान्तिकानां देवानां–भगवता-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** जिनेश्वरस्य संवत्सर-दानानां वर्णनं

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

महंतां निष्क्रमणकाले सम्बोधनं कर्त्तव्यमिति, तत एवं चिन्तयित्वा उत्तरपूर्वां दिशमवक्रम्य द्विकृत्वो वैक्रियसमुद्घातेन समवहत्योत्तरवैक्रियाणि रूपाणि विकुर्वते, विकुर्वित्वा भगवतः समीपमागत्याकाशे स्थिता मधुराभिर्वाग्भिरेवमवादिषुः–'जय जय नंदा ! जय जय भद्दा !, जय जय मुणिवरवसभा !, बुज्झाहि भगवं ! लोगनाहा !, पवत्तेहि भयवं ! धम्मतित्थं, हियसुहनिस्सेसकरं जीवाणमेयं भविस्सइ'त्ति, ततो वन्दन्ते नमस्यन्ति, वन्दित्वा नमस्थित्वा यत आगतास्तत्र गताः॥ एतदेवाह—

सारस्सयमाइच्चा वण्ही वरुणा य गद्दतोया य । तुसिया अव्वाबाहा अग्गिच्चा चेव रिट्ठा य ॥ ८६ ॥ भा० ॥
एए देवनिकाया भयवं बोहिंति जिणवरिंदं तु । सव्वजगज्जीवहियं भयवं ! तित्थं पवत्तेहि ॥ ८७ ॥ भा० ॥
एवं अभिथुवंतो बुद्धो बुद्धारविंदसरिसमुहो । लोगंतियदेवेहिं कुंडग्गामे महावीरो ॥ ८८ ॥ भा० ॥

इदमपि गाथात्रयं सुगमत्वात् प्राग्व्याख्यातत्वाच्च न प्रतन्यते, ननु पूर्वमृषभदेवाधिकारे पूर्वं सम्बोधनमुक्तं पश्चाद्दानं 'संवोहणपरिच्चाए'इति पाठक्रमात्, इह तु पूर्वं दानं पश्चात्सम्बोधनं 'दाणे संबोह निक्खमणे' इति वचनात्, ततः कथं परस्परं न विरोधः ?, नैष दोषो, न सर्वतीर्थकराणामयं नियमो यदुत–सम्बोधनोत्तरकालभाविनी महादानप्रवृत्तिः, किन्तु केषांचिदेवमपि भवति—पूर्वं महादानं पश्चात्सम्बोधनमिति, 'दाणे संबोह निक्खमणे' इति वचनात्, अथवा भवतु नियमः, स च द्विधा घटते–पूर्वं सम्बोधनं पश्चान्महादानमथवा पूर्वं महादानं पश्चात्सम्बोधनं, तत्र पूर्वनियमेन सम्बोधनद्वारादिः दानद्वारस्य प्रागुपन्यासो बहुतरवक्तव्यत्वाददुष्टः, पश्चात्तने तु नियमे पूर्वमृषभ-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** भगवन्त महावीरस्य दीक्षा-अवसरस्य विस्तृत वर्णनं क्रियते

देवाधिकारे दानद्वारात्प्राक् सम्बोधनद्वारोपन्यासोऽल्पवक्तव्यत्वाद्, एवं तावत् सम्भविनः पक्षा उपन्यस्ताः, सत्यं तु विशिष्टश्रुतविदो जानन्तीति कृतं प्रसङ्गेन ॥ गतं सम्बोधनद्वारम्, अधुना निष्क्रमणद्वारमाह—

मणपरिणामो उ कतो अभिनिक्खमणंमि जिणवरिंदेण। देवेहि य देवीहि य समंततो वत्थुयं गयणं ॥८८॥ भा०॥

मनःपरिणामश्च कृतोऽभिनिष्क्रमणे—अभिनिष्क्रमणविषयो जिनवरेन्द्रेण, तावत् किं सञ्जातमित्याह—देवैर्देवीभिश्च समन्ततः—सर्वासु दिक्षु सर्वं अवस्तृतं—व्याप्तं गगनं ॥

भवणवइवाणमंतरजोइसवासी विमाणवासी य। धरणियले गयणयले विज्जुज्जोओ कतो खिप्पं ॥९०॥ भा० ॥

यैर्देवैर्वैर्गगनतलं व्याप्तं ते खल्वमी वर्त्तन्ते—भवनपतयश्च व्यन्तराश्च ज्योतिर्वासिनश्चेति द्वन्द्वः समासः, तथा विमानवासिनश्च, अमीभिरागच्छद्भिर्धरणितले गगनतले च विद्युद्वत् उद्योतो विद्युदुद्योतः कृतः क्षिप्रं—शीघ्रम् ॥

जाव य कुंडग्गामो जाव य देवाण भवणआवासा। देवेहि य देवीहि य अविरहियं संचरंतेहिं ॥ ९१ ॥ भा० ॥

यावत् कुण्डग्रामो यावच्च देवानां भवनावासा अन्तरे व्योमतलं धरणितलं च देवैर्देवीभिश्च अविरहितं—व्याप्तं सञ्चरद्भिः, एतत्सामान्येनोक्तम्, विशेषप्रक्रिया त्वेवम्—यदा भगवान् लोकान्तिकदेवैः सम्बोधितस्तदा स्वामी नन्दिवर्द्धनप्रमुखस्वजनवर्गसमीपमुपागतवान्, उपागत्य चैवमवादीत्—इच्छामि युष्मदनुज्ञातः प्रव्रज्यां महीतुमिति, ते चाकामा अप्येवमवादिषुः—यद्भगवतः प्रतिभासते तत्प्रमाणं, ततः स नन्दिवर्द्धनः कौटुम्बिकपुरुषान् शब्दापयित्वा निष्क-

Jain Education Int... For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र मूल संपादने यत् भाष्य-गाथा क्रम- '८८' मुद्रितं तत् मुद्रणदोष: मात्र, तत् गाथा-क्रम '८९' वर्तते

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

मणाभिषेकसामग्रीं कारितवान्, तत्राष्टाधिकं सहस्रं सौवर्णिककलशानां १ अष्टसहस्रं रूप्यमयानां २ अष्टसहस्रं मणिमयानां ३ अष्टसहस्रं सुवर्णरूप्यमयानां ४ अष्टसहस्रं सुवर्णमणिमयानां ५ अष्टसहस्रं रूप्यमणिमयानां ६ अष्टसहस्रं सुवर्णरूप्यमणिमयानां ७ अष्टसहस्रं भौमेयानां ८ निष्पन्नं । तदनन्तरमासनं शक्रस्य चलितं, ततो यथा प्राक् ऋषभदेवजन्माभिषेकद्वारे शक्रागमनमुपवर्णितं तथैवात्राप्यन्यूनातिरिक्तमुपवर्णयितव्यं, यावत्तेन दिव्येन यानविमानेन स्वामिभवनस्य त्रिकृत्वः प्रदक्षिणां कृत्वा भगवतो भवनस्य उत्तरपूर्वस्यां दिशि चतुरङ्गुलैर्धरणितलमसंप्राप्तं तत् दिव्यं यानविमानं स्थापयति, ततो दिव्ययानविमानाद्विनिर्गत्य सर्वसामग्रीपरिकलितो भगवन्तं पर्युपासीन आस्ते, एवं पूर्वक्रमेण ईशानेन्द्रादयोऽच्युतेन्द्रपर्यवसाना इन्द्राः सपरिवारा वक्तव्याः, तथा भवनपतिव्यन्तरज्योतिष्केन्द्रा अपि सपरिच्छदाः, ततो यथा प्राग् ऋषभस्वामिनो जन्माभिषेकमच्युतेन्द्रादयः कृतवन्त उक्तास्तथाऽत्रापि वक्तव्या यावत् शक्रेण कृतोऽभिषेकः, ततो येऽच्युतेन्द्राद्याभियोग्यदेवकृताः सौवर्णादिकलशास्ते नन्दिवर्द्धनकौटुम्बिकपुरुषनिर्वर्त्तितसौवर्णादिकलशेषु दिव्यानुभावतः प्रविष्टाः, ततस्ते अधिकतरं शोभितवन्तः, ततः स नन्दिवर्द्धनो राजा स्वामिनं सिंहासने पूर्वाभिमुखं निवेश्य देवानीतक्षीरोदसमुद्रादिपानीयैः सर्वतीर्थमृत्तिकाभिः सर्वकषायैः सौवर्णादिकलशैरभिषेकं कर्त्तुमारब्धवान्, तस्मिंश्चाभिषेकं कुर्वति सर्वे इन्द्राः सपरिवाराः केचित् कृताञ्जलिपुटाः केचित्कलशहस्तगताः केचित् भृङ्गारहस्तगताः केचिदादर्शहस्तगता जयजयशब्दं प्रयुञ्जानाः स्वामिनः पुरतोऽवतिष्ठन्ते, शेषं सर्वं हिरण्यवर्षादि ऋषभनाथजन्माभिषेकवद्वाच्यं, ततो जन्माभिषेकानन्तरमलङ्कारसभायां केशालङ्कारेण वस्त्रालङ्कारेण माल्यालङ्कारेण आभरणालङ्कारेण भगवन्तमलङ्कारितवान्,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यावच्च निष्क्रमणाभिषेकोऽलङ्कारश्च क्रियमाणो वर्त्तते तावद्धरणितलं गगनतलं चागच्छद्भिर्गच्छद्भिश्च देवैर्देवीभिश्च निरन्तरं व्याप्तमुद्योतितं चावतिष्ठते, तत उक्तम्-'धरणियले गयणतले विज्जुज्जोओ कतो खिप्पं ॥ जाव य कुंडग्गामो' इत्यादि, तत एवं निष्क्रमणाभिषेकेणाभिषिक्ते सर्वालङ्कारविभूषिते च भगवति नन्दिवर्द्धनराज्ञा उपदिष्टाः कौटुम्बिकपुरुषाः-अनेकस्तम्भशतसन्निविष्टां मणिकनकविचित्रां पञ्चाशद्धनुरायामां पञ्चविंशतिधनुर्विस्तीर्णां षट्त्रिंशद्धनुरुच्चां चन्द्रप्रभाभिधानां शिविकामुपस्थापयतेति, तेऽपि तथैवोपस्थापयन्ति (एवं शक्रोऽपि शिबिकां कारयति) नवरं तस्याः प्रागुक्तविमानस्येव वर्णको वक्तव्यः, केवलं सा शिविका तामेव नन्दिवर्द्धनकारितां शिविकां दिव्यानुभावतः प्रविष्टा, ततः साऽतीव सुन्दरतरा जाता, ततस्तस्यां शिविकायामुपस्थापितायां भगवान् सिंहासनादुत्थाय अलङ्कारसभातो विनिर्गच्छति, विनिर्गत्य यत्र चन्द्रप्रभा शिविका तत्रागच्छति, ततस्तां प्रदक्षिणीकृत्य समारोहति, आरुह्य च सिंहासनवरगतः पूर्वाभिमुखः सन्निषण्णः। आह च—

चंदप्पभा य सीया उवणीया जम्ममरणमुक्कस्स। आसन्नमल्लदामा जलथलयंदिव्वकुसुमेहिं ॥ ९२ ॥ भा० ॥

चन्द्रप्रभाभिधाना शिविका या उपनीता-आनीता, कस्येत्यत आह—जन्ममरणाभ्यां मुक्त इव मुक्तस्तस्य, वर्द्धमानस्येत्यर्थः ॥ किंभूता सेत्याह-आसक्तानि माल्यदामानि यस्यां सा तथा, तथा जलस्थलजैश्च दिव्यकुसुमैरर्चितेति वाक्यशेषः ॥ संप्रति शिविकाप्रमाणदर्शनार्थमाह—

पंचासइआयामा धणूणि विच्छिण्ण पण्णवीसं तु। छत्तीसं उविद्धा सीया चंदप्पभा भणिया॥ ९३ ॥ भा० ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पञ्चाशद्धनूंषि आयामो-दैर्घ्यं यस्याः सा पञ्चाशदायामा, धनूंषि पञ्चविंशतिर्विस्तीर्णा, तथा षट्त्रिंशद् धनूंषि उद्विद्धा—उच्चा शिविका चन्द्रप्रभाभिधाना गणधरैर्भणिता, अनेन शास्त्रस्य पारतन्त्र्यमाह ॥

सीयाएँ मज्झयारे दिव्वं मणिकणगरयणचिंचइयं । सिंहासणं महरिहं सपायपीढं जिणवरस्स ॥ ९४ ॥ भा० ॥

शिविकाया मध्य एव मध्यकारस्तस्मिन् दिव्यं सुरनिर्मितं मणयः—चन्द्रकान्तादयः कनकं-देवकाञ्चनं रत्नानि-मरकतेन्द्रनीलादीनि तैः 'चिंचइयं' देशीपदमेतत् भूषितमित्यर्थः, सिंहप्रधानमासनं सिंहासनं, महान्तं-भुवनगुरुमर्हतीति महार्हं, सह पादपीठं यस्य येन वा तत् 'सपादपीठं' जिनवरस्य कृतमिति वाक्यशेषः ॥

आलइयमालमउडो भासुरबोंदी पलंबवणमालो । सेययवत्थनियत्थो जस्स य मोल्लं सयसहस्सं ॥९५॥ भा० ॥

छट्ठेणं भत्तेणं अज्झवसाणेण सोहणेण जिणो । लेस्साहि विसुज्झंतो आरुहई उत्तमं सीयं ॥ ९६ ॥ भा० ॥

आलइयं-आविद्धमुच्यते, माला-अनेकसुरकुसुमग्रथिता मुकुटः प्रसिद्ध एव, माला च मुकुटश्च मालामुकुटौ आविद्धौ मालामुकुटौ यस्य स आविद्धमालामुकुटः, तथा भास्वरा—छायायुक्ता बोन्दिः—तनुर्यस्य स तथाविधः, प्रलम्बा वनमाला देवद्रुमप्रवालकिशलयादिमयी यस्य स प्रलम्बवनमालः, तथा नियत्थं-परिहितमुच्यते, निवसितं श्वेतम्-आकाशस्फटिकसमप्रभं नासानिःश्वासवातवाह्यमपूर्वस्पर्शोपेतं कनकखचितान्तप्रदेशं वस्त्रं येन स निवसितश्वेतवस्त्रः, सुखादिदर्शनान्निवसितशब्दस्य पाक्षिकः परनिपातः, यस्य वस्त्रस्य मूल्यं शतसहस्रं दीनाराणामिति ॥ स एवंभूतो भगवान् मार्गशीर्षबहुलदशम्यां सुव्रते दिवसे हस्तोत्तरानक्षत्रयोगे षष्ठौ विजये मुहूर्ते षष्ठेन भक्तेन, दिनद्वयोपवासेनेत्यर्थः,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अध्यवसानम्—अन्तःकरणसव्यपेक्षं विज्ञानं तेन सुन्दरेण—शोभनेन जिनो—भगवान् वर्द्धमानस्वामी, तथा लेश्याभिर्विशुद्ध्यमानो, मनोवाक्कायपूर्विकाः कृष्णादिद्रव्यसम्बन्धजनिताः खल्वात्मपरिणामा लेश्याः, उक्तं च—"कृष्णादिद्रव्यसाचिव्यात्परिणामो य आत्मनः । स्फटिकस्येव तत्रायं, लेश्याशब्दः प्रवर्त्तते ॥ १ ॥" ताभिर्विशुद्ध्यमान आरोहत्युत्तमां शिविकाम् ॥

सिंहासणे निसन्नो सक्कीसाणा य दोहिं पासेहिं । वीयंति चामरेहिं मणिकणगविचित्तदंडेहिं ॥ ९७ ॥ भा० ॥

तत्र भगवान् सिंहासने निषण्णः, स च पूर्वाभिमुखः, ततो भगवतो दक्षिणपार्श्वे कुलमहत्तरिका हंसलक्षणं पटसाटकमादाय भद्रासने निषण्णा, अम्बधात्री भगवतो वामपार्श्वे उपकरणमादाय भद्रासने उपविष्टा, भगवतः पृष्ठे एका वरतरुणी कृतशृङ्गारचारुवेषा धवलमातपत्रं धरन्ती समवतिष्ठते, उत्तरपूर्वस्यां दिशि पुनः एका वरतरुणी विमलजलप्रतिपूर्णं भृङ्गारं गृहीत्वा तिष्ठति, आग्नेयकोणे तु एका वरतरुणी कनकदण्डं मणिविचित्रं तालवृन्तं, अन्ये पुनरेवमाहुः—एताः सर्वा अपि देव्यः प्रतिपत्तव्याः, ततः स्वामिन उभयोः पार्श्वयोर्व्यवस्थितौ शक्रेशानौ देवनाथौ चामराभ्यां मणिरत्नविचित्रदण्डाभ्यां वीजयतः, एवं भगवति शिबिकान्तर्वर्त्तिनि सिंहासनारूढे सति नन्दिवर्द्धनो राजा निजाभियोग्यपुरुषानाज्ञापयति—परिवहत यूयं शिविकामिति, ततस्ते एवमुक्ताः समाना हर्षापूरितमनसो यावत् शिविकामुत्पाटयन्ति तावदन्तरे शक्रो देवराजश्चन्द्रप्रभायाः शिबिकाया दाक्षिणात्यामुपरितनीं बाहां गृह्णाति, ईशानो देवेन्द्र औत्तराहामुपरितनीं बाहां, चमरोऽसुरराजोऽधस्तनीं दाक्षिणात्यां बाहां, बलिर्वैरोचनेन्द्रोऽधस्तनीमौत्तराहां बाहाम्, अवशेषा

Jain Education Inte For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

भवनपतिव्यन्तरज्योतिष्कवैमानिका देवा यथाऽर्हं चन्द्रप्रभां शिबिकामुत्पाटयन्ति, उत्पाट्य च शक्रेशानेन्द्रवर्जाः शेषा देवा यथायोगं परिवहन्ति, शक्रेशानेन्द्रौ तु चामराभ्यां वीजयतः ॥ एतदेवाह—

पुव्विं उक्खित्ता माणुसेहिं सा हट्ठरोमकूवेहिं । पच्छा वहंति सीयं असुरिंदसुरिंदनागिंदा ॥ ९८ ॥ भा० ॥

पूर्वं-प्रथममुत्क्षिप्ता—उत्पाटिता मानुषैः सा शिबिका, किंविशिष्टैरित्याह-हृष्टानि रोमकूपानि येषां ते तथा तैः, पश्चाद्वहन्ति शिबिकामसुरेन्द्रसुरेन्द्रनागेन्द्राः, असुरेन्द्राः—चमरादयः सुरेन्द्रा—ज्योतिरिन्द्रादयः नागेन्द्रौ—धरणभूतानन्दौ ॥ असुरेन्द्रादिस्वरूपव्यावर्णनार्थमाह—

चलचवलभूसणधरा सच्छंदविउव्वियाभरणधारी । देविंददाणविंदा वहंति सीयं जिणिंदस्स ॥ ९९ ॥ भा० ॥

चलाश्च ते चपलभूषणधराश्चेति विशेषणसमासः, तत्र चला गमनक्रियायोगात्, चपलभूषणधरा हारादिचपलभूषणयोगात्, तथा स्वच्छन्देन—स्वाभिप्रायेण विकुर्वितानि—देवशक्त्या कृतानि आभरणानि—कुण्डलादीनि धारयन्तीत्येवंशीलाः स्वच्छंदविकुर्विताभरणधारिणः, अथवा चलचपलभूषणधरा इत्युक्तं, तानि च भूषणानि किं ते परनिर्मितानि धारयन्ति उत स्वनिर्मितानीति संशयसम्भवे व्यवच्छेदार्थमाह—स्वच्छंदविकुर्विताभरणधारिणः, क एते इत्याह—देवेन्द्रदानवेन्द्राः, किं?—वहन्ति शिबिकां जिनेन्द्रस्य ॥ एवं भगवति शिबिकारूढे गन्तुं प्रवृत्ते तत्प्रथमतया सर्वात्मना रत्नमयान्यमून्यष्टौ मङ्गलकानि पुरतः क्रमेण सम्प्रस्थितानि, तद्यथा-स्वस्तिकः श्रीवत्सः नन्दावर्त्तः वर्द्धमानकं भद्रासनं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्तिः

कलशो मत्स्ययुगं दर्पणश्च, तदनन्तरमालोकदर्शनीयानि क्रमेण पूर्णकलशभृङ्गारचामराणि, ततो गगनतलमनुलिखन्ती वातोद्धूता महन्ती वैजयन्ती, तदनन्तरं विमलवैडूर्यमणिदण्डं प्रलम्बमानकोरण्टमाल्यदामोपशोभितं चन्द्रमण्डलनिभं विमलमातपत्रं, तदनन्तरं मणिकनकविचित्रं सपादपीठं सिंहासनं, तदनन्तरमष्टशतमारोहरहितानां वरतुरगाणां, तदनन्तरमष्टशतं वरकुञ्जराणां, ततोऽनन्तरमष्टशतं सघण्टानां सपताकानां सनन्दीघोषाणामनेकप्रहरणावरणसंभृतानां रथानां, ततोऽष्टशतं वरपुरुषाणां, तदनन्तरं हयानीकं, तदनन्तरं गजानीकं, ततोऽप्यनन्तरं रथानीकं, ततः पदात्यनीकं, तदनन्तरमाकाशतलमुल्लिखन् लघुपताकासहस्रपरिमण्डितो योजनसहस्रोच्छ्रायो रत्नमयोऽतिमहान् महेन्द्रध्वजः, तदनन्तरं बहवः खड्गग्राहाः कुन्तग्राहाः पीठफलकग्राहाः, तदनन्तरं हासकारका नर्म्मकारकाः कान्दर्प्पिका जयजयशब्दं प्रयुञ्जानाः, तदनन्तरं बहव उग्रा भोगा राजन्याः क्षत्रियास्तलवरा माडंबिकाः कौटुम्बिकाः श्रेष्ठिनः सार्थवाहा बहवो देवा देव्यश्च स्वामिनः पुरतः पृष्ठतः पार्श्वतो व्यवस्थिताः सम्प्रस्थिताः, ततो देवैरुह्यमाना भगवतः शिविका गच्छति, भगवतश्च पृष्ठतो हस्तिस्कन्धवरगतः सकोरण्टमाल्यदाम्ना ध्रियमाणेन छत्रेण श्वेतवरचामराभ्यां वीज्यमानश्चतुरङ्गिण्या सेनया परिकलितो नन्दिवर्द्धनोऽनुगच्छति ॥

कुसुमाणि पंचवण्णाणि मुंचंता दुंदुहीउ ताडंता । देवगणा य पहट्ठा समंततो उच्छुयं गयणं ॥१००॥ भा०॥

भगवति सिंहासनाधिरूढे शक्रेशानदेवराजाभ्यां वीज्यमाने दीक्षार्थं प्रचलति प्रहृष्टा भक्तिप्रमोदापूरितमनसो देव-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गणा' देवसङ्घाताः, चशब्दस्य व्यवहितः सम्बन्धः, स च दर्शयिष्यते, कुसुमानि शुक्लादिपञ्चवर्णानि मुञ्चन्तः तथा दुन्दुभींश्च ताडयन्तो, गच्छन्ति इति क्रियाध्याहारः, तैरेवं गच्छद्भिर्देवैः समन्ततः—सर्वासु दिक्षु विदिक्षु च सर्वं गगनमवस्तृतं—व्याप्तम् ॥

वणसंडोव कुसुमितो पउमसरो वा जहा सरयकाले। सोहइ कुसुमभरेणं इय गयणतलं सुरगुणेहिं ॥१०१ भा. ॥

वनखण्ड इव कुसुमितः, पद्मसरो वा यथा शरत्काले शोभते कुसुमभरेण-पुष्पसमूहेनेति, एवं गगनतलं शोभते सुरगणैः ।

सिद्धत्थवणं व जहा असणवणं सणवणं असोगवणं। चूयवणं व कुसुमियं इय गयणयलं सुरगणेहिं ॥ १०२ भा. ॥

सिद्धार्थकवनमिव यथा असनवनं, असना—बीजकाः, सणवनमशोकवनं चूतवनं वा कुसुमितमिति, एवं गगनतलं सुरगणैः शुशुभे ।

अयसिवणं व कुसुमियं कणियारवणं व चंपगवणं वा। तिलगवणं व कुसुमियं इय गयणयलं सुरगणेहिं ॥१०३ भा.॥

अतसीवनं वा यथा कुसुमितं, अतस्यो—मालवदेशप्रसिद्धाः, कर्णिकारवनं वा चम्पकवनं वा तिलकवनं वा यथा कुसुमितमिति, एवं गगनतलं सुरगणैः शोभितम् ।

वरपडहभेरिझल्लरिदुंदुहिसंखसहिएहि तूरेहिं। धरणियले गयणयले तूरनिनाओ परमरम्मो ॥ १०४ भा. ॥

वरपटहभेरीझल्लरीदुन्दुभिशङ्खसहितैस्तूर्यैः करणभूतैः, किं ?—धरणितले गगनतले तूर्यनिनादः—तूर्यनिर्घोषः परमरम्योऽभवत् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं सदेवमणुयासुराए परिसाए परिवुडो भयवं। अभिथुवंतो गिराहिं संपत्तो नायसंडवणं ॥ १०५ भा. ॥

एवम्-उक्तेन विधिना सह देवमनुष्यासुरा यथा सा सदेवमनुष्यासुरा तया, कयेत्याह-पर्षदा, परिवृतो भगवान् गीर्भिः-वाग्भिः अभिष्टूयमानः, क्षत्रियकुण्डपुरमध्येन नरनारीदेवदेवीसङ्घातानां नयनमालासहस्रैः प्रतीक्ष्यमाणः हृदय-मालासहस्रैरभिनन्द्यमानो मनोरथमालासहस्रैः संस्पृश्यमानोऽङ्गुलिसहस्रैर्दर्श्यमानो भवनपङ्क्तिसहस्राणि समतिक्रामन् तावद् गतो यावत् सम्प्राप्तो ज्ञातखण्डवनमिति ॥

उज्जाणं संपत्तो ओरुहिउं उत्तमाउ सीयाओ। सयमेव कुणइ लोयं सक्को सि पडिच्छए केसे ॥ १०६ भा. ॥

उद्यानं सम्प्राप्तः सन् यत्रैवाशोकवरपादपस्तत्रैवागच्छति, आगत्य च तस्या उत्तमायाः शिबिकाया अवतरति, अव-तीर्य च स्वयमेवाभरणान् मुञ्चति, तानि कुलमहत्तरिका छिन्नमुक्तावलिप्रकाशान्यश्रूणि विनिर्मुञ्चन्ती हंसलक्षणेन पटशाट-केन प्रतीच्छति, प्रतीच्छय भगवन्तमेवमवादीत्-इक्ष्वागुकुलसमुप्पण्णे सि णं तुमं जाया!, कासवगोत्ते सि णं तुमं जाया! उदितोदितनायकुलनहयलमियंकसिद्धत्थजच्चखत्तियसुते सि णं तुमं जाया! जच्चखत्तियाणीए तिसलाए अत्तए सि णं तुमं जाया! देवनरिंदपहियकित्ती सि णं तुमं जाया!, सुहोसिए णं तुमं जाया!, एत्थ निरवेक्खं चंकमियव्वं, गरुयं आलंबेयव्वं, असिधारं महव्वयं चरियव्वं, तं घडियव्वं जाया!, परक्कमियव्वं जाया!, अस्सिं च अट्ठे नो पमाइयव्वंति, अण-वरयपडंतसुपवहनंदिवद्धणपमुहसयणवग्गसमेया अंसूणि विणिम्मुयंती वंदति नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता पगंडे

Jain Education Internat For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवक्रमति, सामीवि संपइ एवमेयंति चयासी, ततः स्वयमेव भगवान् पञ्चमुष्टिकं लोचं करोति, शक्रश्च देवराजो हंस-लक्षणेन पटशाटकेन केशा[दी]न् प्रतीच्छति ॥

जिणवरमणुण्णवित्ता अंजणघणरुगयविमलसंकासा। केसा खणेण नीया खीरसरिसनामयं उदहिं ॥१०७ भा. ॥

शक्रेण जिनवरं—भगवन्तं वर्द्धमानस्वामिनमनुज्ञाप्य अञ्जनं प्रसिद्धं घनो—मेघः रुचकः—कृष्णमणिविशेषः तेषामिव विमला छाया येषां ते अञ्जनघनरुचकविमलसङ्काशाः, के ते इत्याह—केशाः, किं ?—क्षणेन नीताः क्षीरसदृशनामानमुदधिं, क्षीरोदधिमित्यर्थः ॥ अत्रान्तरे चारित्रप्रतिपत्तुकामे भगवति सुरासुरमनुजवृन्दसमुद्गतो ध्वनिस्तूर्यनिनादश्च शक्रादेशा-द्विरराम, तथा चाह—

दिव्वो मणुस्सघोसो तुरियनिनादो उ (य) सक्कवयणेणं। खिप्पामेव निलुक्को जाहे पडिवज्जइ चरित्तं ॥ १०८ भा. ॥

दिव्वो—देवसमुत्थो, घोष इति गम्यते, मनुष्यघोषः, चशब्दस्य व्यवहितः सम्बन्धः, तथा तूर्यनिनादश्च शक्रवचनेन क्षिप्रमेव—शीघ्रमेव 'निलुक्को' इति देशीवचनमेतत्, विरत इत्यर्थः, यदा—यस्मिन् काले प्रतिपद्यते चारित्रम् ॥ स यथा चारित्रं प्रतिपद्यते तथा प्रतिपादयति—

काऊण नमोक्कारं सिद्धाणमभिग्गहं तु सो गिण्हे। सव्वं मे अकरणिज्जं पावंति चरित्तमारूढो ॥ १०९ भा. ॥

कृत्वा नमस्कारं सिद्धेभ्यो, यथा 'नमोत्थु णं सिद्धाण'मिति, अभिग्रहमसौ गृह्णाति, किंविशिष्टमित्याह—सर्वं मे—मम अकरणीयं पापमित्येवं चारित्रमारूढः, किमुक्तं भवति ?—भदन्तशब्दरहितं सामायिकमुच्चारयति, तद्यथा—'करेमि सामाइयं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवाए जाव वोसिरामि,' भदन्तेति न भणति, तथाकल्पत्वात्, आह चूर्णिकृत्—"भदंतत्ति न भणइ, जीयमिति" चारित्रप्रतिपत्तिकाले च स्वभावतो भुवनभूषणस्य भगवतो निर्भूषणस्य सत इन्द्रो देवदूष्यं वस्त्रमुपनीतवान्, अत्रान्तरे कथानकम्—एगेण देवदूसेणं पच्चइए, तं जाहे अंसे करेइ एत्थंतरा पिउवयंसो विज्जाइतो उवट्ठितो, सो य दाणकाले कहिंपि य गतेल्लतो, पच्छा आगतो भज्जाए अंबाडितो—सामिणा एवं दाणं दत्तं, तुमं पुण कहिंचि हिंडसि, जइ पुण एत्थंतरेवि लभेज्जासि, ततो सो आगतो भणइ—जहा मम सामि! न किंचि तुब्भेहिं दिन्नं, इयाणिंपि देहित्ति, ताहे सामिणा तस्स देवदूसस्स अद्धं दिन्नं, अन्नं सव्वं परिच्चत्तंति नत्थि, तेण तुन्नागस्स उवणीयं, जहा एयस्स दसिया बंधाहि, तेण पुच्छितो—इमं कतो लद्धं?, सो भणइ—भगवता दिन्नं, तुन्नागो भणइ—तंपि से अद्धं आणेहि जया पडिहिइ भयवतो अंसातो, तो णं अहं तुन्नामि ताहे लक्खं मोलं भविस्सइत्ति, ता तुज्झवि अद्धं मज्झवि अद्धं, पडिवन्नं, ताहे पओलग्गितो, सेसमुवरि भणीहामि ॥ तस्य भगवतश्चारित्रप्रतिपत्तिसमनन्तरमेव मनःपर्यायज्ञानमुदपादि, सर्वतीर्थकृतां चायं क्रमः, यत आह—

तिहिं नाणेहिं समग्गा तित्थयरा जाव होंति गिहवासे। पडिवन्नंमि चरित्ते चउनाणी जाव छउमत्था ॥११०भा.॥

त्रिभिर्ज्ञानैः—मतिश्रुतावधिभिः समग्राः—सम्पूर्णास्तीर्थकरा यावद् गृहवासे भवन्ति, वसन्तीत्यर्थः, प्रतिपन्ने पुनश्चारित्रे चतुर्ज्ञानिनो भवन्ति, कियन्तं कालं यावदित्याह—यावच्छद्मस्थास्तावच्चतुर्ज्ञानिनः, एवमसौ भगवान् प्रतिपन्नचारित्रः समासादितमनःपर्यायज्ञानो ज्ञातखण्डादापृच्छ्य स्वजनान् कर्मारग्राममगमत्। तथा चाह—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बहिया य नायसंडे आपुच्छित्ताण णायए सवे। दिवसे मुहुत्तसेसे कमारगामं समणुपत्तो ॥ १११ ॥ भा० ॥

बहिः कुण्डपुरात् ज्ञातखण्डे उद्याने आपृच्छ्य ज्ञातकान् सर्वान् यथासन्निहितान् तस्मान्निर्गतः, कर्मारग्रामगमनायेति वाक्यशेषः, तत्र च पथद्वयम्–एको जलेनापरः पाल्या, तत्र च भगवान् पाल्या गतवान्, गच्छंश्च दिवसे मुहूर्त्तशेषे कर्मारग्राममनुप्राप्तः, तत्र च प्रतिमायां स्थितः ॥

सो भगवं दिवेहिं गोसीसाइएहिं चंदणेहिं चुन्नेहि य वासेहि य पुप्फेहि य वासियदेहो निक्खमणाभिसेएण य अभिसित्तो, विसेसेण इंदेहिं चंदणाइगंधेण वासितो, तस्स पवइयस्सवि सतो चत्तारि साधिए मासे गंधो न फिडितो, अतो से सुरभिगंधेण भमरा बहवे दूरातो पुप्फितेऽवि कुंदाइवणसंडे चइत्ता दिवेहिं गंधेहिं आगरिसिया भगवतो देहमागम्म विंधंति, केइ पुण मग्गतो गुमगुमायंता समल्लियंति, जया पुण न किंचिवि पावंति तया आरुसिया तुंडेहिं तयं भिंदिऊण खायंति, जेऽवि केई अजिइंदिया तरुणपुरिसा तेऽवि गंधे अग्घाइऊण गंधमुच्छिया भयवंतं भिक्खायरियाए हिंडंतं गामाणुगामं दूइज्जंतं अणुगच्छंता अणुलोमं जायंति, देहि अम्हवि एयं गंधजुत्तिंति, ततो भयवंते तुसिणीए अच्छमाणे पडिलोमे उवसग्गे करेंति, तहा इत्थियातोवि भयवतो देहं सेयमलरहियं निस्सासमुगंधमुहं अच्छीणि य निसग्गेण चेव नीलुप्पलपलासोवमाणि दट्ठुं बहुविहमणुलोमुवसग्गं करेंति, एयं सामन्नेण भणियं, विसेसो भण्णइ–तत्थ जया भगवं कम्मारगामबाहिं पडिमं ठितो तया एगो गोवो दिवसं वइल्ले वाहित्ता गामसमीवं पत्तो; ताहे चिंतइ–एए गामसमीवे चरंतु, अहंपि ता गावीतो दुहामि, ततोऽसौ जाव [illegible] पविसित्ता गावीतो दुहइ ताव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अथ भगवन्त महावीरस्य उपसर्गाणां वर्णनं

ते बइल्ला चरंता अडविं पविट्ठा, सो गोवो गामातो निग्गतो बइले न पेच्छइ, तस्स सामिं पुच्छइ—कहिं बइला ?, सामी तुण्हिक्को अच्छइ, सो चिंतइ—एस न याणइ, ताहे मग्गिउं पयत्तो, सव्वत्तिंपि से बइला सुचिरं भमित्ता गामसमीवमागया माणुसं दट्ठूण रोमंथंतः अच्छंति, ताहे सो आगतो, ते बइले तत्थेव निविट्ठे पेच्छइ, ताहे आसुरुत्तो, एएण दामएण आहणामि, एएण मम बइला हरिया, पभाए घेत्तूण वच्चीहामित्ति, ताहे सक्को देवराया चिंतेइ—किं अज्ज सामी पढमदिवसे करेइ ?, जाव पेच्छइ तं गोवं धावंतं, ताहे सो तेण थंभिओ, पच्छा आगतो तं तज्जेइ—दुरप्प ! न याणसि सिद्धत्थरायपुत्तो एस पव्वइतो, एयंमि अंतरे सिद्धत्थो सामिस्स माउस्सियापुत्तो बालतवोकम्मेण वाणमंतरो जातो, ताहे सक्को भणइ—भयवं ! तुज्झ उवसग्गबहुलं, अहं बारस वरिसाणि तुज्झं वेयावच्चं करेमि, ताहे सामिणा भणियं—नो खलु देविंदा ! एवं भूयं वा भवइ वा भविस्सइ वा जं णं अरहंता देविंदाण वा असुरिंदाण वा णीसाए केवलनाणमुप्पाइंसु उप्पायंति उप्पाइस्संति वा, तवं वा करिंसु वा करेंति वा करिस्संति वा, अरहंता सएण उट्ठाणबलवीरियपुरिसक्कारपरक्कमेणं केवलनाणमुप्पाइंसु उप्पायंति उप्पाइस्संति वा, ताहे सक्केण सिद्धत्थो भण्णइ—एस तव नियलतो, पुणोऽवि मम वयणं, सामिस्स जो मारणांतियउवसग्गं करेइ तं वारेहि, तेण पडिस्सुयं—एवं होउ, सक्को पडिगतो, सिद्धत्थो ठितो, तद्दिवसं सामिस्स छट्ठभत्ते पारणगं, ततो भयवं कोल्लागे संनिवेसे भिक्खापविट्ठो घयमहुसंजुत्तेणं परमण्णेण बहुलेण माहणेण पडिलाभितो, तत्थ पंच दिव्वाइं पाउब्भूयाइं । एतदेवाह—

गोवनिमित्तं सक्कस्स आगमो वागरेइ देविंदो । कुल्लाग बहुल छट्ठस्स पारणे पयस वसुहारा ॥ ४६१ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ताडनायोद्यतगोपनिमित्तं प्रयुक्तावधेः शक्रस्य-देवराजस्य आगमनमागमोऽभवत्, विनिवार्य च गोपं देवेन्द्रो भगवन्तमभिवन्द्य व्याकरोति-अभिधत्ते-भगवन्! तवाहं द्वादश वर्षाणि वैयावृत्त्यं करोमीत्यादि, पाठान्तरं 'वागरिंसु देविंदो' व्याकृतवानित्यर्थः, सिद्धार्थो वा तत्कालप्राप्तं व्याकृतवान् देवेन्द्रः-भगवान् त्वया न मोक्तव्य इति। गते देवराजे भगवतोऽपि कोल्लाके सन्निवेशे बहुलो नाम ब्राह्मणः षष्ठस्य-तपोविशेषस्य पारणके पायसमुपनीतवान् 'वसुहारे'ति तद्गृहे वसुधारा पतिता, एष गाथाक्षरार्थः ॥ कथानकम्—ततो सामी विहरमाणो गतो मोरागसंनिवेसं, तत्थ मोराए दूइज्जंता नाम पासंडत्था, तेसिं तत्थ आवासो, तेसिं च कुलवती भयवतो पिउमित्तो, ताहे सो सामिस्स सागएण उवट्ठितो, सामिणा पुवपयोगेण बाहा पसारिया, सो भणइ—अत्थि कुमारवर! एत्थ घरा, अच्छाहि तत्थ, सामी एगराइं च वसित्ता पच्छा गतो विहरइ, गच्छंतस्स य तेण भणियं-विवित्ता वसहीतो जइ वासारत्तो कीरइ तो आगच्छेज्ज, अणुग्गहीया होज्जामो, ताहे सामी अट्ठ उउबद्धिए मासे विहरित्ता वासावासे संपत्ते तं देवं दूइज्जंतगगामं एइ, तत्थंगमि उडए वासावासं ठितो, पढमपाउसे य गोरूवाणि चारिं अलभंताणि जुन्नाणि तणाणि खायंति, ताणि य घराणि उच्चेलेंति, पच्छा ते तावसा वारेंति, सामी न निवारेइ, पच्छा दूइज्जंतगा तस्स कुलवइस्स साहिंति-अहो एस एयाणि न वारेइ, ताहे सो कुलवई अणुसासइ, अहो-कुमारवर! सउणीवि ताव नेडुं रक्खइ, तुमंपि वारिज्जासित्ति सप्पिवासं भणइ, ताहे सामी अचियत्तोग्गहोत्ति काउं निग्गतो, इमेण तेण पंच अभिग्गहा गहिया, तंजहा—अचियत्तोग्गहे न वसियव्वं १ निच्चं वोसट्ठे काए २ मोणं च ३ पाणीसु भोत्तव्वं ४, गिहत्थो न वंदियव्वो-न अब्भुट्ठेयव्वो ५, एए पंच

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अभिग्गहा गहिया, इह सपात्रो धर्म्मो मया प्रज्ञापनीय इति प्रथमपारणकं गृहस्थपात्रे बभूव, ततः पाणिपात्रभोजिना मया भवितव्यमित्यभिग्रहो गृहीतः, तथा च गोशालकेन तन्तुवायशालायां किलेदमुक्तम्—भगवन्नहं तव भोजनमानयामि गृहस्थपात्रे कृत्वा, भगवता न प्रतिपन्नम्, उत्पन्नकेवलज्ञानस्य तु लोहार्यं आनीतवान्, तथा चोक्तं—"धन्नो सो लोहज्जो खंतिखमो पवरलोहसरिवन्नो। जस्स जिणो पत्ताओ इच्छइ पाणीहिं भोत्तुं जे ॥ १ ॥" अथोत्पन्नेऽपि केवलज्ञाने कस्मान्न भिक्षार्थं भगवानटति?, उच्यते, तस्यामवस्थायां भिक्षाटने प्रवचनलाघवसम्भवात्, उक्तं च—"देविंदचक्कवट्टी मंडलिया ईसरा तलवरा य। अभिगच्छंति जिणिंदं गोयरचरियं न सो अडइ ॥ १ ॥" एतत्प्रसङ्गत उक्तम्, एवं तत्र भगवान् अर्द्धमासं स्थित्वा ततो पच्छा अट्ठियगामं गतो, तस्स पुण अट्ठियगामस्स पढमं वद्धमाणयमिति नाम होत्था। सो य किह अट्ठियगामो जातो?, भण्णइ—

धणदेवो नाम वाणियओ, पंचहिं सगडसएहिं गणिमधरिममेज्जभरिएहिं तस्संतेणागतो, तस्स समीवे वेगवई नाम नदी, तं सगडाणि उत्तरंति, तस्स एगो बइल्लो सो मूलधुरे जुप्पइ, तस्स बलेण ताणि सगडाणि उत्तिन्नाणि, पच्छा सो तुट्ठो पडिओ, सो वाणियतो तस्स तणपाणियं पुरतो छड्डेऊण तं अवहाय गतो, सोऽवि तत्थ वालुगाए जेट्ठामूलमासे अईव उण्हाए तण्हाए छुहाए य परितावित्रज्जइ, वद्धमाणवत्थव्वगो य लोगो तेणंतेणं पाणियं तणं च वहइ, न य तस्स कोइवि देइ, ततोऽसौ गोणो तस्स पदोसमावन्नो, अकामतण्हाए छुहाए य मरिऊणं तत्थेव गामे अग्गुज्जाणे सूलपाणी जक्खो उप्पण्णो, उवउत्तो पासइ तं बलइसरीरं, ताहे रुसितो मारिं विउवइ, सो गामो मरिउमारद्धो, ततो अद्धन्ना कोउगसयाणि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करेंति, तहवि न ठाइ, ताहे भिन्नो गामो, अन्नगामेसु संकंतो, तत्थवि न मुंचइ, ताहे तेसिं चिंता जाया–अम्हेहिं तत्थ न नज्जइ कोऽवि देवो वा दाणवो वा विराहितो, तम्हा तहिं चेव ठामो, आगया समाणा नगरदेवयाए विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेंति, बलिं दाऊण समन्ततो उम्मुहा सरणं सरणं सरणंति भणंति, जं अम्हेहिं संमं न चेट्ठियं तस्स खमह, ताहे अंतलिक्खपडिवन्नो सो देवो भणइ–तुब्भे दुरप्पा निरणुकंपा तेणंतेण एहह जायह, तस्स तणं वा पाणियं वा न दिन्नं, अतो नत्थि भे मोक्खो, ततो ते ण्हाया पुप्फबलिहत्थगया भणंति–दिट्ठो कोवो, पसायमिच्छामो, ताहे भणइ–एयाणि माणुसट्ठियाणि पुंजं काऊण उवरि देवलं कारेह, सूलपाणिं च तत्थ जक्खं बलिवद्दं च एगपासे, अन्ने भणंति–तं बइल्लरूवं करेह, तस्स य हेट्ठा ताणि से अट्ठिगाणि निहणह, ताहे अचिरेण कयं, तत्थ इंदसम्मो नाम पडियरगो कओ, ताहे लोओ पंथिगाई पेच्छति पंडरट्ठियं गामं देवकुलं च, ताहे अन्ने पुच्छंति–कयरातो गामातो आगया ?, भणंति–जत्थ ताणि अट्ठियाणि, एवं सो अट्ठियग्गामो जातो, तथ पुण वाणमंतरघरे जो रत्तिं परिवसइ सो तेण सूलपाणिणा वाहित्ता पच्छा रत्तिं मारिज्जइ, ताहे तत्थ दिवसं लोगो अच्छइ, पच्छा अन्नत्थ गच्छइ, इंदसम्मोऽवि धूवं दीवगं च दाउं दिवसतो जाति, इतो य तत्थ सामी आगतो दूइज्जंतगाण पासातो, तत्थ य सव्वो लोगो पिंडितो अच्छइ, सामिणा देवकुलितो अणुण्णवितो, सो भणइ–गामो जाणइ, सामिणा गामो मिलितो चेव अणुन्नवितो, गामो भणइ–एत्थ न सक्का वसिउं, सामी भणइ–तुज्झे ताव अणुजाणह, ते भणंति–ठाह, तत्थेक्केक्को वसहिं देइ, सामी नेच्छइ, जाणइ सो संबुज्झिहिइ, ततो गंता एगे कूणे पडिमं ठितो, ताहे सो इंदसम्मो चिट्ठंते चेव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूरे धुवपुप्फं दाऊण कप्पडियकरोडिया सवे पलोइत्ता भणति–आह, मा विणस्सह, तंपि देवज्जगं भणइ–तुम्हेवि नीह, मा मरिजिहिह, भयवं तुसिणीतो चिट्ठइ, ताहे सो वैसरो चिंतेइ–देवकुलिएण य गामेण य भग्गंतोऽवि न जाइ वेण्ण जं से करेमि, ताहे संझाए भीमं अट्टहासं मुयंतो भीहावेइ ॥ अभिहितार्थोपसंहारायेदं गाथाद्वयमाह—

दूइज्जंतग पिउणो वयंस तिवे अभिग्गहे पंच । अचियत्तुग्गहऽनिवसण निच्चं वोसट्ठ मोणेणं ॥ ४६२ ॥
पाणीपत्तं गिहिवंदणं च तह वद्धमाण वेगवई । खणदेव सूलपाणिंद्रसम्म वासऽट्ठियग्गामे ॥ ४६३ ॥

विहरतो मोराकसंनिवेशं प्राप्तस्य सन्निवासी दूइज्जंतकाभिधानपाषंडस्था दूइज्जंतका एवोच्यंते, पितुः–सिद्धार्थस्य वयस्यो–मित्रं स भगवन्तमभिवाद्य वसतिं दत्तवानिति वाक्यशेषः, विहृत्य चान्यत्र वर्षाकालगमनाय पुनस्तथैवागतेन विदितः कुलपत्यभिप्रायः, तीव्रा–रौद्रा अभिग्रहाः पञ्च, गृहीता इति शेषः, ते चामी—'अचियत्त'त्ति देशीवचनमप्रीत्यभिधायकं, ततस्तत्स्वामिनो न प्रीतिर्यस्मिन्नवग्रहे सोऽप्रीत्यवग्रहस्तस्मिन् न वसनं–न वस्तव्यं तत्र मयेत्येकोऽभिग्रहः, 'निच्चं वोसट्ठ मोणेणं'ति नित्यं–सदा व्युत्सृष्टकायेन स्थातव्यमिति द्वितीयः, सदा मौनेन विहर्त्तव्यमिति तृतीयः, यदि परं तथाविधे प्रयोजने एकं द्वे वा वचने वक्तव्ये, 'पाणीपत्तं'ति पाणिपात्रभोजिना भवितव्यमिति चतुर्थः, 'गिहिवंदणं चे'ति गृहस्थस्य वन्दनं चशब्दादभ्युत्थानं च न कर्त्तव्यम्, एतान् पञ्चाभिग्रहान् गृहीत्वा तथा तस्मान्निर्गत्य 'वास अट्ठियग्गामे'त्ति वर्षाकालमस्थिकग्रामे, स्थित इत्यध्याहारः, स चास्थिकग्रामः पूर्वं वर्द्धमानाभिधः खल्वासीत्, पश्चाद-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

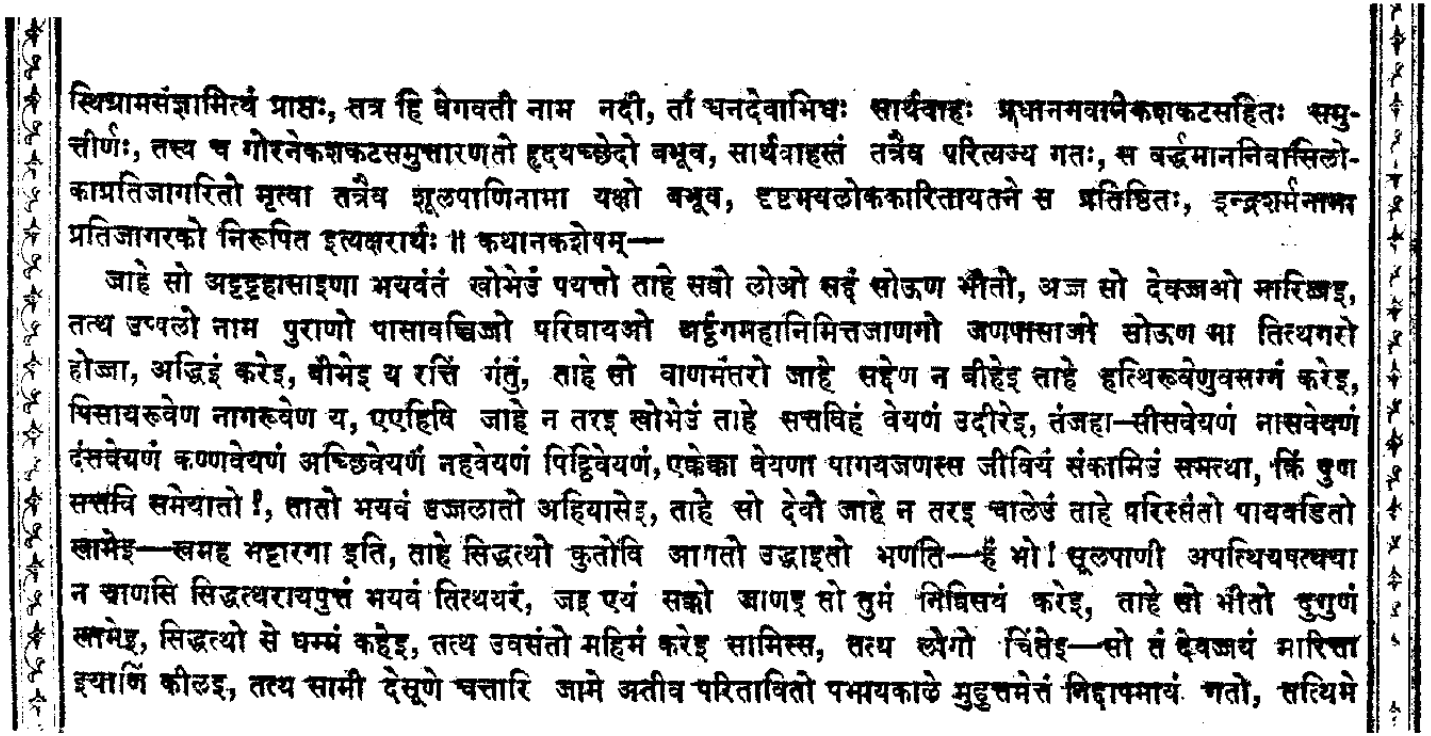

स्थिग्रामसंज्ञामित्यं प्राप्तः, तत्र हि वेगवती नाम नदी, तां धनदेवाभिधः सार्थवाहः प्रधानगवामेकशकटसहितः समुत्तीर्णः, तस्य च गोरनेकशकटसमुत्तारणतो हृदयच्छेदो बभूव, सार्थवाहस्तं तत्रैव परित्यज्य गतः, स वर्द्धमाननिवासिलोकाप्रतिजागरितो मृत्वा तत्रैव शूलपाणिनामा यक्षो बभूव, दृष्टभयलोककारितायतने स प्रतिष्ठितः, इन्द्रशर्मनाम्ना प्रतिजागरको निरूपित इत्यक्षरार्थः ॥ कथानकशेषम्—

जाहे सो अट्टट्टहासाइणा भयवंतं खोभेउं पयत्तो ताहे सबो लोओ सद्दं सोऊण भीतो, अज्ज सो देवज्जओ मारिज्जइ, तत्थ उप्पलो नाम पुराणो पासावच्चिज्जो परिवायओ अट्ठंगमहानिमित्तजाणगो जणपासाओ सोऊण भा तित्थगरो होज्जा, अद्धिइं करेइ, बीभेइ य रत्तिं गंतुं, ताहे सो वाणमंतरो जाहे सद्देण न बीहेइ ताहे हत्थिरूवेणुवसग्गं करेइ, पिसायरूवेण नागरूवेण य, एएहिवि जाहे न तरइ खोभेउं ताहे सत्तविहं वेयणं उदीरेइ, तंजहा—सीसवेयणं नासवेयणं दंतवेयणं कण्णवेयणं अच्छिवेयणं नहवेयणं पिट्ठिवेयणं, एक्केक्का वेयणा पागयजणस्स जीवियं संकामिउं समत्था, किं पुण सत्तवि समेयातो?, तातो भयवं उज्जलातो अहियासेइ, ताहे सो देवो जाहे न तरइ चालेउं ताहे परिस्संतो पायवडितो खामेइ—खमह भट्टारगा इति, ताहे सिद्धत्थो कुतोवि आगतो उड्डाइतो भणति—हं भो! सूलपाणी अपत्थियपत्थया न याणसि सिद्धत्थरायपुत्तं भयवं तित्थयरं, जइ एयं सक्को आणइ सो तुमं निव्विसयं करेइ, ताहे सो भीतो दुगुणं खामेइ, सिद्धत्थो से धम्मं कहेइ, तत्थ उवसंतो महिमं करेइ सामिस्स, तत्थ लोगो चिंतेइ—सो तं देवज्जयं मारित्ता इयाणिं कीलइ, तत्थ सामी देसूणे चत्तारि जामे अतीव परितावितो पभायकाले मुहुत्तमेत्तं निद्दापमायं गतो, तत्थिमे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दस महासुमिणे पासइ, तंजहा–तालपिसातो हतो, सेयसउणो चित्तकोइलो य दोवि एए पज्जुवासंता दिट्ठा, दामदुगं च सुरभिकुसुममयं, गोवग्गो पज्जुवासंतो, परमसरो विबुद्धपंकजो, सागरो य मे नित्थिन्नो, सूरो य पइन्नरस्सिमंडलो उग्गमंतो, अंतेहि य मे माणुसुत्तरो पवतो वेढितो, मंदरं चारूढो मित्ति, एए सुमिणे पासित्ताणं पडिबुद्धो, लोगो पभाए आगतो, उप्पलो य इंदसम्मो य, ते य अच्चणियं दिवगंधचुन्नपुप्फवासं च पासंति, भट्टारगं च अक्खयसवंगं, ताहे सो लोगो सवो सामिस्स उक्कट्ठिसीहनायं करेंतो पाएसु पडितो भणइ–जहा देवज्जएण देवो उवसामितो, महिमं पकतो, उप्पलोवि सामिं दट्ठूण वंदिय भणियाइतो—सामी ! तुब्भेहिं अंतिमराईए दस सुमिणा दिट्ठा, तेसिमं फलं–जो तालपिसातो हतो तमचिरेण मोहणिजं उम्मूलेहिसि १ जो य सेयसउणो तं सुक्कझाणं काहिसि २ जो विचित्तो कोइलो तं दुवालसंगं पण्णवेहिसि ३ गोवग्गफलं ते चउविहो समणो समणी सावग सावियाओ संघो भविस्सइ ४ पउमसराओ य चउविहदेवसंघातो भविस्सइ ५ जं च सागरो तिन्नो तं संसारमुत्तारिहिसि ६ जो य सूरो तमचिरा केवलनाणं ते उप्पिजिहिइ, ७ जं अन्तेहिं माणुसुत्तरो वेढितो तं ते निम्मलजसकित्तिपयावो सयलतिहुयणे भविस्सइ ८ जं च मंदरमारूढो सि तं सीहासणत्थो सदेवमणुयासुराए परिसाए धम्मं पन्नवेहिसि ९ दामगदुगं पुण न याणामि, सामी भणइ—हे उप्पल ! जण्णं तुमं न याणसि तण्णं अहं दुविहं सागाराणगारियं धम्मं पण्णवेहामि १०, ततो उप्पलो वंदित्ता गतो, तत्थ सामी अद्धमासंअद्धमासेण खमइ, एस पढमो वासारत्तो १। ततो सरए निग्गंतूण मोरागसंनिवेसं गतो, तत्थ सामी बाहिं उज्जाणे ठितो, तत्थ मोरागसंनिवेसे अच्छंदो कुंटलवेंटलेणं जीवइ, कुंटलविंटलं नाम खडियाचुप्पडियादि, सिद्धत्थो एकलतो दुक्खं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

अच्छइ, भयवतो थूयं च चिंतेइ, ताहे सो तेणंतेणं एगं गोवं वोलंतगं सद्दावित्ता भणइ, जहिं पहावितो जहिं जिमितो जं च जिमित्तो पंथे य जं च दिट्ठं, दिट्ठो य जारिसो रत्तीए सुमिणो, तं सव्वं वागरेइ, सो आउट्टो गंतुं गामे परिचियाणं कहेइ, तेहिं गामे पकासियं—एस देवज्जतो उज्जाणे तीयाणागयवट्टमाणं जाणइ, ताहे सव्वो लोगो आगतो, सव्वस्स सिद्धत्थो भयवंतमुहेण वागरेइ, लोगो आउट्टो महिमं करेइ, लोगेण अविरहितो अच्छइ, ताहे सो लोगो भणइ—एत्थ अच्छंदगो नाम जाणगो, सिद्धत्थो भणइ—सो न किंचि जाणइ, ताहे लोगो गंतुं भणइ—तुमं न किंचि जाणासि, देवज्जतो जाणइ, सो लोयमज्झे अप्पाणं ठावेउकामो भणइ—एह जामो जइ मज्झ पुरतो जाणइ तो जाणइ, ताहे लोगेण परिवारितो एइ, भयवतो पुरतो ठितो तणं गहाय भणइ—एयं तणं छिज्जिहिइ न वा?, सो चिंतेइ—जइ भणइ न छिज्जिहिइ तो णं छिंदिस्सं, अह भणइ—छिज्जिहिइ तो ण छिंदिस्सं, ततो सिद्धत्थेण भणियं—न छिज्जिहिइ, सो छिंदिउमाढत्तो, एत्थंतरे सक्केण उवओगो दिन्नो, वज्जं पक्खित्तं, अच्छंदगस्स अंगुलीतो दसवि भूमीए पडियातो, ताहे लोगेण खिंसितो, सिद्धत्थो य से रुट्ठो ॥ अमुमेवार्थं समासेनाभिधित्सुराह—

रुद्दा य सत्त वेयण थुइ दस सुमिणुप्पलऽद्धमासे य। मोराए सक्कारं सक्को अच्छंदए कुवितो ॥ ४६४ ॥

अक्षरगमनिका—रौद्राः सप्त वेदनाः शूलपाणिना यक्षेण कृताः, तदनन्तरं तेनैव स्तुतिः कृता, ततो दश स्वप्ना भगवता दृष्टाः, उत्पलश्च तेषां फलं जगाद, 'अद्धमासे य'त्ति भगवान् तत्रार्द्धमासमर्द्धमासं क्षपणमकार्षीत्, ततो भगवतो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

उपोद्घात-निर्युक्तौ श्रीवीर चरिते ॥२७१॥

मोरायां गतस्य लोकः सत्कारं चकार, शक्रोऽच्छन्दके तीर्थंकरहीलनापरे कुपितः ॥ इयं निर्युक्तिगाथा, एतास्त्वस्या एव व्याख्यानभूता मूलभाष्यकारगाथाः—

भीमऽट्टहास हत्थी पिसाय नागे य वेयणा सत्त। सिरकन्ननासदंते नहऽच्छि पिट्ठी य सत्तमिया ॥११२ मू.भा० ॥
तालपिसायं दो कोइला य दामदुगमेव गोवग्गं। सर सागर सूरंतो मंदर सुमिणुप्पले चेव ॥११३॥ मू. भा. ॥
मोहे य झाण पवयण धम्मे संघे य देवलोगे य। संसारं नाण जसे धम्मं परिसाए मज्झम्मि ॥११४॥ मू. भा. ॥
मोराए संनिवेसे बाहिं सिद्धत्थ तीयमाईणि। साहइ जणस्स अच्छंद पओसा छेयणे सक्को ॥ १९ ॥ प्र. ॥

प्रथमतः शूलपाणिना भीमोऽट्टहासः कृतः, तदनन्तरं हस्ती विकुर्वितः ततः पिशाचः ततो नागः, तदनन्तरं सप्त वेदना उदीरिताः, तद्यथा—'सिर'त्ति शिरोवेदना, एवं कर्णवेदना नासावेदना दन्तवेदना नखवेदना अक्षिवेदना पृष्ठवेदना च सप्तमिका ॥ यदुक्तम्—'दस सुमिण'त्ति तान् दश स्वप्नानाह—'तालपिसाउ'इत्यादि, प्रथमं तालपिशाचं दृष्टहतवान्, तदनन्तरं द्वौ कोकिलौ, तद्यथा–एकः श्वेतोऽपरो विचित्रः, ततो दामद्वयं, तदनन्तरं गोवर्गं, ततः सरः, तदनन्तरं सागरं, ततः सूर्यं, ततोऽन्त्रं, तदनन्तरं मन्दरं, 'सुविणुप्पले चेव'त्ति एतान् स्वप्नान् दृष्टवान्, उत्पलश्च फलं कथितवान्, तच्चेदम्—योऽसौ तालपिशाचः स किल मोहः, श्वेतकोकिलः शुक्लध्यानं, यस्तु विचित्रः कोकिलस्तत् किल द्वादशाङ्गं प्रवचनं, यद् दामद्विकं स यतिश्रावकभेदेन द्विप्रकारो धर्म्मः, गोवर्गश्चतुर्विधः श्रीश्रमणसङ्घः, पद्मसरश्चतुर्विधो देवसङ्घातः, सागरः संसारः, सूर्यो ज्ञानं–केवलज्ञानं, अन्त्रेण मानुषोत्तरपर्वतवेष्टनं निर्मलयशःकीर्त्तिप्रतापः, मन्दरारोहणं धर्म्मं

शूलपाणि-कृता उपसर्गाः

॥२७१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र 'मोराए संनिवेसे०' इति एका प्रक्षेपा गाथा वर्तते

प्रज्ञापयितुकामेन सदेवमनुजायाः पर्षदो मध्ये सिंहासने उपवेशनं ॥ ततो भगवान् मोराकसंनिवेशे गत्वा तत्र बहिरुद्याने स्थितः, सिद्धार्थस्तत्र एकाकी स्थातुमशक्तो भगवतः पूजार्थं च जनस्य—लोकस्यातीतादीनि साधयति–कथयति, ततः प्रद्वेषात्–मात्सर्यादच्छन्दकः समागतः, स तृणस्य छेदने प्रश्नं कृतवान्—किमिदं त्रुटिष्यति न वा ?, सिद्धार्थेनोक्तं—न त्रुटिष्यति, अत्रान्तरे च शक्र उपयुक्तवान् ॥ कथानकशेषम्—

ततो सिद्धत्थो तस्स पदोसमावन्नो तं लोगं भणइ–एस चोरो, लोगो भणति–कस्स तेण चोरियं ?, सिद्धत्थो भणइ-अत्थि एत्थ वीरघोसो नाम कम्मकरो ?, सो पाएसु पडितो, अहं मुत्ति, अत्थि तुब्भं अमुए काले दसपलपमाणं वट्टयं नट्ठपुव्वं ?, आमं अत्थि, तं एएण हरियं, तं पुण कहिं ?, एयस्स पुरोहडे महिसेंदुरुक्खस्स पुरत्थिमेणं हत्थमेत्तं गंतूण निक्खित्तं, वच्चह तत्थ, खणिउं गेण्हह, ताहे ते गया, दिट्ठं, आगया कलकलं करेमाणा, अन्नपि सुणेह—अत्थि इह इंदसम्मो नाम गहवती ?, तेहिं भणियं–अत्थि, ताहे सो सयमेव उट्ठितो भणइ—अहं, आणवेह, अत्थि तुज्झं ऊरणओ अमुके काले नट्ठपुव्वो ?, सो एएण मारित्ता खइओ, अट्ठियाणि से बदरीए दाहिणपासे उक्कुरुडियाए निहियाणि, ते गया जाव दिट्ठाणि, ततो उक्कुट्ठिकलयलं करेंता आगया, ताहे भणइ–एयं बिइयं। अमुमेवार्थं प्रतिपादयन्नाह निर्युक्तिकारः–

तणछेयंगुलि कम्मारवीरघोस महिसिंदु दसपलिए । बिइयेंदसम्मऊरणग बयरीए दाहिणुक्कुरुडे ॥ ४६५ ॥

अच्छंदकस्तृणं जग्राह, छेदोऽङ्गुलीनां खलु देवराजेन कृतः, कर्मारः–वीरघोषो नाम कर्म्मकारस्तत्सम्बंध्येतेन दश-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पलप्रमाणं करोटकं गृहीत्वा महिषेन्दुवृक्षस्याधः स्थापितं, एकं तावदिदं, द्वितीयमिन्द्रशर्मण ऊरणकोऽनेन भक्षितः, तस्यास्थीनि चाद्यापि बदर्या अधो दक्षिणे पार्श्वे उत्कुरटिकायां तिष्ठन्ति ॥ ततो सिद्धत्थो भणइ–तइयं पुण अवच्चं, अलाहि तेण कहिएण, ताहे ते निब्बंधं करेंति, पच्छा भणइ–भज्जा से कहिहेइ, सा पुण तस्स चेव छिद्दाणि मग्गमाणी अच्छइ, ताहे ताए सुयं–जहा सो विधंमितो अंगुलीतो से छिन्नातो, सा य तेण तद्दिवसं पिट्टिया, सा चिंतेइ— नवरि एउ गामो ताहे साहामि, आगया ते, गामपुरिसा पुच्छिंति, सा भणइ–मा से नामं गिण्हह, भगिणीए पइत्तणं करेइ, ममं नेच्छइ, ताहे उक्कुट्ठिं करेमाणा तं भणंति,–एस पावो, एवं तस्स उड्डाहो जातो जहा न कोऽपि भिक्खंपि देइ, ताहे सो अप्पसागारियं आगतो भणइ–भयवं ! तुब्भे अन्नत्थवि पुज्जा, अहं कहिं जामि ?, ताहे अचियत्तोग्गहोत्तिकाऊण सामी निग्गतो, ततो वच्चमाणस्स अंतरा दो वाचालातो–दाहिणवाचाला य उत्तरा चावाला य, तासिं दोण्हवि अंतरा दो नदीतो, तंजहा–सुवण्णवालुगा रुप्पवालुगा य, ताहे सामी दाहिणचावालातो संनिवेसातो उत्तराचावालं वच्चइ, तत्थ सुवण्णवालुयाए नदीए पुलिणे कंटियाए तं वत्थं विलग्गं, सामी गतो, पुणो अवलोइयं, किं निमित्तं ?, केइ भणंति–जहा ममत्तीए, अवरे भणंति–किं थंडिले पडियं अथंडिले वा ?, अण्णे भणंति–सहसाकारेणं, केई पुण एवं वयंति–सुलभं वत्थपत्तं सिस्साणं भविस्सइ दुलहं वा?, एयनिमित्तमवलोइयं, तं च भगवया तेरस मासे अहाभावेण धरियं, ततो वोसिरियं, ततो सामी अचेलए विहरइ, तं च तेण पिउवयंसधिज्जाइएण गहियं, तुण्णागस्स उवणीयं, सयसहस्समोलं जायं, इमस्सवि पण्णासं सहस्साइं पण्णासं सहस्साइं जायाइं ॥ अमुमेवार्थमाह—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तइयमवचं भज्जा कहए नाहं ततो पिउवयंसो। दक्खिणचावाल सुवन्नवालुया कंटए वत्थं ॥ ४६६ ॥

तृतीयं पुनः पदमवाच्यं, तत् तस्यैव भार्या कथयिष्यति, नाहं, सा कथितवती, ततो भगवान् निर्गतः, ततः पितृवयस्यो दक्षिणचावालात् सन्निवेशादुत्तरचावालं प्रति प्रस्थितस्य भगवतो वस्त्रं सुवर्णवालुकाया नद्याः पुलिने कण्टके लग्नं गृहीतवान् ॥

ताहे सामी उत्तरवाचालं वच्चइ, तत्थ अंतरा कनकखलं नाम आसमपदं, तत्थ दो पंथा–उज्जुगो वंको य, जो सो उज्जुगो सो कणकखलमज्झेणं वच्चइ, वंको परिहरंतो, सामी उज्जुगेण पहाविओ, गोवालेहिं वारितो–देवज्जगा ! मा एएण मग्गेण गच्छह, एत्थ दिट्ठीविसो सप्पो अच्छइ, सामी जाणइ–जहा स भवितो संबुज्झिहिइ, ताहे गतो, गंतूण जक्खघरमंडवियाए पडिमं ठितो, सो पुण सप्पो को पुवभवे आसि ?, भण्णइ–खमगो, पारणगे खुड्डएण समं वासियभत्तस्स गतो, तेण मंडुक्किया विराहिया, सो खुड्डएण पडिचोइतो, ताहे सो अन्नं मतेल्लियं दरिसेइ, भणइ—इमावि मए मारिया ?, जातो लोएण मारियातो तातो सवातो दरिसेइ, ताहे खुड्डएण नायं–वियाले आलोहिइ, सो वियाले आवस्सगआलोयणाए आलोइत्ता निविट्ठो, खुड्डगो चिंतेइ–नूणं से विस्सरियं, ताहे संभारियं, रुट्ठो खुड्डगस्स आहणामित्ति उड्डाइतो, तत्थ खंभे आवडितो मतो, विराहियसामन्नो जोइसिएसु उववन्नो, ततो चुतो कणगखले पंचण्हं तावससयाणं कुलवइस्स भारियाए तावसीए उयरे आगतो, दारगो जातो, तत्थ से कोसिउत्ति नामं कयं, सो अईवपुवभवसहावेण चंडकोवो, तत्थ य अन्नेऽवि अत्थि कोसिया, ततो तस्स चंडकोसिउत्ति नामं कयं, सो य कुलवती मतो, पच्छा सो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुवलती जातो, सो तत्थ वणसंडे मुच्छितो, तेसिं तावसाणं ताणि फलाणि न देइ, ते अलभंता गया दिसोदिसिं, जेऽवि तत्थ गोवालाई एइ तंपि हंतूण धाडेइ, तस्स य अदूरे सेयविया नाम नगरी, ततो रायपुत्तेहिं आगंतूण विरहिए सो वणसंडो पडिनिवेसेण भग्गो विणासिओ य, तस्स गोवालएहिं कहियं, सो तया कंटियाणं गतो आसि, ततो कंटियातो छड्डित्ता परसुहत्थो रोसेण धमधमंतो गतो, कुमारेहिं दिट्ठो आगच्छंतो, तं दट्ठूण पलाया, सो परसुहत्थो पधावंतो खुड्डु आवडिऊण पडितो, सो कुहाडो उद्धो ठितो, तत्थ से सिरं दोभागे कयं, तत्थ मतो तम्मि वणसंडे दिट्ठीविसो सप्पो जातो, तेण रोसेण लोभेण य तं वणसंडं रक्खइ, ते तावसा सवे दड्ढा, जे अद्दड्ढगा ते नट्ठा, सो तिसंझं वणसंडं परिअंचिऊण जं सउणगमवि पासइ तं दहइ, ताहे सामी तेण दिट्ठो, ततो आसुरुत्तो मम न जाणसि?, सूरं निज्झाएत्ता पच्छा सामिं पलोएइ, सो न डज्झइ जहा अन्नो, एवं दो तिन्नि वारे, ताहे गंतूण डसइ, अवक्कमइ मा मे उवरिं पडिहिइ, तहवि न मरइ, एवं तिन्नि वारे, ताहे पलोयंतो अमरिसेणं अच्छइ, तस्स भगवतो रूवं पेच्छंतस्स ताणि विसभरियाणि अच्छीणि विज्झाइयाणि सामिणो कंतिसोम्मयाए, ताहे सामिणा भणियं–उवसम! भो चंडकोसिया!, ताहे तस्स ईहापोहमग्गणगवेसणं करेंतस्स जाईसरणं समुप्पण्णं, ताहे तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेंतो मणसा भत्तं पच्चक्खाइ, तित्थगरो जाणइ, ताहे सो बिले तुंडं छोढूण ठितो, माऽहं रुट्ठो संतो लोगं मारेहं, सामी तत्थ अणुकंपणट्ठाए अच्छइ, सामिं दट्ठूण गोवालवच्छवाला अल्लियंति, रुक्खेहिं आवरित्ता पाहाणे खिवंति, न चलइत्ति अल्लीणा, कट्ठेहिं घट्टितो, तहवि न फंदइ, ताहे लोगो आगंतुं सामिं वंदित्ता तंपि सप्पं वंदति महति अ, अन्नाओ य घयविक्कणियातो तं सप्पं घएण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मक्खंति, ततो सो पिवीलियाहिं गहितो, तं वेयणं सम्मं अहियासेइ, अद्धमासे कालगतो सहस्सारे उववन्नो ॥ अमुमेवार्थमुपसंहरन्नाह—

उत्तरचावालंतर वणसंडे चंडकोसिओ सप्पो । न डही चिंता सरणं जोइस कोवाऽहि जाओऽहं ॥ ४६७ ॥

उत्तरचावालान्तरवनखण्डे चण्डकौशिकः सर्पः, स भगवन्तं न ददाह, ततश्चिन्ता बभूव, तदनन्तरं जातिस्मरणं यथाऽहं ज्योतिष्कः क्रोधादहिर्जातोऽहमिति अक्षरगमनिका, भावार्थः प्रागुक्त एव ॥

उत्तरचावाला नागसेण खीरेण भोयणं दिन्नं । सेयवियाए पदेसी पंचरहो णेज्जरायाणो ॥ ४६८ ॥

उत्तरचावालो नाम सन्निवेशः, तत्र भगवान् पक्षक्षपणपारणके गतः, तत्र नागसेनेन क्षीरभोजनेन प्रतिलाभितः, पञ्च दिव्यानि प्रादुर्भूतानि, ततः श्वेताम्ब्यां नगर्यां गतः, तत्र प्रदेशी राजा, स भगवतो महिमां कृतवान्, तथा पञ्चभी रथैरागता ये प्रदेशिपार्श्वे निजा एव निजका—नैयकगोत्रा राजानस्तेऽपि महिमां कृतवन्तः ॥ एषोऽक्षरार्थो, भावार्थः कथानकादवसेयः, तच्चेदम्—

ततो सामी उत्तराचावालं गतो, तत्थ पक्खक्खमणपारणे नागसेणेण गाहावइणा खीरभोयणेण पडिलाभितो, पंच दिव्वाणि पाउब्भूयाणि, ततो सेयवियं गतो, तत्थ पएसी राया समणोवासतो भयवतो महिमं करेइ, ततो भयवं सुरभिपुरं वच्चइ, तत्थ अंतराए णिज्जया रायाणो पंचहिं रहेहिं एंति पएसिरन्नो पासं, तेहिं तत्थ सामी वंदितो पूइतो य, ततो सामी सुरभिपुरं गतो, तत्थ गंगा उत्तरियव्वा, तत्थ सिद्धजत्तो नाम नाविको, खेमिलो नाम सउणजाणतो, तत्थ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नावाए लोगो विलग्गइ, एत्थंतरे कोसिएण महासउणेण वासियं, कोसिओ नाम उलूगो, खेमिलेण भणियं–जारिसं सउणेण भणियं तारिसं अम्हेहिं मारणंतियं पावियव्वं, किंतु इमस्स महारिसिस्स पहावेण मुच्चीहामो, सा य नावा पहाविया, सुदाढेण नागकुमारराएण भयवं! नावाए ठितो दिट्ठो, तस्स कोवो जातो, सो य किर जो सो सीहो वासुदेवत्तणे मारितो सो संसारं भमिऊण सुदाढो नागो जातो, सो संवट्टगवायं विउव्वित्ता नावं उव्वोलेउं इच्छइ, इतो य कंबलसंबलाण आसणं चलियं। का पुण कंबलसंबलाणं उप्पत्ती?

महुराए नयरीए जिणदासो वाणियओ सड्ढो, सामीदासी सावियां, दोऽवि अहिगयतत्ताणि, परिग्गहियपरिग्गहपरिमाणाणि, तेहिं चउप्पयस्स पच्चक्खायं, ततो दिवसदेवसियं गोरसं गेण्हंति, तत्थ आभीरी गोरसं गहाय आगया, सा ताए साविआए भन्नइ–मा तुमं अन्नत्थ भमाहि, जत्तियं आणेसि तत्तियं गेण्हामि, एवं तासिं संगयं जायं, इमावि से गंधपुडियाइ देइ, इयरी कूइयातो दुद्धं दहिं वा देइ, एवं तासिं दढं सोहियं जायं, अन्नया तासिं गोवालाणं वीवाहो जातो, ताहे ताणि निमंतेंति, ताणि भणंति–अम्हे वाउलाणि न तरामो गंतुं, जं तत्थ उवजुज्जइ भोयणे कडुगभंडाइ वत्थाणि आभरणाणि धूवपुप्फगंधमल्लाइ वा तं तेहिं दिन्नं, तेहिं अतीव सोहावियं, लोगेण सलाहियाणि, तेहिं तुट्ठेहिं दो तिवरिसा गोणपोयया दढसरीरा उवट्ठविया कंबलसंबलेत्ति नामेणं, ताणि नेच्छंति, बलावि बंधिऊण गयाणि, ताहे तेण सावएण चिंतियं–जइ मुच्चीहंति तो लोगो वाहिइ, ता एत्थ चेव अच्छंतु, फासुगचारी किणिऊणं दिज्जइ, एवं पोसिज्जंति, सोऽवि सावतो अट्ठमिचउद्दसीसुं उववासं करेइ, पुत्थयं च वाएइ, तेऽवि तं सोऊण भद्दया जाया, सण्णिणो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

य, जहिवसं सावगो न जेमेइ तद्दिवसं न जेमेंति, तस्स सावगस्स भावो जातो–जहा इमे भविया उवसंता, अब्भहिओ य नेहो जातो, ते रूवस्सिणो, तस्स य सावगस्स मित्तो, तत्थ भंडीरमणजत्ता, तारिसा नत्थि अन्नस्स वइल्ला, ताहे ते भंडीए जोइत्ता णीया अणापुच्छाए, तत्थ अण्णेणवि अन्नेणवि समं वादं कारिया, ताहे छिन्ना, तेण ते आणेउं बद्धा, न चरंति न य पाणियं पियंति, जाहे सव्वहा नेच्छंति ताहे सो सावतो भत्तं पच्चक्खाइ नमोक्कारं च देइ, ते काउगया नागकुमारेसु उववन्ना, ओहिं पउंजंति, जाव पेच्छंति तित्थगरस्स उवसग्गं कीरमाणं, ताहे णेहिं चिंतियं–अलाहि ता अन्नेण, सामिं मोएमो, आगया, एगेण नावा गहिया, एगो सुदाढेण समं जुज्झइ, सो महिड्ढिगो, तस्स पुण चवणकालो, इमे णु अहुणोववन्नया, सो तेहिं पराइतो, ताहे ते नागकुमारा तित्थयरस्स महिमं करेंति, सत्तं रूवं च गायंति, एवं लोगोऽवि । ततो सामी उत्तिन्नो, तत्थ देवेहिं सुरहिगंधोदयवासं पुप्फवासं च वुट्ठं, तेऽवि पडिगया॥ अमुमेवार्थमुपसंहरन्नाह—

सुरभिपुर सिद्धदत्तो गंगा कोसिय विऊ य खेमलतो । नागसुदाढे सीहे कंबलसबलाण जिणमहिमा ॥४६९॥
महुराए जिणदासो आभीर विवाह गोण उववासो । भंडीरमणमित्त वच्चे भत्ते नागोहिआगमणं ॥ ४७० ॥
वीरवरस्स भगवतो नावारूढस्स कासि उवसग्गं । मिच्छादिट्ठिपरद्धं कंबलसबला समुत्तारे ॥ ४७१ ॥

सुरभिपुरं भगवान् गतः, तत्र गङ्गा नाम नदी, सिद्धयात्रो नाम नाविकः, तत्र नावमारोहति, जने कौशिको महाशकुनापरपर्यायो वासितवान्, खेमलकश्च शकुनविद्वान् अवादीत्–यदि परमेतस्य भगवतः प्रभावेन जीवाम इति,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

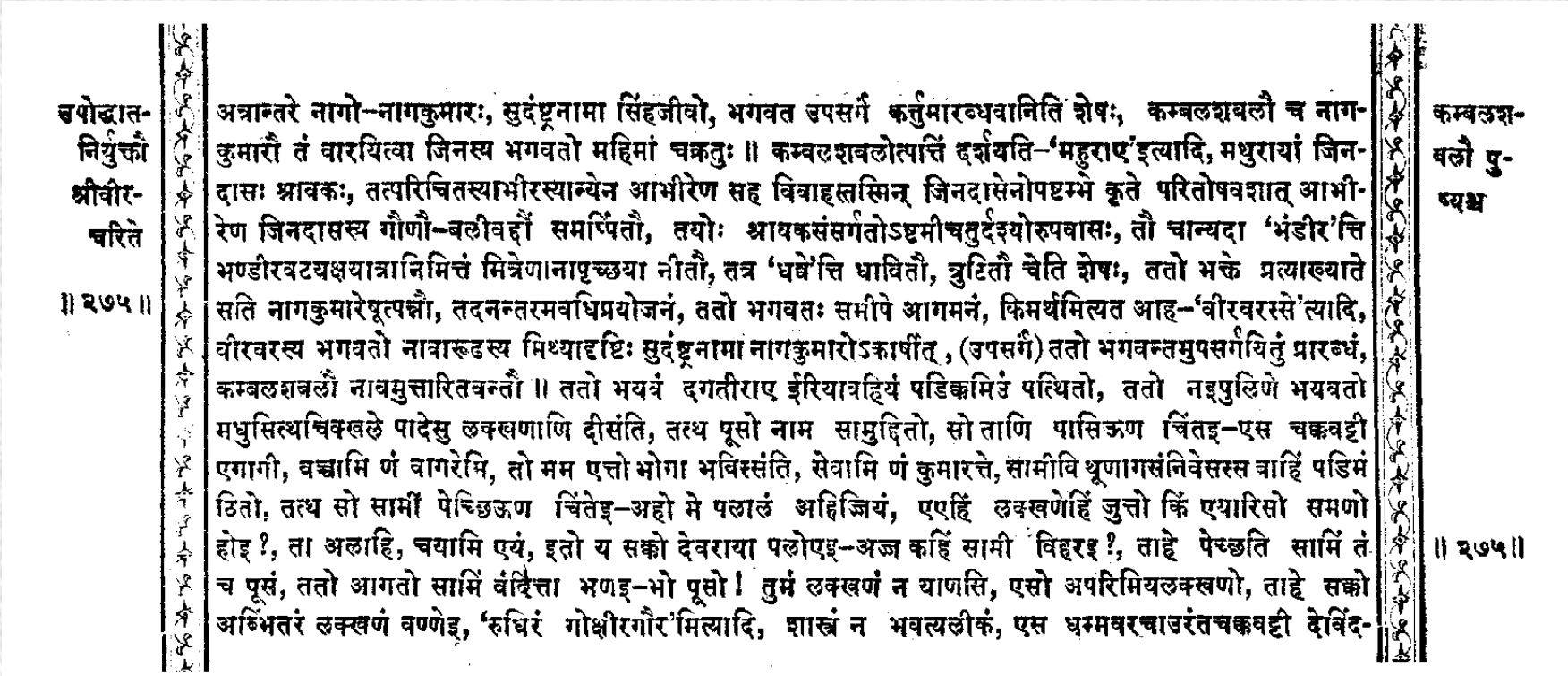

उपोद्घात-निर्युक्तौ श्रीवीर-चरिते

॥ २७५ ॥

अत्रान्तरे नागो–नागकुमारः, सुदंष्ट्रनामा सिंहजीवो, भगवत उपसर्गं कर्तुमारब्धवानिति शेषः, कम्बलशबलौ च नाग-कुमारौ तं वारयित्वा जिनस्य भगवतो महिमां चक्रतुः ॥ कम्बलशबलोत्पत्तिं दर्शयति–'महुराए'इत्यादि, मथुरायां जिन-दासः श्रावकः, तत्परिचितस्याभीरस्यान्येन आभीरेण सह विवाहलग्नसिन् जिनदासेनोपष्टम्भे कृते परितोषवशात् आभी-रेण जिनदासस्य गौणौ–बलीवर्दौ समर्पितौ, तयोः श्रावकसंसर्गतोऽष्टमीचतुर्दश्योरुपवासः, तौ चान्यदा 'भंडीर'त्ति भण्डीरवटयक्षयात्रानिमित्तं मित्रेणानापृच्छया नीतौ, तत्र 'धवे'त्ति धावितौ, त्रुटितौ चेति शेषः, ततो भक्ते प्रत्याख्याते सति नागकुमारेषूत्पन्नौ, तदनन्तरमवधिप्रयोजनं, ततो भगवतः समीपे आगमनं, किमर्थमित्यत आह–'वीरवरस्से'त्यादि, वीरवरस्य भगवतो नावारूढस्य मिथ्यादृष्टिः सुदंष्ट्रनामा नागकुमारोऽकार्षीत् , (उपसर्ग) ततो भगवन्तमुपसर्गयितुं प्रारब्धं, कम्बलशबलौ नावमुत्तारितवन्तौ ॥ ततो भयवं दगतीराए ईरियावहियं पडिक्कमिउं पत्थितो, ततो नइपुलिणे भयवतो मधुसित्थचिक्खले पादेसु लक्खणाणि दीसंति, तत्थ पूसो नाम सामुद्दितो, सो ताणि पासिऊण चिंतइ–एस चक्कवट्टी एगागी, वच्चामि णं वागरेमि, तो मम एत्तो भोगा भविस्संति, सेवामि णं कुमारत्ते, सामीवि थूणागसंनिवेसस्स बाहिं पडिमं ठितो, तत्थ सो सामीं पेच्छिऊण चिंतेइ–अहो मे पलालं अहिज्जियं, एएहिं लक्खणेहिं जुत्तो किं एयारिसो समणो होइ ?, ता अलाहि, चयामि एयं, इतो य सक्को देवराया पलोएइ–अज्ज कहिं सामी विहरइ ?, ताहे पेच्छति सामिं तं च पूसं, ततो आगतो सामिं वंदित्ता भणइ–भो पूसो ! तुमं लक्खणं न याणसि, एसो अपरिमियलक्खणो, ताहे सक्को अब्भितरं लक्खणं वण्णेइ, 'रुधिरं गोक्षीरगौरं'मित्यादि, शास्त्रं न भवत्यलीकं, एस धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टी देविंद-

कम्बलश-बलौ पु-ष्यश्च

॥ २७५ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नरिंदमहितो भवियजणकुमुयाणंदकारओ भविस्सइ, ततो सामी रायगिहं गतो, तत्थ नालंदाए बाहिरियाए तंतुवाय-सालाए एगंमि पदेसे अहापडिरूवं उग्गहमणुण्णवित्ता पढमं मासक्खमणमुपसंपज्जित्ताणं विहरइ ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं मंखली नाम मंखे, तस्स भद्दा भारिया गुब्विणिया, सरवणे सन्निवेसे बहुलस्स माहणस्स गोसालाए पसूया, गोन्नं नामं कयं गोसालोत्ति, संवड्ढितो मंखसिप्पं अहिज्जितो, चित्तफलयं करेइ, एक्कइतो विहरंततो रायगिहे तंतुवायसालाए पट्ठितो, जत्थ सामीट्ठितो तत्थ वासावासमुवागतो, भयवं मासक्खमणपारणे अब्भिंतरे विज-यस्स घरे विउलाए भोयणविहीए पडिलाभितो, पंच दिव्वाणि पाउब्भूयाणि, गोसालो सुणित्ता आगतो, दिट्ठाणि पंच दिव्वाणि पाउब्भूयाणि, भणइ–भयवं ! अहं तुज्झ सीसोत्ति, सामी तुसिणीतो निग्गतो, बिइयमासक्खवणंमि ठितो, बिइयपारणगे आणंदस्स घरे खज्जविहीए, तइए सुदंसणस्स घरे सव्वकामगुणिएणं, ततो चउत्थं मासक्खमणमुपसंप-ज्जित्ताणं विहरइ ॥ अभिहितसङ्ग्रहणायेदमाह—

थूणाए बहिं पूसो लक्खणमब्भिंतरे य देविंदो । रायगिहतंतुसाला मासक्खमणं च गोसालो ॥ ४७२ ॥
मंखलिमंख सुभद्दा सरवण गोबहुलगेह गोसालो । विजयाणंद सुनंदे भोयण खज्जे य कामगुणे ॥ ४७३ ॥

थूणायां सन्निवेशे बहिर्भगवान् प्रतिमास्थितः, पुष्पो लक्षणं निरीक्षितवान्, अभ्यन्तरं च लक्षणं देवेन्द्रोऽचकथत्, ततो भगवान् राजगृहे तन्तुवायशालायां मासक्षपणमकार्षीत्, गोशालोऽपि तत्रागतः, गोशालोत्पत्तिं कथयति– 'मंखली'त्यादि, मङ्खलिर्नाम मङ्खः, तस्य सुभद्रा भार्या, शरवणं सन्निवेशः, तत्र गोबहुलगृहे–गोबहुलनामकब्राह्मण-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

गोशालायां प्रसूता, दारकस्य गुणनिष्पन्नं नाम गोशाल इति, भगवतः प्रथमं पारणकं विजयस्य गृहे विपुलभोजनविधिना, द्वितीयमानन्दस्य गृहे खाद्यविधिना, तृतीयं सुनन्दस्य गृहे सर्वकामगुणं, भावार्थः शेषः प्रागेवोक्तः ॥

गोसालोवि कत्तियपुन्निमाए दिवसतो पुच्छइ–किमहं अज्ज भत्तं लभेज्जा ?, सिद्धत्थेण भणियं–कोद्दवकूरं अंबिलेण कूडगरूवं च दक्खिणं, सो नवरिं सव्वायरेण हिंडितो, एवं तेण भंडीसुणएणेव न किंचि संभाइयं, ताहे अवरण्हे एक्केण कम्मकारएणं अंबिलेण कूरो दिन्नो, ताहे जिमितो, रूवगो य से दक्खिणं दिन्नो, तेण परिक्खावितो जाव कूडगो, ताहे भणइ–जेण जहा भवियव्वं न तं भवइ अन्नहा, लज्जितो आगतो, ततो भयवं चउत्थमासक्खमणपारणगे नालंदातो निग्गंतूण कोल्लागसन्निवेसं गतो, तत्थ बहुलो माहणो माहणे भोयावेइ घयमहुसंजुत्तेणं परमन्नेण, ताहे तेण सामी पडिलाभितो, पंच दिव्वाइं पाउब्भूयाइं, गोसालोऽवि तंतुवायसालाए सामिं अपेच्छमाणो रायगिहे सब्भितरबाहिरे गवेसेइ, जाहे न पेच्छइ ताहे नियगोवकरणं धीयाराण दाउं सउत्तरोट्ठं मुंडणं काउं गतो कोल्लागं, तत्थ भयवतो मिलितो, ततो भयवं गोसालेण समं सुवण्णखलयं वच्चइ, तत्थंतरा गोवालगा वइयाहिंतो खीरं गहाय महल्लीए थालीए नवएहिं तंदुलेहिं पायसं उवक्खडंति, ततो गोसालो भणइ–एह भयवं ! एत्थ भुंजाम, सिद्धत्थो भणइ–एस निम्माणं चेव न वच्चइ, एस भज्जिहिइ उल्लुहिज्जंती, ताहे सो असद्दहंतो ते गोवए भणइ–तीताणागयजाणतो भणइ–एसा थाली भज्जिहिइ, तो पयत्तेण सारक्खह, ताहे पयत्तं करेंति, वंसविदलेहिं सा बद्धा थाली, तेहिं अतिबहुया तंदुला छूढा, सा फुट्टा, पच्छा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गोवालाणं जं जेण कवेलं आसाइयं सो तत्थ चेव पजिमितो, तेण न लद्धं, ताहे सुट्ठुयरं नियतिं गेण्हइ ॥ अमुमेव कथानकोक्तमर्थमुपसंजिहीर्षुराह—

कुल्लाग बहुल पायस दिवं गोसाल दट्ठु पवज्जा। बाहिं सुवण्णखलए पायसथाली नियइगहणं ॥ ४७४ ॥

कोल्लाकः सन्निवेशः, तत्र भगवते बहुलो नाम ब्राह्मणः पारणके पायसं दत्तवान्, ततो दिव्यानि प्रादुर्भूतानि, तानि गोशालो दृष्ट्वा प्रव्रज्यां प्रतिपन्नः, सोत्तरौष्ठं मुण्डनं कृतवान् इत्यर्थः, ततो भगवान् गोशालेन सह सुवर्णखलं गतः, तस्य बहिः पायसस्थाली भग्ना, ततो विशेषतो नियतेर्ग्रहणं, भावार्थं उक्त एव ॥

ततो सामी बंभणगामं गतो, तत्थ नंदो य उवणंदो य दुवे भायरो, गामस्स दो पाडगा, एगो नंदस्स विइतो उवनंदस्स, ततो सामी नंदस्स पाडयं पविट्ठो नंदघरं च, तत्थ दोसीणेण पडिलाभितो नंदेण, गोसालो उवणंदस्स पाडयं पविट्ठो उवणंदस्स घरं च, तेण उवनंदेण संदिट्ठं—देहि भिक्खं, तत्थ न ताव वेला, ताहे सीयलो कूरो नीणितो, सो तं न इच्छइ, पच्छा सा तेण उवनंदेण दासी भणिया—एयस्स चेव उवरिं छुहसु, छूढो, सो अप्पत्तिएण भणइ—जइ मम धम्मायरियस्स अत्थि तवो वा तेओ वा तो एयस्स घरं डज्झउ, तत्थ अहासंनिहिएहिं वाणमंतरेहिं मा भयवतो (तओ) अलियं होउत्ति तं घरं दड्ढं, ततो सामी निग्गतो, चंपं गतो, तत्थ वासावासं ठाइ, तत्थ दोमासिएणं खमणेणं खमइ, पडिमं ठाइठाणु कुडुगो, अमुमेवार्थमुपसंहरन्नाह—

बंभणगामे नंदोवणंद उवणंद तेय पडुहे। चंपा दुमासखमणो वासावासं मुणी खमइ ॥ ४७५ ॥

आ.सू.४७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

ब्राह्मणग्रामे नन्दोपनन्दौ भ्रातरौ, तत्रोपनन्दस्य गृहे तेजसा 'पडुच्चे' दग्धे भगवान् चम्पां गतः, तत्र वर्षावासं कृत्वा द्विमासक्षपणेन मुनिः-भगवान् क्षपयति ॥

ततो चरिमं दोमासियपारणयं बाहिं पारित्ता कालायं नाम सन्निवेशं गतो गोशालेण समं, तत्थ भयवं सुन्नघरे पडिमं ठितो, गोसालोऽवि तस्स दारपहे ठितो, तत्थ सीहो नामं गामउडपुत्तो विज्जुमतीए गोट्ठिदासीए समं तं चेव सुन्नघरं पविट्ठो, तत्थ तेण भण्णइ-जइ एत्थ समणो वा माहणो वा पहिको वा कोइ ठितो सो साहउ जा अन्नत्थ वच्चामो, सामी तुण्हिक्कतो अच्छइ, गोसालोऽवि तुण्हिको, ताणि अच्छित्ता निग्गयाणि, गोसालेण सा महिला छिक्का, सा भणइ-एस एत्थ कोइ अच्छइ, तेण अभिगंतूण पिट्ठितो, एस धुत्तो अणायारं करिंताणि पेच्छंततो अच्छइ, ताहे सामिं भणइ-अहं एक्कलो पिट्टिज्जामि, तुब्भे न वारेह, सिद्धत्थो भणइ-कीस सीलं न रक्खसि ?, किं अम्हे हन्नामो ?, कीस वा अंतो न अच्छसि ?, जं दारे ठितो चेट्ठसि, ततो निग्गंतूण सामी पत्तकालयं नाम गामं गतो, तत्थवि तहेव सुण्णघरे पडिमं ठितो, गोसालो तेणभएणं तद्दिवसं अंतो ठितो, तत्थ खंदो नाम गामउडपुत्तो अप्पणिज्जियाए दासीए दंतिलियाए समं नियमहेलाए लज्जंतो तमेव सुण्णघरं गतो, तेहिवि तहेव पुच्छियं, तहेव तुण्हिको अच्छइ, जाव ताणि णिग्गच्छंति, ताहे गोसालेण हसियं, ताहे पुणोऽवि पिट्ठिओ, ताहे सामिं खिंसइ-अम्हे हम्मामो तुज्झे न वारेह, किं अम्हे तुज्झे ओलग्गामो ?, ताहे सिद्धत्थो भणइ-अप्पदोसेण हम्मसि, किं तुंडं न रक्खसि ? ॥ अमुमेवार्थमुपसंहरन्नाह—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कालाय सुन्नगारे सीहो विज्जुमइ गुट्ठिदासीय । खंदो दत्तिलियाउ पत्तालग् सुन्नगारम्मि ॥ ४७६ ॥

कालाये सन्निवेशे गोशालकेन सह गत्वा शून्यागारे स्थितः, तत्र सिंहो नाम विद्युद्वत्या गोष्ठीदास्या सह रमणं कृतवान्, तेन गोशालः कदर्थित इति शेषः, ततो निर्गत्य द्वितीयदिवसे पत्रालये ग्रामे शून्यागारे गोशालकेन सह स्थितो भगवान्, तत्र स्कन्दको नाम ग्रामकूटपुत्रो दत्तिलिकया निजदास्या सह व्यापृतवान्, तेनापि गोशालकः कदर्थित इति गम्यम्, एषोऽक्षरार्थः, भावार्थ उक्त एव ॥

ततो भगवं कुमाराए संनिवेसे गतो, तत्थ चंपरमणिज्जे उज्जाणे पडिमं ठितो, इतो य पासावच्चिज्जो मुणिचंदो नाम थेरो बहुसिस्सपरिवारो तम्मि संनिवेसे कूवणयस्स कुंभगारस्स सालाए ठितो, सो य जिणकप्पपडिमं (कम्मं) करेइ, सीसं गच्छे ठावित्ता सत्तभावणाए अप्पाणं भावेइ, जिणकप्पं हि पडिवज्जंतस्स पंच भावणातो भवंति, तद्यथा– तपोभावना सत्त्वभावना सूत्रभावना एकत्वभावना बलभावना च, उक्तं च–"तवेण सत्तेण सुत्तेण, एगत्तेण बलेण य । तुलणा पंचहा वुत्ता, जिणकप्पं पडिवज्जतो ॥ १ ॥" सत्त्वभावनाऽप्युपाश्रयादिभेदात् पञ्चधा, तथा चोक्तम्–"पढमा उवस्सयंमी बिइया वाहि तइया चउक्कंमि । सुन्नहरंमि चउत्थी पंचमिया तह मसाणंमि ॥ १ ॥" सो बिइयाए तह सत्तभावणाए अप्पाणं भावेइ, गोसालो सामिं भणइ–एस देसकालो हिंडामो, सिद्धत्थो भणइ–अज्ज अम्ह अंतरं, पच्छा सो हिंडेतो पासावच्चिज्जे पासइ, भणइ य–के तुज्झे ?, ते भणंति–अम्हे समणा निग्गंथा, सो भणइ–अहो निग्गंथा, इमो मे एत्तिओ गंथो कहिं तुब्भे निग्गंथा ?, सो अप्पणो आयरिए वण्णेति, एरिसो महप्पा, तुब्भेऽत्थ के ?, ताहे तेहिं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भण्णइ–जारिसो तुमं तारिसो धम्मायरिओ ते सयंगहियलिंगो, ताहे सो रुट्ठो मम धम्मायरियं सवहत्ति, जइ मम धम्मायरियस्स अत्थि तवो तो तुज्झं पडिस्सतो डज्झउ, ते भणंति–न तुब्भाणं भणिएणं अम्हे डज्झामो, ताहे सो गतो साहइ सामिस्स–अज्ज मए सारंभा सपरिग्गहा समणा दिट्ठा, तं सव्वं साहेइ, ताहे सिद्धत्थेण भणितो–ते पासावच्चिज्जा साहू, न ते डज्झंति, ताहे रत्ती जाया, ते मुणिचंदा आयरिया उवस्सयस्स बाहिं पडिमं ठिया, सो कूवगतो तद्दिवसं सेणिपुरिसेहिं समं पाऊण वियाले एइ मत्तेलतो जाव पासइ तो मुणिचंदायरिए, सो चिंतेइ–चोरत्ति, तेण ते गलए गहिया, ते निरुस्सासा कया, न य झाणातो कंपिया, तेसिं केवलनाणं उप्पन्नं, आउं च निट्ठियं सिद्धो, तत्थ अहासंनिहिएहिं वाणमंतरेहिं महिमा कया, ताहे गोसालो बाहिं ठितो पेच्छइ देवे उप्पयनिवयंते, सो जाणइ–एस सो पडिस्सतो डज्झइ, सो सामिस्स साहेइ–भयवं! तेसिं पडिणीयाणं घरं डज्झइ, सिद्धत्थो भणइ–न तेसिं पडिस्सतो डज्झइ, तेसिं आयरियस्स केवलनाणमुप्पन्नं, सो य सिद्धिं गतो, तस्स देवा महिमं करेंति, ताहे स चिंतेइ–जामि पेच्छामि, गतो सो तं तेयपएसं, ताव देवा महिमं काऊण गया, ताहे तस्स तं गंधोदगं पुप्फवासं च दट्ठूण अब्भहितो हरिसो जातो, तो तस्स सीसे उट्ठवेइ–अरे तुज्झे न किंचि जाणह, एरिसगा चेव वोडा हिंडह, आयरियंपि कालगयं न याणह, सव्वं रत्तिं सुवह, ताहे ते जाणंति एस सच्चयं चेव पिसाओ, रत्तिंपि हिंडइ, ततो तस्स सद्देण उट्ठिया, गया आयरियसगासं, जाव पेच्छंति कालगयं, ताहे ते अद्धितिं करेंति–अम्हेहिं आयरिया न नाया कालगया, तो सोऽवि गोसालो ते चमढित्ता गतो, ताहे सामी चोरागसंनिवेसं गतो, तत्थ चारियत्तिकाऊण उंबालगा अगडे पक्खिविज्जंति, पुणोऽवि उत्तारिज्जंति, तत्थ ताव पढमं

॥२७८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गोसालो पक्खित्तो, सामी न, ताव तत्थ सोमा जयंती य उप्पलस्स भगिणीओ पासावच्चिज्जा दो परिवाइयातो, न तरंति पवज्जं काउं ताहे परिवाइयत्तणं करेंति, ताहिं सुयं–केऽवि दो जणा ढेकुयादवरकेणं उद्धं लंबमाणा बद्धा बद्धा अगडे पक्खिविज्जंति, पुणो उत्तारिज्जंति, तातो पुण जाणंति जहा चरमतित्थयरो पवइतो, तातो तत्थ गयातो, जाव पेच्छंति, ताहिं मोइतो, ते य उद्धंसिया–अहो विणस्सिउकामत्ति, तेहिं भएण खामिया महिया य ॥ अमुमेवार्थमुपसंहरन्नाह—

मुणिचंद कुमाराए कूवणय चंपरमणिज्जउज्जाणे । चोरा चारिअ अगडे सोम जयंती उवसमंति ॥ ४७७ ॥

कुमारा नाम सन्निवेशः, तत्र चंपरमणीये उद्याने भगवान् प्रतिमां प्रतिपन्नः, इतश्च मुनिचन्द्रो नाम पार्श्वनाथसन्तानवर्त्ती आचार्यः, तं कूपनको नाम कुंभकारो मारितवान्, तदनन्तरं भगवान् चोराके सन्निवेशे, चारिकावेतावेति गृहीत्वा अवटे–जलरहिते कूपे दवरिकया बद्धौ लम्बमानौ प्रक्षिप्येते, उत्तार्येते च, तत्र सोमाजयन्त्यौ राजपुरुषान् उपशमयतः, एषोऽक्षरार्थो, भावार्थः प्रागेव कथानकेनोक्तः ॥

ततो भयवं पिट्ठिचंपं गतो, तत्थ वासारत्तं करेइ, तत्थ चाउम्मासियं खमणं करेंतो विचित्तं पडिमाइ करेइ, ततो बाहिं पारित्ता कयंगलं गतो, तत्थ दरिद्दथेरा नाम पासंडत्था सारंभा समहिला, ताण वाडगस्स मज्झे देवउले तत्थ सामी पडिमं ठितो, तद्दिवसं च सप्फुसियं (सीयं) पडेइ, ताणं च तद्दिवसं जागरओ, ते समहिला गायंति, तत्थ गोसालो भणइ–एसोऽवि नाम पासंडो भण्णइ सारंभो समहिलो य, सवाणि य एगसराणि गायंति वायंति य, ताहे सो तेहिं निच्छूढो, सो तत्थ माहमासे तेण सीएण सतुसारेण अच्छति संकुचितो, तेहिं अणुकंपंतेहिं पुणोऽवि पविसितो, पुणोऽवि भणइ,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुणोऽवि नीणितो, एवं तिन्नि वारे निच्छूढो पवेसितो य, तओ भणइ–जइ अम्हे फुडं भणामो निच्छुभामो, तत्थ अन्नेहिं भन्नइ–एस देवज्जगस्स कोऽवि पीढियावाहो छत्तधरो वा आसि तो तुण्हिक्का अच्छह, सव्वाणि आउज्जाणि खडखडावेह जहा से सद्दो न सुवइ ॥ अमुमेवार्थं सङ्क्षिपन्नाह—

पिट्ठीचंपा वासं तत्थ चउम्मासिएण खमणेण । कयंगल देउलवरिसे दरिद्धेराण गोसालो ॥ ४७८ ॥

भगवान् पृष्ठचम्पायामावासं (वर्षावासं) कृतवान्, तत्र चातुर्मासिकेन क्षपणेन क्षपितवान्, ततो बहिः पारयित्वा कृताङ्गलसंनिवेशे देवकुले प्रतिमया स्थितः, तत्र बहिस्तुषारे वर्षति दरिद्रस्थविराणां जागरके तान् प्रति विरूपभाषणेन तैस्त्रीन् वारान् गोशालो बहिः क्षिप्तः, एषाऽक्षरगमनिका, भावार्थ उक्त एव ॥

ततो सामी सावत्थिं गतो, तत्थ सामी बाहिं पडिमं ठितो, गोसालो सामिं पुच्छइ–तुब्भे आगच्छह ?, सिद्धत्थो भणइ–अज्ज अम्ह अंतरं, सो भणइ–अज्ज किं लभामि अहमाहारं ?, सिद्धत्थो भणइ–तुमए अज्ज माणुसमंसं खाइयवं, सो भणइ–तं अज्ज जेमेमि जत्थ मंससंभवो नत्थि, किंमंग पुण माणुसमंसं ?, सो हिंडंतो तत्थ सावत्थीए नयरीए पिउदत्तो नाम गाहावती, तस्स सिरिभद्दा नाम भारिया, सा य निंदू, निंदू नाम मरंतवियाइणी, सा सिवदत्तं नाम नेमित्तियं पुच्छइ-कहं नाम पुत्तभंडं जीवेज्जा ?, सो भणइ–जो सुतवस्सी तस्स तं गब्भं अतीव पक्खालिऊण सण्हखंडाणि काऊण पायसेण सह पइत्ता देह, तस्स य घरस्स अन्नतोहुत्तं दारं करेज्ज, मा सो जाणित्ता डहिहिइ, एवं ते थिराणि पुत्तभंडाणि भविस्संति, ताए तहा कयं, गोसालो य हिंडंतो तं घरं पविट्ठो, तस्स सो पायसो घयमहुसंजुत्तो दिन्नो, तेण चिंतियं–एत्थ मंसं कतो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

भविस्सइ !, ताहे तुट्ठेण भुत्तं, गंतुं भणइ–चिरं ते नेमित्तियत्तणं करेंतस्स अज्ज नवरिं फिडितो, सिद्धत्थो भणइ–न विसंवयइ, जइ न पत्तियसि वमाहि, दिट्ठा नक्खा वाला य अन्ने य अवयवा, ताहे रुट्ठो तं घरं मग्गइ, तेहिं तं वारं ओहाडितं, तेण न जाणइ, ततो आगमणगमणपरिवाडीतो करेइ, जाहे न लभइ ताहे भणइ–जइ मम धम्मायरियस्स तवो तेओ वा अत्थि तो डज्झउ, ताहे सव्वा बाहिरिया दड्ढा, ताहे सामी हलेदुको नाम गामो तं गतो, तत्थ महप्पमाणो हलेदुगरुक्खो, तत्थ सावत्थीतो नयरीतो अन्नो लोगो निग्गच्छंतो पविसंतो य वसइ, तत्थ सत्थो निवसितो, सामी पडिमं ठितो, तेहिं सत्थिएहिं रत्तिं सीयकाले अग्गी जालितो, ते वट्टे पभाए उट्ठित्ता गता, सो अग्गी तेहिं न विज्झावितो, सो डहंतो सामिस्स पासं गतो, सो सामिं परितावेइ, गोसालो भणइ–भयवं ! नासह अग्गी एइ, सामिस्स पादा दड्ढा, गोसालो नट्ठो ॥ अमुमेवार्थमुपसंहरन्नाह—

सावत्थी सिरिभद्दा निंदू पिअदत्त पयस सिवदत्ते । दारगणी णहवाले हलिद्दपडिमाऽगणी पहिया ॥ ४७९ ॥

भगवान् श्रावस्तीं गतः, तत्र पितृदत्तो नाम गृहपतिस्तस्य भार्या निन्दूः श्रीदत्ता, शिवदत्तो नाम नैमित्तिकः, तद्वचनेन गर्भं प्रक्षाल्य श्लक्ष्णखण्डानि च कृत्वा पायसेन सह सा पक्ववती, तच्च पायसं तया गोशालाय दत्तं, तेन भुक्तं, ततः सिद्धार्थवचनाद्वामिते 'दारगणि नक्खवाले' इति नखान् वालांश्च दृष्ट्वा कुपितः सन् द्वारस्य स्थगिततया तत् गृहमलभमानः सकलस्य पाटकस्योपरि शापं दत्तवान्, ततोऽग्निः समस्तं दग्धवान्, भगवांस्ततो हरिद्रकग्रामे गतः, तत्र हरि-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्रुकस्य वृक्षस्याधः प्रतिमया स्थितः, तत्र च पथिकाः शीतापनोदायाग्निं प्रज्वालितवन्तः, स चाग्निः प्रसरन् स्वामिनः पादौ किञ्चिद्दग्धवान्, एष गाथाक्षरार्थः, भावार्थ उक्त एव,

ततो सामी नंगलानामं गामो तत्थ गतो, वासुदेवघरे सामी पडिमं ठितो, तत्थ चेडरूवाणि खेलंति, सो य गोसालो कंदप्पितो, ततो ताणि चेडरूवाणि अच्छीणि कड्ढिउं वीहावेइ, ताहे ताणि धावेंताणि पडंति, जाणूणि पच्छोडिज्जंति, अप्पेगइयाणं खुंखुणगा भज्जंति, पच्छा तेसिं अम्मापियरो आगंतूण पिट्टंति, भणंति-एयस्स देवज्जयस्स एसो नूणं दोसो न ठाइ अप्पणो ठाणे, अन्ने वारेंति, अलाहि देवज्जयस्स खमियव्वं, पच्छा सो भणइ-अहं हम्मामि तुब्भे न मारह, सिद्धत्थो भणइ-न ट्ठासि तुमं, अवस्सं पिट्टिज्जासि, ततो सामी आवत्तानामगामो तत्थ गतो, बलदेवस्स घरे पडिमं ठितो, तत्थवि चेडरूवाणि मुहं अवयासेउं वीहावेइ, पिट्टेइ य, ततो ताणि चेडरूवाणि रुयंताणि अम्मापिऊणं साहेंति, तेहिं गंतूण ठेवि(बंधि)तो, मुणिउत्ति काऊण मुक्को, मुणिओ-पिसाओ, भणंति य-किं एएण मुणिएण हएण ?, एयं से सामिं हणामि जो एयं न वारेइ, ततो सा बलदेवपडिमा लंगलं बाहुणा हक्खविऊण उट्ठिया, ततो ताणि पायवडियाणि सामिं खामेंति ॥ एतदेव सङ्क्षेपेणाह—

तत्तो य नंगलाए डिंभमुणी अच्छिकड्ढणं चेव । आवत्ते मुहतासे मुणिउत्ति य बाहि बलदेवो ॥ ४८० ॥

ततो हरिद्रकात् ग्रामात् स्वामी नङ्गलायां ग्रामे वासुदेवगृहे प्रतिमया स्थितः, तत्र गोशालोऽक्षिकर्षणं कृत्वा पिशाचरूपः सन् डिम्भान् भाषितवान्, तत्र बहु कदर्थित इति शेषः, ततो भगवान् आवर्त्ते ग्रामे बलदेवगृहे प्रतिमां

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिपन्नः, तत्र मुखेन विकृतीकृतेन डिम्भान् त्रासितवान्, ततस्तन्मातापितरौ यदा पिशाच इति परिभाव्य गोशालं मुक्त्वा स्वामिन उपद्रवाय हौकितवन्तस्तदा च बलदेवप्रतिमा नांगलमुत्पाट्य वाहितवान्, एषोऽक्षरार्थः, भावार्थ उक्त एव,

ततो सामी चोरागं नाम सन्निवेशं गतो, तत्थ गोट्ठियभत्तं सिज्झइ, तत्थ भयवं पडिमं ठितो, गोसालो भणति—अज्ज एत्थ चरियव्वयं, सिद्धत्थो भणति—अज्ज अच्छामो, सोऽवि तहिं उक्कुडनिक्कुडियाहिं पलोएइ, भिक्खा वेला हूया नवत्ति, तत्थ य चोरभयं, ताहे ते जाणंति—एस पुणो पुणो पलोएइ मन्ने एस चोरितो होज्जा, ताहे सो घेत्तूणं निसिट्ठं हम्मइ, सामी पच्छन्ने अच्छइ, ताहे गोसालो भणइ—जइ मम धम्मायरियस्स तवो अत्थि तो समंडवो डज्झउ, दड्ढो, ततो सामी कलंबुयानाम संनिवेसो तत्थ गतो, तत्थ पच्चंतिया दो भायरो–मेहो कालहत्थी य, सो कालहत्थी चोरियानिमित्तं चोरेहिं समं उद्धाइतो, इमे य दुवे पेच्छइ, ते भणंति—के तुज्झे ?, सामी तुसिणीतो अच्छइ, ते तत्थ हम्मंति, न य साहिंति, तेण ते बंधिऊण महल्लगस्स भाउस्स पेसिया, तेण जं भयवं दिट्ठो तं उट्ठिता पूइतो खामितो य, तेण सामी कुंडग्गामे दिट्ठपुव्वो ॥ अमुमेवार्थं सङ्गिपन्नाह—

चोरा मंडवभुज्जं गोसाले वहण तेयनिवणया । मेहो अ कालहत्थी कलंबुआए उ उवसग्गा ॥ ४८१ ॥

अक्षरगमनिका—चोराको नाम सन्निवेशस्तत्र क्वचित् मण्डपे गोष्ठिभोज्यं कर्तुमारब्धं, तत् गोशाल उत्कुटुको निष्कुटुकश्च भूत्वा निरीक्षितवान्, ततश्चौर इतिकृत्वा तस्य वधनं–ताडनं, ततः शापप्रदानेन तेजसा तस्य मण्डपस्य ध्याम-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

२८१॥

ना-दाहः तदनन्तरं भगवान् कलम्बुकायां सन्निवेशे गतः, तत्र द्वौ भ्रातरौ—मेघः कालहस्ती च, तत्र कालहस्तिना उपसर्गाः कृताः, मेघेन च भगवान् पूजित इति शेषः ।

ततो सामी चिंतेइ—बहुं कम्मं निज्जरेयवं, लाढाविसयं वच्चामि, ते अणारिया तत्थ निज्जरेमि, तत्थ भयवं अत्थारियदिट्ठंतं हियए करेइ, ततो पविट्ठो लाढाविसयं कम्मनिज्जरातुरितो, तत्थ हीलणनिंदणाहिं बहुं कम्मं निज्जरेइ, पच्छा ततो नीति, तत्थ पुण्णकलसो नाम अणारियग्गामो, तत्थंतरा दो तेणा राढाविसयं पविसिउं कामा अवसउणो एयस्स चेव वहाए भवउत्तिकट्टु असिं कड्ढिऊण सीसं छिंदामित्ति पधाविया, ताहे सक्केण ओहिणा आभोइया, दोवि वज्जेण हया, अण्णे भणंति—सिद्धत्थेण ते असी तेसिं चेव उवरिं छूढा, तेसिं सीसाणि छिन्नाणि, एवं विहरंता भद्दियनयरिं गया, तत्थ पंचमो वासारत्तो, तत्थ सामी चाउम्मासखमणेण अच्छइ विचित्तट्ठाणाईहिं । अमुमेवार्थमुपसंहरन्नाह—

लाढेसु अ उवसग्गा घोरा पुन्नकलसीअ दो तेणा । वज्जहया सक्केणं भद्दिय वासासु चउमासं ॥ ४८२ ॥

ततो भगवान् लाढासु जनपदे गतः, तत्र घोरा उपसर्गा अभवन्, ततो लाढाभ्यो निर्गतोऽन्तरा पूर्णकलशो नाम ग्रामः, तत्र भगवतो द्वौ स्तेनौ वधायोपस्थितौ, तौ शक्रेण वज्रेण हतौ, ततो भगवान् भद्रिकां नगरीं गतः, तत्र चातुर्मासिकं क्षपणं कृतवान् ॥

ततो बाहिं पारेइ, विहरंतो कयलिसमागमो नाम गामो, तत्थ य सरयकाले अच्छारियाभत्ताणि दहिकूररूवाणि निसट्ठं दिज्जंति, तत्थ गोसालो भणइ—वच्चामो, सिद्धत्थो भणइ—अम्हं अंतरं, सो तहिं गतो भुंजइ दहिकूरं, सो बहुभक्खाको

॥ २८१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नचेव धाति, तेहिं भणियं–एयस्स बहुगं देह, दिन्नं बहुयं, पच्छा न नित्थरइ, ताहे से उवरिं छूढं, ततो उक्कीलंतो गच्छइ, ततो भयवं जंबूसंडं नाम गामं गतो, तत्थवि तहेव अच्छारियाभत्तं नवरं तत्थ खीरकूरो तहेव जिमितो य धरिसितो य॥

एतदेव सङ्क्षेपेणाह—

कयलिसमागम भोयण मंखलि दहिकूर भगवओ पडिमा। जंबूसंडे गुट्ठिय भोअणं भगवओ पडिमा ॥ ४८३ ॥

कदलीसमागमो नाम ग्रामः, तत्र मङ्खलेः—मंखलिसुतस्य गोशालस्य दधिसम्मिश्रं कूरं भोजनमभूत्, भगवतः प्रतिमा—कायोत्सर्गः, ततो भगवान् जम्बूखण्डो नाम ग्रामस्तत्र गतः, तत्र गोशालो गोष्ठ्यां भोजनं क्षीरसम्मिश्रकूररूपं लब्धवान्, भगवतस्तथैव प्रतिमा॥

ततो भयवं तंबायं नाम गामो, तत्थ आगच्छति, तत्थ नंदिसेणा नाम थेरा बहुस्सुया बहुपरिवारा पासावच्चिज्जा, तेऽवि जिणकप्पस्स परिकम्मं करेंति, सामी बाहिं पडिमं ठितो, गोसालो अतिगतो, तहेव पव्वइए पेच्छइ खिंसइ य, ते आयरिया तद्दिवसं चउक्के पडिमं ठिया, पच्छा तहिं आरक्खियपुत्तेण हिंडंतेण चोरत्तिकाऊण भल्लएणाहया, केवलनाणं, सेसं जहा मुणिचंदस्स जाव गोसालो वोहित्ता आगतो, ततो सामी कूवियं नाम संनिवेसं गतो, तत्थ चारियत्तिकाऊण घेप्पंति पिट्टिज्जंति य, तत्थ लोगसमुल्लावो–अहो देवज्जगो रूवेण जुव्वणेण य अप्पतिमो चारियंत्ति काउं गहितो, तत्थ विजया पगब्भा य दोन्नि पासनाहंतेवासिणीतो परिव्वाइयातो, लोगस्स पासे सोऊण तित्थगरो पव्वइयो वच्चामो ता पलाएमो, को जाणइ होज्जा?, ताहे तेहिं मोइतो, दुरप्पा न याणह चरमतित्थयरं सिद्धत्थरायपुत्तं, अज्ज मे सक्को उवालंभिस्सइत्ति, ताहे मुक्को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वामितो य, ततो मुक्का समाणा निग्गया, तत्थ वच्चंताणं दुवे पंथा, ताहे गोसालो भणइ–तुज्झे मम हम्ममाणं न वारेह, तुज्झेहिं समं बहूवसग्गं, अन्नं च–अहं चेव पढमं हम्मामि, तो वरं एकलो विहरिस्सं, सिद्धत्थो भणइ—तुमं जाणसि, ताहे सामी वेसालीमुहो पयाइ, इमो य गोसालो भयवतो फिडितो अन्नतो पट्ठितो, अंतरा य छिन्नद्धाणं, तत्थ चोरो रुक्खविलग्गो पलोएइ, तेण दिट्ठो, भणइ–एको नग्गसमणतो एइ, ते भणंति–एसो न वीहेइ, नत्थि हरियव्वयंति, अज्ज से नत्थि फेडतो, जं अम्हे परिभवति ॥ अमुमेवार्थं सङ्क्षिपन्नाह—

तंबाए नंदिसेणो पडिमा आरक्खि वहण भयऽडहणं। कूविय चारिय मुक्खो विजय पगब्भा य पत्तेअं ॥४८४॥

भगवान् तम्बाके नाम ग्रामे गतः, तत्र नन्दिषेणाः सूरयस्तेषां चतुष्के प्रतिमा, कायोत्सर्गः, तत आरक्षिकैर्वहण-मिति—मारणं, ततो भगवान् कूपिकानाम संनिवेशस्तं गतः, तत्र चारिकावेतावितिग्रहणं, ततो मोक्षो विजयाप्रगल्भा-वचनतः ॥—अनन्तरं भगवद्गोशालयोः प्रत्येकं विहारोऽभवत्, ततो गोशालो तेसिं चोराण सन्निगासमागतो, तेहिं पंचहिवि चोरसएहिं पिसाओ(माउलओ)त्तिकाउं वाहितो, पच्छा चिंतेइ–वरं सामिणा समं, अविय कोइ मोएइ सामिं तन्निस्साए ममवि मोयणं भवइ, ताहे सामिं मग्गिउमारद्धो, सामीवि वेसालिं गतो, तत्थ कम्मगारसालाए अणुण्ण-वित्ता पडिमं ठितो, सा य साला साहारणा, जेसिं आधीना ते तत्थ अणुण्णविता, अन्नया तत्थेगो कम्मकारो छम्मास-रोगपीडितो सोहणे तिहिकरणे आउज्जाणि गहाय आगतो, सामिं पासइ पडिमं ठियं, ततो अमंगलमेयन्ति घणं उग्गाहेऊण सामिं आहणेउं पहावितो, सक्केण ओही पउत्तो जाव पेच्छइ, ततो निमिसंतरेण आगतो, सक्केण तस्स चेव उवरिं घणो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

साहितो मतो, ततो सक्को वंदित्ता गतो ॥ एनमेवार्थमुपसंहरन्नाह—

तेणेहि पहे गहिओ गोसालो माउलुत्ति वाहणया । भगवं वेसालीए कम्मार घणेण देविंदो ॥ ४८५ ॥

स्तेनैः पथि गोशालो गृहीतः मातुल इति–पिशाच इतिकृत्वा वाहनं, भगवांश्च वैशाल्यां गतः, तत्र कर्म्मकरो भगवन्तं घनेनाहन्तुं प्रवृत्तः, अत्रान्तरे देवेन्द्र आगतः, तेन स मारितः ॥ ततो सामी गामागं नाम संनिवेसं गतो, तत्थ बिभेलए उज्जाणे बिभेलतो नाम जक्खो, सो य भयवतो पडिमं ठियस्स पूयं करेइ, ततो सामी सालिसीसयं नाम गामं गतो, तत्थुज्जाणे पडिमं ठितो, माहमासो य वट्टइ, तत्थ कडपूयणवाणमंतरी सामिं दट्ठूण तेयं असहमाणी पच्छा तावसीरूवं विउव्वित्ता वक्कलनियत्था जडाभारेण य सबं सरीरं पाणिएण उल्लेत्ता सामिस्स उवरिं थाउं धुणइ, वायं च विउव्वइ, जइ अन्नो हुन्तो फुट्टो हुंतो, तिवं वेयणमहियासेंतस्स भयवतो ओही पसरितो, सबलोगं पासिउमारद्धो, सेसं कालं गन्भाओ आढवित्ता जाव सालिसीसं ताव एक्कारस अंगा सुरलोयप्पमाणमेत्तो य ओही, जावइयं देवलोगेसु पेच्छियाइतो तावतितो इति भावः, सावि वंतरी पराइया पच्छा उवसंता थुणइ पूयं च करेइ ॥ अमुमेवार्थं सङ्क्षेपेणाह—

गामाग विहेलग जक्ख तावसी उवसमावसाण थुई । छट्ठेण सालिसीसे विसुज्झमाणस्स लोगोही ॥ ४८६ ॥

ततो भगवान् ग्रामाकं नाम संनिवेशं गतः, तत्र बिभेलके उद्याने भगवतः प्रतिमास्थितस्य बिभेलकनामा यक्षः पूजां कृतवान्, तदनन्तरं भगवान् शालिशीर्षं नाम ग्रामं गतवान्, तत्रोद्याने प्रतिमाप्रपन्नस्य कटपूतनाव्यन्तरी तापसीरूपं

आ.सू.४८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

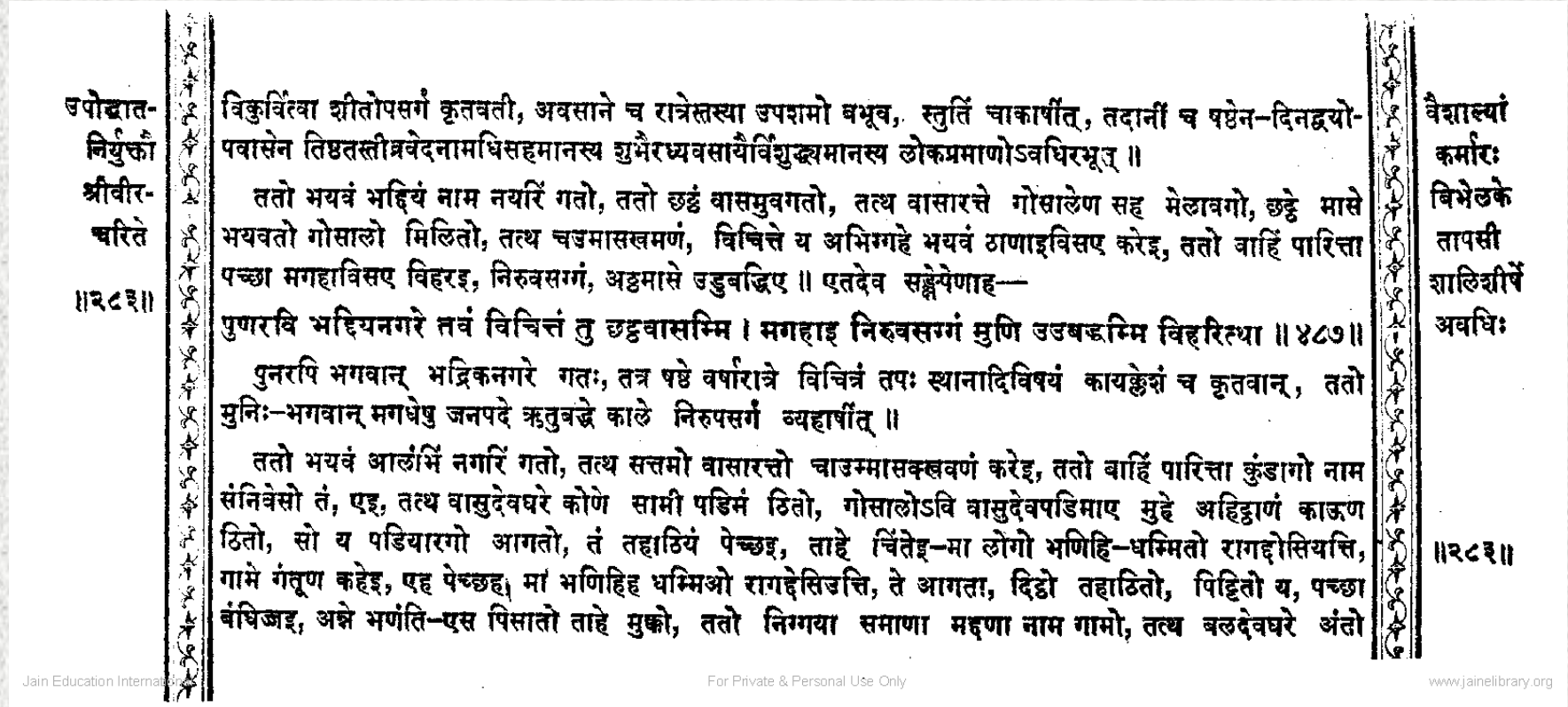

उपोद्घात-निर्युक्तौ श्रीवीर-चरिते ॥२८३॥

विकुर्वित्वा शीतोपसर्गं कृतवती, अवसाने च रात्रेस्तस्या उपशमो बभूव, स्तुतिं चाकार्षीत्, तदानीं च षष्ठेन-दिनद्वयोपवासेन तिष्ठतस्तीव्रवेदनामधिसहमानस्य शुभैरध्यवसायैर्विशुद्ध्यमानस्य लोकप्रमाणोऽवधिरभूत् ॥

ततो भयवं भद्दियं नाम नयरिं गतो, ततो छट्ठं वासमुवगतो, तत्थ वासारत्ते गोसालेण सह मेलावगो, छट्ठे मासे भयवतो गोसालो मिलितो, तत्थ चउमासखमणं, विचित्ते य अभिग्गहे भयवं ठाणाइविसए करेइ, ततो बाहिं पारित्ता पच्छा मगहाविसए विहरइ, निरुवसग्गं, अट्ठमासे उडुबद्धिए ॥ एतदेव सङ्क्षेपेणाह—

पुणरवि भद्दियनगरे तवं विचित्तं तु छट्ठवासम्मि । मगहाइ निरुवसग्गं मुणि उउबद्धम्मि विहरित्था ॥ ४८७ ॥

पुनरपि भगवान् भद्रिकनगरे गतः, तत्र षष्ठे वर्षारात्रे विचित्रं तपः स्थानादिविषयं कायक्लेशं च कृतवान्, ततो मुनिः—भगवान् मगधेषु जनपदे ऋतुबद्धे काले निरुपसर्गं व्यहार्षीत् ॥

ततो भयवं आलंभिं नगरिं गतो, तत्थ सत्तमो वासारत्तो चाउम्मासक्खवणं करेइ, ततो बाहिं पारित्ता कुंडागो नाम संनिवेसो तं, एइ, तत्थ वासुदेवघरे कोणे सामी पडिमं ठितो, गोसालोऽवि वासुदेवपडिमाए मुहे अहिट्ठाणं काऊण ठितो, सो य पडियारगो आगतो, तं तहाठियं पेच्छइ, ताहे चिंतेइ—मा लोगो भणिहि—धम्मितो रागद्दोसियत्ति, गामे गंतूण कहेइ, एह पेच्छह, मा भणिहिह धम्मिओ रागद्देसिउत्ति, ते आगता, दिट्ठो तहाठितो, पिट्टितो य, पच्छा बंधिज्जइ, अन्ने भणंति—एस पिसातो ताहे मुक्को, ततो निग्गया समाणा महणा नाम गामो, तत्थ बलदेवघरे अंतो

वैशाल्यां कर्मारः विभेलके तापसी शालिशीर्षे अवधिः

॥२८३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

कोणे सामी पडिमं ठितो, सो गोसालो तस्स मुहे सागारियं दाउं ठितो, तत्थवि तहेव कहियं, पिट्ठितो य, मुणिउत्ति-काऊण मुक्को ॥ अमुमेवार्थमुपसंहरन्नाह—

आलभियाए वासं कुंडग तह देउले पराहुत्तो । मद्दण देउल सागारियं मुहे दोसुवि मुणित्ति ॥ ४८८ ॥

भगवान् आलभिकां नगरीं गतवान्, तत्र सप्तमो वर्षारात्रस्तदा चातुर्मासक्षपणं कृतवान्, ततो भगवान् कुंडाके सन्निवेशे गतः, तत्र देवकुले-वासुदेवायतने गोशालः पराहुत्तः—पराङ्मुखो वासुदेवप्रतिमामुखस्याधिष्ठानं दत्तवान्, ततो भगवान् मद्दणानाम्नि ग्रामे गतः, तत्र गोशालो देवकुले-बलदेवायतने बलदेवप्रतिमामुखे सागारिकं—साधनं दत्त्वा स्थितवान्, 'दोसुवि'त्ति द्वयोरपि पूर्वतरं वासुदेवगृहे अत्र च बलदेवगृहे कदर्थितः, केवलं मुणितो इति—पिशाच इतिकृत्वा मुक्तः ॥

ततो सामी बहुसालगो नाम गामो, तत्थ सालवणं नाम उज्जाणं, तत्थ गतो तत्थ सालज्जा वाणमंतरी, सा वाणमंतरी पूयं करेइ, अन्ने भणंति-सा कडपूयणा वाणमंतरी भगवतो पडिमागयस्स उवसग्गं करेइ, ताहे परिसंता महिमं करेइ, ततो निग्गया गया लोहग्गलं रायहाणिं, तत्थ जियसत्तू राया, सो अन्नेण राइणा समं विरुद्धो, तस्स चारपुरिसेहिं गहिया न साहेंति, ततो चारिएत्तिकाऊण रन्नो अत्थाणीवरगयस्स उवट्ठविया, तत्थ य उप्पलो अट्ठियगामातो पुवमेवागतो अच्छइ, सो य ते य आणिज्जंते दट्ठूण उट्ठितो, तिक्खुत्तो वंदइ, पच्छा सो भणइ—न एस चारितो, एस सिद्धत्थरायपुत्तो, धम्मवरचक्कवट्टी एस भयवं, लक्खणाणि य से पेच्छह, तत्थ सक्कारेऊण मुक्को ॥ अमुमेवार्थमुपसंहरन्नाह—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बहुसालगसालवणे कडपूयण पडिम विग्घणोवसमे । लोहग्गलम्मि चारिय जियसत्तू उप्पले मुक्खो ॥ ४८९ ॥

भगवान् बहुशालकं ग्रामं गतः, तत्र शालवने प्रतिमया स्थितः, कटपूतनायाश्च व्यन्तर्या विघ्ननं-विघ्नकरणं, तत उपशमः, ततो भगवान् लोहार्गले नगरे गतः, तत्र जितशत्रू राजा, चारिकावेतावितिं द्वयोरपि ग्रहणं, तत 'उप्पल' इति प्राकृतत्वात् तृतीयार्थे सप्तमी उत्पलेन कथिते मोक्षः ॥

ततो सामी पुरिमतालं गच्छइ, तत्थ वग्गुरो नाम सेट्ठी, तस्स भद्दा भारिया वंझा अवियाउरी जाणुकोप्परमाया, बहूणि देवसयोवाइयाणि काउं परिस्संता, अन्नया सगडमुहे उज्जाणे उज्जाणिया गया, तत्थ पासइ जुन्नं देवउलं सडियपडियं, तत्थ मल्लिसामिणो पडिमा, तं नमंसंति, जइ अम्ह दारगो दारिगा वा जायइ तो एयं देवउलं करेस्सामो, एवं नमंसित्ता गयाणि, तत्थ अहासंनिहियाए वाणमंतरीए देवयाए पाडिहेरं कयं, आहूतो गब्भो, जं चेव आहूतो तं चेव देवकुलं काउमारद्धं, अतीव तिसंझं पूयं करेंति, पवइयगाण सगासं जंति, एवं सो सावगो जातो । इतो य सामी विहरमाणो सगडमुहस्स उज्जाणस्स नयरस्स य अंतरा पडिमं ठितो, वग्गुरो य ण्हातो उल्लपडसाडगो सपरिजणो महया इड्ढीए विविहकुसुमहत्थगतो तं आययणं अच्चतो जाति, ईसाणो य देविंदो पुव्वागयतो सामिं वंदित्ता पज्जुवासइ, वग्गुरं च वइवयंतं पासइ, भणइ य-भो वग्गुरा ! तुमं पच्चक्खतित्थगरस्स महिमं न करेसि, तो पडिमं अच्चओ जासि, एस महावीरवद्धमाणोत्ति, ततो आगतो मिच्छामिदुक्कडं काउं खामेइ महिमं च करेइ, ततो सामी उन्नागं वच्चइ, तत्थंतरा बहूवरं सपडिहुत्तं एइ, ताणि पुण दोवि विरूवाणि दंतुराणि य, तत्थ गोसालो भणइ, अहो इमो सुसंजोगो "तत्तिल्लो विहिराया जाणइ दूरेवि जो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहिं वसइ । जं जस्स होइ सरिसं तं तस्स विइज्जयं देइ ॥ १ ॥ जाहे न इंति ताहे तेहिं पिट्ठितो बद्धो, ततो वंसीकुडंगे सो छूढो, तत्थ पडितो उत्ताणतो अच्छइ, वाहरइय सामिं, सिद्धत्थो भणइ–सयं कयं ते, ताहे सामी अदूरं गंतुं पडिच्छइ, पच्छा ते भणंति–एस एयस्स देवज्जगस्स पीढियावाहो वा छत्तधारो वा आसि, ततो एस अदूरे ठितो, ततो मुक्को, अन्ने भणंति–पहिएहिं वहिं उत्तारितो सामिं दट्ठूण अच्छंतं ॥ अमुमेवार्थं सङ्क्षेपत आह—

तत्तो अ पुरिमताले वग्गुर ईसाण अच्चए महिमं । मल्लिजिणायणपडिमा उन्नाए वंसि बहुगुट्ठी ॥ ४९० ॥

ततो भगवान् पुरिमतालपुरं गतः, तत्र वग्गुरः श्रेष्ठी मल्लिजिनायतनप्रतिमामर्चको गच्छन् 'ईसाण'इति प्राकृतत्वाद्विभक्तिलोप ईशानेन–ईशानदेवेन्द्रेण भणितः सन् महिमां–पूजां कृतवान्, भगवान् तुन्नाकं सन्निवेशं प्रति व्रजति, अन्तरा वधूगोष्ठी–वधूवरं, तद् गोशालो निन्दितवान्, ततो 'वंसि'त्ति वंशीकुडङ्गे क्षिप्तः ॥

ततो विहरंतो सामी गोभूमिं वच्चइ, तत्थ अंतरा अडवी घणा, सया गावीउ चरंति तेण गोभूमी, तत्थ गोसालो गोवालए भणइ–अरे वज्जलाढा ! एस पंथो कहिं वच्चइ ?, वज्जलाढा नाम मेच्छा, ताहे ते गोवा भणंति–कीस अक्कोससि ?, असुयपुत्ता ! मुट्ठ अक्कोसामि, तुज्झे एरिसगा मेच्छा, ताहे तेहिं मिलित्ता पिट्ठिऊण बंधित्ता वंसीए छूढो, तत्थ अन्नेहिं मोइतो अणुकंपाए, ततो विहरंतो सामी रायगिहं गतो,तत्थ अट्ठमो वासारत्तो, चाउम्मासखमणेण खवेइ, विचित्तेय अभिग्गहे ठाणादिविसए करेइ, ततो वाहिं पारेइ २ त्ता सरए समतीते सामी चिंतेइ–बहु कम्मं न सक्का निज्जरेउं, ताहे सयमेव अत्थारियादिट्ठंतं पडिकप्पेइ, जहा एगस्स कुडुंबियस्स साली जाया, ताहे सो कप्पडियपंथिए भणइ–तुब्भं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्तिः

हियइच्छियं भत्तं देमि मम लुणह, एवं सो उवाएण लुणावेइ, एवं च ममवि बहुं कम्मं अच्छइ, एवं अच्छारिएहिं निज्जरावेयवं, ते य अत्थारिया अणारिया देसेसु, ततो लाढावज्जभूमिं [सुद्धभूमिं] वच्चइ, तत्थ विहरइ, ते अणारिया जणा निरणुकंपा निद्दया सामिं हीलेंति निंदंति कुक्कुरे छुच्छुक्कारेंति, ततो ते कुक्कुरा डसंति, 'सयं च ते भयवं आहंसु' एवमाइ बहूवसग्गा, तत्थ नवमो वासारत्तो कतो, तत्थ न भत्तपाणं, नेव वसही लद्धा, एवं तत्थ छम्मासे अणिच्चजागरियं विहरितो । अमुमेवार्थमाह—

गोभूमि वज्जलाढित्ति गोवकोवे य वंसि जिणुवसमे । रायगिहऽट्ठमवासं तु वज्जभूमी बहुवसग्गा ॥ ४९१ ॥

भगवान् गोभूमिं व्रजति, तत्रान्तरा अटव्यां गोशालो गोपान् अरे वज्जलाढा इत्याकुष्टवान्, ततस्तेषां गोपानां कोपो बभूव, ततो 'वंसि'त्ति वंशीकुडङ्गे गोशालस्तैर्बद्धा प्रक्षिप्तः, तदनन्तरमन्यैर्जिनस्योपशमोऽत्यद्भुतो दृष्ट इति मोचितः, ततो भगवान् राजगृहेऽष्टमं वर्षारात्रं कृतवान्, तदनन्तरं च वज्रभूमौ गतवान्, तत्र च बहव उपसर्गा अभवन्, नवमश्च वर्षारात्रस्तत्रैव गतः ॥

ततो अणारियदेसातो निग्गया पढमसरए सिद्धत्थपुरातो कुम्मगामं संपत्थिता, तत्थ अंतरा एगो तिलथंभओ, तं दट्ठूण गोसालो भणइ–भयवं ! एस तिलथंबतो निप्फज्जिहिइ ?, सामी भणइ–णिप्फज्जिहिइ, एए सत्त पुप्फजीवा उद्दाइत्ता एयस्स चेव तिलथंभस्स एगाए तिलसंबलियाए पच्चायाहिंति, ततो गोसालेण असद्दहंतेण ऊसरिऊण सलिट्ठूगो तिलथंभो उप्पाडितो, एगंते एडितो, अहासंनिहिएहिं वाणमंतरेहिं मा भयवं मिच्छावाई भवउत्ति वासं वासियं, ततो सो तिल-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थंभो आसत्थो जातो, बहुला य गावी तेण पदेसेण आगता, तीए खुरेण निक्खित्तो सुप्पइट्ठितो जातो, पुप्फा य पत्ता य जाता ॥ एनमेवार्थं सङ्क्षेपत आह—

अनितयवासं सिद्धत्थपुरं तिलथंभ पुच्छनिप्फत्ती । उप्पाडेइ अणज्जो गोसालो वास बहुलाए ॥ ४९२ ॥

अनियतं वासं भगवान् अनार्यदेशे कृतवान्, वसतेरलाभात्, ततः सिद्धार्थपुरं गतः, तस्माच्चनिर्गत्य कूर्मग्रामं प्रति प्रस्थितः, तत्रान्तरा गोशालेन तिलस्तम्बविषये पृच्छा कृता–किमेष तिलस्तंबो निष्पत्स्यते नवा ?, भगवता निष्पत्तिरुदाहृता, ततोऽनार्यो गोशालस्तं तिलस्तम्बमुत्पाटयति, 'वास'त्ति यथासन्निहितैर्व्यन्तरैर्वर्षं कृतं, बहुलया गवा खुरेण निखात्य स्थिरीकृतः ॥

ततो दोऽवि कुम्मगामं संपत्ता, तस्स वाहिं वेसियायणो बालतवस्सी आयावेइ, तस्स का उप्पत्ती ?–चंपाए नयरीए रायगिहस्स य अंतरा गोब्बरगामो, तत्थ गोसंखीनाम कुडुंबितो, सो आभीराण अहिवई, तस्स बंधुमई भज्जा अवियाउरी, इतो य तस्स अदूरसामंते गामो चोरेहिं हतो, ते हंतूण बंदिग्गाहं च काऊण पधाविया, एगा अचिरप्पसूया पइंमि मारिए चेडेण समं गहिया, सा तं चेडं छड्डाविया, सो चेडो तेण गोसंखिएण गोरुवाण गएण दिट्ठो, गहितो य, अप्पणिज्जियाए महिलाए दिन्नो, तत्थ पगासियं, जहा–मम महिलाए गूढो गब्भो आसि, तत्थ छगलं मारित्ता लोहियगंधत्ता सूइयानेवत्थेण ठिया, सव्वं जं तस्स इतिकत्तव्वयं तं कीरइ, एवं सो तत्थ संवड्ढइ, सावि से माया चंपाए विक्कीया, वेसियाए थेरीए मम धूयत्ति तीए उवयारं सिक्खाविया, सा तत्थ पगासा गणिया जाया, सो य गोसंखियपुत्तो तरुणो जातो, धयसगडेहिं चंपं गतो सवयंसो, तत्थ पेच्छइ नागरं जणं जहिच्छियमभिरमंतं, तस्सवि इच्छा जाया, अहंपि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ताव रमामि, सो तत्थ गतो वेसं, तत्थ से सा चेव माया अभिरुइया, मोलं देइ, वियाले ण्हायविलित्तो वच्चइ, तत्थ वच्चंतस्स अंतरा पादो अभिज्झेण लित्तो, सो न याणइ केण विलित्तो ?, तत्थंतरा तस्स कुलदेवया मा अकिच्चमायरउ बोहामित्ति तत्थ कोट्ठए गाविं सवच्छयं विउव्विऊण संठिया, ताहे सो तं पायं तस्स उवरिं फुसइ, ताहे सो वच्चतो भणइ–एस मम उवरि अम्मो ! अमेज्झलित्तं पायं फुसइ, ताहे सा गावी माणुसियाए वायाए भणइ–किं तुमं पुत्ता ! अधितिं करेसि ?, एसो अज्ज मायाए समं वासं गच्छइ, तं एस एरिसं अकिच्चं ववसइ, अन्नं किं न काहिइ ?, ताहे तं सोऊण तस्स चिंता जाया, भणइ–गतो पुच्छिहामि, ताहे पविट्ठो पुच्छइ–का तुज्झं उप्पत्ती ?, तीए भन्नइ–किं तुज्झं उप्पत्तीए ?, महिलाभावं दाएइ, ताहे सो भणइ–अण्णं एत्तियं मोलं देमि साह सब्भावं, सवहसावियाए तीए सव्वं जहावत्तं सिट्ठं, ताहे सो निग्गतो सगामं गतो, अम्मापियरो आपुच्छति, ताणि न साहंति, ताहे सो ताव अणसितो ठितो जाव से कहियं, ततोऽसौ तं मायं वेसाउ मोइत्ता पच्छा विरागं गतो, एयावत्था विसया इति पाणामाए पवज्जाए पव्वइओ, एसा उप्पत्ती, सो विहरंतो तंकालं कुम्मगामे आयावेइ, तस्स छप्पयातो जडाहिंतो आइच्चकिरणतावियातो पडंति, जीवहियट्ठयाए पडियातो सीसे छुभइ, तं स गोसालो ओसरित्ता तत्थ गतो किं भवं मुणी मुणीतो उयाहु जूयासेज्जायरो ?, कोऽर्थः ?–'मन ज्ञाने' किं भवान् मुनिः–ज्ञाता सन् मुनितः–प्रव्रजित उत एवमेवेति, अहवा किं इत्थी पुरिसो वा ?, एवं दो तिन्नि वारे वयइ, ताहे वेसियायणो रुट्ठो तेयं निसिरइ, ताहे सामिणा तस्स अणुकंपणट्ठाए वेसियायणस्स उसिणतेयपडिसाहरणट्ठमेत्थंतरा सीयलिया तेउल्लेसा निसिरिया, सा भगवओ सीयलिया तेउल्लेसा जंबुदीव-

Jain Education Internati For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मध्यंतरतो वेढेइ, इयरा तं परिरयेण वेढंती जंबुद्दीवं बाहिरतो वेढेइ, सा य एवं परिक्खिज्जमाणा २ निरवसेसा सीयलियाए लेसाए विज्झविया, ताहे सो सामिस्स रिद्धिं पासित्ता भणइ–से गयमेयं 'भयवं! गयमेयं, न जाणामि जहा तुज्झं सीसो, खमह, गोसालो पुच्छइ—सामी! किं एस जूयासेज्जायरो भणइ?, सामिणा कहियं, ताहे भीतो पुच्छति–किह संखित्तविउलतेयलेस्सो भवति?, भयवं भणइ—जे णं गोसाला! छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं आयावेइ, पारणए सनहाए कुम्मासपिंडियाए एगेण य वियडासएणं जावेइ जाव छम्मासा से णं संखित्तविउलतेउलेसे भवइ। अन्नया सामी कुम्मगामातो सिद्धपुरं पत्थितो, पुणरवि तिलथंबगस्स अदूरसामंतेणं वीइवयइ, ताहे सामिं पुच्छइ, जहा न निप्फन्नो, भयवया कहियं–निप्फन्नो, तं एवं वणस्सईणं पउट्टपरिहारो कप्पितो, पउट्टपरिहारो नाम परिवृत्त्य २ तस्मिन्नेव शरीरके यदुत्पद्यंते जन्तवः एष परिवर्त्तपरिहारो, तं सो असद्दहमाणो गंतूण तिलसंगलियं हत्थे पप्फोडित्ता ते तिले गणेमाणो चिंतेइ–एवं सवे जीवा पउट्टं परिहरंति, नियतिवायं च नियगमवलंबित्ता तं करेइ जं भयवया उवइट्ठं जहा संखित्तविउलतेउलेसे हवइ, ताहे सो सामिस्स पासातो फिट्टो सावत्थीए कुंभगारस्स सालाए ठितो, तेयनिसग्गं आयावेइ, छहिं मासेहिं संखित्तविउलतेउलेसो संजातो, कूवतडे दासीए विन्नासियं, तस्स घडो लेट्टूणाहतो भग्गो, सा रुसिया अक्कोसइ, ततो मुक्कतेउलेसा दड्ढा, जातो तस्स पच्चतो जहा सिद्धा मे तेउलेसा इति, पच्छा तस्स छद्दिसाचरा मिलिया, तेहिं निमित्तउलोगो से कहितो, एवं सो अजिणो जिणपलावी विहरइ, एसा से विभूई संजाया॥ अमुमेवार्थं सङ्क्षिपन्नाह—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मगहा गोब्बरगामे गोसंखी वेसियाण पाणामा। कुम्मागामायावण गोसाले कोवण पउट्ठे ॥ ४९३ ॥

मगधजनपदे चम्पाराजगृहयोरपान्तराले गोब्बरग्रामे गोशङ्खी कौटुम्बिकः, तस्योक्तप्रकारेण वैश्यायनो नाम पुत्रः, तस्य प्राग्व्यावर्णितकारणवशतः प्राणामानाम प्रव्रज्या, ततो यथासुखं विहरतस्तस्य तत्कालं कूर्म्मग्रामे आतापनावतो गोशालः कोपनं-कोपोत्पादनमकार्षीत्, भगवता च गोशालस्यानुकम्पया रक्षा कृता, ततस्तेन भगवता सह कूर्म्मग्रामात् सिद्धार्थपुरं गच्छता अपान्तराले पूर्वोत्पाटितं तिलस्तम्बं भगवन्तमापृच्छ्य भगवता च सोऽयं तिलस्तम्बो निष्पन्न इति कथिते प्रवृत्तः—प्रवृत्तपरिहारः प्रागुक्तस्वरूप उपकल्पितः ॥

ततो भगवं वेसालिं नगरिं पत्तो, तत्थ संखो नाम गणराया, सिद्धत्थस्स रण्णो मित्तो, सो तं पूएइ, पच्छा वाणियगामं पहावितो, तत्थ अंतरा गंडइया नदी, तं सामी नावाए उत्तिन्नो, ते नाविया सामिं भणंति-देह मोल्लं, एवं वाहेंति, तत्थ संखरण्णो भाइणिज्जो चित्तो नाम दूइत्ताए गएल्लतो नावाकडएण एइ, ताहे तेण मोइतो पूइतो य। एनमेवार्थं सङ्क्षेपेणाह—

वेसालीए पडिमं संखो गणराय पिउवयंसो य। गण्डइआसरि तिन्नो चित्तो नावाए भगिणिसुओ ॥ ४९४ ॥

वैशाल्यां नगर्यां शङ्खो नाम गणराजः पितृवयस्यः-सिद्धार्थराजमित्रं भगवतः पूजामकरोत्, तथा भगवन्तं वणिग्ग्रामं प्रति प्रचलितमन्तरा गण्डकिकां सरितं-नदीं तीर्णं नाविकैर्धृतं चित्रः शङ्खराजस्य भगिनीसुतो नावा समागच्छन् मोचितवान् पूजितवांश्च ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ततो भयवं वाणियगामं गतो, तस्स बाहिं पडिमं ठितो, तत्थ आणंदो नाम समणोवासतो छट्ठंछट्ठेण आयावेइ, तस्स ओहिन्नाणं समुप्पन्नं जाव पेच्छइ तित्थयरं, वंदइ, भणति य–अहो सामिणा परीसहा अहियासिज्जंति ?, एच्चिरेण कालेण तुब्भं केवलनाणमुप्पजिहिइ, तहा पूएइ य; ततो सामी सावत्थिं गतो, तत्थ दसमं वासारत्तं विचित्तं तवोकम्मं ठाणाईहिं, ततो साणुलट्ठियं नाम गामं गतो ॥ अमुमेवार्थं सङ्गिघृक्षुराह—

वाणियगामायावण आणंदोही परीसहसहित्ति । सावत्थीए वासं चित्ततवो साणुलट्ठि बहिं ॥ ४९५ ॥

वणिग्ग्रामे आतापनमानन्दस्य, ततोऽवधिज्ञानं, तेन च स्वामिनं प्रेक्ष्योक्तवान्–अहो भगवान् परीषहसह इति, तदनन्तरं भगवान् श्रावस्त्यां वर्ष–दशमं वर्षारात्रं कृतवान्, तत्र च विचित्रं तपः, तदनन्तरं सानुलष्टिग्रामं गतः । तत्थ बाहिं भद्दपडिमं ठितो, केरिसिया भद्दा पडिमा ?, भन्नइ, पुवाभिमुहो दिवसं अच्छइ, पच्छा रत्तिं दाहिणहुत्तो, ततो बीए अहोरत्ते अवरेणं दिवसं उत्तरेणं रत्तिं, एवं छट्ठेणं भत्तेणं निट्ठिया, तहवि न चेव पारेइ, ततो अपारितो चेव महभद्दं पडिमं ठाइ, सा पुण एवं–पुवाए दिसाए अहोरत्तं, एवं चउसुवि दिसासु चत्तारि अहोरत्ता, एवमेसा दसमेण निट्ठिआ, तहावि न पारेइ, ताहे अपारितो चेव सव्वतोभद्दं पडिमं ठाइ, सा पुण सव्वतोभद्दा एवं–इंदाए अहोरत्तं, एवम्–अग्गेईए जम्माए नेरईए वारुणीए वायवाए सोमाए ईसाणीए विमलाए [तमाए] तत्थ जाइं उड्ढलोइयाइं दवाइं ताइं निज्झायइ, तमाए हेट्ठिल्लाइं, एयमेसा दसहिं दिसाहिं बावीसइमेण समप्पइ, एवं च प्रथमायां प्रतिमायां चत्तारि यामचतुष्काणि, तद्यथा–एकं पूर्वस्यामेकमपरस्यामेकं दक्षिणस्यामेकमुत्तरस्यां, द्वितीयस्यामष्टौ यामचतुष्काणि, तद्यथा–द्वे यामचतुष्के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूर्वस्यामेवं यावत् द्वे यामचतुष्के उत्तरस्यां, तृतीयस्यां विंशतिर्यामचतुष्कानि, तद्यथा–द्वे यामचतुष्के पूर्वस्यामेवं यावत् द्वे यामचतुष्के तमायामिति, पच्छा तासु समत्तासु आणंदस्स गाहावइस्स घरे बहुलियाए दासीए महाणसिणीए भायणाणि खणं करेंतीए दोसीणं छड्डेउकामाए सामी पविट्ठो, ताए भण्णइ–किं भयवं! एएण अट्ठो?, सामिणा पाणी पसारितो, ताए परमाए सद्धाए दिन्नं, पंच दिव्वाणि पाउब्भूयाणि, ततो पच्छा तीसे सिरं पक्खालियं, अदासीकया ॥ एनमेवार्थं सङ्क्षेपेणाह—

पडिमा भद्द महाभद्द सव्वओभद्द पढमिया चउरो। अट्ठ य वीसाऽऽणंदे बहुलिय तह उज्झिया दिन्ना ॥४९६॥

प्रतिमा पूर्वं भगवता भद्रा कृता, तदनन्तरमकृतपारणकेनैव महाभद्रा, तथैव सर्वतोभद्रा, तत्र 'पढमिया चउरो'इति प्रथमायां चत्वारि यामचतुष्कानि, द्वितीयस्यामष्टौ, तृतीयस्यां विंशतिः, तदनन्तरमानन्दे–आनन्दस्य गृहे बहुलिकया दास्या 'तथेति' समुच्चये उज्झिता भिक्षा दत्ता, दिव्यानि पञ्च प्रादुरभवन् ॥

ततो भयवं बहुमेच्छं दढभूमिं गतो, तस्स बहिं पोलासं नाम चेइयं, तत्थ अट्ठमेण भत्तेण अपाणएण ईसीपब्भार-गएण काएणं, इसीपब्भारगतो नाम ईसिं ओणतो कातो, एगपोग्गलनिरुद्धदिट्ठी अणिमिसनयणे, तत्थवि जे अचित्ता पोग्गला तेसु दिट्ठिं निवेसेइ, सचित्तेहिं दिट्ठी अप्पाइज्जइ, जहा दुच्चाए, अहप्पाणिहिएहिं गत्तेहिं सविंदिएहिं गुत्तेहिं दोवि पाए साहट्टु वग्घारियपाणी एगराइयं महापडिमं ठितो। एतदेवाह—

दढभूमी बहुमिच्छा पेढालग्गाममागओ भयवं। पोलासचेइयम्मि ठिएगराइं महापडिमं ॥ ४९७ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

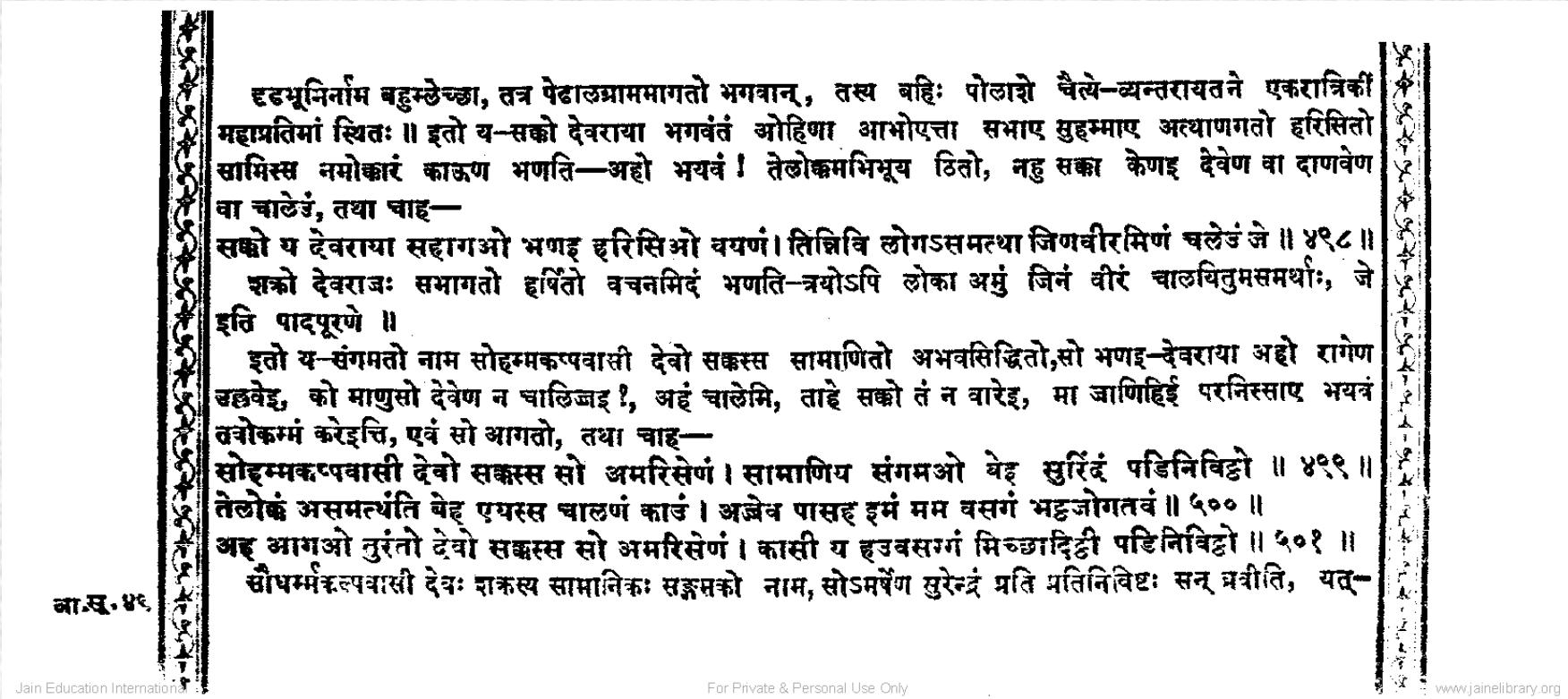

दृढभूमिर्नाम बहुम्लेच्छा, तत्र पेढालग्राममागतो भगवान्, तस्य बहिः पोलाशे चैत्ये–व्यन्तरायतने एकरात्रिकीं महाप्रतिमां स्थितः ॥ इतो य–सक्को देवराया भगवंतं ओहिणा आभोएत्ता सभाए सुहम्माए अत्थाणगतो हरिसितो सामिस्स नमोक्कारं काऊण भणति—अहो भयवं ! तेलोक्कमभिभूय ठितो, नहु सक्का केणइ देवेण वा दाणवेण वा चालेउं, तथा चाह—

सक्को य देवराया सहागओ भणइ हरिसिओ वयणं। तिन्निवि लोगऽसमत्था जिणवीरमिणं चलेउं जे ॥ ४९८ ॥

शक्रो देवराजः सभागतो हर्षितो वचनमिदं भणति–त्रयोऽपि लोका अमुं जिनं वीरं चालयितुमसमर्थाः, जे इति पादपूरणे ॥

इतो य–संगमतो नाम सोहम्मकप्पवासी देवो सक्कस्स सामाणितो अभवसिद्धितो,सो भणइ–देवराया अहो रागेण उल्लवेइ, को माणुसो देवेण न चालिज्जइ ?, अहं चालेमि, ताहे सक्को तं न वारेइ, मा जाणिहिई परनिस्साए भयवं उवोक्कमं करेइत्ति, एवं सो आगतो, तथा चाह—

सोहम्मकप्पवासी देवो सक्कस्स सो अमरिसेणं। सामाणिय संगमओ वेइ सुरिंदं पडिनिविट्ठो ॥ ४९९ ॥
तेलोक्कं असमत्थंति वेइ एयस्स चालणं काउं। अज्जेव पासह इमं मम वसगं भट्ठजोगतवं ॥ ५०० ॥
अह आगओ तुरंतो देवो सक्कस्स सो अमरिसेणं। कासी य हउवसग्गं मिच्छादिट्ठी पडिनिविट्ठो ॥ ५०१ ॥

सौधर्मकल्पवासी देवः शक्रस्य सामानिकः सङ्गमको नाम, सोऽमर्षेण सुरेन्द्रं प्रति प्रतिनिविष्टः सन् ब्रवीति, यत्–

आ.सू.४६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अथ संगमदेवेन कृत् उपसर्गस्य विस्तृत वर्णनं आरभ्यते

वेह इति ब्रूषे एतस्य चालनं कर्तुं त्रिलोकमसमर्थमिति, तन्न, अद्यैव प्रेक्षस्व इमं महावीरं मम वशगम्--आयत्तं भ्रष्टयोगतपसमिति, एवमुक्त्वाऽथानन्तरं शक्रस्योपरि अमर्षेण सङ्गमकनामा देवस्त्वरित आगतः, अकार्षीच्च स मिथ्या-दृष्टिः प्रतिनिविष्ट उपसर्गं, तद्यथा–सो अभवितो सामिस्स उवरिं वज्जधूलीवरिसं वरिसइ, जाव अच्छीणि कन्ना य सव्वसोयाणि पूरियाणि, निरुस्सासो जातो, तेण सामी तिलतुसभागमेत्तंपि झाणाओ न चालिओ १ ताहे संतो तं साहरित्ता कीडियाओ वज्जतुंडाओ विउव्वइ, तातो समंततो लग्गिऊण खायंति, अन्नेण सोएण सरीरगमणुपविसित्ता अन्नेण सोएण निग्गच्छंति, एवं चालिणीसरिसो कतो, तहवि भयवं न चलितो २ ताहे उद्दंसे वज्जतुंडे विउव्वइ, जे लोहि-यमेगेण पहारेण पीणेंति, तेवि सुबहुं खायंति, तहवि न सक्को चालेउं ३ ताहे उण्हेला विउव्वेइ, उण्हेला णाम तेल्लपाइ-याओ, तातो तिक्खेहिं तुंडेहिं अतीव दंसंति, जहा जहा सो अभवितो उवसग्गं करेइ तहा तहा सामी अतीव झाणेण अप्पाणं भावेइ, जहा 'तुमए चेव कयमिणं, न सुद्धचारिस्स दिस्सए दंडो' इच्चादि ४ जाहे न सक्कइ खोभेउं ताहे विच्छुए विउव्वइ, तहवि न सक्कइ ५, ताहे नउले विउव्वइ, ते तिक्खाहिं दाढाहिं डसंति खंडखंडाइं अवणेंति ६ पच्छा सप्पे रोसपुन्ने उग्गविसे डाहजरकारगे विउव्वइ, तेहिवि न सक्किओ चालेउं ७ ततो मूसए विउव्वइ, ते तिक्खाहिं दाढाहिं डसंति, खंडाणि य अवणेत्ता तत्थेव मुत्तपुरीसाणि वोसिरंति, तो अतुला वेयणा पाउब्भवति ८, जाहे न सक्कइ ताहे हत्थिरूवं विउव्वइ, तेण हत्थिरूवेण सुंडाए गहाय सत्तट्ठतले आगासे उक्खिवित्ता पच्छा दंतमुसलेहिं पडिच्छइ, पुणोऽवि भूमीए विंधइ चलणतलेहि य मलेइ ९ जाहे एवमवि न सक्कइ चालेउं ताहे हत्थिणियारूवं विउव्वइ, सा हत्थि-

Jain Education Internati For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिया सुंडएहिं दंतेहिं विंधइ फालेइ य, पच्छा काइएण सिंचइ, चलणेहिं मलइ १० जाहे न सक्कइ ताहे पिसायरूवं विउव्वइ, तेण उवसग्गं करेइ ११ जाहे न सक्कइ ताहे वग्घरूवं करेइ, सो दाढाहिं नक्खेहिं फालेइ, खारकाइयाए सिंचेइ १२ जाहे एवमवि न सक्कइ ताहे सिद्धत्थरायरूवं विउव्वइ, सो कलुणाणि विलवइ, एहि पुत्तगा! उज्झाहि एमाइविभासा १३ ततो तिसलारूवं विउव्वइ, तत्थवि सा चेव विभासा १४ ततो जाहे एवमवि न सक्कइ ताहे सूयं विउव्वइ, किह?, सो ततो खंधदारं विउव्वइ, सो परिपेरंतेसु आवासितो, तत्थ सूयो पत्थरे अलभंतो दोण्हवि पायाण मज्झे अग्गिं जालित्ता पायाणं उवरिं इक्खलियं काउं पट्टउमारद्धो १५ जाहे एएणवि न सक्कइ ताहे पक्कणं विउव्वइ, सो पक्कणो ताणि पंजरगाणि वाहासु गले कण्णेसु य ओलयइ, ते सउणगा भयवंतं तुंडेहिं खायंतिं विंधंति सन्नं काइयं च वोसिरंति १६ ततो खरवायं विउव्वति, जेण सक्को मंदरोऽवि चालेउं, न पुण सामी चलइ, तेण आगासे उक्खिवित्ता उक्खिवित्ता पाडेइ १७ पच्छा कलंकलियावायं विउव्वइ, तेण जहा चक्काइद्धतो नंदिआवत्ते वा तहा भमाडिज्जइ १८ जाहे एवमवि न सक्कइ ताहे कालचक्कं विउव्वइ, तं विउविऊण ऊहुं गगणतलं गंतूण एत्ताहे मारेमित्ति मुयए वज्जसंनिभं, मंदरंपि चूरेज्जा, तेण पहारेण भयवं ताव निवुड्डो जाव अग्गनहा हत्थाणं १९ जाहे तेणवि न सक्कइ ताहे चिंतइ–न सक्को एस मारिउंति अणुलोमे उवसग्गे करेमि, ताहे पभायं विउव्वइ, लोगो सव्वो चंकमिउं पयत्तो, भणइ य–देवज्जगा! अज्जवि अच्छसि?, भयवं नाणेण जाणाइ जहा न ताव पभाइ, ततो दिव्वं देविड्डिं दंसेइ, भणइ य विमाणगतो–तुट्ठोमि तुज्झ भयवं! किं देमि सग्गं वा ते सरीरं नेमि? तिन्निवि लोए तुज्झ पाएसु पाडेमि?। अन्ने भणंति–दिव्वं देविड्डिं दंसित्ता मणोरमसद्दरू-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

वरसगंधफासोववेते छप्पि मणोणुकूले उउ दंसेइ, अच्छरातो गुरुवातो पेसेइ, ताहे दिवं वत्तीसइविहिं नट्टमुपदंसति, सामी तहेव समदरिसी, जाहे न सक्कंति ताहे पइरिक्कं काऊण विविहप्पगारमालिंगणचुंबणाइयं मोहुप्पायगमित्थीभाव-मुपदंसंति, हा दइय ! हा निक्किव ! इच्चेवमाइ जंपंति, ततो परिसंता जामेव दिसं पाउब्भूता तामेव दिसं पडिगया, एस सवो वीसइमो उवसग्गो ॥ एतानेव गाथाचतुष्टयेनाह—

धूली पिवीलिआओ उदंसा चेव तह य उण्होला । विच्छुअ नउला सप्पा य मूसगा चेव अट्ठमया ॥ ५०२ ॥
हत्थी हत्थिणियाओ पिसाअए घोररूव वग्घो य । थेरो थेरी सूओ आगच्छइ पक्कणो अ तहा ॥ ५०३ ॥
खरवाय कलंकलिया, कालचक्कं तहेव य । पाभाइयमुवसग्गे, वीसइमे होति अणुलोमे ॥ ५०४ ॥
सामाणियदेविद्धिं देवो दाएइ सो विमाणगओ । भणइ वरेह महरिसि ! निप्फत्ती सग्गमोक्खाणं ॥ ५०५ ॥

प्रथमतो धूली विकुर्विता १ ततः पिपीलिकाः २ तदनन्तरमुदंशाः ३ तत उण्होलाः ४ ततो वृश्चिकाः ५ तदनन्तरं नकुलाः ६ ततः सर्प्पाः ७ ततो मूषकाश्चैवाष्टमाः ८ ॥ तदनन्तरं हस्ती ९ ततो हस्तिनिका १० तदनन्तरं पिशाचः ११ तदनन्तरं घोररूपो व्याघ्रः १२ ततः स्थविरः–सिद्धार्थः १३ स्थविरा–त्रिशला १४ तदनन्तरं सूतो–रसवतीकारः १५ तत आगच्छति पक्कणः–शबरः १६ ॥ तथा खरवातः १७ तदनन्तरं कलंकलिका १८ तथा चैवं कालचक्रं १९ विंशतितमः पुनरुपसर्गो भवत्यनुलोमः, स च प्रभातविकुर्वणारूपश्च, स दुर्गृहीतनामधेयो देवो विमानगतो भगवच्चित्तक्षोभनाय सामानिकदेवर्द्धिं दर्शयति, भणति च–वृणीष्व महर्षे ! येन तव स्वर्गमोक्षयोर्निष्पत्तिर्भवति ॥ ५०२–५ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाहे एवमपि न तीरइ चालेउं ताहे सुट्ठुयरं पडिनिवेसं गतो, कले काहित्ति पुणोवि अणुकड्ढइ, ताहे सामी वालुया नाम गामो तं पहाविंतो, तत्थंतरा पंच चोरसए विउवइ वालुगं च, जत्थ बहुतरं खुप्पइ, पच्छा तेहिं पवयगुरुतरेहिं माउलोत्ति वाहितो, सागयं च वज्जसरीरा देंति जेहिं पवयावि फुट्टेज्जा, ताहे वालुयागामं गतो, तत्थ भिक्खं हिंडितो तत्थ भयवतो रूवमावरित्ता तरुणियाणं अविरइयाणं काणच्छिं देइ, ततो हम्मइ, ताहे निग्गतो, भयवं सुभोमं वच्चइ, तत्थवि गतो भिक्खायरियाए, तत्थवि सामिणो रूवमावरित्ता महिलाणं अंजलिं करेइ, पच्छा तेहिंपि सामी पिट्टिज्जइ, ततो भयवं निग्गंतूण सुच्छेत्ता नाम गामो तहिं वच्चइ, तत्थ जाहे अभिगतो सामी भिक्खाए ताहे भयवतो रूवमावरित्ता विडरूवं विउवइ, तत्थ हसइ गायति य, अट्टट्टहासे मुंचति, काणेच्छियाओ य जहा विडो तहा करेइ, असिट्ठाणि य भासइ, तह विहम्मइ ॥ अमुमेवार्थं सङ्क्षिपन्नाह—

वालुयपंथे तेणा माउल पारणग तत्थ काणच्छिं । तत्तो सुभूम अंजलि सुच्छित्ताए य विडरूवं ॥ ५०६ ॥

स भगवान् वालुकाग्रामं प्रति प्रधावितः, तत्रापान्तराले पथि पञ्चशतसङ्ख्याः स्तेनास्तैर्मातुल इति–पिशाच इतिकृत्वा वाहितः, ततस्तत्र–वालुकाग्रामे पारणके–पारणकनिमित्तं स्वामी भिक्षायां प्रविष्टः, ततो भगवतो रूपमावृत्य तरुणीनां काणाक्षि दर्शयति, ततस्तत्पुरुषैर्भगवान् हन्यते, ततः सुभौमग्रामे गतः, तत्र तरुणीनामुक्तप्रकारेण दर्शितवान्, सुक्षेत्रायां तु ग्रामे विटरूपं विकुर्वितवान्, सर्वत्र भगवान् कदर्थ्यते ॥ ततो सामी सुच्छेत्तातो विनिग्गंतूण मलयं नाम गामं गतो, तत्थ भयवतो उम्मत्तयं रूवं करित्ता अविरइयातो आलिंगेइ गेण्हइ य, ततो चेडरूवेहिं छारकयारेण भरि-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

ज्जइ, लेट्ठुएहिं विहम्मइ, ताणि य वीहावेइ, ताणि य अक्खुडंतपडंताणि नासंति, ततो तेसिं अम्मापियरेहिं हम्मइ, ततो निग्गतो हत्थिसीसं नाम गामं गतो, तत्थवि भयवं भिक्खायरियाए अतिगतो, तत्थ भयवतो सिवारूवं दरिसेइ, किं भणियं होइ?–सागारियं से कसाइयं करेइ, ततो जाहे अविरइयं पेच्छइ ताहे उट्ठेइ पच्छा हम्मइ, ततो भयवं चिंतेइ–एस गाढमुड्डाहं करेइ अणेसणं च, तम्हा गामं चेव न पविसामि, बाहिं अच्छामि, ततो बाहिं गामस्स निग्गतो, ततो जतो महेलाजूहं ततोहुत्तो सागारिएण कसाइएण अच्छइ, तहाट्ठितो सामी सक्केण पूइतो, ततो तप्पभिइं ढोंढसिवो पवत्तो, ताहे सामी चिंतेइ–एस नितरामुड्डाहं करेइ, तम्हा गामं चेव न अतीमि, एगंते अच्छइ, ताहे संगमतो हसइ, न सक्केमि तुमं ठाणातो चालेउं, पेच्छामि ता गामं अतीहि, ताहे सक्को आगतो पुच्छइ–जत्ता भे? जवणिज्जं च भे? अबाबाहं च भे? इति, वंदित्ता पडिगतो ॥

मलए पिसायरूवं सिवरूवं हत्थिसीसए कासी। ओहसणं पडिमाए मसाण सक्को जवणपुच्छा ॥ ५०७ ॥

मलये ग्रामे पिशाचरूपं–भगवतः उन्मत्तकलक्षणमकार्षीत्, तदनन्तरं हस्तिशीर्षके शिवरूपं प्रागुक्तस्वरूपं, ततः श्मशाने प्रतिमायां कायोत्सर्गस्थितस्य अपहसनं यथा न शक्यसे त्वं स्थानाच्चालयितुमिति पश्यामि यदि ग्राममागच्छतीति, ततः शक्र आगतस्तस्य यापनपृच्छाऽभवत् ॥ ताहे सामी तोसलिं गतो, तत्थ बाहिं पडिमं ठितो, ततो सो अभवितो चिंतेइ–एस गामं न पविसइ, ता एत्थवि से ठियस्स करेमि उवसग्गं, ततो खुड्डगरूवं विउव्वित्ता संधिं छिंदइ उवगरणेहिं गहिएहिं वतीए, तत्थ गहितो सो भणइ–मा मं हणह, अहं न जाणामि, आयरिएण अहं पेसितो, कहिं सो?,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

एस बाहिं अमुगे उज्जाणे, तत्थ हम्मइ बज्झइ, मारिज्जउत्ति वज्झो नीणितो, तत्थ महाभूइलो नाम इंदजालितो, तेण सामी कुंडग्गामे दिट्ठपुव्वो, ताहे सो मोएइ, साहइ य जहा एस सिद्धत्थरायपुत्तो, मुक्को सामितो, खुड्डतो मग्गितो, न दिट्ठो, नायं जहा देवो से उवसग्गं करेइ, तथा चाह—

तोसलि खुड्डगरूवं संधिच्छेदो इमोत्ति वज्झो य । मोएइ इंदजालित तत्थ महाभूइलो नामं ॥ ५०८ ॥

ततो भगवान् तोसलिग्रामं गतः, तत्र सङ्गमकः क्षुल्लकरूपं विकुर्वितवान्, तेन च गृहीतैरुपकरणैः सन्धिच्छेदो कृतेः कृतः, ततः स आरक्षकैर्गृहीतः प्राह—अयं मां कारितवान्, ततः स्वामी वध्य आज्ञप्तः, तत्र महाभूतिलो नाम इन्द्रजालिको मोचितवान् ॥ ततो सामी मोसलिं गतो, तत्थवि सो देवो खुड्डगरूवयं विउव्वित्ता संधिमग्गं पलोएइ पडिलेहेइ य, सामिस्स पासे सवाणि उवगरणाणि विउवइ, ताहे सो खुड्डगो गहितो, कीस एत्थ सोहसि ?, भणइ—मम धम्मायरितो रत्तिं खत्तं खणिहिइ, तो मा कंटए भंजिहीति मग्गं सोहेमि, सो कहिं ?, तेण कहियं—अमुगे उज्जाणे चिट्ठइ, ते गया, दिट्ठो सामी, ताणि य उवगरणाणि समीवे, ततो गहितो, आणीतो, तत्थ सुभागहो नाम राट्ठितो सामिस्स पिउवयंसो, सो मोएइ, ततो सामी तोसलिं गतो, तत्थवि तहेव गहितो, नवरं उक्कलंबिउमाढत्तो, तत्थ से रज्जू छिन्नो, एवं सत्तवारा छिन्नो, ताहे सिट्ठं तोसलियस्स, सो भणइ—एस अचोरो निद्दोसो, तं खुड्डगं मग्गह, सो मग्गितो, न दीसइ, नायं जहा से देवो उवसग्गं करेइ ॥ अमुमेवार्थमाह—

मोसलि संधिसमागम मोएई रट्ठिओ पिउवयंसो । तोसलिय सत्त रज्जू चावत्ती तोसली मुक्खो ॥ ५०९ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्तिः

भगवान् मोसलिं गतः, तत्र सन्धिमार्गशोधनाय क्षुल्लकस्य समागमः, ततो भगवतो ग्रहणं, राष्ट्रिकश्च पितृवयस्यो भगवन्तं मोचयति, ततो भगवान् तोसलिकग्रामं गतः, तत्र पूर्वप्रकारेण गृहीतः, ऊर्ध्वमवलम्ब्यमाने च भगवति सप्त वारान् रज्वा व्यापितः, ततस्तोसलिकस्य क्षत्रियस्य कथनं, भगवतो मोक्षः ॥

ततो सामी सिद्धत्थपुरं गतो, तत्थ तेण अभविएण तहा कयं जहा भगवं तेणोत्ति गहितो, तत्थ कोसितो नाम आसवाणियओ, तेण कुंडपुरे सामी दिट्ठेल्लओ, तेण मोयाविंतो, ततो सामी गोउलं गतो, तत्थ य तद्दिवसं छणो, सव्वत्थ परमन्नं उक्कखडियं, चिरं च तस्स देवस्स उवसग्गं काउं ठितस्स, सामी चिंतेइ–गया छम्मासा, सो गतो होज्जत्ति भिक्खायरियाए अतिगतो, सो अणेसणं करेइ, सामी उवउत्तो पासइ, ताहे अद्धहिंडितो नियत्तो, बाहिं पडिमं ठितो, सो य पावो सामिं ओहिणा आभोएइ—किं भग्गपरिणामो नवत्ति, ताहे सामी तहेव सुद्धपरिणामो छज्जीवहियं झायइ, तो तहारूवं दट्ठुं आउट्टो, न तीरए खोभेउं, जो एच्चिरेणवि कालेण छहिं मासेहिं न चलितो सो दीहेणवि कालेण न सक्को चालेउं, ताहे पाएसु पडितो भणइ–सच्चं जं सक्को भणइ, सव्वं खामेइ, भयवं ! अहं भग्गपइण्णो, तुज्झे सम्मत्तपतिण्णा ॥

अमुमेवार्थं सङ्ग्रहेपत आह—

सिद्धत्थपुरे तेणुत्ति कोसिओ आसवाणिओ मुक्खो । वयगाम हिंडऽणेसण बीयदिणे वेइ उवसंतो ॥ ५१० ॥

भगवान् सिद्धार्थपुरे गतः, तत्र पूर्वप्रकारेण स्तेन इति गृहीतः, तत्र च कोशिको नाम अश्ववणिक्, तेन मोक्षः कृतः,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

ततो द्वितीयदिने व्रजग्रामे गोकुले भिक्षार्थं हिण्डते, तत्र अनेषणा, ततो भगवान् हिण्डनान्निवृत्तः, ततः स उपशान्तो ब्रवीति ॥ किं ब्रवीति इत्यत आह—

वच्चह हिंडह न करेमि किंचि इच्छा न किंचि वत्तव्वो । तत्थेव वच्छवाली थेरी परमन्न वसुहारा ॥ ५११ ॥

अत ऊर्ध्वं व्रज स्वेच्छया ग्रामनगरेषु, हिंडस्व भिक्षार्थं कुलेषु, न करोमि कमप्युपसर्गं, स्वामी वक्ति—भोः संगमक ! नाहं कस्यापि वक्तव्योऽस्मि, इच्छया यामि नवा, ततः स्वामी द्वितीयदिवसे तत्रैव भिक्षार्थं गोकुलेष्वटति, तत्र वत्सपाली स्थविरा, तया उत्सवदिवसे क्षीरं न लब्धं, ततो द्वितीयदिवसे क्षीरं याचित्वा पायसं राद्धं, तेन भगवान् प्रतिलाभितः, अन्ये वदन्ति-पर्युषितेन पायसेन प्रतिलाभितः, ततः पञ्च दिव्यानि प्रादुर्भूतानि ॥

छम्मासे अणुबद्धं देवो कासीय सो उ उवसग्गं । दट्ठूण वयग्गामे वंदिय वीरं पडिनियत्तो ॥ ५१२ ॥

एवं सोऽभविकः सङ्गमकनामा देवः षण्मासान् अनुबद्धं—सन्ततं उपसर्गमकार्षीत्, दृष्ट्वा च व्रजग्रामे गोकुले परिणाममभग्नं उपशान्तो वीरं—महावीरं वन्दित्वा प्रतिनिवृत्तः ॥

इतो य—सोहम्मे कप्पे सबे देवा तद्दिवसं उविग्गमणा अच्छंति, संगमतो य सोहम्मं गतो, तत्थ सक्को तं दट्ठूण परम्मुहो ठितो भणइ देवे—भो ! सुणह, एस दुरप्पा, न एएण ममवि चित्तरक्खा कया, नवि अन्नेसिं देवाणं, जतो तित्थगरो आसातितो, न एएण अम्हं कज्जं, असंभासो, निब्बिसतो उ कीरउ, ततो निच्छूढो सह देवीहिं, सेसा देवा इंदेण वारिया,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

देवो चुतो महिड्ढी सो मंदरचूलियाए सिहरंमि। परिवारितो सुरवहूहिं तस्स य अयरोवमं सेसं ॥ ५१३ ॥

स सङ्गमकनामा महर्द्धिको देवः स्वर्गात् च्युतः—भ्रष्टः सन् परिवारितः सुरवधूभिर्गृहीताभिर्मन्दरचूलिकायाः शिखरे—उपरितनविभागे यानकेन विमानेनागत्य स्थितः, तस्य एकमतरोपमं—सागरोपमं आयुषः शेषं ॥

ततो सामी आलंभियं गतो, तत्थ हरी विज्जुकुमारिंदो एइ, सो सामिं वंदित्ता पूइऊण य भणइ—भगवं! पियं पुच्छामो, निच्छिन्ना उवसग्गा, बहुं गयं थेवं सेसं, अचिरेण भे केवलनाणं समुप्पज्जिहिइ, ततो सेयवियं गतो, तत्थ हरिस्सहो पियपुच्छगो एइ, ततो सावत्थिं गतो, बाहिं पडिमं ठितो, तत्थ खंदपडिमाए लोगो महिमं करेइ, सक्को ओहिं पउंजइ, जाव पेच्छइ खंदपडिमाए पूयं कीरमाणं, सामिं नाढायंति, सक्को उड्ढो, सावि खंदपडिमा रहं विलग्गिहिइ, ताहे सक्को तं पडिमं अणुपवेसिऊण भयवंतेण पट्ठितो, लोगो तुट्ठो भणइ—देवो सयमेव विलग्गिहिइ, जाव सामिं गंतूण वंदइ, ताहे लोगो आउट्टो, एसो देवदेवोत्ति महिमं करेइ जाव अच्छितो ॥ अमुमेवार्थं सङ्क्षिपन्नाह—

आलभियाए हरिविज्जू जिणस्स भत्तीइ वंदिउं एइ। भयवं पियपुच्छा जिय उवसग्गत्ति थेवमवसेसं॥५१४॥

हरिसह सेयवियाए सावत्थी खंद ओयरिउं पडिमा। लोगो आउट्टिओ (त्थ) वंदे सक्को उ पडिमाए॥५१५॥

आलभिकायां नगर्यां भगवतः प्रियपृच्छको हरिनामा विद्युत्कुमारेन्द्र आगच्छति, वदति च—जिता भगवन्! सर्वे उपसर्गाः, स्तोकमवशेषं तिष्ठति, ततो भगवान् श्वेतम्ब्यां नगर्यां गतः, तत्र हरिस्सहनामा विद्युत्कुमारराजः प्रियपृच्छक आगतः, ततः श्रावस्तीं गतो भगवान्, तत्र स्कन्दप्रतिमां लोकेन पूज्यमानां शक्रोऽवलोक्य तां प्रतिमामनुप्रविश्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्तिः

भगवन्तं वन्दितवान् ॥ ततो सामी कोसंबिं गतः, तत्थ चंदसूरा सविमाणा महिमं करेंति पियं च पुच्छंति, वाणारसीए सक्को पियं पुच्छइ, रायगिहे ईसाणो, मिहिलाए जणगो राया पूयं करेइ, धरणो य पियपुच्छतो एइ, तथा चाह—

कोसंबि चंदसूरोअरणं वाणारसीइ सक्को उ । रायगिहे ईसाणो मिहिला जणओ अ धरणो अ ॥ ५१६ ॥

कोशाम्ब्यां चन्द्रसूरावतरणं, वाराणस्यां शक्रः प्रियं पृच्छति, राजगृहे ईशानः—ईशानकल्पेन्द्रः, मिथिलायां जनको राजा धरणश्च—नागकुमारेन्द्रः पूजां कृतवान्,

वेसालिवास भूयाणंदो चमरुप्पातो य सूसुमारपुरे । भोगपुर सिंदिकंटक माहिंदो खत्तिओ कुणइ ॥ ५१७ ॥

ततो वैशालीनगरीमगमत्, तत्रैकदेशे वर्षारात्रः, तत्र भूतानन्दो—नागकुमारेन्द्रः प्रियं पृच्छति, ज्ञानं च व्यागृणोति, यथा भगवन् ! स्तोककालमध्ये केवलज्ञानमुत्पत्स्यते, तदनन्तरं च भगवान् सूसमारपुरं गतः, तत्र भगवन्निश्रया चमरोत्पातो यथा व्याख्याप्रज्ञप्तौ तथा वक्तव्यः, ततो भोगपुरं स्वामी गतवान्, तत्र माहेन्द्रो नाम क्षत्रियः, सिन्दीकन्देनाहन्मीति भगवन्तं प्रति धावितः, सिन्दी नाम खर्जूरी, स एवं उपसर्गं करोति, एत्थंतरे सणंकुमारो देविंदो एइ, तेण धाडितो तासितो य, पियं च पुच्छइ ॥ ततो सामी नंदिगामं गतो, तत्थ नन्दी नामं भगवतो पियमित्तो सो महिमं करेति, ततो मिंढियगामभेति, तत्थ गोवो उवसग्गं काउमारद्धो, जहा कुमारगामे तहेव वालरज्जुएण आहणंतो सक्केण तासितो ॥ एतदेवाह—

वारण सणंकुमारे नंदियगामे पिउसहा वंदे । मेंढियगामे गोवो चित्तासणयं च देविंदो ॥ ५१८ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

वारणं–निषेधनं माहेन्द्रक्षत्रियस्य सनत्कुमारो देवेन्द्रोऽकार्षीत्, नन्दिग्रामे पितृसखा–पितृवयस्यो भगवन्तं वन्दते, मिण्ढिकग्रामे गोपस्योपसर्गं कर्तुं प्रवृत्तस्य वित्रासनकं देवेन्द्रः—शक्रोऽकरोत् ।

ततो सामी कोसंबिं गतो, तत्थ सयाणितो राया मियावई देवी तच्चावादी धम्मपाढगो सुगुत्तो अमच्चो नंदा से भारिया, सा य समणोवासिया, ततो सड्ढित्ति मियावतीए वयंसिया, तत्थेव नगरे धणावहो सेट्ठी, तस्स मूला भारिया, एवं ते सकम्मसंपउत्ता अच्छंति, सामी य पोसबहुलपाडिवए इमं एयारूवं अभिग्गहं अभिगेण्हइ चउव्विहं, तंजहा–दव्वतो खेत्ततो कालतो भावतो, दव्वतो कुम्मासे सुप्पकोणेणं, खेत्ततो एलुगं विक्खंभइत्ता कालतो नियत्तेसु भिक्खायरेसु भावतो जइ रायधूया दासत्तणं पत्ता नियलबद्धा मुंडियसिरा अट्ठमभत्तिया एवं कप्पइ, सेसं न कप्पइ, एवं अभिग्गहं घेत्तूण कोसंबीए अच्छइ, दिवसे २ भिक्खायरियं फुसइ, किंनिमित्तं ?, बारसं परिसहा भिक्खायरियाए उदिज्जंति, एवं चत्तारि मासे कोसंबीए हिंडइ, ताहे नंदाए घरमणुपविट्ठो, तीए सामिणो परेण आयरेण भिक्खा नीणिया, सामी निग्गतो, सो अद्धितिं पकया, ताहे दासीतो भणंति–एस देवज्जगो दिवसे दिवसे एत्थ एइ, ताहे ताए नायं–नूणं भयवतो अभिग्गहो कोइ, ततो निरायं चेव अद्धिती जाया, सुगुत्तो अमच्चो आगओ, ताहे सो भणइ–किं अद्धितिं करेसि ?, तीए कहियं, भणइ य–किं अम्हं अमच्चत्तणेणं ? एच्चिरं कालं सामी भिक्खं न लहइ ? किं वा तेण विन्नाणेण जइ एयं अभिग्गहं न याणसि ?; तेण आसासिया, कले दिवसे जहा भिक्खं लब्भइ तहा करेमि; एयाए कहाए वट्टमाणीए विजया नाम पडिहारी मियावतीए भणिया सा केणइ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अथ "चन्दना"या: कथानक एवं तन्मध्ये भगवन्त महावीरस्य अभिग्रःअस्य वर्णनं आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

कारणेण आगया, सा तं उल्लावं सोऊण मियावतीए साहेइ, मियावईवि तं सोऊण महया दुक्खेण अभिभूया, सा चेडगस्स धूया, अतीव अद्धितिं पकया, राया य आगतो पुच्छति, भणइ–किं तुज्झ रज्जेण मए वा?, अज्ज किर चउत्थो मासो सामिस्स हिंडंतस्स भिक्खाभिग्गहो न नज्जइ, न वा जाणसि एत्थ विहरंतं, तेण आसासिया, तह करेमि जहा कले लभइ, ताहे सुगुत्तं अमच्चं सद्दावेइ अंबाडेइ य, जहा–तुमं आगयं सामिं न याणसि ?, अज्ज किर चउत्थो मासो हिंडंतस्स, ताहे तच्चावादी सद्दावितो, सो पुच्छितो सयाणिएण–तुज्झं धम्मसत्थे सव्वपासंडाण आयारा आगया, ते तुमं साह, इमोवि अमच्चो भणितो–तुमंपि बुद्धिबलितो ता साह, ते भणंति–बहवे अभिग्गहा, न नज्जइ कोऽभिप्पाओ ?, दव्वजुत्तो खित्तजुत्तो कालजुत्तो भावजुत्तो सत्त पिंडेसणातो सत्त पाणेसणाओ, ताहे रण्णा सव्वत्थ संदिट्ठा पाणेसणा भत्तेसणाओ य, लोगेणवि परलोगकंखिणा कयातो, सामी आगतो, न य तेहिं पगारेहिं गेण्हइ, एवं ताव इयं ॥ इतो य सयाणितो चंपं पहावितो, दहिवाहणं गेण्हामि, नावाकडएणं गओ एगाए रत्तीए, अचिंतिया नगरी वेढिया, तत्थ दहिवाहणो पलातो, रण्णा य जग्गहो घोसितो, एवं जग्गहे घुट्ठे दहिवाहणस्स रण्णो धारिणी देवी तीसे धूया वसुमई, सा सह धूयाए एगेण उट्टिएण गहिया, राया नियत्तो, सो उट्टितो चिंतेइ भणइ य–एसा मे भज्जा, इमं च दारियं विक्केस्सं, सा देवी तेण भाणसिएण दुक्खेण धूयादुक्खेण य एसा मे धूया न नज्जई किं पाविहिइत्ति अंतरा चेव कालगया, पच्छा तस्स उट्टियस्स चिंता जाया, दुट्ठु मए भणियं–महिला ममं होहितित्ति, एयं धूयं भणामि, मा एसावि मरिहिइ, तो मे मोल्लंपि न होहिइ, ताहे तेण अणुयत्तंतेण आणीया–वीहीए उड्डिया, धणावहेण दिट्ठा, अणलंकियलावन्ना अवस्सं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

रण्णो ईसरस्स वा धूया एसा मा आवइं पावउत्ति जत्तियं सो भणइ तत्तिएण मोल्लेण गहिया, वरं तेण समं गमणागमणं मे होहिइत्ति, नीया नियघरं, कासि तुमंति पुच्छिया न साहइ, पच्छा तेण धूयत्ति गहिया, एवं सण्णाणिया, मूलावि तेण भणिया—एसा तुब्भं धूया, एवं सा तत्थ जहा नियघरे तहा सुहंसुहेणं अच्छइ, तीएवि सो सदासपरियणो लोगो सीलेण विणएण य सव्वो अप्पणिज्जो कतो, ताहे ताणि सव्वाणि भणंति—अहो इमा सीलचंदणत्ति, ताहे से विइयंपि नामं कयं चंदणत्ति, एवं कालो वच्चइ, ततो ताए घरिणीए अवमाणो जातो मच्छरिज्जइ य, को जाणइ कयाइ एस एयं पडि-वज्जेजा? ताहे अहं घरस्स असामिणी भविस्सामि, तीसे वाला अतीव दीहा रमणिज्जा किण्हा य, सो सेट्ठी मज्झण्हं जण-विरहिए आगतो जाव नत्थि कोऽवि जो पाए पक्खालेइ, ताहे सा पाणियं गहाय निग्गया, तेण वारिया, सा मङ्गाए धोविउं पवत्ता, ताए धोवंतीए वाला बद्धेल्लगा छुट्टा, मा चिक्खल्ले पडिहिंतित्ति तस्स सेट्ठिस्स हत्थे लीलाकट्ठं तेण धरिया बद्धा य, मूला य ओलोयणगया पेच्छइ, तीए णायं—विणट्ठं कज्जं, जइ एयं कहवि परिणेइ तो ममं एस णत्थि, जाव तरुणतो वाही ताव तिगिच्छामि, सेट्ठिंमि विणिग्गए तीए ण्हावियं वाहरावित्ता सा चंदणा बोडाविता नियलेहि य बद्धा पिट्टिया य, वारियतो अणाए परियणो—जो साहइ वाणियस्स सो मे णत्थि, सा घरे छोढूण तस्स घरस्स दारं दिन्नं तालयं च, सो सेट्ठी आगतो पुच्छइ—कहिं चंदणा?, न कोइ साहइ भएण, सो जाणइ—नूणं रमइ उवरिं वा चिट्ठइ, एवं रत्तिंपि पुच्छिया, जाणइ—सा नूणं सुत्ता, बिइयदिवसेवि न दिट्ठा, तइयदिवसे घणं पुच्छइ, साहेह मा मे मारेह, ततो थेरदासी एक्का चिंतेइ—किं मम जीविएण?, सा जीवउ वराई, ताए कहियं—अमुयघरे, तेण उग्घाडिया दारा, पेच्छइ छुहाहयं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चंदणं, ततो कूरं पमग्गितो, जाव समावत्तीए नत्थि, ताहे कुम्मासा दिट्ठा, ते सुप्पकोणे घेत्तूण तीसे दिन्ना, सेट्ठी लोहकारघरं गतो, नियलाणि छिंदावेमि, ताहे सा हत्थिणीव कुलं संभारिउमारद्धा एलुगं विक्खंभइत्ता, तेहिं पुरतो कतेहिं अब्भंतरतो रोयइ, सामी आगतो, ताए चिंतियं–सामिस्स देमि, मम एयं अहम्मफलं, भणइ–भयवं ! कप्पइ ?, सामिणा पाणी पसारितो, चउव्विहोऽवि पुन्नो अभिग्गहो, पंच दिव्वाणि पाउब्भूयाणि, ते वाला तदवत्था चेव जाया, नियलाणि फिट्टाणि, सोवन्नयाणि नेउराणि जायाणि, देवेहि य सव्वालंकारा कया, सक्को देवरायो आगतो, वसुहाराए पमाणं अड्ढतेरस हिरण्णकोडी, कोसंबीए य सव्वतो उग्घुट्ठं–केणइ पुण्णमंतेण अज्ज सामी पडिलाहितो, ताहे राया संतेउरपरियणो आगतो, तत्थ संपुलो नाम दहिवाहणस्स कंचुकी, सो रण्णा वंधित्ता आणीतो, सोऽवि रण्णा सह तत्थागतो, तेण सा चंदणा पच्चभिजाणिया, पच्छा पाएसु पडिऊण परुन्नो, राया पुच्छति–का एसा ?, तेण से कहियं, जहा–एसा दहिवाहणस्स रण्णो दुहिया, मियावती भणइ–मम भगिणीधूया, अमच्चोवि सपत्तीतो आगतो, सामीं वंदइ, सामी विनिग्गतो, ताहे राया तं वसुहारं पगहिओ, सक्केण वारितो, जस्स एसा देइ तस्स आभवइ, सा पुच्छिया भणइ–मम पिउणो, ताहे सक्केण सयाणितो भणितो–एसा चरमसरीरा एयं संगोवाहि जाव सामिस्स नाणं उप्पज्जइ, एसा पढमसिस्सिणी, ताहे कन्नंतेउरे छूढा संचिट्ठइ, छम्मासा तया पंचहिं दिवसेहिं ऊणगा अभिग्गहस्स गहियस्स जाया जद्दिवसं सामिणा भिक्खा लद्धा, सावि मूला लोगेण अंबाडिया हीलिया य । अमुमेवार्थं सङ्गिघृक्षुराह—

कोसंबीइ सयाणिअ अभिग्गहो पोसबहुलपाडिवए । चाउम्मासि मिगावइ विजय सुगुत्तो अ नंदा य ॥५१९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तच्चावाई चंपा दहिवाहण वसुमई अ चीअनामा । धणवह मूलाऽऽलोअण संपुल दाणे अ पवज्जा ॥ ५२० ॥

ततो भगवान् कौशम्बीं नगरीं गतः, तत्र शतानीको राजा मृगापतिर्देवी, भगवता च पौषमासबहुलपक्षे प्रतिपदि अभिग्रहो गृहीतः, प्रतिदिवसं च भिक्षामटतो भगवतश्चत्वारो मासा अतिक्रान्ताः, अन्यदा भगवान् नन्दाया गृहे गतः, तया आनीता भिक्षा न गृहीता, ततः सुगुप्तोऽमात्य आगतः, तयोश्च भगवद्भिक्षाविषये संलापे मृगापतिदेवीसत्का विजया प्रतीहारी समागता मृगापतिदेव्या अचकथत्, तया प्रोत्साहितेन राज्ञा तथ्यवादी धर्म्मपाठक आकारितः, सोऽभिग्रहान् विचित्रान् कथितवान् । ततश्च चम्पायां दधिवाहनो राजा, तस्य सुता चन्दना द्वितीयनाम्ना वसुमती, सा कोशाम्ब्यामौष्ट्रिकेणानीता, धनावहेन गृहीता, अन्यदा धनावहस्य पादौ प्रक्षालयन्तीं तां तस्याः केशपाशं च धनावहेन लीलाकम्बिकया संयम्यमानं मूला अवलोकनगता प्रलोकितवती, ततो मात्सर्यात् तया चन्दना निगडिता, ततो भगवतो दाने सम्पुलनामा कञ्चुकी चन्दनाया मिलितः, ततो भगवतः समीपेऽनया प्रव्रज्या गृहीष्यते इति शक्र-वचनतो राज्ञा चन्दना सङ्क्रोपिता ॥

ततो सामी कोसंबीतो निग्गंतूण सुमंगलं नाम गामं गतो, तत्थ सणंकुमारो एइ वंदति पियं च पुच्छइ, तत्थ पढमं सिंदीकंदगनिवारणत्थमागतो संपयं पुण पियपुच्छतोत्ति । ततो सामी सुच्छेत्तं गतो, तत्थ माहिंदो पियपुच्छतो एइ, ततो सामी पालगं नाम गामं गतो, तत्थ वाइलो नाम वाणिओ जत्ताए पधावितो सामिं पेच्छइ, ततो सो अमंगलंतिकाऊण असिं गहाय पधावितो एयस्स फलउत्ति, तत्थ सहत्थेण सिद्धत्थेण सीसं छिन्नं । अमुमेवार्थमाह—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

तत्तो अ सुमंगल सणंकुमार सुच्छित्त एइ माहिंदो । वालुय वाइल वणिए अमंगलं अप्पणो असिणा ॥ ५२१ ॥

ततो भगवान् सुमङ्गलं नाम ग्रामं गतः, तत्र सनत्कुमारो देवेन्द्रः प्रियपृच्छक आगतः, ततः सुक्षेत्रायां भगवान् जगाम, तत्र माहेन्द्रः प्रियपृच्छक आगमत्, तदनन्तरं पालकं नाम ग्रामं स्वामी गतः, तत्र वाइलो नाम वणिक् देशान्तरं गच्छन् अमङ्गलमितिकृत्वा भगवत उपरि खड्गमुद्गीर्य प्रधावितः, तत आत्मना स्वहस्तेन असिना विनाशितः ॥

ततो सामी चंपं नयरिं गतो, तत्थ सोमदत्तमाहणस्स अग्गिहोत्तसालाए वसहिं उवगतो, तत्थ चाउम्मासं खमइ, तत्थ दुवे जक्खा पुन्नभद्दमाणिभद्दा रत्तिं पज्जुवासंति, चत्तारि मासे रत्तिं रत्तिं पूयं करेंति, ताहे सो चिंतेइ–किंपि जाणइ एस तो देवा महेंति, ताहे विन्नासणनिमित्तं पुच्छइ–को ह्यात्मा ?, भगवानाह–योऽहमित्यभिमन्यते, स कीदृशः ?, सूक्ष्मोऽसौ, किं तत् सूक्ष्मं ?, यदिन्द्रियैर्ग्रहीतुं न शक्यते इति, तथा किं तं ते पदेसणयं ? किं पच्चक्खाणं ?, भगवानाह–साइदत्ता ! दुविहं पदेसणगं–धम्मियं अधम्मियं वा, पदेसणगं नाम उपदेशः, पच्चक्खाणे दुविहे–मूलपच्चक्खाणे उत्तरपच्चक्खाणे य, एएहिं पएहिं तस्स उवगयं । अमुमेवार्थमाह—

चंपा वासावासं जक्खिंदो साइदत्त पुच्छा य । वागरण दुह पएसण पच्चक्खाणे अ दुविहे अ ॥ ५२२ ॥

भगवान् चम्पायां वर्षावासं कृतवान्, तत्र द्वौ यक्षेन्द्रौ भगवतो महिमां कृतवन्तौ, ततः स्वातिदत्तस्य ब्राह्मणस्य पृच्छा, भगवतो व्याकरणं, द्विविधं प्रदेशनं द्विविधं च प्रत्याख्यानमिति ॥ ततो भयवं चंपातो निग्गतो जंभियगामं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गतो, तत्थ सक्को आगतो वंदित्ता पूइत्ता नट्टविहिं उवदंसित्ता वागरेइ-जहा एत्तिएहिं दिवसेहिं केवलनाणमुप्पज्जिहिइ, ततो सामी मिंढियगामं गतो, तत्थ चमरो वंदतो पियपुच्छओ य एइ, वंदित्ता पुच्छित्ता य पडिगतो। अमुमेवार्थमाह–

जंभियगामे नाणस्स उप्पया वागरेइ देविंदो। मिंढियगामे चमरो वंदण पियपुच्छणं कुणइ ॥ ५२३ ॥

जृम्भिकग्रामे देवेन्द्रः–शक्रो ज्ञानस्योत्पादं व्यागृणाति, तथा मिण्ढिकग्रामे चमरो वंदनं प्रियपृच्छनं करोति ॥

ततो भयवं छम्माणिं नाम गामं गतो, तस्स बाहिं पडिमं ठितो, तत्थ सामिसमीवे गोवो गोणे छड्डेऊण गामं पविट्ठो, दोहणाणि काऊण निग्गतो, ते य गोणा अडविं पविट्ठा चरियवगस्स निमित्तं, ताहे सो आगतो पुच्छइ–देवज्जग! कहिं ते वइल्ला ?, भयवं मोणेण अच्छइ, ताहे सो परिकुवितो भयवतो कण्णेसु कडसलागातो छुभइ, एगा इमेण कन्नेण एगा इमेण कन्नेण जाव दोन्निवि मिलिया, ताहे मूले भग्गाओ, मा कोइ उक्खणिहिइ, केइ भणंति–एक्का चेव जाव इयरेण कण्णेण निग्गया तओ भग्गा। कण्णेसु तऊ तत्तं गोवस्स कयं तिविट्ठुणा रन्ना। कन्नेसु वद्धमाणस्स तेण छूढा कड-सलागा ॥ १ ॥ भयवतो तद्दारवेयणिज्जं कम्मं उइन्नं, ततो सामी मज्झिमं पावं गतो, तत्थ सिद्धत्थो नाम वाणियतो, तस्स घरमागतो, तस्स य मित्तो खरतो नाम वेज्जो, ते दोऽवि सिद्धत्थघरे अच्छंति, सामी भिक्खस्स पविट्ठो, वाणि-यतो वंदइ थुणइ य, वेज्जो तित्थयरं पासिऊण भणइ–अहो भयवं सवलक्खणसंपुन्नो किंतु ससल्लो, ततो सो वाणियतो संभंतो भणइ, पलोएहि कहिं सल्लो ?, तेण पलोयंतेण दिट्ठो कण्णेसु, तेण वाणिएण भन्नइ–नीणेहि एयं महातवस्सिस्स, पुन्नं होहिइ तवेवि मज्झवि, भणइ–निप्पडिकम्मो भयवं न इच्छइ, ताहे पडियरावितो जाव दिट्ठो उज्जाणे ताव पडिमं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

ठितो, ते ओसहाणि गहाय गता, तत्थ भयवं तेल्लदोणीए निवण्णावितो मक्खितो य, पच्छा बहुएहिं पुरिसेहिं जंतितो अकंतो य, पच्छा संडासएण गहाय कड्ढियातो, तत्थ सरुहिरातो सलागातो अंछियातो, तासु य अच्छिज्जंतीसु भगवया आरसियं, ते य मणूसे उप्पाडित्ता उट्ठितो, महाभेरवं तत्थ उज्जाणं जायं, देउलं च, पच्छा संरोहणी ओसही दिण्णा, ततो ताहे चेव भयवं पउणो जातो, ततो वंदित्ता खामित्ता य गता। एतदेवाह—

छम्माणि गोवकडसल पवेसणं मज्झिमाइ पावाए। खरओ विज्जो सिद्धत्थ वाणिओ नीहरावेइ ॥ ५२४ ॥

भगवान् छम्माणियानाम ग्रामं गतः, तत्र गोपेन भगवतः कर्णयोः कटशलाकाप्रवेशनं कृतं, ततो भगवान् मध्यमपापायां गतः, तत्र खरको वैद्यस्तत्पार्श्वात् सिद्धार्थनामा वणिक् ते कटशलाके निर्हारयति।

इह सव्वेसु किर उवसग्गेसु कयरे दुविसहा ?, उच्यते—कडपूयणासीयं कालचक्कं एयं च सल्लं निकड्ढिज्जंतं, अहवा जहन्नगाण उवरिं कडपूयणासीयं, मज्झिमाण कालचक्कं, उक्कोसगाणमुवरिं सल्लुद्धरणं। गोवेण आरद्धा उवसग्गा गोवेण णिट्ठिया। एसो गोवो सत्तमिं गतो, खरतो सिद्धत्थो य एए दोऽवि तिव्वमवि वेयणमुदीरंता विसुद्धता देवलोगं गता। ततो सामी जंभियगामं गतो, तस्स बहिया वेयावत्तस्स चेइयस्स अदूरसामंते उज्जुयालियाए नदीए तीरे उत्तरिल्ले कूले सामागस्स गाहावइस्स कट्ठकरणे, कट्ठकरणं नाम छेत्तं, सालपायवस्स अहे उक्कुडुयनिसज्जाए गोदोहियाए आयावणाए आयावेमाणस्स छट्ठेण भत्तेणं अपाणएणं बारसहिं संवच्छरेहिं वइक्कंतेहिं तेरसमस्स संवच्छरस्स अंतरा वट्टमाणस्स वइसाहसुद्धदसमीए पाईणगामिणीए छायाए पमाणपत्ताए पोरिसीए सुव्वएणं दिवसेणं विजएणं मुहुत्तेणं हत्थुत्तरानक्खत्तेणं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*** अथ भगवन्त महावीरस्य केवलज्ञानोत्पत्ति वर्णनं आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

जोगमुवागएणं झाणंतरियाए वट्टमाणस्स एगंतवियकं वोलीणस्स सुहुमकिरियं झाणमप्पत्तस्स अणुत्तरकेवलं नाणदंसणं च समुप्पन्नं । एतदेव सङ्क्षेपत आह—

जंभिय बहि उजुवालिय तीरविथावत्त सामसालअहे । छट्ठेणुक्कुडुयस्स उ उप्पन्नं केवलं नाणं ॥ ५२५ ॥

जृम्भकग्रामस्य बहिः, 'वियावत्त'त्ति वियावृत्तं नाम अव्यक्तं, पतितशटितमप्रकटमिति भावः, तस्य चैत्यस्यादूरे ऋजुपालिकानदीतीरे श्यामाकस्य गृहपतेः क्षेत्रे शालवृक्षस्याध उत्कुटुकस्य भगवतः षष्ठेन केवलज्ञानमुत्पन्नं ॥ तत्र तपसा केवलज्ञानं समुत्पन्नमिति यद्भगवता तपः सेवितं तदभिधित्सुराह—

जो अ तवो अणुचिन्नो वीरवरेणं महाणुभावेणं । छउमत्थकालियाए अहक्कमं कित्तइस्सामि ॥ ५२६ ॥

यच्च तप आचरितं वीरवरेण महानुभावेन छद्मस्थकाले, यत्तदोर्नित्याभिसम्बन्धात् तद् यथाक्रमं—येन क्रमेणानुचरितं भगवता तथा कीर्त्तयिष्यामि ॥ तच्चेदम्—

नव किर चाउम्मासे छ किर दोमासिए उवासीअ । बारस य मासिआइं बावत्तरि अद्धमासाइं ॥ ५२७ ॥

नव किल चातुर्मासिकानि, षट् किल द्विमासिकानि उपोषितवान्, किलशब्दः परोक्षाप्तागमवादसंसूचकः, द्वादश मासिकानि द्विसप्ततिमर्द्धमासिकानि उपोषितवानिति क्रियायोगः ॥

एगं किर छम्मासं दो किर तेमासिए उवासीय । अड्ढाइज्जा य दुवे दो चेव दिवड्ढमासाइं ॥ ५२८ ॥

एकं किल षण्मासं द्वे किल त्रैमासिके उपोषितवान्, तथा अर्द्धतृतीयमासनिष्पन्नं तपोऽर्द्धतृतीयं ते अर्द्धतृतीये द्वे, चशब्दः

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

क्रियानुकर्षणार्थः, द्वे एव च अर्द्धमासे, द्वितीयमर्द्धं ययोस्तौ अर्द्धौ २ मासौ यस्य तद् अर्द्धमासं ते अर्द्धमासे तपसी कृतवान्,

भद्दं च महाभद्दं पडिमं तत्तो अ सव्वओभद्दं । दो चत्तारि दसेव य दिवसे ठासीयमणुबद्धं ॥ ५२९ ॥

भद्रां महाभद्रां सर्वतोभद्रां च प्रतिमां यथाक्रमं द्वौ चतुरो दश च दिवसान् अनुबद्धं-सन्ततमपान्तराले पारणकमकृत्वेति भावः स्थितवान् ।

गोअरमभिग्गहजुअं खमणं छम्मासिअं च कासी अ । पंचदिवसेहिं ऊणं अवहिओ वच्छनयरीए ॥ ५३० ॥

गोचरे अभिग्रहः गोचराभिग्रहस्तेन युतं गोचराभिग्रहयुतं क्षपणकं षाण्मासिकं पञ्चभिर्दिवसैरूनमव्यथितः-अपीडितो वत्सनगर्यां-कोशाम्ब्यामकार्षीत् ॥

दस दो अ किर महप्पा ठाइ मुणी एगराइयं पडिमं । अट्ठमभत्तेण जई इक्किक्कं चरमराई अ ॥ ५३१ ॥

दश द्वे च सर्वसङ्ख्यया द्वादश किल एकरात्रिकी प्रतिमा, सूत्रे चैकवचनं प्राकृतत्वात्, महात्मा-मुनिः 'ठाति'त्ति स्थितवान्, कथं स्थितवानित्याह-एकैकां च प्रतिमां अष्टमभक्तेन-त्रिरात्रोपवासेन चरमरात्रिकीं-चरमरजनीनिष्पन्नां प्रतिपत्तिं चेति अयतिष्ट प्रयत्नवान् ॥

दो चेव य छट्ठसए अउणातीसे उवासिओ भयवं । न कयाइ निच्चभत्तं चउत्थभत्तं च से आसि ॥ ५३२ ॥

द्वे एव षष्ठशते एकोनत्रिंशे एकोनत्रिंशदधिके भगवान् उपोषितवान्, एवं च न कदाचिन्नित्यभक्तं चतुर्थभक्तं च 'से' तस्यासीत् ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [-]

दीप अनुक्रम [-]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

उपोद्घात-निर्युक्तौ श्रीवीर-चरिते ॥ २९९ ॥

बारस वासे अहिए छट्ठं भत्तं जहन्नयं आसि। सव्वं च तवोकम्मं अपाणयं आसि वीरस्स ॥ ५३३ ॥

द्वादश वर्षाण्यधिकानि भगवतश्छद्मस्थस्य सतः षष्ठं भक्तं-द्व्यहोरात्रोपवासरूपं तपो जघन्यकमासीत्, सर्वं च तपःकर्म अपानकमासीत् वीरस्य, न तपःकर्म कुर्वन् पानीयमभ्यवहृतवान् भगवानिति भावः ॥ पारणककालमान-प्रतिपादनार्थमाह—

तिन्नि सए दिवसाणं अउणापन्ने य पारणाकालो। उक्कुडुअनिसिज्जाए ठियपडिमाणं सए बहुए ॥ ५३४ ॥

त्रीणि शतानि एकोनपञ्चाशानि-एकोनपञ्चाशदधिकानि दिवसानां पारणककालो भगवतः, तथा उत्कुटुकनिषद्यायां स्थितप्रतिमानां बहूनि शतानि ॥

पव्वज्जाए दिवसं पढमं एत्थं तु पक्खिवित्ताणं। संकलियम्मि उ संते जं लद्धं तं निसामेह ॥ ५३५ ॥

प्रव्रज्यायाः सम्बन्धिनं दिवसं प्रथमं अत्र—उक्तलक्षणदिवसगणने प्रक्षिप्य सङ्कलिते सति यल्लब्धं तन्निशाम-यत-आकर्णयत ॥

बारस चेव य वासा मासा छच्चेव अद्धमासो अ। वीरवरस्स भगवओ एसो छउमत्थपरियाओ ॥ ५३६ ॥

वीरवरस्य भगवत एषः-एतावत्प्रमाणः छद्मस्थपर्यायस्तद्यथा-द्वादश वर्षाणि षण्मासा अर्द्धमासश्च ॥

एवं तवोगुणरओ, अणुपुव्वेणं मुणी विहरमाणो। घोरं परिसहचमूं अहिआसित्ता महावीरो ॥ ५३७ ॥

श्रीवीरस्य तपः संकलना

॥ २९९ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवम्–उक्तेन प्रकारेण तपोगुणेषु रतस्तपोगुणरतः आनुपूर्व्येण–क्रमेण मुनिर्विहरन् घोरां–रौद्रां परीषहचमूं–परिषहसेनामधिसह्य महावीरः ॥

उप्पन्नंमि अणंते नट्ठम्मि अ छाउमत्थिए नाणे । राईए संपत्तो महसेणवणम्मि उज्जाणे ॥ ५३८ ॥

उत्पन्ने–प्रादुर्भूते अनन्ते–अनन्तज्ञेयविषये, कस्मिन् ?–ज्ञाने–केवलज्ञाने, नष्टे च छाद्मस्थिके मत्यादिरूपे ज्ञाने, देशज्ञानव्यवच्छेदेन केवलज्ञानसद्भावाद्, भावितं चैतत् प्रथमपीठिकायां, रात्रौ सम्प्राप्तो महसेनवने उद्याने, किमिति चेत् ? उच्यते,भगवतो ज्ञानरत्नोत्पत्तिसमनन्तरमेव देवाश्चतुर्विधा अप्यागता आसन्, अत्यद्भुतां च प्रहर्षवन्तो ज्ञानोत्पादमहिमां चक्रुः, तत्र भगवान् अवबुध्यते–नात्र कश्चित्प्रव्रज्याप्रतिपत्ता विद्यते, तत एतद्विज्ञाय न विशिष्टधर्म्मकथनाय प्रवृत्तवान्, केवलं कल्प एषः–यत्र ज्ञानमुत्पद्यते तत्र जघन्यतोऽपि मुहूर्त्तमात्रमवस्थातव्यं देवकृता च पूजा प्रतीच्छतीया धर्म्मदेशना च कर्त्तव्येति सङ्क्षेपतो धर्म्मदेशनां कृत्वा द्वादशसु योजनेषु मध्यमा नाम नगरी, तत्र सोमिलाख्यो नाम ब्राह्मणः, स यज्ञं यष्टुमभ्युद्यतः, तत्र चैकादशोपाध्यायाः खल्वागताः, ते च चरमशरीरा भवान्तरोपार्जितगणधरलब्धयश्च, तान् विज्ञायासङ्ख्येयाभिर्देवकोटीभिः परिवृतो देवोद्योतेन दिवस इवाशेषं पन्थानमुद्योतयन् देवपरिकल्पितेषु सहस्रपत्रेषु नवनीतस्पर्शेषु पद्मेषु चरणन्यासं विदधानो मध्यमनगर्यां महसेनवनोद्यानं सम्प्राप्तः ॥

अमरनररायमहिओ पत्तो वरधम्मचक्कवट्टित्तं । बीअंपि समोसरणं पावाए मज्झिमाए उ ॥ ५३९ ॥

अमरा—देवाः नरा–मनुष्याः तेषां राजानस्तैर्महितः–पूजितः प्राप्तो धर्मवरचक्रवर्त्तित्वं–धर्मवरप्रभुत्वं, द्वितीयं पुनः

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधिता मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिता आगमसूत्र[४०] मूलसूत्र[१]आवश्यकनिर्युक्ति एवंमलयगिरिसूरिरचिता वृत्ति:

समवसरणं, अपिशब्दः पुनरर्थे, पापायां मध्यमायां, प्राप्त इत्यनुवर्त्तते। ज्ञानोत्पत्तिस्थानकृतपूजापेक्षया चास्य द्वितीयता ॥

तत्थ किर सोमलिज्जोत्ति माहणो तस्स दिक्खकालम्मि । पउरा जणजाणवया समागया जन्नवाडम्मि ॥५४०॥

तत्र—पापायां मध्यमायां किलशब्दः पूर्ववत्, सोमिलः आर्य इति—ब्राह्मणः तस्य दीक्षाकाले—यागकाले पौरा—विशिष्टनगरनिवासिलोका जनाः—सामान्यलोका जानपदा—नानाजनपदभवा लोकाः समागता यज्ञपाटे ॥ अत्रान्तरे—

एगंते अ विवित्ते उत्तरपासम्मि जन्नवाडस्स । तो देवदाणविंदा करिंति महिमं जिणिंदस्स ॥ ५४१ ॥

एकान्ते विविक्ते यज्ञपाटस्योत्तरपार्श्वे ततो देवदानवेन्द्रा जिनेन्द्रस्य महिमां कुर्वन्ति, पाठान्तरं च–'कासी महिमं जिणिंदस्स' कृतवन्त इत्यर्थः । अमुमेवार्थं सविस्तरं भाष्यकार आह—

भवणवईवाणमंतर जोइसवासी विमाणवासी य । सविड्ढीइ सपरिसा कासी नाणुप्पयामहिमं ॥ ५४२ ॥

भवनपतिव्यन्तरज्योतिर्वासिनो विमानवासिनश्च सपर्षदः सर्वर्द्ध्या ज्ञानोत्पत्तिमहिमामकार्षुः–कृतवन्तः॥

आवश्यक मलयगिरिजी वृत्ते: पूर्वार्धस्य द्वितीयो भाग समाप्त:

तृतीय भागस्य आरंभ: निर्युक्ति: [५४३] कृत:

अत्र या गाथा निर्युक्ति: ५४२ रूपेण दर्शिता: सा गाथा हारिभद्रिय वृतौ भाष्य ११५ रुपेण लिखिता

Jain Education International

www.jainelibrary.org

आवश्यक- मूलसूत्र- [४०/१] निर्युक्ति एवं मलयगिरिसूरिजी रचिता टीका परिसमाप्ता:

मूल संशोधकः सम्पादकश्च पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

किंचित् वैशिष्ट्य समर्पितेन सह पुन: संकलनकर्ता मुनि दीपरत्नसागरजी [M.Com.,M.Ed.,Ph.D.,श्रुतमहर्षि]

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य आनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

भाग-4

पूज्य आगमोध्धारक आचार्य श्री सागरानंदसूरीश्वरेण संशोधित: संपादितश्च

"आवश्यक-मूलसूत्र" [निर्युक्ति: एवं मलयगिरिसूरिजी-रचिता वृत्ति:]

(किंचित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

मुनि दीपरत्नसागरेण पुन: संकलित:

"आवश्यक" निर्युक्ति: एवं वृत्ति:" नामेण परिसमाप्त:

'सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि-2' श्रेणि, भाग-4

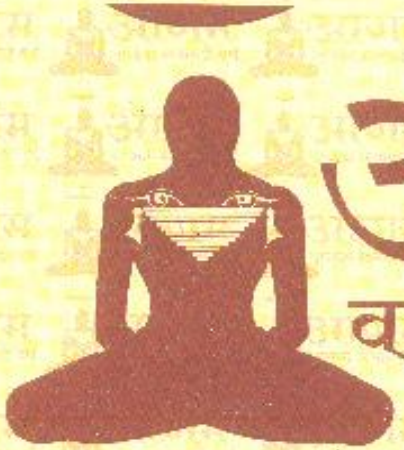

आगम

वाचना शताब्दी वर्ष

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

सवृत्तिक-आगम-सूत्राणि-2

मूल संशोधक

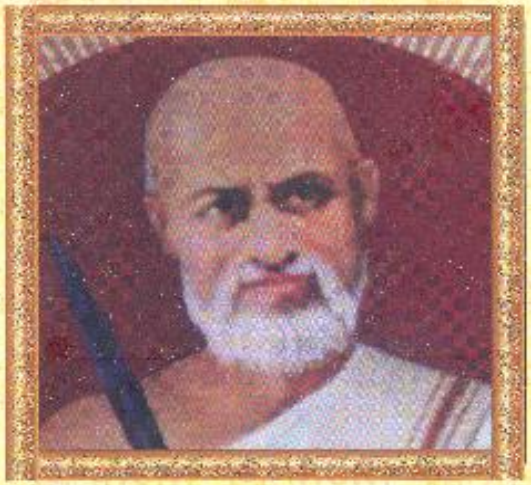

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य
श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज

अभिनव-संकलनकर्ता

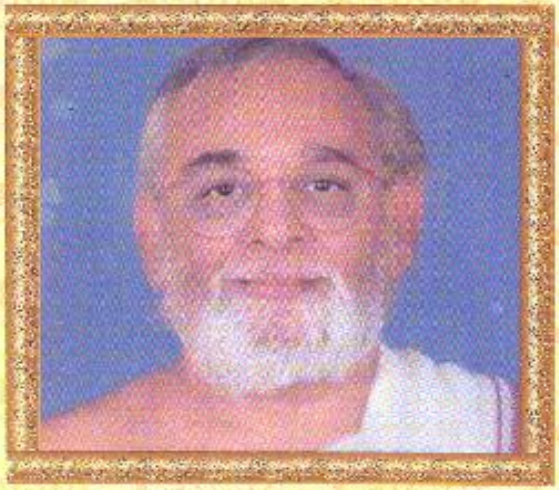

आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी
[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

प्रत-प्राप्ति और पेज-सेटिंग कर्ता : www.jainelibrary.org के चेरमन श्री प्रवीणभाई शाह, अमेरिका
मुद्रक : नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस अमदाबाद Mo 9825598855 / 9825306275

ईस प्रोजेक्ट के संपूर्ण-अनुदान-दाता

सच्चारित्र चूडामणि स्वर्गस्थ पूज्यपाद
गच्छाधिपति आचार्यदेव श्री देवेन्द्रसागर
सूरीश्वरजी महाराज साहेब

श्री परम आनंद श्वेताम्बर मूर्तिपूजक जैन संघ

वीतराग सोसायटी, प्रभूदास ठक्कर कोलेज रोड, पालडी, अमदावाद

करीब पचास साल पहेले परम पूज्य स्व र्गस्थ गच्छाधिपति आचार्य देव श्रीमद् देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब द्वारा संस्थापित इस संघमें श्री शीतलनाथ भगवंत का जिनालय भी है, जिन के प्रतिष्ठाचार्य भी पूज्य देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी म० ही है |

इस संघमें पूज्य साधू -भगवंत एवं साध्वी -महाराज के लिए उपाश्रय भी है, जहां हर-साल चातुर्मास करवा के श्रावक-श्राविकाओ को धर्म-आराधन से लाभान्वित करवाया जाता है | इस संघमें आयंबिलभवन, उबाला हुआ पानी, ज्ञान-भण्डार एवं पाठशाला की भी बहोत अच्छी सुविधा प्रदान हो रही है | ऐसे सम्यग्-मार्गी संघ की सद्भावना और प्रभावक आचार्य पूज्य श्री हर्षसागरसूरिजी म० की प्रेरणा से इस शास्त्र के लिए अनुदान प्राप्त हुआ है |

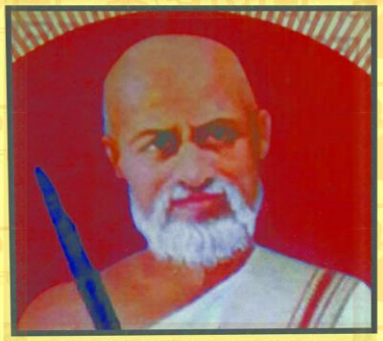

मूल संशोधक

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य

श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराजसाहेब

आगम - ४०

"आवश्यक" निर्युक्तिः एवं वृत्तिः [२]

अभिनव-संकलनकर्ता

आगम दिवाकर **मुनिश्री दीपरत्नसागरजी**

[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]